शब्द-भूगोल
(सिद्धान्त और प्रयोग)

[Word geography its principles and applications]

शब्द-भूगोल

(सिद्धान्त और प्रयोग)

हीरालाल शुक्ल

एम० ए० (संस्कृत) एम० ए० (भाषाविज्ञान)

दर्शनशास्त्री, पी-एच० डी० (संस्कृत)

प्राध्यापक, भाषाविज्ञान-विभाग

रविशंकर विश्वविद्यालय, रायपुर

रचना प्रकाशन

४५ ए, सराय खुल्दाबाद

इलाहाबाद-१

प्रथम संस्करण : १९७३

●

प्रकाशक

शीत मल्होत्रा

रचना प्रकाशन

४५-ए, सराय खुल्दाबाद

इलाहाबाद-१

●

मुद्रक

इलाहाबाद प्रेस,

२७०, रानी मंडी,

इलाहाबाद-३

मूल्य : ६५ रुपये

कार्योपक्षेपमादौ तनुमपि रचयंस्तस्य विस्तारमिच्छन्
बीजानां गर्भितानां फलमतिगहनं गूढमुद्भेदयंश्च ।
कुर्वन् बुद्ध्या विमर्शं प्रसृतमपि पुनः संहरन् कार्यजातं
कर्ता वा नाटकानामिममनुभवति क्लेशमस्मद्विधो वा ॥

विज्ञापन

विश्व के अनेक देशों में भाषा-भूगोल व भाषा-मानचित्रावली पर अनेक कार्य हुए हैं, किन्तु भाषा-भूगोल के सिद्धान्तों से सम्बद्ध किसी भी पुस्तक की अनुपलब्धि से विषय का पूर्ण ज्ञान नहीं हो पाता है; फलस्वरूप देश व विदेश के अनेक शोधकार्य भाषिक अभिलक्षणों के वितरण तक ही सीमित हैं।

विभिन्न विश्वविद्यालयों के स्नातकोत्तर पाठ्यक्रमों में 'भाषा-भूगोल' निर्धारित है, किन्तु एतद्विषयक कुछ गिने-चुने जो लेख हैं, वे या तो अतिसंक्षिप्त हैं या उनमें विषय का परम्परागत विवेचन मिलता है।

प्रस्तुत ग्रन्थ से उपर्युक्त अभाव-पूर्ति की दिशा में प्रयास किया गया है। भाषा-भूगोल से सम्बद्ध विविध प्रबन्धों व निबन्धों के आधार पर लेखक ने 'बघेलखंड का शब्द-भूगोल (चार खण्ड)' व 'बघेलखंड की शब्द-मानचित्रावली (400 मानचित्र)' प्रस्तुत की है। यह ग्रन्थ उनका आनुषंगिक फल है।

वेङ्कर के काल से लेकर 1971 ई० तक भाषा-भूगोल में जो कार्य हुए हैं, उनके सार को लेकर 'शब्द-भूगोल' की रचना हुई है। इसमें सिद्धान्तों का अन्धानुकरण न कर उनकी युक्तियुक्त परीक्षा है।

पुस्तक को बोधगम्य बनाने के लिए यथास्थान रेखाचित्र व मानचित्र भी दिए गये हैं तथा परिशिष्ट में शब्द-भूगोल से सम्बद्ध प्रबन्धों व निबन्धों की विस्तृत सूची है, जिससे भावी शोधछात्र लाभान्वित हो सकते हैं।

आरम्भ से अन्त तक विदेशी नामों को रोमन लिपि में देख कर पाठक क्षुब्ध हो सकते हैं, किन्तु देवनागरी में अशुद्धोच्चारण न कर मैं मूल लेखकों के क्रोध से बच गया हूँ।

शब्द-भूगोल के सिद्धान्तों को उपस्थापित करने वाली यह प्रथम कृति है, अतएव अपूर्ण है, क्योंकि पूर्णता असम्भव है। इस क्षेत्र में कार्यरत विद्वानों को आलोचनात्मक दृष्टि से सम्भवतः इसे कुछ नये आयाम मिलें। अन्यथा, कहाँ तो शब्दयात्रा की अनन्तता और कहाँ मेरी अल्पविषयामति—

अहं च भाष्यकारश्च कुशाग्रधियावुभौ।
नैव शब्दाम्बुधेः पारं किमन्ये लघुबुद्धय.॥

(दुर्गाचार्य)

प्ररोचना

शब्द-भूगोल कोई नवीन विषय नहीं है। विद्वत्तापूर्ण अध्ययन को एक स्वीकृत शाखा या सामान्य दृष्टिकोण के रूप में इसे परिभाषित करने पर भी उपर्युक्त कथन सत्य प्रतीत होता है। एक अर्थ में शब्द-भूगोल की धारणा का उद्भव अति प्राचीन काल से माना जा सकता है तथा दूसरे अर्थ में इसकी जड़ें उतनी ही गहरी हैं, जितनी कि आधुनिक भाषाविज्ञान की।

विषय को प्राचीनता के बावजूद यह एक विरोधाभास है कि शब्द भूगोल के सिद्धान्तो को प्रतिपादित करने वाला अब तक कोई स्वतंत्र ग्रन्थ प्रकाश में नही आया। भाषाविज्ञान, सांस्कृतिक भूगोल, मानवभूगोल, नृत्वशास्त्र, व समाजशास्त्र के ग्रन्थो में एक अध्याय या कुछ पंक्तियो में ही इसका संक्षिप्त परिचय मिलता है, जिससे विषय के यथार्थ व अत्याधुनिक स्वरूप से भाषाविज्ञान का विद्यार्थी परिचित नही हो पाता।

विगत अर्द्ध शताब्दी में देश के अनेक क्षेत्रो की बोलियो पर गम्भीर अध्ययन हुए हैं, किन्तु भाषाविज्ञान की वर्णनात्मक शाखा (=अमरीकी ज्ञान) के प्रति लोगो का इतना अधिक आकर्षण रहा है कि जीवित बोलियो पर तुलनात्मक व्याकरणो की अपेक्षा तथाकथित (अविश्वसनीय व अप्रामाणिक) वर्णनात्मक व्याकरणो की ही अधिक रचना हुई है, भाषा-भूगोल या बोली-भूगोल के नाम से अपने देश में जो छुट-पुट कार्य हुए हैं, उन पर भी वर्णनात्मक भाषाविज्ञान इतना अधिक हावी रहा है कि भारत में शब्द-भूगोल को भाषाविज्ञान की एक स्वतंत्र शाखा के रूप में विकसित होने का अवसर ही नही मिल पाया। शब्द-भूगोल की सार्थकता उसके परिणामों को अन्य ज्ञान-विज्ञान से जोडने व व्यावहारिक बनाने में है, तथा उसकी उच्चस्तरीयता तभी सम्भव है, जब भावी योजनाओ को विविध विज्ञानों की पद्धतियों के अनुसार युक्ति बनाया जाये व उनसे प्राप्त सामग्री का वैज्ञानिक ढंग से प्रस्तुतीकरण हो, अन्यथा एकमात्र भौगोलिक वितरणो को प्रस्तुत करने वाले सर्वेक्षण नीरस, विस्तारयुक्त, व अपव्ययी ही कहे जाएंगे।

ऐसी स्थिति में 'शब्द भूगोल' को उपस्थापित करते हुए मुझे सन्तोप है कि अभिज्ञात किन्तु अनभिज्ञात, पुरातन तथापि नवीन विषय के अध्ययन से भावी शोध-छात्रो को दिशाबोध हो सकेगा व विविध सम्बद्ध विषयों के विद्यार्थी भाषाविज्ञान की इस शाखा के प्रति आकर्षित होंगे।

'शब्द-भूगोल' से इतिहास, स्वरूप, मानचित्रावलीय सर्वेक्षण, शब्द-मानचित्रावली, सिद्धान्त और परिभाषा, भाषिक विश्लेषण, अनिभाषिक विश्लेषण, तथा शब्द-भूगोल की व्यावहारिकता—इन आठ अधिकरणो के अन्तर्गत छत्तीस अध्याय है, शब्द-भूगोल की विविध समस्याओ को यहाँ 'बघेलखंड की शब्द-मानचित्रावली' के प्रमाणो के आधार पर हल करने का प्रयास किया गया है।

यह प्रबन्ध 'बघेलखंड का शब्द-भूगोल' नामक डॉक्टरेट उपाधि के लिए रविशंकर विश्वविद्यालय मे प्रस्तुत मेरे शोध प्रबन्ध के दशमाश का परिवर्द्धित रूप है।

परिशिष्ट में शब्द-भूगोल से सम्बद्ध प्रबन्धो व निबन्धो की एक विस्तृत सूची दी गई है। ये कृतियाँ लेखक की मूक मार्गदर्शक रही है। यद्यपि शब्द-भूगोल पर यह प्रथम रचना है व अथ से इति तक अधिकरणो व अध्यायो का नियोजन लेखक की कल्पना के अनुरूप है—

किन्तु बीजं विकल्पाना पूर्वाचार्यै. प्रदर्शितम् ।
तदैव प्रतिसंस्कर्तुमयमस्मत्परिश्रमः ॥

इन पूर्वाचार्यों का मैं चिर ऋणी हूँ।

इस प्रकार के प्रयास मे कई त्रुटियाँ रह गई होगी, जो इस क्षेत्र में संलग्न पाठको की आलोचनात्मक दृष्टि से ही स्पष्ट हो पाएँगी। इस दिशा में किसी भी प्रकार के रचनात्मक सुझावो और संशोधन का लेखक स्वागत करेगा, क्योंकि लेखक और पाठको का समान ध्येय है—

लोकस्य व्यवहारेण शब्दयात्रा प्रवर्तते ।

दिसम्बर 1971. हीरालाल शुक्ल

विशेष चिह्न और संक्षिप्त रूप

ई या ी — अग्र उच्चर-उच्च अगोलित दृढ़ दीर्घ स्वर
इ या ि — अग्र निम्नतर-उच्च अगोलित शिथिल ह्रस्व स्वर
इ या ॆ — अग्र उच्चतर-मध्य अगोलित दीर्घ स्वर
ऍ या ॆ — अग्र उच्चतर-मध्य अगोलित ह्रस्व स्वर
ऐ या ै — अग्र निम्नतर-मध्य अगोलित पश्चीकृत शिथिल दीर्घ स्वर
ऐ॑ या ै॑ — अग्र आरोही संध्यक्षर
अ या इसका भाव — केन्द्रीय मध्यम मध्य अगोलित ह्रस्व स्वर
आ या — केन्द्रीय निम्नतर-निम्न अगोलित दीर्घ स्वर
अ॑ या ॅ — पश्च निम्नतर-निम्न गोलित ह्रस्व स्वर
ऑ या ॉ — पश्च निम्नतर-निम्न गोलित दीर्घ स्वर
औ या ौ — पश्च निम्न-मध्य गोलित दीर्घ स्वर
औ॑ या औ॑ — पश्च आरोही संध्यक्षर
ओ॑ या ो॑ — पश्च उच्चतर-मध्य गोलित ह्रस्व स्वर
ओ या ओ — पश्च उच्चतर-मध्य गोलित दीर्घ स्वर
उ या ु — पश्च निम्नतर-उच्च गोलित अग्रीकृत शिथिल ह्रस्व स्वर
ऊ या ू — पश्च उच्चतर गोलित दृढ़ दीर्घ स्वर
˙ — अनुनासिकता
ᔕ — मुक्त-भेद
\+ — संधिज (दो चिह्नों के मध्य
× — वैकल्पिक संधिज (दो चिह्नों के मध्य ऊपर की ओर)
° — जिस ध्वनि के नीचे यह चिह्न, वह उपाघु-द्योतक
˙ — जिस ध्वनि के नीचे यह चिह्न, वह अनाक्षरिक-द्योतक
प्, त्, ट्, क्, ? — क्रमशः द्वयोष्ठ्य, दंत्य पश्च-वर्त्स्य प्रतिवेष्टित, कोमल-तालव्य, काकल्य अघोष अल्पप्राण स्पर्श
ब् द्, ड्, ग् — क्रमशः द्वयोष्ठ्य, दंत्य, पश्च-वर्त्स्य प्रतिवेष्टित, कोमल-तालव्य सघोष अल्पप्राण स्पर्श
फ्, थ्, ठ्, ख् — क्रमशः द्वयोष्ठ्य, दंत्य, पश्च-वर्त्स्य प्रतिवेष्टित, कोमल-तालव्य अघोष महाप्राण स्पर्श

भ्, ध्, द्, घ्	क्रमश द्वयोष्ठ्य, दत्य, पश्च वर्त्स्य प्रतिवेष्टित, कोमल-तालव्य सघोष महाप्राण स्पर्श
च, ज्	क्रमश अघोष और सघोष अल्पप्राण अग्रतालव्य स्पर्श सघर्षी
छ्, झ्	क्रमश अघोष और सघोष महाप्राण अग्रतालव्य स्पर्श सघर्षी
म, न्, ण्, ङ्	क्रमश द्वयोष्ठ्य, वर्त्स्य, पश्च-वर्त्स्य प्रतिवेष्टित, कोमल तालव्य अल्पप्राण नासिक्य
म्ह, न्ह्	क्रमश द्वयोष्ठ्य और वर्त्य सघोष महाप्राण नासिक्य
र्	अल्पप्राण सघोष वर्त्स्य त्रुठित
ड़्, ढ़्	क्रमश अल्पप्राण और महाप्राण सघोष पश्च-वर्त्स्य प्रतिवेष्टित उत्क्षिप्त
ल्, ल्ह	क्रमश अल्पप्राण और महाप्राण सघोष वर्त्स्य पार्श्विक
फ्, स्, श्, ष्, ख	क्रमश दतोष्ठ्य, वर्त्स्य, अग्रतालव्य, पश्च, वर्त्स्य प्रतिवेष्टित, कोमलतालव्य अघोष सघर्षी
व्	सघोष द्वयोष्ठ्य कोमलतालव्य अधस्वर
य्	सघोष तालव्य अर्धस्वर
ज़्, ग़्	क्रमश वर्त्स्य और कोमलतालव्य सघोष सघर्षी
ह्	सघोष काकल्य सघर्षी, महाप्राण ध्वनि
/	बलाघात
	'विरुद्ध भाव' (बनाम) का द्योतक
[ ], ‖ , { }	क्रमश ध्वनिकीय, ध्वनिमीय, रूपिमीय कोष्ठक
ꣾ	'पुनर्रचित रूप' का द्योतक
>	'बना' (परिवर्तित हो जाता है) का द्योतक
<	'व्युत्पन्न' (से बना) का वाचक
→	पुनर्लेखन चिह्न
=	'भाषिकातर व्यवस्था' वाचक

अनुक्रम

□□

लेखक की कृतियाँ

संस्कृत

1 Renaissance in Modern Sanskrit Literature
2 Macaulay and Sanskrit Education
3 A Century of Sanskrit Journalism
4 आधुनिक सस्कृत साहित्य
5 सस्कृत लेख साहित्य (सहसम्पादन)

भाषाविज्ञान

6 Contrastive Distribution of Bagheli Phonemes
7 भाषिकी के दस लेख (सहसम्पादित)
8 बस्तर की बोलियाँ (सहलेखन) मुद्रणस्थ
9 गोंडी प्रवेशिका (सह्लेखन)
1 बस्तर के वनवासी गीतो म गांधी
11 भारतीय लोकोक्ति कोश (सहसम्पादन)
12 हलबी विभाषा और साहित्य (सहलेखन)
13 A Word Atlas of Baghelkand (400 maps)
14 Psycho Lingua शोधपत्र के सम्पादक
15 Contrastive Grammar of Gondi dialects मुद्रणस्थ

प्रथम अधिकरण

•

इतिहास

1. शब्द-भूगोल की धारणा का उद्भव और विकास
2. शब्द-भूगोल तथा शब्द-मानचित्रावलीपरक कार्य का प्रवर्तन
3. शब्द-भूगोल तथा शब्द-मानचित्रावलीपरक कार्य का सम्वर्धन
4. अन्य यूरोपीय देशों में शब्द-भूगोल तथा शब्द मानचित्रावली
5. अफ्रीका में शब्द-भूगोल तथा शब्द-मानचित्रावली
6. दक्षिणी अमरीका में शब्द-भूगोल तथा शब्द-मानचित्रावली
7. उत्तरी अमरीका में शब्द-भूगोल तथा शब्द-मानचित्रावली
8. भारतेतर एशिया में शब्द-भूगोल तथा शब्द-मानचित्रावली
9. भारत में बोली-अध्ययन तथा शब्द-भूगोल

I

शब्द-भूगोल की धारणा का उद्भव और विकास

1.1 शब्द-भूगोल की धारणा का विकास यद्यपि विदेशी विद्वान्[1] 1870 ई० से मानते है, जब ध्वनिपरिवर्तन की नियमितता के प्रति बढ़ते हुए अविश्वास (यद्यपि 1870 ई० में जेनेवा में आयोजित नव्यवैयाकरणिको का सम्मेलन इसके प्रति लोगो की आस्था को बताता है तथापि उसी मच से Schuchardt का उसके प्रति विरोध अविश्वास का वाचक है) के कारण लोगो की रुचि भाषा के विविध स्तरो (विशेषकर भौगोलिक रूपो) के अध्ययन की ओर हुई, किन्तु जिस रूप में Wenker के पूर्व विदेशो में उसका इतिहास मिलता है, वही भारत में अति-प्राचीन काल से उपलब्ध है।

1.2. प्राचीन भारतीय आर्यभाषा-काल

अतिप्राचीन काल मे संस्कृत एक व्यवहार की भाषा थी[2] तथा उसकी उपभाषाओं को यास्क व पाणिनि दोनो ने पहचाना था। यास्क की दृष्टि अधिक तीक्ष्ण थी। उनके अनुसार धातु का प्रयोग लोग एक प्रात में करते थे और उससे बने हुए शब्द का प्रयोग दूसरे प्रात में। 'शव्' (= गमन करना) का क्रियार्थक प्रयोग कम्बोजवासियो के द्वारा किया जाता था तथा 'शव' (= गमन) का संज्ञार्थक प्रयोग आर्य लोग करते थे। इसी प्रकार, 'दा' (= काटना) प्राच्य देश में प्रयुक्त होता था तथा उसी अर्थ में उसके स्थान पर 'दात्र' का व्यवहार उदीच्य देश में होता था।[3] पतंजलि भी ऐसी क्षेत्रीय विभाषाओ का नामोल्लेख करते हैं।[4]

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि यास्क आर्य-देश को प्राच्य और उदीच्य देशो से भिन्न मानते है, यद्यपि आर्य-देश की भाषा से इन दोनो देशो की विभाषाएँ बहुत प्रभावित थी। उस समय आर्य-देश की ही भाषा आदर्श मानी जाती थी।

पाणिनि ने 'अष्टाध्यायी' में लोकभेद से शब्दभेद, प्रत्ययभेद, व उच्चारण भेद का सकेत 'तत्तद्देश' के नामोल्लेख के साथ किया है, यथा प्राच्य और भरत से इतर गोत्रवाची शब्दो में 'अण्' की प्रवृत्ति होती है। (4 2.113), उदीच्य के ग्रामवाची शब्दो में 'अञ्' (4 2.109), वाहीक देश के ग्रामवाचक शब्दो से इतर शब्दों में 'ष्ञ् , ञिए' (4 2 117), तथा उशीनर देश के ग्रामवाचक शब्दो में विकल्प से 'ठञ्' और 'ञि' आदि (4 2 118) प्रत्यय प्राप्त होते हैं।

वार्तिककार ने स्पष्ट सकेत दिया है कि तद्युगीन सस्कृत मे एक अर्थ के लिए अनेक नामो का प्रचलन था—'एकार्थे शब्दान्यत्वात् दृष्ट लिङगायवम् (4 1 92 6), तद्यथा तारका नक्षत्रम्, गेहम् कुटी मठ इति।'[5]

1.3. मध्य भारतीय आर्यभाषा-काल

सस्कृत का विकास जब प्राकृत के रूप में हुआ, तो कालक्रमेण उसने अनेक क्षेत्रीय रूपों का विकास कर लिया था तथा उनका स्पष्ट विवरण हेमचन्द्र, मार्कण्डेय, रामचन्द्र तर्कवागीश, आदि प्राकृत के वैयाकरणो की कृतियो में मिलता है।

1.3.1. अशोक के अभिलेख—भाषा-सर्वेक्षण के विलक्षण नमूने

मध्य भारतीय आर्यभाषा-काल की ईसापूर्व तीसरी शताब्दी के अशोक के अभि लेख शब्द भूगोल के इतिहास में अभूतपूर्व उदाहरण कहे जा सकते है। प्राय समान विषय वाले इन अभिलेखो को अशोक ने अपने सचालकत्त्व म विभिन्न भौगो लिक क्षेत्रो में उत्कीर्ण करवाया था, जिससे विविध क्षेत्रों के मातृभाषियों तक उनके सदेश उन्ही की क्षेत्रीय बोलियो (resonal languages) के माध्यम से प्राप्त हो जाएँ। अशोक के ये अभिलेख निस्सदेह भाषा-सर्वेक्षण के विलक्षण नमूने प्रस्तुत करते है। डा० मधुकर अनन्त महेन्दले के शब्दो में—'The inscriptions of Ashoka have an importnce of their own in the MIA languages They offer to the students of Indian linguistics a remarkable specimen of a linguistic survey recording the dialect variations current in the different regions af Mauryan Empire [6] यह आश्चर्यजनक प्रतीत होता है कि भारत का भाषा-सर्वेक्षण का इतिहास प्रस्तुत करते समय लोगो का ध्यान इस अमूल्य निधि पर नही गया है।

1 3 2 अशोक के इन अभिलेखो के पश्चात् पतंजलि के महाभाष्य का सकेत

दिया जा सकता है, जहाँ लोक में एक ही शब्द के अनेक रूपों का प्रचलन बताया गया है—

गौरित्यस्य गावी गोणी गोपोतलिकेत्येवमादयोऽपभ्रंशाः ।

(महाभाष्य, 1.1.1.)

भरत ने अपने नाट्यशास्त्र में नाटकों में (विविध पात्रों द्वारा) प्रयुक्त होने वाली अनेकानेक विभाषाओं का उल्लेख किया है तथा संस्कृत के नाटककारों ने ऐसी समाजबोलियों पर विशेष बल दिया है । इससे स्पष्ट है कि प्राचीन और मध्य भारतीय आर्यभाषा-काल में यहाँ के लोगों का ध्यान क्षेत्रीय और सामाजिक बोलियों पर था ।

1.4. नव्यभारतीय आर्यभाषा-काल में अलबेरूनी (1030 ई०) से लेकर ग्रियर्सन ने अपने काल तक के बोली-अध्ययनों का संक्षिप्त इतिहास भाषासर्वेक्षण (खंड 1, भाग 1) में प्रस्तुत किया है । उसका समाहार करते हुए कहा जा सकता है कि 1785 ई० तक भारत में प्राप्त सामग्री के संकलन, संस्कृतेतर बोलचाल की भाषाओं की विद्यमानता के ज्ञान, शब्दावलियों के संग्रह, तथा ईश-प्रार्थना के कुछ बोलियों में अनुवादों के संकलन के पश्चात् ही लोगों की दृष्टि बोलियों के तुलनात्मक अध्ययन की ओर गई तथा 1786 ई० में William Jones के अध्ययन के परिणामस्वरूप देश व विदेश में तुलनात्मक भाषाविज्ञान का सूत्रपात हुआ ।

1.5. तुलनात्मक पद्धति का काल

Bopp तथा उनके निकटवर्ती अन्य अनुयायियों के द्वारा पुरस्स्थापित इस तुलनात्मक पद्धति ने संस्कृत व अन्य भारोपीय भाषाओं की संबद्धता को सामान भाषिक तत्त्वों की समानता के आधार पर निश्चित किया । 'उन्होंने अपना सिद्धांत उन ध्वनिकीय क्रमों के आधार पर बनाया, जिन्हें उस युग में अनुचित रीति से नियम कहा जाता था । इस प्रकार Schliecher तथा अन्य नव्यवैयाकरणों की त्रुटिपूर्ण व्याख्या में उन ध्वनिकीय क्रमों की व्याख्या व उनका प्रयोग भौतिक जगत् के नियमों के अनुसार होता था । Grassmann तथा Verner द्वारा प्रथम जर्मनव्यंजन-परिवर्तन पर स्पष्टीकरण प्रस्तुत करने व इसी प्रकार की अन्य समस्याओं पर भाषाविज्ञानियों की व्याख्या के बावजूद यह प्रतीत हुआ कि आदर्श-भाषा के कुछ तत्त्व तब भी अनियमित थे । उस समय कुछ भाषाविज्ञानियों ने यह अनुभव किया था कि आदर्शभाषाओं की अनियमितताएँ अपरिहार्य हैं, क्योंकि वे मिश्रणयुक्त होती हैं । यदि विशुद्ध भाषा प्राप्त करनी है, तो अन्वेषक को प्रतिदिन के व्यवहार की भाषा का संचय करना पड़ेगा, जिसे सामान्यतया बोली

कहा जाता है ।'[7] तदनुसार लोगों की रुचि बोलियो के अध्ययन की ओर गई तथा विविध बोलियो के व्याकरणों का कोशो के निर्माण का कार्य प्रारम्भ हुआ ।

1.6. नव्यभाषिकी-युग

परंपरावादी तुलनात्मक अध्ययन के विरोधियों में H. Schuchardt उल्लेखनीय है, जिन्होने नव्यवैया-करणो के प्रकृतिवाद व दृढ़ समानता पर भाषा की आध्यात्मिक व्याख्या से प्रहार किया व भाषा को एक ऐतिहासिक सत्य के रूप में स्वीकार किया । उन्होने यह प्रदर्शित किया कि विविध समभाषाश-रेखाएँ एक ही क्षेत्र में नही मिल पाती है । अतएव नव्यवैयाकरणों ध्वनिपरिवर्तन के नियमितता के विरोध में उन्होंने प्रत्येक शब्द के निजी इतिहास के बारे को प्रारम्भ किया था (सिद्धात नामक अधिकरण प्रष्टव्य) । ऐसी स्थिति में यह आवश्यक हो गया कि प्रत्येक भाषिक तत्त्व का पृथक्-पृथक् प्रदर्शन व अध्ययन हो ।

इस प्रकार तुलनात्मक भाषाविज्ञान के विरोध में शब्द-भूगोल का विकास हुआ (अतएव शब्द-भूगोल तुलनात्मक भाषाविज्ञान का चिरऋणी है), किंतु नव्यभाषिकी-युग में बोलियो की क्षेत्रीय भिन्नता को प्रदर्शित करने के लिए मानचित्रो का उपयोग नही होता ।

1.7. बोलीगत भिन्नताओं का मानचित्रों में प्रदर्शन

बोलीगत क्षेत्रीय भिन्नता को मानचित्रो के माध्यम से प्रदर्शित करने का परामर्श सर्वप्रथम 1814 ई० में French Royal Society Antiquaries को दिया गया था,[8] तथा यथावसर कुछ मानचित्र भी बनाए जाते थे; यथा Prince Bonaparte का 1876 ई० का लघुमानचित्र, जो इंग्लैण्ड की बोलियो के वर्गीकरण का प्रथम प्रयास था,[9] किन्तु शब्द-भूगोल का मानचित्रावलीपरक सोद्देश्य कार्य जर्मनी के Wenker से ही प्रारम्भ होता है ।

टिप्पणी तथा संदर्भ

1. W. P. Lehmann, Historical Linguistics, Ch. Milka Ivic, *Trends in Linguistics.*
2. देखिए रामायण—मिल्वत: संस्कृतं वदन् ।
3. यास्क, निरुक्त (सं० लक्ष्मण स्वरूप), 2. 2.
4. पतंजलि, महाभाष्य, 1.1 1.

5 तत्रैव (कीलहार्न द्वारा संपादित) पंक्ति 22, 244
6. M. A. Mehendale, Historical grammer of inscriptional Prakrits, Poona, 1948, Introduction, p. XVIII
7. W. P. Lehmann, तत्रैव ।
8. J. T. Wright, 'Language Varieties', Encyclopaedia of Linguistics Information and Control (eds. A. R. Meetham and R. A Hudson) oxford, 1969, p. 246
9 J T Wright, तत्रैव ।

2

शब्द-भूगोल तथा शब्द मानचित्रावलीपरक कार्य का प्रवर्तन

मार्गदर्शक Georg Wenker व उनका कार्य

2. 1. उन्नीसवीं शताब्दी के अंतिम चरण में यूरोप की भिन्न-भिन्न भाषाओं, यथा जर्मन व रोमांस, में बोलीगत मानचित्रावलियो पर फलप्रद कार्य हुए थे। इस प्रकार की व्यापक मानचित्रावलियो में प्रथम थी Georg Wenker Deutscher Sprach atlas (1876 ई० में प्रकाशित) इस रूप में Wenker को शब्द-भूगोल व शब्द-मानचित्रावली का प्रवर्तक माना जा सकता है।

Georg Wenker का उपर्युक्त प्रारम्भिक प्रयास राइनलैण्ड के अध्ययन तक सीमित था, किन्तु उसके पश्चात् उन्होंने उत्तर तथा मध्य जर्मनी के सम्पूर्ण क्षेत्र को अपने अन्वेषण का विषय बनाया। उनकी सर्वेक्षण-योजना 1879 ई० से 1888 ई० तक चलती रही।

Wenker की प्रश्नावली में कुल चालीस वाक्य थे। इन वाक्यों में प्रतिदिन के व्यवहार की बातें थी तथा इनका चयन सतर्कता के साथ किया गया था, जिससे बोलीगत विभेदकताओं की प्रभूत सामग्री का सचय हो सके। उदाहरणार्थ उनके एक वाक्य का हिन्दी अनुवाद इस प्रकार है—'जाड़े में सूखे पत्ते हवा के झकोरे से मँडराया करते हैं।'

Wenker ने सर्वप्रथम 40736 स्थानो की पाठशालाओ के अध्यापको से सामग्री-सचित करने की रूपरेखा प्रेप प्रश्नावली के माध्यम से बनाई थी, किन्तु कार्यकाल में वह सख्या बढ़कर 49362 हो गई। शिक्षकों को निर्देश दिया गया था कि वे अपने-अपने जिले की विशेष बोली में ही वाक्यो का लिप्यकन करें। इसके पश्चात् बोलियो के नमूनो को मारबर्ग भेज दिया गया था। वहाँ सामग्री

के प्रत्येक स्रोत को संचालक के निर्देशन में पृथक्-पृथक् मानचित्रों से दर्शाया गया तथा उसके घटना-स्थलों के साथ बोलियों की विशेषताओं को भी अंकित किया गया।

Wenke के कुछ परिणाम उपरि चर्चित मानचित्रावली के अतिरिक्त Sprachtlas Von Nord und Mitteldeutschland (1881 ई०) में प्रकाशित हुए हैं। मानचित्रों में बोलियों के जिस रूप को दर्शाया गया है, उसमें भाषा के विविध स्तरों में प्रयुक्त शब्दावली का ही उपयोग था।

2. 2. Wenker के कार्य की उपलब्धियाँ

Wenker के अध्ययन के परिणामों ने सर्वप्रथम यह आश्चर्यजनक तथ्य प्रस्तुत किया कि आदर्श भाषा की कल्पना असंगत है, क्योंकि स्थानीय रूप व्याकरण के विरोधी होते हैं। व्यावहारिक भाषाओं पर व्याकरण का नियंत्रण नहीं हो सकता। इनके द्वारा निर्दिष्ट समभाषाओं के संघात बोली-सीमाओं को अंकित करने के लिए एक विलक्षण साधन के रूप में प्रस्तुत हुए हैं तथा नव्यवैयाकरणों के ध्वनि-नियम का सिद्धांत अव्यावहारिक प्रतीत हुआ है। Wenker ने यह मत स्थापित किया है कि यदि बोलियों के वास्तविक स्वरूप को प्राप्त करना है तो लोकव्यवहार का ज्ञान आवश्यक है। जर्मन-मानचित्रावली में बोलियों की तुलना की व्यावहारिक सहायता के लिए प्रत्येक मानचित्र के साथ एक पारदर्शी पत्र है, जिस पर प्रमुख समभाषाश-रेखाओं का अंकन है। इस आधार पर पराच्छादन-विधि से विविध रेखाओं के संघात किंवा बोली-सीमा का ज्ञान हो सकता है। इनकी सामग्री नीदरलैण्ड, बेलजियम, स्विटजरलैण्ड, आस्ट्रिया, बाल्टिक जर्मन, व इसी प्रकार अन्य जर्मन-भाषी क्षेत्रों से संगृहीत थी, जिसके माध्यम से जर्मन भाषा का विस्तार पहली बार लोगों की समझ में आया।

2. 3. Wenker के कार्य की कमियाँ

यद्यपि एक गम्भीर उपलब्धि के रूप में यह कार्य महत्वपूर्ण है, क्योंकि इसके अन्तर्गत जर्मनी का सर्वाधिक भाग सम्मिलित है, जिससे पचास हजार के लगभग लिप्यङ्कनों से विस्तृत सूचना मिलती है तथापि Wenker की बोली-योजना में अनेक कमियाँ हैं।

इसकी एक सबसे बड़ी कमी यह है कि इसका अत्यावधि पूर्णरूपेण प्रकाशन नहीं हो पाया है[1] तथा जो विद्वान् जर्मन-सामग्री का उपयोग करना चाहते हैं, उन्हें मारबर्ग के प्राचीन संग्रहालय में जाना पड़ता है। दूसरी कमी यह रही है कि लिप्यंकन का कार्य प्रशिक्षित लोगों के द्वारा नहीं किया गया।

लिप्यंकन में वैयक्तिक भिन्नता स्वाभाविक है और यदि अप्रशिक्षित लोगो का पूरा समुदाय ही हो, तो उसे सुधारने का कोई प्रयास सम्भव नही है। ध्वनिप्रक्रियात्मक अध्ययन में इस प्रकार की कमी बहुत गभीर है। जिन चालीस वाक्यो को Wenker ने लिया था, उनमें भी रूपप्रक्रियात्मक भिन्नता के लिए बहुत कम सामग्री मिलती है तथा शब्द प्रक्रियात्मक अन्तर के लिए उससे भी कम है।

2. 4. Wenker की त्रुटियो के सशोधन का कार्य

Wenker की इन कमियो को दूर करने के लिए जर्मनी के विद्वानो ने भरसक प्रयास किया है। 'प्रशिक्षित लोगो के द्वारा सामग्री प्रस्तुत की जाए,' इस दृष्टि से युवक भाषाविज्ञानियो ने विविध स्थानो की बोलियो के नमूनो को एकत्र किया है, जो उपर्युक्त मानचित्रावली की अपूर्ण सामग्री के पूरकरहे है। इस प्रकार जर्मनी में अधोलिखित पूरक कार्यों के साथ Wenker की प्रारम्भिक भूलो को सुधारने का प्रयास किया गया है।

2.4.1. जर्मन मानचित्रो को आधार मान कर F. Wrede के सम्पादकत्व में अनेक कार्यकर्त्ताओ ने विविधस्तरीय अध्ययनो को प्रस्तुत किया है। Deutscher Sprachtlas नाम से उनका कार्य 1926-56 ई० तक सम्पादित हुआ।

2.4.2. Adolf Bach ने विविध बोलियो की प्रचुर सामग्री जुटाई है। 1950 ई० में (हेदेलवर्ग से) प्रकाशित Deutsche Mundartforschung एतद्विषयक पूर्ण सूचना देती है।

2.4 3. *अपूर्ण सामग्री की पूर्णता के लिए 1939 ई० में Walther* Mirzka ने एक दूसरी प्रश्नावली भेजी थी। उसमें ऐसे प्रश्न सम्मिलित किए गए थे, जिनसे प्रतिदिन के व्यवहार के शब्दो को प्राप्त किया जा सके। उनके परिणाम Deutsche Wortatlas (= German Word Atlas) के नाम से प्रकाशित हुए हैं। उसके साथ अलग-अलग शब्दो पर उनके लेख भी है। यह उल्लेखनीय है कि इसके पूर्व Mrtzka ने Sprachtlas में काम किया था, अतएव बोली—भौगोलिक समस्याओ से वे पूर्णत परिचित थे। उनका यह कार्य विशुद्ध रूप से शब्द प्रक्रियात्मक भूगोल का था, जिसमे लौकिक विभाषाओ के शब्दो की यात्रा का विवेचन है। Mitzka के कार्य की अधोलिखित विशेषताएँ हैं—

(क) पार्श्ववर्ती समुदायो को उचित स्थान दिया गया है।

(ख) इसकी योजना Sprachtlas के अनुरूप थी, जिससे निष्कर्षों को

समानान्तर तुलना की जा सके व व्याख्या की समान पद्धति अपनाई जा सके।

(ग) ऐसे प्रत्येक स्थान मे सूचना जुटाई गई थी, जहाँ पाठशाला चलती हो। अतएव इसमें लगभग 52800 समुदाय थे।

(घ) प्रश्नावली छोटी थी, जिससे केवल 200 शब्दो के पर्यायो को जुटाने का कार्य किया गया था।

(ङ) दो सौ इकाइयो की सामग्री की तुलना विविध बोली-कोशो मे प्राप्त शब्दो से की गई थी।

(च) पत्राचार-विधि से सामग्री संकलित की गई थी।

Wortatlas का प्रथम खण्ड जून 1951 मे प्रकाशित हुआ, जिसमें 43 मानचित्र थे। शेष पाँच खण्ड 1957 ई० तक प्रकाशित हुए। इस प्रकार छहो खण्डो में कुल 213 मानचित्र सम्मिलित थे।

2.4.4. उच्चारण की सामयिक सामग्री को प्रस्तुत करने के लिए E. Zwirner ने 1950 ई० मे 1200 स्थानो की बोली को टेप में भरा था। यद्यपि ये टेप अत्यंत संक्षिप्त है तथापि उनकी रिकार्डिंग परवर्ती विश्लेषको के लिए अत्यंत उपयोगी है। टेप रिकार्डिंग का एक लाभ यह भी है कि उसकी प्रतियाँ दूसरे अन्वेषको को भी दी सकती है।

2.4.5. योरोप के दक्षिण जर्मनी, आस्ट्रिया, फ्रांस, स्विटजरलैण्ड, इटली, हंगरी, रूमानिया, यूगोस्लाविया, तथा चेकोस्लोवाकिया के जर्मन-भाषी क्षेत्र का बोलीवैज्ञानिक अध्ययन मारबर्ग से 1967 ई० मे प्रकाशित Beitrage zur oberdeutschen Dialektologie मे मिलता है। इसके सम्पादक Ludwig Erich Schmitt हैं। इस ग्रंथ में Peter Wiesinger का 104 पृष्ठों का लेख अत्यंत महत्त्वपूर्ण है, जिसमे उन्होने 13 मानचित्रो के माध्यम से समभाषाग-रेखाओ के सधान को विशद किया है व स्टीरिया का पूर्ण क्षेत्रीय वितरण प्रस्तुत किया है।[2]

इसी प्रकार जर्मनभाषी स्वाबिया पर Hermann Fischer (1895), पेंसलवानिया पर Carroll E. Reed व Lester H. Seifert (1954) सुदेतेंलैण्ड पर Ernst schwarz (1954), व तुरिंगिया पर H. Hucke (1961) की क्षेत्रीय मानचित्रावलियाँ प्रकाशित हो चुकी हैं। इसी प्रकार जर्मन बोली-विज्ञान पर विविध विद्वानो के कार्यों का नामोल्लेख किया जा सकता है—

(क) Anneliese Bretschnieder—Deutsche Mundartenkunde (1934)

(ख) Ernst Schwarz—Die deutschen Mundarter (1950)

(ग) Walter Henzen—Schriftsprache und Mundarter (1954)

(घ) R. E. Keller—German dialects : Phonology and morphology, pp. 396, Mancester : The University Press, 1961.

टिप्पणी और संदर्भ

1. 1926 ई० से ये मानचित्र F. Wrede के सम्पादन में मुद्रित होते रहे हैं, किंतु मुद्रण का कार्य अद्यावधि समाप्त नहीं हुआ।

2. Alfred Bammesbergei, Review of Bertrago Zur Oberdeutschen Dialektologic, Language (1968) 44 : 634—36,

3

शब्द-भूगोल और शब्द-मानचित्रावलीपरक कार्य का सम्वर्धन

Gillieron का अद्वितीय कार्य

3. 1. शब्द—भूगोल के प्रख्यात समर्थक Jules Gillieron (1845-1926) ने अपनी मूल धारणा फ्रांस के भाषिक सम्प्रदाय के अनुरूप बनाई थी। प्रारंभ से ही उन्होंने जर्मन विद्वान् की भूलों से बचने के लिए युक्ति निकाल ली थी। वे बहुत भाग्यशाली व्यक्ति थे कि उन्हे Edmond Edmont नामक एक पंसारी की सेवाएँ मिली थी, जिसे क्षेत्रीय कार्य में दैवी वरदान सा प्राप्त था। उसमें ध्वनियों को यथातथ्य लेखन की एक दूर दृष्टि थी तथा ध्वनिकीय सूक्ष्म अर्थान्तर के लिप्यंकन में वह अतीव सक्षम था।

Gillieron ने अपनी सारी खोजों पर एकमात्र Edmont पर ही विश्वास किया। तदनुरूप उन्होंने उसे प्रशिक्षण भी दिया था। एक स्थान से दूसरे स्थान तक साइकिल चलाते हुए वह अपने को सजातीय व अनुकूल वातावरण में ढालता गया था। उसने सीधे प्रश्नो के माध्यम से सामग्री संचित की थी, वाक्यो के कुछ नमूनों के द्वारा नही।

Edmont को Gillieron ने 1920 इकाइयों वाली एक प्रश्नावली (2000 इकाइयो वाली नही, जैसा कि L. Bloomfield मानते हैं) दी थी, जिसमें शब्द, वाक्यांश, उपवाक्य, तथा वाक्य थे। (Bloomfield का यह कथन मानने योग्य नही है कि उन इकाइयो में वाक्य नही सम्मिलित थे)। वस्तुतः Gillieron ने अपना अधिक समय और शक्ति इस प्रश्नावली को तैयार करने में लगा दी थी। उन्होंने चिर परिचित अभिव्यक्तियों तक ही अपने को सीमित नही रखा, अपितु नूतन अभिव्यक्तियों को भी स्थान दिया, जिससे यह पता लगाया जा

सके कि वक्ताओं ने उन्हें कैसे स्वीकारा या अस्वीकारा है। उन्होंने दैनन्दिन वस्तुओं के लिए प्रचलित नामों की अपेक्षा परंपरया प्राप्त शब्दों को अधिक पसंद किया, क्योंकि उनका विश्वास था कि बोली की सामर्थ्य व विभिन्नता की वाचक अनेक वस्तुएँ हो सकती हैं।

प्रश्नावली को समाप्त करने के पश्चात् उन्होंने 639 स्थानों का चयन किया, जिसमें फ्रेंच-भाषी बेलजियम व स्विटजरलैण्ड के भी स्थान थे। Gillieron खुद स्विटजरलैण्ड निवासी थे, अतएव अपनी मातृभाषा के संबंध में उन्हें पूर्ण जानकारी थी। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि Gillieron ने जर्मन योजना की तुलना में कम स्थानों को चुना था।

अगस्त 1897 से दिसम्बर 1901 तक के साढ़े चार वर्षों में Edmont ने प्राय सभी गाँवों व झोपड़ियों की यात्रा की थी। उसने वहाँ के निवासियों की भाषा का अध्ययन किया तथा प्रश्नावली के अनुसार उनके उत्तरों को ध्वनिकीय लिपि में प्रस्तुत किया।

सामग्री-संकलन के पश्चात् प्रत्येक शब्द के लिए एक मानचित्र बनाया गया। ALF के संक्षिप्त नाम से सुपरिचित उनकी कृति Atlas Linguisque de la France (दो खंडों में क्रमश 1902 व 1912 ई० में प्रकाशित) आज बोलीविज्ञान की एक उत्कृष्ट रचना मानी जाती है। भविष्य में होने वाले शब्द भूगोल या बोलीभूगोल के लिए यह एक आदर्श ग्रंथ बन गई है।

3 2 ALF की उपलब्धियाँ

Gaston Paris के Les Parlers de France नामक ग्रंथ की रीति का अनुसरण करने वाले उनके शिष्य Gillieron शब्द भूगोल के आचार्य हैं। वे जिस पथ पर चले, वह भाषाविज्ञान का एक व्यवस्थित अंग बन गया तथा उसके आधार पर तुलनात्मक पद्धति का संशोधन व नवीनीकरण हुआ। सच तो यह है कि Gillieron के प्रथम अनुसंधान के पश्चात् रोमांस भाषाओं के क्षेत्र में पुरातनपंथी व्युत्पत्तिशास्त्र की भयंकर भूलें लोगों के सामने आईं। यह भी स्पष्ट है कि किसी विकास के अथ व इति के मध्य सम्बन्धों तक ही सीमित परम्परागत व्युत्पत्ति ने कभी-कभी शब्दों के इतिहास को भी विकृत करते हुए सम्पूर्ण मध्य स्थितियों की उपेक्षा की थी। संभवत Gillieron ने एक दृढ़ विश्वास और पूर्णता के साथ ध्वनिकीय व्युत्पत्ति को असफल घोषित किया था।

Gillieron तथा उनके सम्प्रदाय ने मानवीय भाषा के बहुविध समपार्श्वों को जो नई विचारधारा उदाहरण के रूप में प्रस्तुत की थी, उसे समान रूप से

सब की स्वीकृति मिली थी। 1919 ई० में उनका भाषण La Faillite प्रकाशित हुआ था, जिसके पूर्व ही ALF का प्रकाशन हो चुका था। जिस प्रकार भूगर्भशास्त्री धरातल के आकार विचार से कल्कीय प्रक्रिया का अन्वेषण करता है, उसी प्रकार भाषाविज्ञानी भी किसी भाषिक क्षेत्र का विश्वसनीय निरूपण चाहता है, जिससे वह इतिहास का पुनर्निर्माण कर सके। इस उद्देश्य के लिए कोश न तो कभी सहायक थे और न ही आज हैं।

इसके अतिरिक्त सूक्ष्म निरीक्षण तथा ALF के मानचित्रो की तुलना ने शब्दों के विकास के अनेक तथ्यो को जन्म दिया है, जिससे पूर्ववर्ती भाषाविज्ञानी अपरिचित थे। इसी प्रकार नवप्रवर्तन, आदि को जन्म देने वाली प्रक्रियाओ की सम्पूर्ण जटिलताओ से भाषाविज्ञानियों को ALF के माध्यम से पहली बार परिचय प्राप्त हुआ।

जब Gillieron ने अपना कार्य प्रारम्भ किया था, तब उन्होने खुद उन परिणामो की कल्पना न की होगी, जो Edmont की सामग्री से प्राप्त होने वाले थे। उस वृहत्कार्य की समाप्ति के पश्चात वे परिणाम शीघ्र ही Gillieron व उनके शिष्य Jean Mongines तथा Mario Roques के अध्ययन के फल स्वरूप लोगों के सामने आए। इन अध्ययनों में मनोवैज्ञानिक प्रकृति के तत्वों पर विशेष ध्यान दिया गया, जो इनके पूर्व महत्त्वपूर्ण नही माने जाते थे। इन अध्ययनो से विविध सामाजिक वर्ग, लिंग, व अवस्था-भेद के आधार पर क्षेत्रीय कार्यों की प्रकृति को निर्धारित करने की जो नई दिशा मिली, उससे नव्यवैयाकरणो के सतही अध्ययनो का मूल्य और भी कम हो गया।

ALF की इन महत्त्वपूर्ण उपलब्धियो के कारण यदि Gino Bottiglioni नामक शब्द भूगोलवेत्ता उससे ही भाषा भूगोल (शब्द भूगोल) का जन्म मानते हों और उसे ही चरम परिणति मानते हो,[1] तो कोई आश्चर्य नहीं होना चाहिए। इसकी जैसी प्रकृति के पूर्ववर्ती कार्य में इसकी जैसी व्यापक दृष्टि नही मिलती है। नई पद्धति के प्रथम परिणामो के मूल्य को समझते हुए कोई भी ALF के सम्प्रवर्तक या उसके शिष्य के उत्साह को समझ सकता है, जो उन दोनो ने परपरावादी नव्यवैयाकरणो के विरोध में बनाया था।

3. 3. ALF की कमियाँ

Gillieron एक प्रखर आलोचक थे। उन्होंने यह सोचा था कि भौगोलिक क्षेत्रों की तुलना में अनेक जटिल भाषिक समस्याओ की व्याख्या हो सकती है। इसीलिए उनका कार्य एकमात्र मानचित्रावली तक ही सीमित है। उनके जीवन-

काल में जिन लोगों ने मानचित्रावलियो के दोषों की ओर इंगित किया था, उनसे असहमति व्यक्त करते हुए उन्हें (तथाकथित दोषों को) पूर्ण विश्वसनीय माना तथा मानचित्रावली के प्रमाणो के आधार पर ध्वनिकीय नियमों के कपोलकल्पित कार्य को समाप्त करना चाहा।

Gillieron के समकालिक समालोचक Benedetto Croce भी आदर्शवाद से सहमत थे। उन्होंने भी भाषा की रचनात्मक कला के आधिभौतिक महत्त्व पर बल देते हुए *नव्यवैयाकरणो के प्रकृतिवाद का विरोध किया था।* किंतु मूलतः दोषों ने ही भिन्न-भिन्न सिद्धान्तो का अनुसरण किया तथा भिन्न-भिन्न दृष्टियों को लेकर चले। इन दोनों ने ही सत्य के एकांश को ही पकडा था।

Gillieron ने सोचा था कि वे इतिहासमूलक तुलनात्मक पद्धति की सेवाओ को त्याग सकते हैं, किंतु जब उनकी उत्कृष्टतम रचनाओ की त्रुटियाँ सामने आईं, तब भौगोलिक तुलना का विषय एक निश्चित दायरे के अन्तर्गत रखा जाने लगा। उदाहरणार्थ, यदि भौगोलिक तुलना सर्जनात्मक मनोवेग के परिणाम को *समध्वनिकता के रूप में प्रस्तुत कर सकती है, तो यह वक्ताओ के मन में* नवप्रवर्तन के स्थिर हो जाने के कारणो की व्याख्या नही कर सकती। वक्ताओ ने किन कारणो से किसी नवप्रवर्तन को स्वीकार किया या अस्वीकार किया, इसका प्रत्युत्तर शब्द-भूगोल के पास नही है।

अनेक प्रश्नो का उत्तर केवल शब्द-भूगोल के माध्यम से नही दिया जा सकता। हमें इस पर भी विचार करना चाहिए कि ध्वनिकीय अपक्षय से शब्दो की मृत्यु की विचारधारा उस विशेष ऐतिहासिक ध्वनिकी पर आधारित थी, जिसके प्रति *Gillieron तथा उनके अनुयायियों ने अत्यधिक तिरस्कार-भाव अपनाया था।* Bottiglioni का यह मत अर्थपूर्ण है कि "ध्वनिनियम जिसे भाषा भूगोल के द्वार-मार्ग से खदेड़ दिया गया था, उसने वातायन-मार्ग से पुनः प्रवेश किया।"[2] Gillieron के अनुयायी यह कहते रहे हैं कि उन्होंने परम्परामूलक पद्धति को निष्प्रभावित कर दिया है, किन्तु जिन्होंने ध्वनि-नियमों का अध्ययन और अन्वेषण किया था, उनकी कृतियाँ वृथा सिद्ध नही हुईं। इनमें से तो अनेक नियम प्रखर आलोचना के पश्चात् स्थिर भी रहे हैं तथा कुछ ने ऐतिहासिक प्रमाणों के *आधार पर प्रामाणिक रूपो की रचना में सहायता भी पहुँचाई है।* ऐतिहासिक साक्ष्यो के आधार पर अब हम उस निश्चय तक पहुँच जाते हैं, जो सामान्य ध्वनिकीय तुलना व क्षेत्रीय तुलना में संभव नही है या उसका अभाव मिलता है। परम्परावादियों ने परवर्ती दोनों ही पद्धतियों पर अपना अधिकार द्योतित किया है, किंतु उनमें प्रामाणिकता का अभाव है। भाषा के अनेकविध तत्त्व हैं, अतएव

उनके अध्ययन के लिए भिन्न भिन्न पद्धतियाँ आवश्यक हैं, जिससे वे तार्किक व्याख्या प्रस्तुत कर सकें। ऐसे तत्त्व जो ध्वनिकीय और भौगोलिक तुलना की परिधि से बाहर हैं, सख्या में अनेक हैं।

कोई भी विदेशी तत्त्व जो किसी भाषा में बलात् प्रवेश करते हैं, वह उसके एक आतरिक अग बन जाते हैं, उनका भी अन्वेषण क्रम स्थापन ध्वनिकीय तथा व्याकरणिक तुलनाओ के कालक्रमिक रूप में होता है। इस कार्य में इतिहास ही प्रमुख सहायक है, क्षेत्रीय तुलना उतनी सहायक नही हो सकती। तथापि हम यह भी विस्मृत नहीं कर सकते कि समनाम व समध्वनियाँ वक्ताओ की भाषाई अनुभूतियों के लिए सदैव सहिष्णुता से बाहर नही होती। वे अपने विभिन्न अर्थों के साथ विद्यमान भी हो सकती है। ALF के उदाहरणो में rotto (=बलात्कार), rotto (=चूहा), Canto (=आवाज)—Canto (=कोना) ऐसे ही हैं। इसी प्रकार अधोलिखित शब्दो की वर्तनी अलग-अलग है, किंतु उच्चारण एक है—

Vair = अनेक

Vert = हरा

Vers = ओर

इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि विकासात्मक कारणो में परिगणित समनामता तथा समध्वनिकता को विशेष सावधानी के साथ प्रस्तुत करना चाहिए। Gillieorn के समान उन पर सदैव विश्वास नहीं कर लेना चाहिए।

इसके अतिरिक्त Gillieron के तर्क व उनके द्वारा प्रकल्पित निष्कर्षों का विरोध कम-से कम इस बात पर तो किया ही जा सकता है कि प्रत्येक शब्द-भूगोल सामग्री की दृष्टि से निर्धन होता है। सर्वाधिक सामर्थ्यवान् मानचित्रावली भी भाषिक क्षेत्र की प्रमुख विशेषताओ को स्थूलरूप से ही अभिव्यक्त कर सकती है, अन्य महत्वपूर्ण बातें उससे भी छूट ही जाती हैं। इस प्रकार के सभी कार्यों की मूलभूत कमी यह है तथा उस कमी का परिहार बहुत-कुछ शब्द मानचित्रावलियों की सुव्यवस्थित योजना व उसके सचालन पर निर्भर करता है। जहाँ तक ALF का प्रश्न है, उस पर जो परीक्षण हुए है, उनमे लोगो के सम्मुख अत्याधिक कमियाँ आई है। चूँकि मानचित्रावली एक ऐसा आधार है, जिस पर शब्द-भूगोल खड़ा हुआ है, अतएव Gillieron के परवर्ती विद्वानो ने उस ओर विशेष ध्यान दिया है।

3.4 AFL की परवर्ती मानचित्रावलियाँ

Gillieron के पश्चात् फ्रासीसी भाषी क्षेत्र पर अनेक विद्वानो ने कार्य किया

है, जिनमें Dauzat, Guiter, Block, Millardet, व Coseriu, आदि का नाम उल्लेखनीय है। इन विद्वानों की कृतियों में पूर्ववर्ती कार्य का संशोधन व परिवर्द्धन है।

3.4.1. Abert Dauzat की मानचित्रावली

Gillieron के पश्चात् Albert Dauzat ने Le Nouvel Atlas linguistique de la France नामक (NALF संक्षिप्त नाम प्रचलित) फ्रांसीसी-मानचित्रावली प्रस्तुत करके एक अत्यंत साहसपूर्ण कार्य का परिचय दिया है। उनके सिद्धांतमूलक ग्रंथ La geographie Linguistique का प्रकाशन 1922 ई० में पेरिस से हुआ था।

NALF में कई दर्जन मानचित्रावलियाँ हैं तथा अत्यधिक संख्या में वार्तालाप प्रस्तुत किए गए हैं, जो पूर्ववर्ती मानचित्रावलियों में दुर्लभ हैं। इस अन्वेषण के जाल में सुन्दर ताने-बाने हैं तथा प्रशिक्षित अन्वेषकों की संख्या भी अधिक मात्रा में मिलती है। यदि Gillieron ने एक तथ्यपूर्ण सशक्त तर्क प्रस्तुत किया था कि उन्होंने केवल एक ही कान पर विश्वास किया था, अतएव उसमें एकरूपता की गारंटी है तो Dauzat ने यह तर्क प्रस्तुत किया कि दूसरी पद्धतियों से भी तत्समान या उससे भी अधिक समरूपता प्राप्त हो सकती है और वह है क्षेत्रान्वेषकों का पूर्ण तथा पद्धतिगत प्रशिक्षण। ऐसा प्रशिक्षण उन्होंने पेरिस की LDHI नाम से विख्यात एक संस्था में अपने अन्वेषकों को दिया था। Dauzat के सभी अन्वेषक स्वयंसेवी तथा अवैतनिक थे। उन्होंने प्रश्नावली का कम प्रयोग किया तथा उसकी अपेक्षा उन्होंने स्वतंत्र वार्तालाप की पद्धति अपनाई थी। सर्वत्र सुविधानुसार केवल कथोपकथन के लिए प्रयास किया गया था। Dauzat का NALF आज की विषम परिस्थिति में विद्वानों के निस्स्वार्थ सहयोग का एक विलक्षण उदाहरण है।[3]

3.4.2. Guiter की मानचित्रावली

Dauzat के आग्रह पर Henry Guiter ने 1942 ई० में Roussillon क्षेत्र की मानचित्रावली प्रस्तुत करने के लिए सर्वेक्षण-कार्य किया था, विश्वयुद्ध के कारण वह कार्य कुछ समय के लिए स्थगित रहने के कारण 1947 ई० से पुनः प्रारंभ किया गया तथा उसकी समाप्ति 1951 ई० में हुई। Guiter के ये परिणाम 1966 ई० में प्रकाशित Atlas linguistique des Pyrenees orientales में 585 मानचित्रों की विवरणिका के रूप में मिलते हैं। फ्रांस

की क्षेत्रीय मानचित्रावलियो की तुलना में ALPyO (संक्षिप्त नाम) अधोलिखित बातो में कुछ भिन्न है ।

(क) अक्षर-क्रम से 585 मानचित्रावली केवल एक खण्ड में है।

(ख) यह एक विशालकाय मानचित्रावली है। व्यावहारिक दृष्टि से क्षेत्र के प्रत्येक गाँव को इसमें सम्मिलित किया गया है। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि Gilleron के ALF में प्रति पाँच गाँव मे एक, Dauzat के Catalian Atlas में प्रति पाँच गाँव में एक, Iberian Peninsula की मानचित्रावली में प्रति सात गाँव में एक का अनुपात था, जब कि Cuiter ने अपने क्षेत्र के सभी 382 गावो का सर्वेक्षण किया है। यह ध्यातव्य है कि wenkerने DSA के लिए भी सभी गाँवो का सर्वेक्षण किया था।

(ग) ALPyO में जिस क्षेत्र का सर्वेक्षण किया गया है, वह सीमात क्षेत्र का एक विचित्र उदाहरण है, जहाँ फ्रेंच, कैतोलियन, व ओसीतन बोलियाँ पर-स्पर आच्छादन का उदाहरण प्रस्तुत करती है। -

(घ) मानचित्रो की संसिद्धि निर्दोष व मौलिक है। भूमिका में बीस मानचित्र क्षेत्र के भूगोल, इतिहास, धर्म, आदि पर विस्तृत रूपरेखा प्रस्तुत करते है।

3.4.3. अन्य मानचित्रावलियाँ

फ्रास की अन्य क्षेत्रीय मानचित्रावलियों में O. Bloch की Vosges Atlas, Georg Millardet की Linguistique et dialectologie romanes : Problems et methodes (Montpellır, 1923), तथा E. Corseriu की Lageografıa Iınguistica (Monte Video, 1956) का उल्लेख किया जा सकता है। इनमें प्रथम की विशेष प्रसिद्धि है।

टिप्पण और सन्दर्भ

1. Gino Bottiglioni, 'Linguistic geography : Achievements WORD, 10 375—387.

2. तत्रैव।

3. Simeon Potter, Modern Linguistics,

4

अन्य यूरोपीय देशों में शब्द-भूगोल तथा शब्द-मानचित्रावली

4. 1. Gillieron के कार्य को आदर्श बना कर यूरोप के साथ सभी देशों में शब्द-भूगोल व शब्द मानचित्रावलीपरक कार्य एक बार पूरा हो चुका है तथा अनेक देशों ने पुनः नई योजनाएँ प्रारम्भ कर दी हैं। *Sever Pop* ने अपने ग्रन्थ **La dialectologie (Louvain, 1950)** में इस प्रकार की 50 मानचित्रावलियों का उल्लेख किया है तथा यूरोप के विविध देशो में बोली-अध्ययन के इतिहास को अकेले 1068 पृष्ठों (द्वतीय खण्ड) मे निबद्ध किया है। उन्होंने यूरोप के बोली-अध्ययन को रोमास भाषाएँ व रोमासेतर भाषाएँ, इन दो वर्गों में विभक्त किया है तथा रोमास भाषाओ के अन्तर्गत फ्रेंच (1-115), फ्रांसो-प्राविन्सेल (277-336), कैतालिअन (373-76), स्पेनिश (377-434), पोतुगीज (435-65), इतालवी (466-618), रोमाश (619-48), डालमातिन (649-54), सारडीनियन (655-66), रूमानियन (667-733); तथा रोमासेतर भाषाओ के अन्तर्गत जर्मनिक (737-923), केल्टिक (925-55), फिनो-उगरिक (997-1041), आधुनिक ग्रीक (1043-65), अलबानियन (1067-8) को परिगणित किया है। यहाँ भाषाओ के अनुसार विवरण न प्रस्तुत कर देश के अनुसार उसका समाहार किया जा रहा है।

4. 2. इंग्लैण्ड

इंग्लैण्ड में बोलियो के अध्ययन पर रुचि लेने वाले व्यक्तियों में Walter & William Skeat का नाम उल्लेखनीय है, जिन्होने तदर्थ 1873 ई० में ही English Dialect Society की स्थापना की थी तथा जिसका उद्देश्य था—

विभिन्न उच्चारणो वाले शब्दो का चयन, वैज्ञानिक शब्दों तथा कहावतो का सकलन, व बोली के वाक्यमीय नमूनों को रिकार्ड करना। Skeat कभी भौगोलिक दृष्टि वाले व्यक्ति नही थे, अतएव अंग्रेजी के बोली-अध्ययन की सर्वाधिक सफलता ने मानचित्रावली के स्थान पर एक कोश ग्रन्थ का रूप ले लिया। Joseph Wright की English Dialect Dictionary (1896-1905) उस समय प्रयुक्त अंग्रेजी के सभी बोलीगत शब्दो की सूची थी। Wright ने अपना कोश सर्वथा उपयुक्त व्यक्ति Skeat को समर्पित किया। जब तक वे जीवित रहे, पूरक सामग्री एकत्र करते रहे।

उनके पश्चात् Survey of English dialects नामक एक महत्वाकांक्षिणी योजना प्रारम्भ हुई तथा वह (चार चरणो में अब समाप्ति पर है। प्रथम चरण के रूप में भूमिका (Introduction) थी, जिसका प्रकाशन 1962 ई० में लीड्स से हुआ था। द्वितीय चरण मूलभूत सामग्री से सम्बद्ध था तथा Harold Orton व W. J. Halliday के सम्पादकत्त्व में उसका भी प्रकाशन हो गया है। तृतीय चरण में चार खण्डो के प्रकाशन की योजना थी, जिनमें सामग्री का विश्लेषण और विवरण प्रमुख है। चतुर्थ चरण के अन्तर्गत इग्लैण्ड की भाषाई मानचित्रावली आती है, जिसके अन्तर्गत ध्वनिप्रक्रियात्मक, रूपप्रक्रियात्मक, व वाक्यरचनात्मक तत्त्वों को प्रदर्शित करने का लक्ष्य था। यह मानचित्रावली Eugen Dieth के द्वारा सम्पादित होनी थी, किंतु 1965 ई० में उनकी अकाल मृत्यु के कारण सम्पादन का कार्य Eduard Kolb ने किया।

Kolb द्वारा सम्पादित Phonological Atlas of the Northern region (390 पृष्ठ) का प्रकाशन 1966 ई० में बर्न से हुआ था।[1] इस मानचित्रावली के निमित्त उत्तरी प्रदेश (नार्थम्बरलैण्ड, कम्बरलैण्ड, दुरहाम, वेस्टमोरलैण्ड, लकाशायर, यार्कशायर) व उत्तरी क्षेत्र का सर्वेक्षण किया गया था। इस प्रकार इसमें कुल मिला कर 80 समुदाय थे।

सामग्री को 207 मानचित्रों में सजाया गया है। प्रत्येक मानचित्र किसी शब्द की एकमेव ध्वनि को ही प्रदर्शित करता है। उदाहरणार्थ, man की a ध्वनि। विविध ध्वनियो को सकतों के माध्यम से अकित किया गया है तथा जहाँ अनेक संकेतो की आवश्यकता पड़ी है, वहाँ स्पष्टता के लिए रगो का भी सहारा लिया गया है। प्रत्येक मानचित्र में सङ्केतो के ध्वनिकीय मूल्य को भी प्रस्तुत किया गया है।

मानचित्रावली के मानचित्रों को इस प्रकार से क्रमबद्ध किया गया है—

(क) ह्रस्व स्वर

(ख) दीर्घ स्वर तथा संध्यक्षर
(ग) बलाघात-रहित स्वर
(घ) व्यंजन

विविध ध्वनियों वाले मानचित्रों की संख्या में कोई अनुपात नहीं मिलता; उदाहरण के लिए एक ध्वनि के प्रदर्शन 9 मानचित्र हैं तथा दूसरी ध्वनि को केवल एक मानचित्र से दर्शाया गया है।

प्रत्येक मानचित्र के प्रारम्भ में व्याख्या भी दी गई है। मानचित्रावली की दूसरी विशेषता यह है कि इसके सभी मानचित्र संकालिक दृष्टि से बनाए गए हैं तथा ध्वनियों का अथ से इति तक विवरणात्मक ढाँचा देखने को मिलता है।

उपर्युक्त मानचित्रावली के पश्चात् अब एक दूसरा कार्य शीघ्र ही प्रकाशित होकर आने वाला है जिसका नाम है Word geography of England तथा जो 1972 ई० में लन्दन के सेमीनार प्रेस में मुद्रणस्थ है। उपर्युक्त कार्य के सम्पादक H. Orton तथा Nathalia हैं। यद्यपि इस शब्द भूगोल में आने वाली क्षेत्रीय सामग्री का प्रकाशन *1972* ई० में हो चुका था, किंतु इसकी एक विशेषता यह भी है कि इसमें प्राचीन अंग्रेजी के शब्दों का भी संग्रह है। इसमें Anglo-Saxon काल से लेकर आज तक की अंग्रेजी के शब्दों को विषयानुसार मानचित्रों में प्रस्तुत किया गया है। पुस्तक कुल 300 पृष्ठों की अनुमानित है।

4. 3. इटली (क्षेत्रफल 12668 वर्ग मील)

Gillieron ने ALF में जो आदर्श प्रस्तुत किया था, वह उनके स्विस छात्रों Karl Jaberg तथा Jakob Jud को शिरोधार्य हुआ तथा दोनों के सम्मिलित *प्रयास से इटली की भाषा-मानचित्रावली का प्रकाशन* 1928 ई० से *प्रारम्भ* हुआ जो 1940 ई० तक सात खण्डों में लोगों के सामने Sprach und Sachatlas Italiens und der Sudschweiz (=Linguistic and Ethnographic Atlas of Italy and Southern Switzerland) के रूप में आई तथा उसे आज AIS के संक्षिप्त नाम से जाना जाता है। इन खण्डों का प्रकाशन जोफिंगेन से हुआ था।

नगरी क्षेत्रों की व्याप्ति, बड़े नगरों से एकाधिक सूचकों का चयन, स्थानीय *परिवेश के अनुसार प्रश्नावली का ताल-मेल, ग्रामीण क्षेत्रों पर अधिक आग्रह,* सम्बद्ध वाक्यों में शब्दों का प्रयोग, ALF के असमान मानचित्रावली में अर्थकीय वर्गों के अनुसार मानचित्रों का नियोजन, आदि इसकी कुछ प्रमुख विशेषताएँ हैं। इस प्रकार Jaberg तथा Jud ने Gillieron की कार्य-विधि में आधुनिकी-

करण किया है, जिससे उसमें विश्वसनीय और प्रामाणिकता अपेक्षाकृत अधिक है।

AIS में 2000 शब्दो वाली प्रश्नावली का प्रयोग 400 समुदायो म किया गया था। परिणामों को 1705 मानचित्रो में प्रदर्शित किया गया है। शब्द-भूगोल के इतिहास में AIS एक अमर कृति है तथा कृतिकारों के द्वारा विस्तार को प्राप्त बोली-विषयक सिद्धात प्रेरणास्पद है। शब्द भूगोल के विद्यार्थी Jaberg व Jud के चिरऋणी है।

Jaberg व Jud के पश्चात् अनेक लोगो ने इटली की शब्द-मानचित्रावलियाँ प्रस्तुत की हैं, जिनमें Tappolet, Scheurmier तथा Pellis के नाम उल्लेखनीय हैं। Ernst Tappolet एक कर्मठ व्यक्ति थे तथा उनके Die romanischen verwandtschaftsnamen mit besonder Berucksichtigung der franco sischen und *Italienischen Mundarten* का प्रकाशन AIS के बहुत पहले 1895 ई० में ही स्ट्रासबर्ग से हो गया था। उनकी इतालवी मानचित्रावली सर्वथा स्वदेशी पृष्ठभूमि को लेकर बनी थी। वे *Jabrg* व *Jud* के समान *Gillieron* से प्रभावित नही थे।

Scheurmeier ने अपनी इतावली स्विस मानचित्रावली (AIS) में पूर्ववर्ती AIS की तुलना में व्यापक क्षेत्र को चुना था। vgo Pellis की इतावली-भाषामानचित्रावली (ALI) एकमात्र इटैली-क्षेत्र तक सीमित है। Atlante linguistico Italiano के लिये Pellis ने 1933-35 ई० में सामग्री के सकलन का कार्य किया था। इसी के आस-पास *M. L. Wagner* अपनी AIS के लिये क्षेत्रकार्य (1923 25) कर रहे थे। Wagner ने 80 समुदायो का सर्वेक्षण किया था, जब कि Pellis की मानचित्रावली में 104 समुदाय परिगणित हैं। Pellis का लिप्यकन Wagner के लिप्यकन में अधिक वैज्ञानिक माना जाता है।

ALI के लिये सामग्री का संचय यद्यपि चालीस वर्ष पूर्व हो गया था, किन्तु मानचित्रों का प्रकाशन शृंखलाबद्ध चरणो में हुआ है। Pellis तथा उनके सहयोगी Temistocle Franceschi व Terracini के सम्पादकत्व में प्रकाशित Saggiodi in atlante lingustico dela Sardegna में 60 मानचित्र है, जिन्हे विशुद्धरूप में शब्दप्रक्रियात्मक मानचित्र कहा जा सकता है।

4.4. स्विटजरलैण्ड (क्षेत्रफल 15941 वर्गमील)

इतावली-मानचित्रावलियों में यद्यपि अल्पाधिक रूप में स्विटजरलैण्ड के क्षेत्र को सम्मिलित किया गया है तथा विगत शताब्दी में स्विटजरलैण्ड के विद्वानो ने स्वतन्त्र मानचित्रावलियाँ प्रस्तुत की हैं, जिनमें 1962 ई० में प्रकाशित Swiss German Atlas प्रथम गणनीय है। इस मानचित्रावली में 2600 इकाइयों वाली प्रश्नावली का उपयोग किया गया था, जिसको एक सूचक से प्राप्त करने में चार से आठ दिन तक व्यतीत हो जाते थे। प्रश्नावली के लिए जिन इकाइयों का चयन किया गया था, उनमें शब्दावली, उच्चारण, तथा वाक्यरचना की प्रतिदिन की विशेषताओं को बताने वाली (यथा, गृहस्थी के वस्तुओं के नाम, भोजन, शारीरिक अवयव, मौसम-सम्बन्धी बातें, व संख्याएँ, आदि) थी।[2]

R. Hotzenkocherle व उनके सहयोगियों के Sprachatlas der deutschen Schweiz (SDS) के दो खण्ड हैं, जिनका प्रकाशन 1965 ई० तक बने से हुआ है। इसके द्वितीय खण्ड के सभी 204 मानचित्र ध्वनि प्रक्रियात्मक प्रकृति के हैं। 1-93 तक के मानचित्र बलाघातित अक्षरो वाली स्वरो की मात्राओ से सम्बद्ध है, जिनको ऐतिहासिक रीति से प्रस्तुत किया गया है। 94-116 पर्यन्त मानचित्र प्राक्जर्मनीय क् ध्वनिम के अवशिष्टांशो की विविध स्थितियों में व्याख्या करते हैं। 117-204 मानचित्र में व्यंजनो की मात्रा का प्रदर्शन है। सम्पादकीय और मानचित्रो का रूपांकन उच्चकोटि का है। Robert Schlapfer की कृति Die Mundart des Kantons Baselland का प्रकाशन 1956 ई० में हुआ था। इस स्विस-मानचित्रावली के लिए उन्होने 212 पृष्ठों में 2500 इकाइयो की प्रश्नावली बनाई थी। सामग्री का सग्रह बेसलैण्ड से हुआ था तथा ऐसे सूचको का चयन किया गया था, जिनका जन्म 1870-90 के मध्य हुआ था।

4. 5. नीदरलैण्ड तथा बेलजियम (11750 वर्ग मील)

G. G Kloeke ने नीदरलैण्ड तथा बेलजियम क्षेत्र में केवल mouse तथा house के लिये प्रयुक्त शब्दो के स्वर ध्वनियो के वितरण को 1927 ई० में व्यापक पैमाने पर प्रस्तुत किया था, जिसकी विस्तृत व्याख्या Bloomfield के Language नामक पुस्तक (अध्याय 19) में व्याप्त होती है। मानचित्रावली का प्रकाशन De Hollandsehe ın de Zestıende en zeventınde eeuw enhaar weerspıegelıng un de hedendaa-

gsche Netherlandsche dialecten (Linguistic atlas of Netherland) के नाम से हुआ था। Kloeke ने अधिकतर कार्यक्षेत्र-सर्वेक्षण से किया था अत्यल्प स्थानो की सामग्री उन्होने पत्राचार के माध्यम से भी जुटाई थी। उन्होंने अपनी सामग्री को व्यापक पैमाने वाले एक मानचित्र में प्रस्तुत किया था। उनकी उपलब्धियाँ अधोलिखित थी —

(क) जर्मनी से संलग्न पश्चिमी ज़िले में 'माउस' शब्द का उच्चरण 'मूस' होता है। इस क्षेत्र के पूर्वी नगरों में 'मीस' शब्द का भी व्यवहार होता है। मूस-क्षेत्र के अन्तर्गत 'हाउस' का उच्चारण भी 'हूस है; किन्तु 'हीस' शब्द केवल 'मीस' के क्षेत्र में ही व्यवहृत नहीं होता, अपितु उत्तर-पूर्व के व्यापक क्षेत्र में भी होता है।

(ख) हालैण्ड के नगरीय क्षेत्रों मे इसका संध्यक्षरीय रूप भी उच्चरित होता है।

(ग) 'मीस' रूप का उच्चारण पश्चिमी फ्रीजी द्वीपसमूह व जीलैण्ड में भी होता है।

प्राचीन सामग्री व कथनों के आधार पर Kloeke ने प्राचीनतर स्थितियों की भी जानकारी प्रस्तुत की है। उन्होंने भाषिक सामग्री की सहसम्बद्धता को बस्ती बसने के इतिहास, व्यापार, राजनीति, व धर्म के परिप्रेक्ष्य मे परखा है तथा चकाचौंध कर देने वाले निष्कर्षों को प्रस्तुत किया है।

4. 6. रूमानिया (क्षेत्रफल 91654 वर्ग मील)

रूमानिया की मानचित्रावलियों पर कार्य करने वालों में Weigand, Puscariu, तथा Pop के नाम लिये जाते हैं। Gustav Weigand ने 214 शब्दो की प्रश्नावली के माध्यम से 1895-1909 के मध्य स्वयमेव सामग्री संचित की थी Linguistischer Atlas de dacorunischen Sprachgebietes (Leipzig, 1909) नाम से प्रसिद्ध मानचित्रावली में कुल 67 मानचित्र हैं। Puscasiu की Rumanian Atlas, तथा Sever Pop की Atlasul linguistic ramau (संक्षिप्त नाम ALR, 1939 ई० में प्रकाशित) उत्कृष्ट मानचित्रावलियाँ हैं।

4. 7. स्वाबिया

स्वाबिया की बोली पर Fisher का कार्य 28 मानचित्रों पर आधारित है तथा उसका प्रकाशन 1895 ई० में हुआ था। Karl Haag ने दक्षिणी स्वा-

विया के एक जिले का स्वयमेव सर्वेक्षण कर 1898 ई० में मानचित्रावली बनाई थी।

4. 8. यूगोस्लाविया (क्षेत्रफल 98700 वर्ग मील)

यहाँ की बोलियों पर Pavle Ivic तथा उनकी पत्नी Milka Ivic के कार्य प्रेरणास्पद रहे हैं। Pavle Ivic की The Serbo—Croation Dialects (प्रथम खण्ड) का प्रकाशन हेग से 1958 ई० में हुआ था।

4. 9. बेलोरशा

B S S R के द्वारा बेलोरशा के Dialectological Atlas का प्रकाशन 1950 ई० में किया गया था। इसमें ध्वनिप्रक्रिया पर 64, रूपप्रक्रिया पर 58, वाक्यरचना पर 30, तथा शब्दावली पर 149 प्रश्न सम्मिलित थे। कुल 1027 स्थानो का सर्वेक्षण किया गया था।

4. 10. बलगेरिया (क्षेत्रफल 43000 वर्ग मील)

बलगेरिया की भाषाओं पर शब्द भूगोल विषयक कार्य का समारम्भ S Stojkov के निर्देशन से हुआ था। अब तक इस क्षेत्र की लगभग एक दर्जन मानचित्रावलियो का प्रकाशन हो चुका है, जिनमें S B Bernstejn की अधोलिखित मानचित्रावलियाँ प्रमुख है—

(अ) Bolgaraskij lingvistic eskij atlas (1948)

(आ) Programma za Sabirane na materiali za belgarshi dialekten atlas (1955)

4. 11. एस्तोनिया

एस्तोनिया के प्रख्यात भाषाविज्ञानी Andrus Saareste के Eesti Murde atlas (Estonian Dialect Atlas का प्रकाशन 1938 ई० में प्रारम्भ हो गया था। यह दस खण्ड में प्रकाश्य थी तथा प्रत्येक खण्ड मे 30 मानचित्रों को सम्मिलित किया गया था। इनकी दूसरी मानचित्रावली Petit atlas des parlers Estoniens (108 पृष्ठ) का प्रकाशन 1955 ई० में उपशला से हुआ था। इसके लिए 800 इकाइयो की प्रारम्भिक प्रश्नावली थी, कालांतर में 800 इकाइयाँ और जोड़ दी गईं। इसके लिए एस्तोनिया के 500 स्थानों का सर्वेक्षण किया गया था। इस मानचित्रावली में 128 मानचित्र हैं, जो सम्पादक द्वारा निर्मित कुल मानचित्रो का द्वादशांश है। उन्होंने ऐसे ही मानचित्रो का प्रकाशन

के लिए चुना है, जिनमें स्पष्ट बोली सीमाएँ मिलती हो इनमें अधिकतर मानचित्र शब्द प्रक्रियात्मक हैं।

4. 12. डेनमार्क

M Bennıcke तथा M Krıstensen ने 1898-1912 ई० के मध्य डेनमार्क की मानचित्रावली के लिए क्षेत्र-कार्य किया था।

4. 13. ब्रिटेनी

P Le Roux का 1924 ई० म प्रकाशित कार्य बिटेनी की शब्द मान चित्रावली से सम्बद्ध है।

4. 14. स्काटलैण्ड

A Grıera की कैटेलोनिया-मानचित्रावली (सक्षिप्त नाम ALC) का प्रकाशन 1923 ई० में हुआ था।

4. 15. सारडानिया तथा कार्सिका

Gıno Bottıglıonı की सारडीनिया–मानचित्रावली 1947 ई० में मुद्रित हुई। उनके द्वारा निर्मित कार्सिका—मानचित्रावलो (सक्षिप्त नाम ALEIC) एक उत्कृष्ट रचना है। Atlas lınguıstıco etnografico ıtalıano della Corsıca का प्रकाशन पीशा से 1935 ई० में हुआ था। मानचित्रावली 10 खण्डो मे प्रस्तावित थी तथा 1935 ई० के पाँच खण्डो में 2υ0 मानचित्रो का प्रकाशन हो गया था। इसके लिए Bottıglıonı ने कार्सिका के 49, (Gıllı eron ने 41 स्थान चुने थे), उत्तरी सारडीनिया के 2 (Gıllıeron ने एक स्थान लिया था), तथा एल्बा व तुष्कैनी 4 समुदायो का चयन किया था।

Bottıglıonı ने Gıllıeron व Edmont की अपेक्षा क्षेत्र से सामग्री चयन में अपना अधिक समय बिताया है तथा उनकी सूचनाएँ एक हो स्थान के अधिकाधिक सूचको पर आधारित थी। उनकी प्रश्नावली में पद-सहितियो व वाक्यो का ही अधिक प्रयोग था।

4. 16. आइवेरिया

Thomas Novarro Tomes ने आइबेरिया की एक विशालकाय भाषा-मानचित्रावली बनाई है, जिस ALPI के सक्षिप्त नाम से जाना जाता है।

टिप्पणी और सन्दर्भ

1. Norman E. Ellason, Review of Phonological Atlas of northern region, Language (1968) 44 . 355-57

2 William Maulton, Review of Swiss German Atlas, journal of English and German Philology (1963) 62 831.

5

अफ्रीका में शब्द-भूगोल तथा शब्द-मान चित्रावली

अफ्रीका महाद्वीप में शब्द भूगोल पर सम्पन्न कार्य वहाँ की केवल तीन भाषाओं तक सीमित हैं, जिनमें अरबी, बर्बर, तथा अफ्रीकन भाषाएँ हैं। यहाँ उपर्युक्त भाषा-भाषी क्षेत्रों का शब्द-मानचित्रावलीय इतिहास संक्षेप में प्रस्तुत किया है।

5. 1. अरबी-भाषी क्षेत्र

शब्द-भूगोल की दृष्टि से अरब-संसार का कोई भी क्षेत्र सुपरिचित नहीं है। वृहत्तर सीरिया व अन्य देशों में जो छुटपुट कार्य हुए है, वे इस प्रकार हैं।

Bergstrasser की मानचित्रावली

उपर्युक्त लेखक द्वारा प्रणीत मानचित्रावली में कुल 40 मानचित्र (1919 ई० में प्रकाशित) है तथा ध्वनिप्रक्रियात्मक व रूपप्रक्रियात्मक विशेषताओं को बतलाने, वाली समभाषांश-रेखाओं का अंकन मिलता है।

Fleisch की मानचित्रावली

Fleisch ने 1959 ई० में Bergstrasser की मानचित्रावली के संशोधन का कार्य किया था तथा उन्हें उच्चारणीयता प्रदान की थी। यह कार्य लेबनान के 50 स्थानों के सर्वेक्षण पर आधारित है, जिसके लिए 110 वाक्यों वाली प्रश्नावली का उपयोग किया गया था।

Cantineau की मानचित्रावली

Cantineau की मानचित्रावली (1936-7) में अनेक यनेचर आदिम

जातियों के भाषा-रूपों का वितरण व उनका क्षेत्रानुसार वर्गबन्धन मिलता है।

Cleveland की मानचित्रावली

Cleveland की मानचित्रावली एक प्रयोगात्मक कार्य है, जिसमें जोर्डन की बोली में क्षेत्रीय भिन्नता को खोजने का प्रयास है।

Johnstone को मानचित्रावली

Johnstone ने 1963 ई० में अरेबिया की ध्वनिप्राक्रियात्मक मानचित्रावली को प्रकाशित करवाया था। इसमें क् तथा क् ध्वनियों के वितरण पर विशेष बल दिया गया है।

Tomiche की मानचित्रावली

Tomiche ने 1962 ई० में मिश्र की शब्द मानचित्रावली का निर्माण किया था, किंतु वह एक प्रयोगात्मक कार्य है।

Abul Fadl की मानचित्रावली

अबुल फ़दल ने दक्षिणी मिश्र के एक जिले पर कार्य किया है, जिसका प्रकाशन 1961 ई० में हुआ था।

5. 2. वर्बर-भाषी क्षेत्र

बर्बर भाषाएँ उत्तर-पश्चिम अफ्रीका में बोली जाती हैं, जिसके अन्तर्गत मोरक्को, अलजीरिया, व लीबिया, आदि देश आते हैं। Andre Basset ने बर्बर भाषाओं के भौगोलिक वितरण का महत्वपूर्ण कार्य किया है। अलजीयर्स से 1936 ई में प्रकाशित *Atlas Linguistique des Parlers berberes* एक महत्वपूर्ण रचना है। इसमें अलजीरिया का क्षेत्र सम्मिलित है। मोरक्को तथा लीबिया पर इनकी अनेक रचनाएँ 1936-49 के मध्य प्रकाशित होती रही हैं।

5. 3. अफ्रीकअन-भाषी क्षेत्र

दक्षिण-अफ्रीका व रोडेशिया में व्यवहृत अफ्रीकअन एक जर्मनिक भाषा है। इस भाषा के क्षेत्रीय वितरणों के पुरस्कर्ता Gideon Retief Von wielligh है, जिनका कार्य 1925 ई० में ही समाप्त हो चुका था।[1]

Wielligh के पश्चात् Coetzee तथा S. A. Louw ने क्षेत्रीय भिन्नता

के अन्वेषण के कार्य को आगे बढ़ाया। A. Coetzee के Linguistic geographical Studies का प्रकाशन 1941 ई० में जोहान्सबर्ग से हुआ था। Louw की पुस्तक Linguistic geography : Introductory thougts and dialect sudy का प्रकाशन 1941 ई० में ही प्रेटोरिया से हुआ था। 1948 ई० में केपटाउन से इनकी दूसरी पुस्तक निकली, जिसका नाम था—Dialect mingling and linguistic geography; जिसमें 15 भाषाई मानचित्र थे। 1959 ई० में Louw तथा उनके सहयोगियों के सम्मिलित प्रयास से एक अपेक्षाकृत पूर्ण मानचित्रावली सामने आई, जिनका नाम है Afrikaanese Taalatlas (प्रेटोरिया प्रकाशित)। इसके भूमिका-लेखक T. H. le Roux है।

टिप्पण और सन्दर्भ

1. Current Trends in Linguistics, Vol. 7, p. 481,

6

दक्षिणी अमरीका में शब्द-भूगोल और शब्द-मानचित्रावली

दक्षिण अमेरिका के अर्जेण्टाइना, बोलविया, वेनेजुएला, ब्राजील, आदि देशों में बोली-अध्ययन से सम्बद्ध कार्य हुआ है, किन्तु ब्राजील के अतिरिक्त उपरि चर्चित देशो व पेरू, यूक्रेडोर, कोलम्बिया, ब्रिटिश ग्याना, आदि देशों के विविध अन्वेपणों के सम्बन्ध में मैं विस्तृत सूचना नही जुटा पाया। यहाँ दक्षिण अमरीका के एक देश—ब्राजील—के शब्द-भूगोग का इतिहास दिया गया है। इसके अतिरिक्त सुविधानुसार यहाँ मध्य अमरीका के कैरीबियन द्वीप समूह के इतिहास को भी प्रस्तुत किया है (वैसे कैरीबियन द्वीप उत्तरी अमरीका के अंतर्गत सम्मिलित किया जाता है।

6.1. ब्राजील मे शब्द-भूगोल और शब्द-मानचित्रावली

Comandante Eugenio de Castro ने 1841 ई० में Ensaios de geografia linguistica नामक ब्राजील के शब्द-भूगोल को प्रस्तुत किया था। इसके प्रथम खण्ड में ब्राजील के नाविकों की विशिष्ट शब्दावली की समीक्षा है। द्वितीय भाग में शब्दों को विविध सामाजिक सन्दर्भों में देखा गया है। उन्होंने अपनी सामग्री खदानो, काफी के बगीचो, समुद्री किनारो, के लोगो से भी जुटाई थी। सैनिकों की शब्दावली का इसमे रोचक विवरण मिलता है।

6.2. कैरीबियन द्वीप मे शब्द-भूगोल और शब्द-मानचित्रावली

यूरोपीय देशो से भाषिक दृष्टि से संलग्न मध्य अमरीका के कैरीबियन द्वीप के अमरी स्पेनिश विषयक अधोलिखित दो कार्य महत्वपूर्ण है—

(क) Thomas Navarro की कृति El espanol en Puerto Rico
। प्रकाशन 1948 ई० में Rio Piedras से हुआ था। उन्होंने 445 इकाइयो
ली प्रश्नावली के लिए 43 समुदाय चुने थे। ध्वनिकीय, व्याकरणिक, व शब्द
क्रियात्मक दृष्टि से प्रश्नावली को सुव्यवस्थित किया गया था। अनुसधान के
रणामों को 76 मानचित्रो में दर्शाया गया है।

(ख) Eugenio Cosesiu के La geografia Linguistique का
काशन 1956 ई० में मोन्तेविदेओ से हुआ था। पद्धतियों समस्याओ, व परि
ामों की व्याख्या इसमें अत्यन्त सूक्ष्म और सुस्पष्ट है। विविध प्रकार के भाषा
ानचित्रो का विश्लेषण Gillieron, Jaberg and Jud, Bottiglioni,
uscariu, व Griera, आदि विद्वानों की कृतियो के आधार पर किया
या है।

सन्दर्भ

C M Delgado De charvalho, 'The geography of Lang
iages', Readings in Cultural geography (eds Philip L
Vagner and Marvin W Mikesell, Chicago, 1962) 75—93

7

उत्तरी अमरीका मे शब्द-भूगोल और शब्द-मानचित्रावली

7. 1. तीस लाख वर्ग मील में बिखरे हुए अमरीका के चौदह करोड पचास लाख लोग अग्रेजी का व्यवहार मातृभाषा के रूप मे करते हैं। यूनाटेड स्टेट्स के अनेक भाग जलवायु, भौगोलिक वर्णन, पशु पौधों, आर्थिक जीवन की स्थिति, तथा सामाजिक सरचना की दृष्टि से अलग-अलग हैं। समाजशास्त्री तथा इतिहास-कार इस देश में कम-से-कम छह क्षेत्रीय सस्कृतियाँ मानते हैं। यह एक सामान्य धारणा है कि सस्कृति की भिन्नताओ व पृष्ठभूमि में निहित परिवेश के कारण भाषा में भी अन्तर आ जाता है।

7. 2. अमरीका के प्राचीन यात्रियो व प्राचीन निवासियो ने यह स्वीकार किया है कि इतिहास के आरम्भ से ही इस प्रकार का क्षेत्रीय अन्तर विद्यमान रहा है। बहुत पहले 1829 ई० में श्रीमती Anne Royal ने यहाँ पर दक्षिणी प्रभाव की चर्चा की थी। इसी प्रकार समय-समय पर अनेक लोगो ने यहाँ की क्षेत्रीय भिन्नता पर प्रकाश डाला है।[1]

7. 3. जैसी कि विगत पृष्ठों में चर्चा की गई है पश्चिमी यूरोप की बोलियो पर प्रामाणिक सामग्री जुटाने का कार्य उन्नीसवी शताब्दी के अतिम दशक से प्रारम्भ हो गया था। उस सम ALF का कार्य चल रहा था तथा English Dialect Society भी कार्यरत थी। 1889 ई० मे अमरीकी विद्वानो ने American Dialect Society की स्थापना इस विश्वास के साथ की थी कि उसके माध्यम से बहुत सी सामग्री जुटाई जा सकेगी। यह सस्था सीमित साधनो से महत्वपूर्ण सूचनाएँ अपने शोधपत्र 'Dialect Notes' म दिया करती थी। किंतु इसके लघु रूप से अमरीका की अंग्रेजी का क्रमबद्ध सर्वेक्षण पूरा नहीं हो सका।[2]

7.4. मिशीगन विश्वविद्यालय के Hans Kurath का कार्य

7. 4. 1. बीसवीं शताब्दी के प्रथम चरण के पश्चात् इस प्रकार के सर्वेक्षण-कार्य में गति आई। 1928 ई० में American Council of Leraned Societis की संरक्षकता में यहाँ एक ऐसी व्यापक योजना तैयार की गई, जिसका उद्देश्य जर्मन तथा फ्रेंच के कार्यों को ध्यान में रखते हुए उनकी भूलों से बचने का था। इस योजना को Linguistic Atlas of United States and Canada *के नाम से सम्बोधित किया गया। वस्तुत: यह कोई एक अकेली* योजना न थी, अपितु सम्भागीय अन्वेषण-योजनाओं की एक राशि थी, जिनमें एक समान कार्यपद्धतियों व समान तथ्यों के संकलन के द्वारा व्यापक तुलनाओं को प्रस्तुत करने का लक्ष्य था।

7. 4. 2. इस योजनाबद्ध मानचित्रावली का कार्य मिशीगन विश्वविद्यालय के Hans Kurath के संचालकत्व में न्यू इंग्लैण्ड के सर्वेक्षण से प्रारम्भ हुआ था तथा उसके परिणाम Linguistic Atlas of New England (तीन खण्डों) में उपलब्ध है, जिनका प्रकाशन 1939—43 ई० के मध्य हुआ था तथा Hans Kurath के साथ Miles L. Hanley व Bernard Bloch उसके सम्पादक थे। इन मानचित्रावलियों में कुल 730 मानचित्र सम्मिलित है।

Kurath ने Handbook of Linguistic Atlas of New England (1939 ई०) में मानचित्रावली की कार्यपद्धति का पूरा विवरण दिया है। इस कार्यपद्धति की अनेक विशेषताएँ देशी तथा सामान्य भाषा के सही चित्र को प्रस्तुत करने में सहायक रही है। कुशल सम्पादक Kurath ने निम्नलिखित बातों पर बल दिया है—

(क) क्षेत्रान्वेषकों का चयन तथा प्रशिक्षण
(ख) सूचकों का चयन तथा सर्वेक्षणीय स्थान
(ग) प्रश्नावली का निर्माण

7. 4. 2. 1. क्षेत्रान्वेषकों का चयन तथा प्रशिक्षण

क्षेत्र-अन्वेषक पहले से ही सुप्रशिक्षित भाषाविज्ञानी थे, तथापि 1931 ई० की ग्रीष्म में दो प्रसिद्ध बोली भूगोल-वेत्ता Jud तथा Scheurmier ने उन्हें वाञ्छनीय प्रशिक्षण दिया था।

चूँकि क्षेत्र-कार्य भिन्न-भिन्न लोगों के द्वारा सम्पन्न हुआ, अतएव प्रशिक्षण के बावजूद लिप्यंकन की दिशा में विभिन्नताएँ व सूचकों के चयन में अन्तर स्वाभाविक

था। उदाहरणार्थ, मध्य एटलाण्टिक, दक्षिणी कैरोलीना, तथा उत्तरी न्यूयार्क स्टेट्स, आदि क्षेत्रों का क्षेत्र-कार्य Guy S. Lowman के द्वारा पूरा किया गया था। उन्होने अन्य अन्वेषको की तुलना में अपनी योजना के अन्तर्गत असंस्कृत सूचकों को ही सम्मिलित किया था। दूसरी ओर, R. I. Mc David ने समुद्र-तटीय राज्यो के लिए जिन 150 सूचको का इण्टरव्यू लिया था, वे किसी अन्य क्षेत्र के सूचको की तुलना में सर्वाधिक संस्कृत थे।

7.4.2.2. सूचकों का चयन तथा सर्वेक्षणीय स्थान

यद्यपि सूचकों की संख्या अधिक थी, तथापि समूची जनसंख्या के अनुपात में वह अधिक नही कही जा सकती। इसी कारण भाषा की वास्तविक क्षमता को स्थानीय या क्षेत्रीय दृष्टि से अन्तिम निष्कर्ष के लिए प्रस्तुत किया गया है।

जनसंख्या के अनुपात में सूचक प्रायः अधिक आयु के थे तथा स्थानीय निवासियों में प्रचलित अत्यधिक स्थिर तत्वो का उन्होंने परिचय दिया था। अतएव यह संभव है कि अस्थिर तत्त्वो के परिचायक कम आयु वाले व्यक्ति के लिए मानचित्रावली की सूचना न लागू हो, क्योंकि एक पीढ़ी की भाषा वही नहीं होती, जो दूसरी पीढ़ी की होती है।

एटलस के साक्ष्य को प्रयोग में लाने से पूर्व एक सहायक तथ्य यह भी है कि किस प्रकार के सूचकों को नियुक्त किया गया है। मानचित्रावली के लिए जिन व्यक्तियों से साक्षात्कार किया गया था, वे उस समुदाय के प्रतिनिधि व मूल निवासी थे। वे प्रघोलिखित तीन सामाजिक वर्गों के थे।

(क) प्रथम प्रकार में अत्यन्त बूढ़े, कम शिक्षित, व ऐसे संसर्गहीन लोग चुने गए थे, जिनके प्रयोगो में प्राचीनता के अधिकाधिक अवशेष खोजे जा सकते हैं तथा उन पर पाठशालेय शिक्षा का रंचमात्र भी प्रभाव नहीं पड़ा है। सम्पूर्ण सूचको मे से आधे सूचक इसी प्रकार के थे, यद्यपि वे सारी जनसंख्या के सामान्य लोग न थे।

(ख) द्वितीय प्रकार में वे व्यक्ति आते हैं, जिन्होने सामान्यतया पाठशालेय शिक्षा प्राप्त की थी। सामान्य अनुपात की दृष्टि से ये कुछ प्रौढ़ तो अवश्य थे, किन्तु प्रथम प्रकार के सूचकों की तुलना में कम आयु के थे। वे तथा उनकी भाषा दोनो ही बाह्य तत्त्वो से कुछ-न-कुछ प्रभावित थी।

इन दोनो वर्गों का प्रयोग जब एक-दूसरे से मिलता-जुलता हो, तो कहा जा सकता है कि वही उस क्षेत्र की प्रचलित बोली का प्रतिनिधि रूप है, भले ही उसे कुछ प्राचीनतर रूप कहा जाए।

(ग) तृतीय प्रकार में वे व्यक्ति आते हैं, जिन्होने इन दोनो प्रकार के लोगो से अधिक उच्च शिक्षा प्राप्त की थी तथा जिनका सामाजिक सम्बन्ध अन्य शैक्षणिक तथा सामाजिक स्तर के लोगो के साथ था। उनकी बोली पुरानी पीढ़ी के लिए विचित्र भी हो सकती है। इस समुदाय में पूरे सूचको के दस प्रतिशत थे।

सूचको के सम्बन्ध में सभी सूचनाएँ तथा भाषा-समुदाय की अन्य प्रसङ्गोचित सामग्री को सतर्कता के साथ लिखा गया था। वे आज विश्लेषण के लिए प्राप्त हैं।

7.4.2.3. प्रश्नावली का निर्माण

योजना के प्रारंभिक दौर में 1200 इकाइयों वाली प्रश्नावली का उपयोग किया गया था, किन्तु कार्य विस्तार के साथ क्षेत्र के अनुसार प्रश्नावली में कहीं 800 इकाइयो को स्थान दिया गया था तथा कहीं केवल 700 इकाइयाँ उपयोगी मानी गई थी, जिनका सूचको ने प्रत्युत्तर दिया है। प्रश्नावली में दैनन्दिन जीवन से सम्बद्ध इकाइयाँ ही परिगणित थी। उसमें उच्चारण, शब्द, व्याकरण, तथा वाक्य के महत्व को प्रतिपादित करने वाली इकाइयो को भी सम्मिलित किया गया था।

क्षेत्र के अनुसार प्रश्नावली की मूलसूची को सामान्यतया कुछ परिवर्तित भी किया गया है। कुछ इकाइयो को निकाल दिया गया है, जो किसी क्षेत्र में अप्रयुक्त है तथा कुछ नई इकाइयो को शामिल कर लिया गया है, जो उस क्षेत्र मे महत्वपूर्ण है। उदाहरण के लिए, उत्तरी दकोता के सूचक से एटलाण्टिक के round Clam का सवादी शब्द प्राप्त करना निरर्थक माना गया। इतना होते हुए भी सारे देश की मूल तालिका अधिकांशतः समान है, जिसे अब सम्पूर्ण अमरीका के क्षेत्र-कार्य के पश्चात् तुलनात्मक अध्ययन के लिए प्राप्त किया जा सकता है।

7.4.2.3.1. प्रश्नोत्तर पद्धति व विविध तकनीकें

प्रश्नो के उत्तरो को यथासंभव बातचीत के प्रसङ्ग मे ही प्राप्त किया गया था, जिससे अशुद्ध रूपो की उपलब्धि पर कुछ रोक लगी थी। क्षेत्र-अन्वेषको का यही प्रयास रहता था कि बिना खुद उच्चारण किए वांछित इकाई को सुन लें। चूँकि अनुसन्धान की परिस्थितियो के कारण अन्वेषकों को केवल तीन 'इंटरव्यू' (प्रत्येक इंटरव्यू एक पखवाड़े का होता था) तक सीमित रहना पड़ता था, अतएव यथासम्भव विशुद्ध नमूने ही जुटाए गए हैं।

इसके अतिरिक्त क्षेत्र-अन्वेषको को यह भी ध्यान देने के लिए कह दिया गया था कि क्या सूचक किसी रूप को अत्यल्प प्रयुक्त, अतिप्राचीन, या मज़ाकिया,

आदि बताता है ? ऐसी अनेक सूचनाएँ इसलिए एकत्र की गई कि भाषिक तथ्यो की व्याख्या केवल भाषाविज्ञानी तक ही सीमित न रह जाए, अपितु इतिहासकार, भूगोलवेत्ता, समाजशास्त्री, व न्यू इग्लैण्ड के सामाजिक तथा सास्कृतिक इतिहास में रुचि रखने वाले अन्य लोगो के लिए भी उपादेय हो सकें।[3]

अन्वेषको ने उपर्युक्त योजनाओ में वैज्ञानिक यत्रो का चुन कर प्रयोग किया है। उन्होने न केवल टेप या डिस्क का प्रयोग किया, अपितु अधिक स्थिर फोनो ग्राफिक रिकार्ड भी प्रस्तुत किए। सूचको से अपनी रुचि के अनुसार विविध विषयो पर बोलने के लिए कहा जाता था। ब्राउन विश्वविद्यालय में सुरक्षित बारह इच की एल्यूमीनियम की डिस्कें न्यू इग्लैण्ड की भाषा को स्थायी प्रामाणिक सामग्री है।

7. 4. 2. 4. सम्पादन व प्रकाशन

अमरीका योजना ने एक मानचित्रावली (तीन खण्ड) प्रकाशित कर न्यू इग्लैण्ड के कार्य को पूरा कर लिया है तथा अन्य क्षेत्रो, यथा मध्य एटलाण्टिक स्टेट्स, उत्तर-केन्द्रीय स्टेट्स, अपर मिडवेस्ट, राकी माउण्टेन स्टेट्स, पैसिफिक कोस्ट, लूसानिया, अटलाण्टिक कोस्ट, उत्तरी क्षेत्र, मोण्टाना, व्योमिङ्ग, कोलोरेडो, न्यू मेक्सिको, व टेक्सास, आदि का सर्वेक्षण-कार्य पूर्ण हो चुका है तथा अध्ययन के लिये विविध विश्वविद्यालयों में सामग्री उपलब्ध है।[4] New England Atlas तथा पूर्ववर्ती क्षेत्रों के सर्वेक्षण से प्राप्त तथ्यो के आधार पर Hans Kurath ने 1949 ई० में A word geography of the Eastern United States (The university of Michigan Press) प्रकाशित करवाई थी। मिशीगन विश्वविद्यालय के Alwa L Davis की कृति A word Geography of the great Lake's Region पी एच० डी० का शोध-प्रबन्ध है।[5] जो 1948 ई० में ही सम्पन्न हो चुका था।

7. 5. टेक्सास विश्वविद्यालय मे कार्य

E Bagby Atwood ने 1953 ई० मे Verb Forms of the Eastern United States निकाला था। उनका एक दूसरा ग्रंथ The Regional vocabulary of Taxas (Austin University of Texas press, 1962) अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। यह विशुद्धरूप से शब्दप्रक्रियात्मक भूगोल का कार्य है तथा Atwood ने इसके निमित्त 246 इकाइयो की एक प्रश्नावली बनाई थी। प्रत्येक इकाई के लिए उन्होने अपनी कार्य-पुस्तिका में

विकल्पो को भी दर्शाया था, जो अन्वेषको के लिये पथ-प्रदर्शक स्वरूप थे। प्रत्युत्तरो को कार्य-पुस्तिका का दो प्रतियो में सन्निविष्ट किया गया था। अनेक अन्वेषको को क्षेत्रपद्धति व ध्वनिकीय लिप्यंकन का पूरी तरह प्रशिक्षण भी दिया गया था।

273 सूचको से प्राप्त सामग्री को 82000 I. B M. कार्डों में संकलित किया गया था। संकलन की यह पद्धति सम्पादन, कोडीकरण, तथा पंजीकरण के अनुसार थी, जिसकी स्पष्ट व्याख्या ग्रंथ के परिशिष्ट में मिलती है। इस प्रकार की तकनीक मानचित्रावली के कार्य में अत्यधिक वाछनीय है तथा अन्य लोग अब इसी रीति से ध्वनिकीय अन्तरो को भी निविष्ट कर रहे है। इस रीति से हम अधिक समय व शक्ति के साथ-साथ प्रभूत धन के अपव्यय व भाषाई सामग्री के अप्रकाशन से अपने को बचा सकते हैं। Atwood ने सामग्री को जिस विदग्धता के साथ प्रस्तुत किया है, वह (कृति) मानचित्रावलीपरक कार्यों के लिये पथप्रदर्शक बन सकती है।

कृति का प्रथम अध्याय ऐतिहासिक व सांख्यिकीय तथ्यो की व्याख्या में समर्पित है। ये सब परवर्ती भाषिक सामग्री की व्याख्या में सहायक उपादान हैं।

द्वितीय अध्याय Background and related Studies में लेखक ने अपने पूर्ववर्ती विलक्षण विद्वान् Gilheron की प्रशंसा करते हुए अन्य क्षेत्रो के अपने सहयोगियों के प्रति आभार प्रदर्शित किया है। ऐसे प्रसङ्गो में Hans Kurath तथा Raven I McDavid के योगदान सदैव उल्लेखनीय होते हैं। लेखक ने प्रस्तुत कृति के लिये महत्त्वपूर्ण सहायक कृती Alwa L. Davis को रचना Check List Technigue की भी चर्चा को है। Atwood की खुद की प्रश्नावली में यह सामर्थ्य है कि वह अनुकरणीय बन सकती है।

तृतीय अध्याय में टेक्सास की शब्दावली को अर्थकोष वर्गों यथा मौसम, प्राकृतिक तत्त्व, आदि मे क्रमबद्ध किया गया है। उन्होंने प्रत्येक वर्ग में मिलने वाले प्रत्युत्तरो व उनकी व्याख्या की विभिन्नताओ को आपेक्षिक आवृत्ति में उपस्थित किया है। बहुत से ऐतिहासिक विचार, सूचकों व मूल्यांकन, तथा आनुषंगिक सूचनाएँ भी दी गई हैं। स्पेनिश, जर्मन, तथा फ्रेंच-क्षेत्रो से आकर बसने वाले लोगो की इकाइयो में विशिष्ट बाह्य सीमाएँ है तथा नीग्रो लोगों की आपेक्षिक अभिव्यक्तियाँ यहाँ भी उसी प्रकार जटिल है, जैसे अन्य अध्ययनो में।

बोली—उद्भवस्थलों के विषयो का अधिक स्पष्टता के साथ विवेचन चतुर्थ अध्याय में है। यथार्थत टेक्सास में 'मिडलैण्ड' की शब्दावली अधिक प्रभविष्णु है तथा 'नॉर्दर्न' (उदीच्य) शब्द आपेक्षिक दृष्टि से असामान्य हैं।

सोलहवें चित्र (पृ० 97) में जर्मन भाषाभूगोलवेत्ताओं के द्वारा प्रयुक्त 'षड्भुजाकार तकनीक' एक रुचिकर उदाहरण है। इसके अनुसार समभाषारा-रेखाओ की सघनता को सघात बनाने वाली इकाइयों की सख्या के साथ नापा जा सकता है।

पञ्चम तथा षष्ठ अध्यायो में मिश्र शब्द, सम्मिश्रण, गौण अर्थकीय भेद, अश्लीलता, व स्थानापन्नता के उदाहरण है। यहाँ Atwood ने व्याख्या में अपना पूर्ण उत्साह दिखाया है।

अंतिम अध्याय में पारस्परिक शब्द-मानचित्रावली है, जिसमें कुल 125 मानचित्र है। इनमें से दस मानचित्र उपसहारात्मक कहे जा सकते हैं, जिनमें प्रमुख समभाषारा रेखाओं के सघात दिखाये गये हैं।[6]

7.6. लूसानिया विश्वविद्यालय में कार्य

टेकसास विश्वविद्यालय से सम्पन्न उपर्युक्त कार्य के समान लूसानिया विश्व विद्यालय ने भी बोली-मानचित्रावली के अध्ययन में बहुत प्रगति की है। C M Wise के Dialect Atlas of Louisiana—a report of progress (Studies in Linguistics 3 37 42) के अनुसार 1935 54 ई० के मध्य 'लूसानिया स्टेट यूनीवर्सिटी' महत्त्वपूर्ण भाषाई सामग्री के चयन में सलग्न रही है। अब तक इस सामग्री के आधार पर आठ डॉक्टरेट स्तर के प्रबन्ध तथा इक्कीस एम० ए० स्तर के लघुप्रबन्ध पूर्ण हो चुके है। यहाँ की मान-चित्रावली के कार्य में Bloch तथा Lowmann का पूर्ण सहयोग रहा है।

7.7. व्यक्तिगत प्रयास

सस्थाओ के अतिरिक्त व्यक्तिगत प्रयासो से भी अमरीका में शब्द भूगोल को समझने में प्रचुर सहायता मिली है। Kurath तथा McDavid के द्वारा सम्पादित अंग्रेजी उच्चारणकोष के अनेक खण्ड 1960 ई० में प्रकाशित हो चुके है। श्रीमती McDavid ने Northcentral and uppermidwest के क्रियारूपो पर अपना प्रबन्ध पूरा कर लिया है। R I McDavid के Dialects of American English (दशम अध्याय) व N W Francis के The Structure of American English में अब तक सम्पन्न भाषा-भूगोल के कार्यों की विस्तृत समीक्षा मिलती है।

इनके अतिरिक्त Atwood, Alwa Davis, Walter Avis, Thomas Pearce, David Read, तथा Marjorie Kimmerle, आदि विद्वानों के

सैकड़ो लेखों का प्रकाशन American Speech, College English, Orbis, Language, Lingua, Word, तथा Language Learning, आदि पत्रिकाओ में हुआ है, जिनमें अत्यन्त उपादेय सामग्री मिलती है।

7.8. लघु योजनाएँ

यूनाइटेड स्टेटस का आकार इतना विशाल है कि Hans Kurath द्वारा सचालित व्यापक योजना की समाप्ति-काल के साथ ही अब वहाँ अनेक सस्थाओ, यथा The American Dialect Society, The Linguistic Society of America, और The Modern Language Association के द्वारा लघु योजनाएँ चलाई जा रही है। इसी प्रकार दो क्षेत्रीय सङ्गटन The South Atlantic MLA व The South Central MLA भी बोलियों के सग्रह में लगे हैं। इनके अतिरिक्त कुछ अन्य योजनाएँ व सङ्गठन भी हैं, जो किसी सस्था के अधिकार में नही।[7]

7.9. अमरीकी भाषा-भूगोल की असफलताएँ

दीर्घ अवधि तक चलने वाली योजनाएँ अपनी पूर्णता के पूर्व ही सामग्री की दृष्टि से पुरानी पड जाती है। Wenker जैसे विद्वानो की मानचित्रावलियाँ इसका कुख्यात उदाहरण हैं। यूनाइटेड स्टेट्स व कनाडा की भाषा मानचित्रावली निस्सन्देह एक माननीय साहसपूर्ण कार्य है, किन्तु वह भी दोषो से नहीं बच पाई। मानचित्रावली का कार्य एक सुदीर्घ अवधि तक चला है, जिसके बीच समाजशास्त्रीय तकनीको व अमरीकी समाज के प्रति दृष्टिकोण का प्रचुर मात्रा में विकास हो गया है। परिणामत यह आश्चर्यजनक नही है कि जहाँ भाषा-वैज्ञानिक अमरीकी मानचित्रावली के सरचनात्मक गठन के प्रति निरुत्साहित है, वहाँ समाजशास्त्री इसकी वैधता व विश्वसनीयता के प्रति सन्दिग्ध हैं। समाज-शास्त्रियों की मानचित्रावली के कार्यों के प्रति चुप्पी पर McDavid को रुष्ट होना स्वाभाविक है,[8] किन्तु उनकी उपेक्षा की भावना को समझा जा सकता है।

Glenna Ruth Pickford ने अमरीकी भाषा भूगोल का 'समाजशास्त्रीय मूल्याकन करते हुए उसमें पद्धतिगत प्रामाणिकता व विश्वसनीयता पर सन्देह व्यक्त किया है तथा दोषो के परिमार्जन हेतु अपने कुछ सुझाव भी दिये हैं।[9] यहाँ प्रामुख्येन उनकी समीक्षा को सक्षेप में प्रस्तुत किया जा रहा है। यथास्थल अन्य विद्वानो के विचारों का भी समावेश है।

या मन्दता के कारण) उन पर भी मानचित्रावली के सयोजको ने कोई ध्यान नहीं दिया है।

7.9.1.3. अन्वेषक

'इंटरव्यू' लेने वाले लोगों की विविधता के कारण सामग्री में जो भिन्नताएँ आई हैं, उनको New Englard Atlas के सम्पादको ने स्वीकार किया है तथा अनुभव किया है कि इन त्रुटियो के परिहारार्थ उनके द्वारा दिया गया पूर्व-प्रशिक्षण अपर्याप्त था। Kurath के ही अनुसार "1931 ई० की ग्रीष्म में छह सप्ताह की एक सामान्य प्रशिक्षण-अवधि ने अन्वेषकों के व्यवहार को मानक बनाने में बहुत सहायता दी थी, किन्तु यह मान लेना भी त्रुटिपूर्ण होगा कि उनके निरीक्षण और लिप्यकन का पूर्वाभ्यास व लिप्यकनपरक प्राचीन भिन्नताएँ बिलकुल समाप्त हो गई थी।[19] सम्पादको ने यह अनुभव नही किया कि कभी-कभी प्रशिक्षण से पूर्वाग्रह बन जाते हैं और भूलें कम ही दूर होती हैं। इस सम्बन्ध में प्रतिचयन-विशेषज्ञो व मनोविज्ञानियों का परामर्श उपादेय हो सकता था। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि प्रायः सभी भाषा भूगोलवेत्ता लिप्यकन के प्रशिक्षण पर बल देते हैं, किन्तु उसी के समान उपादेय इतर प्रशिक्षण पर वे ध्यान नही देते।

7.9.1.4. कार्य सम्पादन और सामग्री

भाषा-मानचित्रावली में योजना तथा कार्य-सम्पादन सम्बन्धी दोनो प्रकार की भूलें मिलती हैं। Dieth तो सचित सामग्री की तुलनीयता पर भी प्रश्नचिन्ह लगाते हैं।[20] यदि योजना-अवधि में लक्ष्य व प्रश्न की अनेक अस्पष्टताएँ ध्यान में रखी जातीं, तो व्याख्या उतनी जटिल न होती।

समानार्थक पदो तथा अर्थ की दृष्टि से सम्बद्ध पदो का रतिलेखन भी अन्वेषको ने भिन्न-भिन्न ढग से किया है। कुछ तो प्रथम प्रत्युत्तर से सन्तुष्ट हैं तथा कुछ अतिरिक्त शब्दों को अपेक्षाकृत स्वेच्छया प्राप्त करना चाहते हैं, तथा अन्य अन्वेषक विषय-वस्तु की चर्चा को भुला कर शब्दों का चयन करते हैं। इतना ही नहीं, प्रत्येक इकाई के लिए अन्वेषको की पद्धतियाँ भिन्न भिन्न है।[21]

7.9.2. विश्वसनीयतापरक दोष

भाषा-मानचित्रावली के अन्वेषको का पूर्वस्वीकृत लक्ष्य अमरीकी-अंग्रेजी में क्षेत्रीय और सामाजिक विभेदो का वैज्ञानिक ढग से निश्चयीकरण रहा है।[22] कालान्तर में शैक्षणिक पाठ्यक्रम के सशोधन के हेतु अमरीकी भाषा की सूची

तैयार करने का भी लक्ष्य बनाया गया। इन व्यापक लक्ष्यो की पूर्ति के लिए यह आवश्यक था कि भाषाई नमूने सम्पूर्ण जनसख्या की भाषा के प्रतिनिधि हो, किन्तु दुर्भाग्यवश मानचित्रावली इन नमूनो की विश्वसनीयता को नही प्रस्तुत कर सकी।

चयनात्मकता के पूर्वाग्रह से भी भाषा मानचित्रावली के नमूने अधिक दोषपूर्ण हो जाते है। जैसा कि अन्यत्र उल्लेख है, उसमें सास्कृतिक दृष्टि से अवर समुदायो का ही अधिक चयन किया गया है। अतएव एकत्र की गई सामग्री अमरीका के प्रभुत्व-सम्पन्न नागरिक केन्द्रो का अपर्याप्त प्रतिनिधित्व करती है। उसमें जनसख्या के वयोवृद्ध स्तर का ही चुनाव किया गया है, जिससे वह सामग्री आर्ष और ग्रामीण अधिक है, जो कि वर्तमान प्रचलन में नही है। उसमें तीन शैक्षणिक स्तरो का चयन किया गया है, जिससे विद्यमान सामाजिक वर्ग आनुपातिक रीति से प्रतिनिधित्व नही कर सके।

Glenna Ruth Pickford का आरोप है कि "अमरीकी भाषा में क्षेत्रीय भिन्नताएँ अत्यधिक है", ऐसा निष्कर्ष वैज्ञानिक प्रमाणों पर आधारित नही है, अपितु वह कुनिर्णीत मान्यताओ का सामान्य आरोप है, जिससे मानचित्रावली का सर्वेक्षण प्रारम्भ हुआ था। भाषा भूगोल के सर्वेक्षणो ने समुदायो, सूचको, तथा सामग्री के चित्र को विकृत कर दिया है।[23]

7.9.2.1. नमूनो के आकार मे वृद्धि

भाषाई शोधकार्य में एक सामान्य धारणा यह प्रचलित है कि नमूनो के आकार को बढा कर प्रतिचयन के पूर्वाग्रहो से बचा जा सकता है। Davis तथा Spicer,[24] तथा Atwood,[25] आदि विद्वान् इस विचारधारा के हैं कि जितनी ही अधिक सामग्री होगी, त्रुटियों से उतना ही अधिक छुटकारा मिलेगा। यह पद्धति या तो अविचारपूर्ण कही जाएगी या प्रतिचयन-विधि से अनभिज्ञता की ही वाचक होगी। अनेक पूर्वाग्रहो को सामग्री की वृद्धि या कमी से दूर नहीं किया जा सकता। किसी प्रतिदर्श सर्वेक्षण में विश्वसनीयता की दृष्टि से महत्वपूर्ण विशेष विवरण यह है कि सूचकों का चुनाव कैसे किया जाए, यह नही कि सूचक कैसे चुने गए है।

यद्यपि निर्णयात्मक प्रतिदर्श पूर्वाग्रहो से युक्त होता है, जिससे विश्वसनीयता भी प्रभावित होती है, तथापि योजना की अवधि में गणितज्ञ, समाजशास्त्री, तथा इस विषय से परिचित लोगो को नियुक्त कर भयकर भूलो से बचा जा सकता है। विगत दशक में सांख्यिकी की जो महत्त्वपूर्ण प्रगति हुई है, उसकी सहायता से भाषासर्वेक्षण की सम्भावित भूलो को कम किया जा सकता है।

7.9.2.2. भौगोलिक दृष्टि

अमरीकी भाषा की भौगोलिक दृष्टि से परीक्षा के लिए भी मानचित्रावली के सर्वेक्षणों का समुचित नियोजन नहीं हुआ है। इसीलिए Pickford इसकी भौगोलिक उपलब्धियों पर ही विश्वास नहीं करते। उदाहरण के लिए उनका मत है कि पेंसलवानियां के मध्य क्षेत्र में Pierce (= to eat between meels) का आज प्रचलन नहीं है।[20] "आदर्शीकरण के प्रभावों के बावजूद ग्रामीण बोलियों में परिवर्तन की मात्रा अधिक है[27]—कथन भी इसी प्रकार का है। जब तक सामग्री के माध्यम से क्षेत्रीयता की खोज न कर ली जाए, इस प्रकार के निष्कर्ष नहीं दिए जाने चाहिए। यदि भाषाविज्ञानी क्षेत्रीयता के चुनाव में ही रुचि रखते हुए अपने कार्य की इतिश्री समझते हों,[28] तो उनके सर्वेक्षण अनावश्यक ढंग से उकताने वाले (बनेरद), व्यापक, व अपव्ययी माने जाएँगे। दूसरी ओर, यदि वे सचमुच भाषाविज्ञान को अन्य ज्ञान-विज्ञानों के साथ जोड़ना चाहते हैं,[21] तो उनके सर्वेक्षणों का महत्व सन्दिग्ध है, क्योंकि जिस सामग्री को वे एकत्र कर रहे हैं, वह अमरीकी अँग्रेजी का प्रतिनिधित्व नहीं करती।

7.10. निष्कर्ष

उपर्युक्त पृष्ठों में यह दिखाने का प्रयास किया गया है कि अमरीका के ही विद्वान् यूनाइटेड स्टेट्स तथा कनाडा की भाषा-मानचित्रावली की कार्यपद्धति में वैज्ञानिक शोध के उच्चस्तर के प्रति आशंकित हैं। उन्होंने उसकी प्रामाणिकता और विश्वसनीयता के प्रति भी प्रश्न किया है। उच्चस्तरीयता तभी सम्भव है, जब भावी योजनाओं को समाजशास्त्र के सिद्धान्तों व इतर विज्ञानों की पद्धतियों के अनुसार युक्तियुक्त बनाया जावे।

टिप्पणी और सन्दर्भ

1. Albert H. Marckwardt, Regional and Social Variation', American English (1958).

2. Ibid.

3 Hans Kurath, A Handbook of Linguistic geography of New England. Introduction, IX

4. Harold B. Allen, 'American Atlas', English Journal (April 1956).

5. Alwa L. Davis, A word geography of great Lake's

Region, dissertation (microfilm), uni-of Michigan, ann Arbor, 1948.

6. Carroll E. Reed, Review of Regional Vocabulary of Texas, Language, 40, No. 2.

7. Raven I. McDavid, 'Some principles for American dialects', Studies in Linguistics (1942), Vol. I.

8. Ibid, 'Dialect geography and Social Science problems' Social Forces (1946) 25:168—72.

9. Glenna Ruth Pickford. 'American Linguistic Geogr aphy A Sociological Appraisal' Word (1956) 12:211—233.

10. Eugen Dieth, 'Linguistic geography in New England' English Studies (1948) 29: 65—68.

11. Bernard Bloch, 'Interviewing for Linguistic Atlas', American Speech (1935) 10: 3-9.

12. Henry Alexander, 'Linguistic geography', Queen's Quarterly (1940) 47:38-47.

13. W. Reed Daris and John L. Spicer, "Gorrelation methods of Comparing idiolects in a transition area', Language (1952) 28: 348-59.

14. Hans Kurath, Ibid, p. 47.

15. Ibid.

16. Henry Alexander, Ibid.

17. Hans Kurath, Ibid.

18. Ibid, p. 48.

19. Ibid, p. 59.

20. Eugen Dieth, Ibid.

21. Hans Kurath, Ibid, p. 47.

22. Ibid, A Word geography of the Eastern united States, 1949, Preface.

23. Glenna Ruth Pickford, Ibid.

24. W. Reed Davis and John A. Spicer, Ibid, p. 44

25. E. Bagby Atwood, A Survey of Verb Forms Eastern United States, 1953, Preface.

26. Glenna Ruth Pickford, Ibid.

27. E. Bagby Alwood; Ibid.

28. Raven I McDavid, Ibid.

29. Ibid.

8

भारतेतर एशिया में शब्द-भूगोल और शब्द-मानचित्रावली

8.1. एशियाई देशों में बोलियों के अध्ययन के प्रति बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ से ही रुचि रही है। किन्तु एतद्विषयक सूचनाओं के अभाव में उनका कोई क्रमबद्ध अध्ययन नहीं प्रस्तुत किया जा सकता। Sever Pop ने अपने ग्रन्थ La dialectologie (Louvair. 1950) के द्वितीय खण्ड में चीन (पृष्ठ 1109-19), तथा भारत (पृष्ठ 1121—29) के बोली-अध्ययन पर बीस पृष्ठों की सामग्री दी है। यहाँ जापान, चीन, ईरान तथा अफगानिस्तान, व बंगला देश में हुए भाषा-भूगोल विषयक कार्यों की संक्षिप्त चर्चा है। भारत के बोली-अध्ययन का इतिहास अग्रिम अध्याय में प्रस्तुत है।

8.2. जापान में शब्द-भूगोल

जापान में बोली-भूगोल विषयक प्रथम सर्वेक्षण 1905–6 में पूरा हुआ था। यह सर्वेक्षण Kokugo Cho'a Inki नामक संस्था के द्वारा संचालित था। सर्वेक्षण के परिणामों को मानचित्रों के माध्यम से प्रस्तुत किया गया था।[1]

द्वितीय विश्वयुद्ध पश्चात् बोली-भौगोलिक सर्वेक्षण व सैद्धान्तिक विवेचन ने यहाँ अधिक प्रगति की, किन्तु परवर्ती कार्यों में Gillieron के प्रभाव को विस्मृत नहीं किया जा सकता।

जापान के प्रमुख बोलीविज्ञान-वेत्ता TOJO MISAO थे, जिन्होंने 1927 ई० में वहाँ की बोलियों का सर्वेक्षण किया था। 1950 ई० से पूर्व जापान में भूगोल-विषयक विस्तृत इतिहास की जानकारी Robert A. Brower की Bibliography of Japanes Dialects (1950 ई०) से मिलती है।[2]

Fujiwara yoichi ने Dialect geographical study of Japanese dialects (*Tokyo, 1956*) *नामक अंग्रेजी ग्रन्थ के लिए 1933-34* में पत्राचार की पद्धति अपनाई थी। इस कृति के निमित्त कुल 833 स्थानों का सर्वेक्षण किया गया था। ग्रन्थ में 118 शब्दप्रक्रियात्मक मानचित्र दिए गए है।

Takeuchi Masato के Dialects of Ehime, its grammar and its lexican (Ehime University Press, 1957) में 78 स्थानों को *लिया गया था। इसमें भी पत्राचार की रीति से 454 व्याकरणिक इकाइयो व* 6233 शब्दो पर कार्य किया गया था।

Ishiguro के word distribution in Tottori dialect (1957) में 157 स्थानों का सर्वेक्षण है तथा प्रश्नावली में 311 शब्दगत इकाइयाँ, 213 ध्वनिकीय इकाइयाँ, एव 76 व्याकरणिक रूप सम्मिलित हैं, जिनकी कुल सख्या 600 है। इसमें कुल 100 मानचित्र दिए गए है।

Linguistic Atlas of Japan के लिए Shibata के संचालकत्व में *सर्वेक्षण-कार्य 1948 ई० से चल रहा था तथा उसको परिसमाप्ति 1964 ई० मे* हुई है। इसके अन्तर्गत कुल 2400 स्थानो की सूचना सग्रहीत है। 220 प्रश्नों वाली प्रश्नाली को 46 अन्वेषकों के हाथ में सुपुर्द किया गया था। इसके सभी सूचक 60 वर्ष की अवस्था के ऊपर के पुरुष थे। इस योजना के सम्पूर्ण अशो का अभी तक प्रकाशन नही हो पाया है, यद्यपि फुटकर लेख और मानचित्रो का *प्रकाशन सर्वेक्षण-काल से ही हो रहा है।*

8.3. चीन मे शब्द भूगोल

चीन मे बोली,अध्ययन से सम्बद्ध कार्यों की विस्तृत सूचना अनुपलब्ध है। सकेतो से ऐसा ज्ञात होता है कि सर्वप्रथम Father Grootaers ने चीन के उत्तरी क्षेत्र का भाषा सर्वेक्षण किया था, जो La geographie Linguist ique ne Chine के नाम से 1943 ई० में पेकिङ्ग से प्रकाशित हुआ था।[3] इसके पश्चात् चीन में बोली भूगोल विषयक जो कार्य हुए हैं, वे सीधे चीनी शासन के नाम से हो रहे है। 1958 ई० में चीन के शिक्षा विभाग ने *बोलियो के सर्वेक्षण का कार्य प्रारम्भ किया था, जिसमें स्थानीय महाविद्यालयो व* विश्वविद्यालयो से सहायता ली गई थी। अभी तक उसके परिणामो की कोई जानकारी नही मिली है।

8.4. ईरान और अफगानिस्तान मे शब्द-भूगोल

Gilbart Lazard के लेख Persian and Tajik[4] से ज्ञात होता है

कि अभी तक इन देशों की कोई शब्द-मानचित्रावली नहीं बनी, किन्तु इस समय-G. Redart नामक विद्वान् Linguistic Atlas Iran and Afghanistan तैयार कर रहे हैं।

8.5. बंगला देश में बोली-अध्ययन

नवोदित राष्ट्र 'बंगला देश' में बोलियों के अध्ययन का कार्य मुनीर चौधुरी ने किया है, किन्तु परिणामों की प्रस्तुति मानचित्रों में नहीं हुई।[5]

टिप्पण और सन्दर्भ

1. Grootaers, 'DGLJ,' Orbis (1957) 342-52.

2. Robert A. Brower, Bibliography of Japanese dialects, Ann. Arbor, The University of Michigan Press, 1950.

3. James R, Ware, 'Review of La geograp hic linguistque en Chine' by William A. Grootaers,' Language (1949) 25 : 80-3.

4. T. A; Sebeok, ed; Current Trends in Linguistics Vol.6—Linguistics in Southwest Asia and North Africa; Mouton, Hague, 1970, P. 71

5. Munir Choudhuri, The language problems in East Pakistan,' in Charles A. Eerguson and John J. Gumperz (Eds.) Lingustic Diversity in South Asia, Bloomington, 1960, PP. 68-78.

9

भारत में बोली-अध्ययन और शब्द-भूगोल

9.1. William Carey का सर्वेक्षण

William Jones की प्रेरणा से यूरोपीय देशों में जिस प्रकार तुलनात्मक पद्धति के प्रति आग्रह देखा गया था, उसी प्रकार भारत में अनेक ईसाई धर्म-प्रचारकों की रुचि यहाँ की भाषाओं और बोलियों में थी। श्रीरामपुर धर्मसंस्था के अध्ययन William Carey ऐसे प्रचारकों में अग्रगण्य है। उन्होंने 1816 ई० में अपने सहयोगियों की सहायता से एक सर्वेक्षण-कार्य का उपक्रम किया था, जिसका मूल उद्देश्य था भारत के विविध क्षेत्रों में व्यवहृत भाषाओं की जानकारी व उनमें बाइबिल का अनुवाद प्रस्तुत करना। इस सर्वेक्षण में 'होना' क्रिया के वर्तमान काल और भूतकाल के रूपों के साथ 'ईश-प्रार्थना' को भारत के विविध 34 स्थानों से रूपांतरित करवाया गया तथा उन नमूनों के आधार पर पहली बार 33 भाषाओं का विवरण दिया गया था।

इनके द्वारा संस्कृत को द्रविड़ बोलियों का मूल मानने, अनेक बोलियों को भाषा का स्थान देने, व असमीचीन वर्गबद्धता करने के कारण भले ही इनके कार्य की उपेक्षा की जाय,[1] किन्तु यह स्वीकार करना होगा कि आधुनिक बोली-अध्ययन के अन्तर्गत समूचे विश्व की यह पहली सर्वेक्षण योजना थी। पिछले विवरण से स्पष्ट है कि इसके पूर्व या इस समय तक यूरोप के अधिकतर भाषाविज्ञानी नव्यवैयाकरणों के कार्य पर मुग्ध थे, जीवित बोलियों के अध्ययन के प्रति उनकी रुचि नहीं थी।

9.2. आधुनिक भारतीय भाषाविज्ञान का प्रवर्तन

Carey के सर्वेक्षण-काल से लेकर John Beames के समय तक पचास वर्ष की अवधि में भारतीय भाषाओं के सम्बन्ध में सुस्पष्ट धारणाओं का विकास

हुआ तथा रामकृष्ण गोपाल भण्डारकर व ए० आर० राजराजवर्मं कोइनम्बुरान[2] जैसे भारतीयों के विद्वत्तापूर्ण भाषण व कृतियों से भारतीय भाषाविज्ञान को स्वदेशी पृष्ठभूमि मिली।

1886 ई० में Cust के सुझाव पर विएना के प्राच्यभाषा सम्मेलन में भारत के भाषा-सर्वेक्षण की भावी रूपरेखा पर विचार किया गया, जिसका परवर्ती वर्षों में Grierson ने दक्षता के साथ निर्वाह किया। इस रूप में भारत में भाषा-सर्वेक्षण व बोलियों के अध्ययन का कार्य प्राचीन (तुलनात्मक) पद्धति के विरोध से नहीं, अपितु सहयोग से ही प्रारम्भ हुआ है।

9.3. भारत का भाषा-सर्वेक्षण

George Abraham Grierson के सुपरिचित भाषा-सर्वेक्षण (1894-1927 ई०) की कार्यपुस्तिका म विभिन्न भाषाओं के नमूनों के सकलन के उद्देश्य से अधोलिखित आधार लिए गए थे।

(क) बाइबिल के अपव्ययी पुत्र की कथा का सर्वेक्षण-क्षेत्र की प्रत्येक भाषा एव बोली में अनुवाद।

(ख) विभिन्न भाषाओं या बोलियों के लोक गीतों या वर्णनात्मक गद्य का एक उदाहरण।

(ग) आदर्श शब्दों एव वाक्यों की एक सूची, जिसे 1866 ई० में Campbell ने बगाल की एशियाटिक सोसाइटी के लिए तैयार किया था जिसमें कुछ और शब्द जोड़ दिए गए थे।

Grierson ने तद्युगीन भारत के मद्रास, मैसूर, हैदराबाद, व बर्मा राज्यों के अतिरिक्त सम्पूर्ण भारतवर्ष जिलाध्यक्षों के पास विशेष सूचना के साथ प्रश्नावली भेज दी थी तथा अन्त में पटवारियों ने अन्वेषकों का कार्य पूरा किया था।

Grierson के पास 1897 ई० से भाषाई नमूने आने प्रारम्भ हो गये थे तथा 1900 ई० तक उनमें से अधिकांश का संग्रह हो गया था। इन नमूनों के सम्पादन और प्रकाशन का कार्य 1927 ई० तक चलता रहा, जिसके परिणाम स्वरूप ग्यारह हजार पृष्ठों से भी अधिक की सामग्री भागों सहित ग्यारह खण्डों में एक अद्भुत कृति के रूप में सामने आई, जो सम्पादक के असाधारण धैर्य की परिचायिका है। व्यापकता की दृष्टि से इसके समान बोली-अध्ययन पर सम्पूर्ण विश्व में आज कोई कृति नहीं ठहरती।[3]

यहाँ यह विशेष ध्यान देने की बात है कि जिस समय भारतवर्ष में Grierson सर्वेक्षण-कार्य को सचालित कर रहे थे, उसी समय फ्रांस के प्रतिष्ठित बोली-

भूगोलवेत्ता Gillieron भी वहाँ के कार्य का निर्देशन कर रहे थे और Wenker का कार्य इनसे कुछ ही वर्ष पूर्व समाप्त हुआ था।

भारतीय भाषाविज्ञानी यद्यपि Grierson के कार्य के प्रति सन्दिग्ध हैं,[4] तथापि तत्समान किसी अन्य ग्रन्थ के अभाव में वह आज भी लोगों के भाषाई अध्ययन का प्रेरणास्रोत बना हुआ है तथा भारतीय भाषाविज्ञानी (विशेषकर आर्यभाषाविज्ञानी) भविष्य में भी उसकी उपेक्षा नहीं कर सकते। Grierson का यह आत्मविश्वास सही था कि "इस सर्वेक्षण के रूप में भारत में जो कार्य हुआ है, वह ससार के किसी अन्य देश में नहीं हुआ है।"[5] इस कथन को हम गर्वोक्ति नहीं कह सकते।[6] पटवारियो द्वारा सम्पन्न कार्य की वैधता व विश्वसनीयता पर लोगों का सन्देह स्वाभाविक है, तथापि इसके अनेक ग्रामोफोन रिकार्ड[7] कुछ सीमा तक हमें तद्युगीन भाषा को समझने के लिए एक वैज्ञानिक अन्तर्दृष्टि प्रदान करते हैं।

निस्सन्देह Grierson की यह कृति आधुनिक भारतीय बोलीविज्ञान की अद्वितीय रचना है। यूरोप के बोली भूगोलवेत्ता Sever Pop ने अपने ग्रन्थ La dialectologie के द्वितीय खण्ड के 1121-29 पृष्ठो में भारत के बोली विज्ञान की समीक्षा करते हुए Grierson की भूरि भूरि प्रशसा की है।

9.4. Grierson के सर्वेक्षण के पश्चात्

Grierson के पश्चात् भारतीय बोलियों का अध्ययन लोकसाहित्य, कोश, परम्परागत व्याकरण, ऐतिहासिक और तुलनात्मक व्याकरण, क्षेत्रीय अध्ययन, वर्णनात्मक व सरचनात्मक अध्ययन, आदि विविध आयामो से विकसित होता हुआ तुलनात्मक अध्ययन रूप में उभरा है तथा इस प्रकार के कार्य ईसाई धर्म-प्रचारको, नृतत्त्वशास्त्रियों, लोकसाहित्यकारो, सस्थाओ, शासन, विश्वविद्यालयों, स्वतंत्र रूप से विविध लोगों द्वारा पूरे किए गए हैं। ऐसे कार्यों का आंशिक विवरण Thomas A Sebeok द्वारा सम्पादित व Mouton द्वारा 1969 ई० में हॉग से प्रकाशित Current Trends in Linguistics के पञ्चम खड Linguistics in South Asia नामक ग्रथ (कुल 814 पृष्ठ) में मिलता है। यहाँ केवल विविध सर्वेक्षणों व बोली भूगोल के कार्यों (विशेषकर हिन्दी की बोलियों) की चर्चा की जा रही है, जिनका उल्लेख उपर्युक्त ग्रन्थ में नहीं हुआ है।

9.5. विश्वविद्यालयो द्वारा सम्पादित कार्य—तुलनात्मक अध्ययन

विविध क्षेत्रों के सर्वेक्षण व बोलियों के तुलनात्मक अध्ययन का कार्य आघ

निक भाषाविज्ञान के विकास काल से ही होता आ रहा है। इस प्रकार के कार्य बहुद्देशीय हैं तथा देश की अनेक भाषाओं व उनकी बोलियों को लेकर किए गए है। *यहाँ पहले हिन्दी की बोलियो पर किए गए ऐसे तुलनात्मक कार्यों का* नामोल्लेख है, जिनका लक्ष्य पी एच० डी० या डी० लिट्० उपाधि की उपलब्धि तक ही सीमित रहा है।

गुणानन्द जुआल, मध्य पहाड़ी और उसका हिन्दी से सम्बन्ध आगरा, 1954
अम्बाप्रसाद सुमन, अलीगढ़ और बुलन्दशहर जिलों की बोलियो का तुलनात्मक अध्ययन, आगरा
भालचन्द्र राव तैलङ्ग, भारतीय आर्यभाषा परिवार की मध्यवर्तिनो बोलियाँ नागपुर, 1957.
रामस्वरूप चतुर्वेदी, आगरा जिले की बोली का अध्ययन, प्रयाग, 1958.
शंकरलाल शर्मा, कन्नौजी बोली का अनुशीलन तथा ठेठ ब्रज भाषा से तुलना, आगरा, 1959.
चन्द्रभान रावत, मथुरा जिले की बोलिया, आगरा, 1959.
गेंदालाल शर्मा, ब्रजभाषा और खड़ी बोली के व्याकरण का तुलनात्मक अध्ययन, अलीगढ़, 1960.
अमरबहादुर सिंह, अवधी और भोजपुरी के सीमाप्रदेश की बोली का अध्ययन, प्रयाग, 1960.
रामकुमारी मिश्र, बिहारी का भाषावैज्ञानिक अध्ययन, प्रयाग, 1961
महावीर सरन जैन, बुलन्दशहर तथा खुरजा तहसील की बोलियो का सङ्कालिक अध्ययन, प्रयाग, 1962.

इनके अतिरिक्त कुछ *अन्य प्रबन्ध इस प्रकार है, जिनके प्रस्तुतीकरण की* तिथि से मैं अनभिज्ञ हूँ।

बहादुर सिंह, दिल्लीनगर में आज कल प्रयुक्त खड़ी बोली के विभिन्न रूप, दिल्ली।
राजरूपा द्विवेदी, एटा जिले की अलीगढ़ तहसील की बोलियों का रूपात्मक अध्ययन, आगरा।
छोटे लाल, हिन्दी की खड़ी बोली और ब्रज के ध्वन्यात्मक रूपों का तुलनात्मक अध्ययन, आगरा।
सुरेन्द्रपाल सिंह, स्टैंडर्ड हिन्दी, पंजाबी तथा खड़ी बोली का तुलनात्मक अध्ययन, इलाहाबाद।

दिनेशकुमार शुक्ल, उत्तरी और दक्षिणी अवधी का तुलनात्मक अध्ययन, इलाहाबाद।

Sant lal Pandey, A Synchronic study of the dialects of Pratappur district, Allahabad.

Iqbal Bahadur Singh, The study of sub dialects bordering in Bagheli and Bundeli areas, Allahabad.

Parmatma Prasad Shukla, A Synchronic study of the dialects of Gorakhpur Allahabad.

Ramnath Sharma, Comparative study of the declensional and Conjugational systems of Awadhi, Braj. and standard Hindi, Agra.

9.6. विविध सर्वेक्षण योजनाएँ

Grierson के भाषा-सर्वेक्षण के पश्चात् क्षेत्रीय बोलियों की भिन्नताओं को बताने के लिए भारत के विविध प्रांतो में अनेक सर्वेक्षण-योजनाएँ प्रारम्भ की गई है, किन्तु साधनो के अभाव में यहाँ उनकी चर्चा की जानी सम्भव नही है। वस्तुत. यह एक दुर्भाग्यजनक विषय ही कहा जाएगा कि भारतीय भाषाओं में अब तक हुए सम्पूर्ण कार्यों की चर्चा का कोई एक निश्चित स्रोत नही है। Linguistic Society of India की दृष्टि से अनेक महत्त्वपूर्ण कार्यों पर होने के बावजूद इस अनिवार्य सूचना को प्रकाशित करने में नही गई। जिन सर्वेक्षण-योजनाओं से हम परिचित हैं, उनमें भी विविधता है। उनकी प्रश्नावलियों में समनुरूपता लाने का (कम-से-कम कुछ इकाइयो की समान स्वीकृति) का अभी तक ऐसा कोई प्रयास नही हुआ है, जिससे अन्ततोगत्वा उन्हें तुलनीयता के क्रम में रखा जा सके, अतएव उनकी उपयोगिता बहुत सीमित (क्षेत्रीय) है। यहाँ कुछ सर्वेक्षण योजनाओ की संक्षिप्त चर्चा प्रस्तुत है।

9.6.1. हिमालय की बोलियों का सर्वेक्षण

Grierson के भाषा-सर्वेक्षण की समाप्ति के काल से ही डॉ० सिद्धेश्वर वर्मा ने उत्तर-पश्चिम हिमालय (दरद-पहाड़ी क्षेत्र) की बोलियों के सर्वेक्षण-कार्य को

प्रारम्भ कर दिया था, जो किसी-न-किसी रूप में आज भी चल रहा है। इस प्रकार की योजनाओं पर लगभग अर्धशताब्दी तक कार्य करने वाले अन्य भारतीय भाषाविज्ञानियों की कृतियों का ज्ञान मुझे नहीं है। डॉ० वर्मा के सर्वेक्षण के परिणाम Journal of Royal Asiatic Society (1938, 1941, 1948, आदि), Indian Linguistics (1931, 1936, आदि), Transactions of the Linguistic Circle of Delhi (1955, 1956), भारतीय साहित्य, आदि पत्रिकाओं व ग्रंथों के रूप में प्रकाशित हुए हैं। उनकी अनेक कृतियाँ अभी प्रकाशनाधीन है। Trends in Linguistics (Vol. 5, p. 299) में एतद्विषयक अपूर्ण सूचना ही मिलती है।

9.6.2. गुजरात के सीमाप्रान्त का सर्वेक्षण

उपलब्ध संकेतों के आधार पर कहा जा सकता है कि टी० एन० दुवे का Linguistic survey of Borderlines of Gujarat[8] (1942-48) डॉ० सिद्धेश्वर वर्मा के प्रारम्भिक कार्यों के पश्चात् एक सुव्यवस्थित सर्वेक्षण है, जिसमें सीमाप्रान्त के दस गाँवों को लेकर गुजराती के परिवर्त्य रूपों को दिखाने का प्रयास किया गया है।

9.6.3 बिहार के सीमावर्ती क्षेत्रों का सर्वेक्षण

बिहार की राष्ट्रभाषा परिषद् के तत्वावधान में विश्वनाथ प्रसाद के संचालकत्व में बिहार के कुछ सीमावर्ती क्षेत्रों की बोलियों के नमूने इकट्ठे किए गए थे। इन नमूनों का भाषाई विश्लेषण Linguistic survey of the southern sub division of manbhum (simhabhum) नाम से 1954 ई० में पटना से प्रकाशित हुआ।

उपर्युक्त सर्वेक्षण से प्रोत्साहित हो कर पटना विश्वविद्यालय ने 'पूर्णिया अंचल का भाषावैज्ञानिक सर्वेक्षण' व राँची विश्वविद्यालय ने "मुंडारी एक भाषा सर्वेक्षण का कार्य प्रारम्भ करवाया था। इनकी सूचना उपर्युक्त दोनों विश्वविद्यालयों से प्राप्त हुई है।

9.6.4 मराठी की बोलियों का सर्वेक्षण

पिछले दशक के प्रारम्भ से देश के विविध क्षेत्रों में बोलियों के सर्वेक्षण के प्रति अधिक रुचि देखने को मिलती है। तदनुसार ए० एम० घाटगे की A survey of marathi dialects योजना के अंतर्गत अनेक बोलियों पर सर्वेक्षण-कार्य

पूरा हो चुका है, तथा दक्षिणी (1965), कुडाली (1965), व महद् क्षेत्र की कुनबी (1966) पर कई ग्रन्थ भी प्रकाशित हो चुके हैं।

पूना विश्वविद्यालय से 'सतराज्या सतवातील बोली' (प्रकाशित, 1963) तथा The khandesrı as spoken by t e farmers ın vıllage of mohadı ın dhulıa taluk (1964, unpublıshed) पर क्रमश विट्ठल प्रभु देसाई व विजया चिटनिस ने पी-एच० डी० उपाधि के लिए कार्य किया है।

9.6.5. पंजाब का भाषा-सर्वेक्षण

पंजाब में हरजीत सिंह गिल के संचालकत्व में पंजाब का भाषा-सर्वेक्षण इस समय प्रगति पर है।

9.6.6. मलयालम की बोलियों का सर्वेक्षण

दक्षिण भारत की द्रविड़ बोलियों के सर्वेक्षण-कार्य में सर्वप्रथम गणनीय के० गोदवर्म का मलयालम की बोलियों का सर्वेक्षण है। उन्होंने 1950 ई० से 1952 ई० तक केरल की विविध बोलियों का सर्वेक्षण किया था तथा उनका प्रकाशन 1952 ई० में त्रिवेन्द्र से हुआ था।

9.6.7. तमिल की बोलियों का सर्वेक्षण

तमिल की बोलियों पर William Bright तथा ए० के० रामानुजम का सर्वेक्षण कार्य उल्लेखनीय है। सर्वेक्षण के परिणामों का प्रकाशन Survey of Tamil dıalects नाम से 1961 ई० में शिकागो से हुआ था।

9.6.8. कन्नड की बोलियों का सर्वेक्षण

डी० एन० शंकर भट्ट ने कन्नड की बोलियों पर कार्य करने के लिए 150 इकाइयों की प्रश्नावली बनाई थी। इसके आधार पर उन्होंने मैसूर प्रान्त के 75 स्थानों का सर्वेक्षण किया था। सर्वेक्षण से प्राप्त सामग्री का प्रकाशन पूना विश्वविद्यालय की शोधपत्रिका में Dıalects of Kannada ın Mysore dıstrıcts नाम से हो रहा है।

9.6.9. *गोंडी की बोलियों का सर्वेक्षण*

1967 ई० से प्रस्तुत लेखक गोंडी की बोलियों पर सामग्री जुटा रहा है तथा अब तक मध्य प्रदेश के आठ जिलों से सामग्री का संग्रह हो चुका है तथा महाराष्ट्र, उड़ीसा, व आन्ध्रप्रदेश से सामग्री का संग्रह अभी बाकी है। 'गोंडी

प्रवेशिका' नामक पुस्तक का प्रकाशन 1970 ई० में जगदलपुर से हो चुका है तथा A comparative grammar of gondi dialects ग्रन्थ मुद्रणस्थ है। प्रस्तुत सर्वेक्षण बहुविध लक्ष्यों से किया जा रहा है, जिसके अन्तर्गत तुलनात्मक कोश, तुलनात्मक व्याकरण, व तुलनात्मक लोकसाहित्य के अतिरिक्त 'समाजभाषिक मानचित्रावली का भी प्रावधान है। लेखक के सम्पादकत्व में प्रकाशित शोधपत्रिका Psycho-lingua के द्वितीय अंक में गाड़ी के पुरुषवाचक सर्वनामों का भौगोलिक विवरण प्रस्तुत है।

9.6.10. बस्तर की बोलियों का सर्वेक्षण

यह कार्य भी लेखक के द्वारा 1967 ई० में प्रारम्भ किया गया था तथा अब सर्वेक्षण का कार्य लगभग पूरा हो चुका है। इसके परिणाम बस्तर के वनवासी गीतों में गोंधी (रायपुर), तथा बस्तर की उन्नीस बोलियाँ में प्रकाशित हुए हैं। इस समय प्रत्येक बोली से सम्बन्ध विश्लेषण और सम्पादन का कार्य हो रहा है तथा हलबी-विषयक दीर्घकाय ग्रन्थ (लाला जगदलपुरी के साथ) शीघ्र प्रकाश्य है।

9.6.11. कोसली की कहावतों का संकलन

अवधी, बघेलखंडी, छत्तीसगढ़ी, तथा हलबी की कहावतों का तत्तत्क्षेत्र से संकलन किया जा चुका है तथा प्रस्तुत लेखक व रामनिहाल शर्मा के सम्पादकत्व में उसके प्रकाशन की भी योजना है। उल्लेखनीय है कि इन क्षेत्रों की कहावतों का यह प्रथम स्वतंत्र प्रकाशन होगा।

9.7. समाजभाषिक अध्ययन की प्रेरणा

दक्षिण भारत की बोलियों पर अध्ययन के फलस्वरूप वहाँ लोगों का ध्यान भाषा के भौगोलिक तत्वों से हट कर सामाजिक तत्वों की ओर गया है, जिससे पिछले दो दशकों के अन्तर्गत वहाँ जाति-बोलियों पर प्रचुर मात्रा में कार्य हुए हैं। William Bright का विश्वास है कि भाषाविज्ञान की नव्यतम शाखा 'समाज भाषिकी के प्रति अमरीकी विद्वानों की अधिक रुचि का कारण भारतीय भाषाओं पर इस ढंग के कार्यों की व्यापकता है।[9] इस प्रकार के कार्यों की विस्तृत व्याख्या व इतिहास को John J. Gumperz के Sociolirguistics in South Asia (Trendsir Linguisti cs, Vol. 5 pp. 597-606) नामक लेख में देखा जा सकता है।

9.8. भारत मे शब्द भूगोल

भारत में शब्द भूगोल से सम्बद्ध छुटपुट कार्य यद्यपि बोली-अध्ययनो को उप-रिचर्चित रचनाओ से ही प्रारम्भ हो जाते हैं, किन्तु 1955 ई० के पूर्व उसका जो स्वरूप मिलता है, उससे उन्हे शब्द भूगोल के अन्तर्गत वर्गबद्ध नही किया जा सकता।

सर्वप्रथम सिद्धेश्वर वर्मा ने 1941 ई० में Studies in Burushaski dialectology (JRASB) के माध्यम से बोलीविज्ञान के स्वरूप को प्रस्तुत कर 1955 ई० में A peep into the travels of words in the languages of India (*Trans Ling Cir Delhi*, pp *13-16*) नामक लेख में शब्दो की यात्राओ का रोचक विवरण दिया था। इस लेख में उन्होंने नैसर्गिक, सामाजिक, व मनोवैज्ञानिक दृष्टि से शब्दो का भौगोलिक अध्ययन किया है। इस प्रकार वे भारत में आधुनिक शब्द भूगोल के प्रवर्तक माने जा सकते हैं।

डॉ वर्मा के पश्चात् John J. Gumperz ने 1955 ई० में Indian Linguistics में एक लेख[10] लिख कर लोगो का ध्यान विशुद्ध बोलीविज्ञान की ओर केन्द्रित करना चाहा था तथा 1958 ई० में अधोलिखित लेखो के माध्यम से बोली भूगोल के सरचनात्मक व सामाजिक पक्ष पर बल दिया था—

1- Phonological differences in three Hindi dialects, Language (1958) 34 212 24

2 Dialect differences and social stratification in a North Indian Village, American Anthropologist (1958) 60 668-82

Gumperz की बोली भूगोलपरक स्पष्ट विचारधारा का विवेचन अग्रिम अध्याय में है। उन्होने यद्यपि तीन गाँवो को ही अध्ययन का केन्द्र बनाया था, तथापि उनकी सामग्री अधिक प्रामाणिक व प्रायोगिक ढग से निश्चित की गई थी। उन्होने मानचित्र के माध्यम से समभावाश रेखाओं व बोली-क्षेत्र को सुस्पष्ट व्याख्या की थी। इस प्रकार भारत में बोली भूगोल का यथातथ्य स्वरूप प्रस्तुत करने के कारण Gumperz को हिन्दी की बोलियों पर कार्य करने वाले प्रथम बोली भूगोलवेत्ता के रूप में स्वीकार करना होगा। उनका महत्व अधिकाधिक स्थानों के सूचको की सामग्री को मानचित्र में प्रस्तुत करने की दृष्टि से नही है, अपितु भाषाविज्ञान की नव्यतम शाखा को अधिक सही ढग से प्रस्तुत करने व पथ प्रदर्शन की दृष्टि से है। इस प्रकार शब्द भूगोल का भारत में आधुनिक इतिहास पन्द्रह वर्षों से अधिक प्राचीन नही कहा जा सकता।

यह विस्मयजनक ही है कि परवर्ती लोग सिद्धेश्वर वर्मा व John J Gumperz की वैज्ञानिक दृष्टि से प्रभावित नहीं हो पाए, क्योंकि उनके कार्य की समाप्ति के पश्चात् हिंदी-क्षेत्र में बोली भूगोल पर जो कार्य हुये हैं, उनमें वह दृष्टि नहीं मिलती, जो बोली भूगोलवेत्ता के पास होनी चाहिए। इनमें से किसी में उनका उल्लेख भी नहीं किया गया है।

हिंदी की बोलियों से सम्बद्ध शब्द भूगोलपरक कार्य विगत दशाब्दी के उत्तरार्द्ध से प्रारम्भ हुये थे और ऐसा प्रतीत होता है कि परम्परागत वर्णनात्मक भाषाविज्ञानी इस व्यावहारिक विधा के परिणामों को समझने के लिये उत्सुक हैं। इस दिशा में सम्पन्न प्राय सभी कार्य पी एच० डी० के लक्ष्य से किये गये हैं, अतएव इनका विवेचन विश्वविद्यालय क्रम से किया गया है।

9.8.1. लखनऊ विश्वविद्यालय मे सम्पन्न कार्य

'बांदा ज़िले का बोली भूगोल' भगवानदीन का अप्रकाशित प्रबन्ध है, जिस पर 1966 ई० में लखनऊ विश्वविद्यालय से पी एच० डी० की उपाधि मिली थी। इस प्रबन्ध के लिये लेखक ने 2886 वर्ग मील में विस्तृत बांदा ज़िले व उसकी बाहरी सीमा के 60 स्थानों से सूचना जुटाई है तथा एक समुदाय से प्राय दो सूचकों को चुना है। प्रश्नावली में कुल 1150 शब्द तथा 782 वाक्यांश हैं। इस प्रकार कुल 1932 इकाइयों को सम्मिलित किया गया है। इस सामग्री को 14000 कार्डों में सन्निवेशित किया गया था तदनुसार उसे शोधप्रबन्ध में इस रीति से प्रस्तुत किया गया है—

प्रथम अध्याय—भूमिका
द्वितीय अध्याय—स्वानिमिक विवेचन
तृतीय अध्याय—व्युत्पादक प्रत्यय विवेचन
चतुर्थ अध्याय—विभक्तिविवेचन, नामपद
पंचम अध्याय—आख्यात पद
षष्ठ अध्याय—पश्चाश्रयी विचार
सप्तम अध्याय—भाषाई मानचित्र
अन्तिम अध्याय में कुल 37 मानचित्रों का सग्रह है।

9.8.2. सागर विश्वविद्यालय मे सम्पन्न कार्य

उपर्युक्त कार्य के समान श्रीमती लता दुबे ने 'बुंदेली-क्षेत्र की बुंदेली ध्वनिगत विभेदों की चित्रावली का अध्ययन' (1967 ई०) किया है, जिस प

उन्हें सागर विश्वविद्यालय से पी-एच०डी० की उपाधि मिली थी। इस प्रबन्ध के लिये 'सोच कर' बनाई गई प्रश्नावली में प्रारम्भ में 542 इकाइयाँ थी, किन्तु क्षेत्र में जाने पर यह 495 शब्दो तक ही सीमित रही। इस प्रश्नावली के माध्यम से लेखिका ने खुद 37 स्थानो के 40 सूचकों से *सामग्री एकत्र की तथा उसे* अपने प्रबन्ध में इस प्रकार शीर्षकबद्ध किया—

1. भूमिका—सीमा, उपबोलियाँ, कार्यप्रणाली, कार्यविस्तार।
2. समुदाय
3. सूचक-सूची
4. डेटा
5. नक्शे
6. समीक्षा और निष्कर्ष

लेखिका ने कुल 98 मानचित्र प्रस्तुत किये हैं।

9.8.3. उपर्युक्त 'बोली-भूगोल' और 'चित्रावली' की कमियाँ

हिन्दी की बोलियो पर प्रस्तुत उपर्युक्त दोनों ही कार्यों में वैधता और प्रामाणिकता का अभाव है। कुछ मानचित्रो के प्रदर्शनमात्र से भले ही इन्हें 'बोली-भूगोल' या 'चित्रावली' के कार्य की सज्ञा दे दी जाये, किन्तु एकादश अध्याय में *शब्द-भूगोल की सज्ञा जिस दृष्टि का सकेत है, उसका इनमें नितात अभाव है।* शब्द-भूगोल के माध्यम से न तो इन कृतियो का लक्ष्य भाषिकेतर समस्याओं का उद्घाटन है और न ही ऐतिहासिक सदर्भो की खोज। न तो ये संरचनात्मकता की दृष्टि प्रस्तुत करती हैं और न ही इनमें बोलियो का सुस्पष्ट भौगोलिक प्रास होता है।

ऐसा प्रतीत होता है कि देश या विदेश में चल रहे इतर कार्यों से इनका परिचय नही था। उदाहरणार्थ, Gumperz की शिक्षा का इनमें से किसी पर असर नही हुआ। यह जान कर और भी अधिक आश्चर्य होगा कि मिश्र के करीब आधे दर्जन सन्दर्भ-ग्रन्थों में किसी भी बोली-भूगोल के ग्रन्थ का उल्लेख नही है और श्रीमती लता दुबे केवल Kurath की Handbook का सकेत दे कर अपने कार्य की इति श्री समझ लेती है?

समुदाय, सूचक, तथा सामग्री के चयन में इन्होने वैज्ञानिक दृष्टि नही अपनाई। इनका चुनाव क्यों और कैसे किया गया? इस प्रश्न का उत्तर प्रबन्धो में नही मिलता।

मिश्र के कार्य की रूपरेखा से ही स्पष्ट है कि लेखक ने बोली-भूगोल के

माध्यम से वर्णनात्मक भाषाविज्ञान को ही प्रस्तुत किया है। 'चित्रावली' की सम्पादिका के लिए एक बोली विज्ञानी के रूप में आवश्यक था कि वे अपने कार्य में बुंदेली की सीमाओं को निश्चित करने का प्रयास करतीं, किंतु उन्होंने वैसा नहीं किया है। भूमिका में उन्होंने जो सीमा दी है, वह सन्दिग्ध है, परिणामतः बुंदेली की उपबोलियों को समझने की दृष्टि से उनके कार्य की उपादेयता कम है।

उपर्युक्त प्रबन्धों के अध्ययन के पश्चात् कोई भी यह विचार व्यक्त कर सकता है कि भारतवर्ष के ज्ञात अन्वेषकों में अभी तक बोली-भूगोल की वास्तविक धारणा का विकास नहीं हो पाया है।

9.8.4, रविशंकर विश्वविद्यालय में प्रस्तुत लेखक का कार्य

9.8.4.1. विगत अर्द्ध शताब्दी में देश के अनेक क्षेत्रों की बोलियों पर गम्भीर अध्ययन हुए हैं, किन्तु भाषाविज्ञान की वर्णनात्मक शाखा के प्रति लोगों का इतना अधिक आकर्षण रहा है कि जीवित बोलियों पर तुलनात्मक व्याकरणों की अपेक्षा व्यक्ति बोली-व्याकरणों (तथाकथित वर्णनात्मक व्याकरणों) की ही अधिक रचना हुई है। बोली भूगोल या चित्रावली के नाम से भी अपने देश में जो छुट-पुट कार्य हुए हैं, उन पर भी वर्णनात्मक भाषाविज्ञान इतना अधिक हावी रहा है कि भारत में शब्द-भूगोल को भाषाविज्ञान की एक स्वतंत्र शाखा के रूप में विकसित होने का अवसर ही नहीं मिल पाया। ऐसी स्थिति (1971 ई०) में 'बघेल खण्ड का शब्द भूगोल' (रविशंकर विश्वविद्यालय की पी-एच० डी० उपाधि के लिए) प्रस्तुत इस लेखक ने उपेक्षित विषय व क्षेत्र को अध्ययन की सीमा में बाँधने का प्रयास किया है।

9.8.4.2. 'बघेलखंड का शब्द-भूगोल' 'मध्य प्रदेश की जाति-भाषिक मान-चित्रावली' नामक मेरी भाषिक परियोजना का अंशमात्र है, जो चार खण्डों में निबद्ध है। यहाँ संक्षेप में उसके कार्यक्षेत्र पर विचार किया गया है। तृतीय अधि-करण में एतद्विषयक सूचना अधिक विस्तार से प्रस्तुत है।

9.8.4.3. A word geography of Baghelkhand का कार्यक्षेत्र

प्रस्तुत प्रबन्ध बघेलखंड की प्रमुख बोली बघेलखंडी में क्षेत्रीय और सामाजिक विभेदों के वैज्ञानिक रीति से निश्चयीकरण से सम्बद्ध है। प्रबन्ध में विषय का प्रतिपादन संकालिक-कालक्रमिक, संरचनात्मक-असंरचनात्मक, प्रजनक-अप्रजनक, तथा भाषिक-भाषिकेतर, आदि रूपों में किया गया है।

बघेलखंड का क्षेत्रफल नागालैण्ड व केरल राज्यों के समान लगभग पन्द्रह

हजार वर्ग मील है। उत्तर से दक्षिण में इसकी दूसरी लगभग 180 मील तथा पूर्व से पश्चिम में लगभग 140 मील है। इस विस्तृत क्षेत्र के अन्तर्गत मध्य प्रदेश के सतना, रीवा, सीधी, तथा शहडोल (चार) जिलो की समग्र भूमि समाहित है। तदनुसार व्यापकता को ध्यान मे रखते हुए बघेलखंड के एक प्रारम्भिक सर्वेक्षण के माध्यम से 24 समुदायो, 24 सूचको, व 525 इकाइयों की प्रश्नावली की युक्तियुक्तता पर विचार करने के पश्चात् व्यापक पैमाने पर अनुसन्धान-कार्य प्रारम्भ किया गया था।

व्यापक सर्वेक्षण के अन्तर्गत जिन 200 समुदायो का चयन किया गया है, उनमें 11 नगर तथा 189 गाँव हैं। इनका मनोनयन जनसंख्या, परिवार, शिक्षा व साक्षरता, सीमान्त-स्थिति, प्राकृतिक स्थिति प्राचीन व आधुनिक मुख्यालय तथा केन्द्र, आदि विविध कसौटियों पर किया गया है। इस प्रबन्ध के अन्तर्गत बघेलखंड के सभी 'नगरो' के बोली-नमूनो का विश्लेषण किया गया है तथा प्रतिचयन-विधि से 'गाँवो' के चुनाव में उपर्युक्त निष्कर्षों पर ध्यान देते हुए प्रति 41 गाँवों में 1 गाँव का अनुपात स्वीकार किया गया है, अन्यथा संख्या में 7000 से भी अधिक यहाँ के प्रत्येक गाँव का सर्वेक्षण मेरी सामर्थ्य से परे होता। समुदायो के चयन में प्राचीन 12 देशी राज्यो के आनुपातिक क्षेत्र को भी विशेष सावधानी के साथ सम्मिलित किया गया है।

प्रारम्भिक तथा व्यापक इन दोनो ही सर्वेक्षणो मे एक स्थान से 'एकमेव' सूचक को चुना गया है। आज अधिकाश विदेशी विद्वान् एक स्थान से कम-से-कम दो सूचकों के चुनाव पर बल देते हैं। उनके लिए ऐसा निर्णय करना इसलिए सहज है कि उन विविध क्षेत्रो के सामाजिक अध्ययनो के परिणामस्वरूप वहाँ के सामाजिक स्तरों का उन्हें ज्ञान है। किन्तु बघेलखंड की स्थिति सर्वथा विपरीत है। इस क्षेत्र के विविध अंचलो को ले कर अभी तक ऐसा कोई कार्य सम्पन्न नही हुआ, जिससे वैज्ञानिक रीति से यहाँ के विविध सामाजिक स्तरो का ज्ञान हो सके। इसके अतिरिक्त स्वानुभव से यह कहा जा सकता है कि जाति, वर्ग, व्यवसाय, शिक्षा, धर्म तथा सभ्यता, आदि की दृष्टि से यहाँ अनेक वर्ग विद्यमान हैं और उनमें भी भेद-प्रभेद मिलते है। ऐसी स्थिति में एक स्थान से कम-से-कम दो सूचको के चयन की बात लागू नही होती। पूर्ण सामाजिक भेदो को समझने के लिए इस प्रकार एक दर्जनसे भी अधिक सूचको की आवश्यकता पड सकती है, जिसकी पूर्ति अनेक अन्वेषको वाली कोई विशालकाय योजना ही कर सकती है। ऐसी स्थिति मेंGillieron के समान एक स्थान से एक ही सूचक को उस समुदाय का प्रतिनिधि माना गया है। चूँकि प्रारम्भिक सर्वेक्षण के अधिकतर

सूचक ब्राह्मण और क्षत्रिय हैं, अतएव इन दोनों के बोली-रूपों के नमूनों के व्यापक सर्वेक्षण के प्रमुख सूचकों, अर्थात् हरिजनों व आदिवासियों के बोली-रूपों से तुलना कर के आंशिक रूप में सामाजिक भेदों की ओर संकेत किया जा सकता है।

प्रस्तुत अध्ययन की प्रश्नावली के लिए जिन इकाइयों का चयन किया गया है, उनमें ध्वनि, रूप, शब्द, व अर्थ की दैनन्दिन विशेषताओं को बताने वाली बातें हैं। इनके अतिरिक्त कुछ नवीन अभिव्यक्तियों को भी सम्मिलित किया गया है, जिससे नवप्रवर्तन के प्रसार का बोध हो सके।

प्रारम्भिक सर्वेक्षण की प्रश्नावली विविध अट्ठाइस उपवर्गों में विभक्त थी तथा उसमें कुल 525 इकाइयाँ थी। अतएव उनकी दीर्घता को कम करने व उन्हें अधिक प्रामाणिक तथा विश्वसनीय बनाने के लिए सांख्यिकी की प्रतिचयन-विधियों का आश्रय लिया गया है। फलस्वरूप सताइस उपवर्गों में विभक्त 200 इकाइयों वाली व्यापक सर्वेक्षण की सुनियोजित प्रश्नावली को सूचकों के साथ पूरा करने में तीन घण्टे से अधिक समय नहीं लगता था, जब कि उससे 288 शब्द प्राप्त हो जाते थे।

उपर्युक्त समुदायों के सूचकों से सामग्री का संकलन मैंने *स्वयं* किया है, अतएव Gillieron के समान सामग्री की *एकरूपता* का भी दावा किया जा सकता है।

अनुसन्धान के परिणामों को शब्द-मानचित्रावली के अन्तर्गत 400 मानचित्रों में अंकित किया गया है, जिनमें 25 परिचयात्मक हैं तथा 350 ध्वनि, रूप शब्द, व अर्थ के वितरण को प्रदर्शित करते हैं। बाद के 23 मानचित्र संघातात्मक प्रकृति के हैं जिनसे विविध संघातों के निदर्शन के साथ उपबोली-क्षेत्रों की सीमाएँ निर्धारित की गई हैं। अन्तिम 2 मानचित्र परम्परागत उपबोली-क्षेत्रों को दिखाते हैं।

9.8.5. विभिन्न विश्वविद्यालयों में शब्द-भूगोलपरक कार्य

A word geography of Baghelkhand की समाप्ति के पश्चात् प्रस्तुत लेखक को अद्यतन विश्वविद्यालयों में शब्द-भूगोलविषयक कार्यों की सूचना मिली है।

9.8.5.1. सागर विश्वविद्यालय में 'सीधी जिले का बोली भूगोल' विषय पर बी० पी० शर्मा ने 1972 ई० में अपना प्रबन्ध पीएच० डी० उपाधिहेतु प्रस्तुत किया है। उन्होंने इसके लिए 29 समुदायों व 29 सूचकों का चयन

किया है, जिनमे से 10 समुदाय व 10 सूचक सीधा जिले के सीमावर्ती क्षेत्रों से लिए गए है। कुल मानचित्रों की संख्या 56 है।

9.8.5.2. पंजाब विश्वविद्यालय, चंडीगढ़ मे संस्कृत के प्राध्यापक डी० डी० शर्मा 'Linguistic geography of central pahari पर कार्य कर रहे है।

9.8.5.3. कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय में बुन्देली क्षेत्र की बोली का भौगोलिक अध्ययन इस नाम से हो रहा है— A Survey of linguistic atlas of Bundeli area.

9.8.5.4. रविशंकर विश्वविद्यालय के भाषाविज्ञान (एम० ए० अन्त्य) के छात्रों ने 'रायपुर जिले का ध्वनिप्रक्रियात्मक भूगोल' प्रस्तुत किया है, जो परीक्षात्मक है। इस कार्य के लिए इन्हे दिनो और महीनो के नामो की प्रश्नावली दी गई थी। क्षेत्रकार्य से प्राप्त सामग्री को इन्होंने 15 मानचित्रो में प्रस्तुत किया है।

टिप्पण और सन्दर्भ

1. ग्रियर्सन, भारत का भाषासर्वेक्षण (अनूदित) खण्ड 1, भाग 1, पृ० 23–6.

2. ए० आर० राजराजवर्म कोइतम्बुरान, भाषोत्पत्ति (संस्कृत), तिरुवनंतपुर, 1890. विशेष सन्दर्भ के लिए हीरा लाल शुक्ल, आधुनिक संस्कृत साहित्य इलाहाबाद, 1971, पृ० 328–32 देखिए।

3. विशेष विवरण के लिए, सर जॉर्ज अब्राहम ग्रियर्सन, भारत का भाषासर्वेक्षण, भाग 1, खण्ड 1, देखिए।

4. सिद्धेश्वर वर्मा, "भारतीय भाषाओ के ग्रियर्सन द्वारा किए गए भाषासर्वेक्षण के मुख्य निष्कर्ष", परिषद्पत्रिका (भाषासर्वेक्षण अंक 1969) पृ० 117–8.

5. ग्रियर्सन, तत्रैव, प्राक्कथन।

6. शम्भुदत्त झा, 'परिषद् की भाषासर्वेक्षणयोजना', परिषद्पत्रिका (1969) 8 (3-4) : 14.

7. Rai Bahedur Hiralal, Grammophone Records of Languages and Dialects Spoken in the central Provinces and Berar, Madras, 1920.

8. T. N. Dave, 'Linguistic Survey of Borderlines of

Gujarat', Journal of Ganganath Jha Research Institute (1942-48)

9. Stanley Liesberson, Explorations in Sociolinguistics Mouton, The Hague, 1966, pp.185-90.

10. John J. Gumperz "The phonology of a North Indian Village : The use of phonemic deta in dialectology" Indian Linguistics (1955) 16 : 283-95.

द्वितीय अधिकरण

स्वरूप

10

भाषा-भूगोल के विविध आंशिक पर्याय

10.1. शब्द-भूगोल बोली वैज्ञानिक अनुसन्धान पर आधारित है। बोली वैज्ञानिक अनुसन्धान में किसी भाषा के बोलीगत तत्त्वों व व्यक्ति बोलियों की विशेषताओं के भौगोलिक अभिलक्षणों से सम्बद्ध सूचनाओं का संग्रह होता है। इस रीति से सम्पन्न भाषिक अनुसन्धानों के माध्यम से भाषिक परिवर्तन के लिए प्रचुर सामग्री उपलब्ध हुई है। अन्वेषकों के लक्ष्यों व पद्धतियों के अनुसार क्षेत्र-अनुसन्धान की अनेक तकनीकों का विकास हुआ है। शब्द-भूगोल से भाषाविज्ञानी को अब तक अछूते इस क्षेत्र में कार्य करने के लिए प्रोत्साहन मिला है।

ज्ञान के किसी भी अन्य अनुष्ठान के समान शब्द भूगोल की दृष्टि भी याद्दच्छिक और अपूर्ण है, क्योंकि जो कुछ भी संग्रहीत व विश्लेषित होता है, वह अपरिहार्य रूप से सामग्री का अल्प संचयन है। व्यावहारिकता और सुविधा की दृष्टि से तथा जिज्ञासु के पूर्व लक्ष्य के कारण सम्बद्ध सामग्री का अतिदीर्घ अंश या तो उपेक्षित रहता है या उसे वैसा मान लिया जाता है।

10.2. विगत एक शताब्दी से व्यावहारिक भाषाविज्ञान की शाखा शब्द-भूगोल ने यद्यपि 'शब्देष्वाश्रिता शक्ति विश्वस्यास्य निबन्धनी' (भर्तृहरि, वाक्यदीय, 1 123) व 'अनुविद्धमिव ज्ञानं सर्वं शब्देन भासते' (तत्रैव) जैसी आर्ष धारणाओं को भौगोलिक परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत कर महत्त्वपूर्ण कार्य किया है तथा एतद्विषयक कार्यों की प्रधानता के कारण आज वह 'भाषा भूगोल' का वाचक बन गया है, तथापि विचारों के एकीकरण के अभाव में अभी यह अस्पष्ट बना हुआ है।

भाषाविज्ञान के अन्तर्गत सम्प्रति शब्द-भूगोल दो अर्थों में प्रयुक्त होता है—

(क) सैद्धान्तिक दृष्टि से शब्द-भूगोल भाषा-भूगोल का एक अङ्ग है तथा

(ख) व्यावहारिक दृष्टि से भाषा-भूगोल को शब्द-भूगोल है।

10.3. भाषा-भूगोल शब्द के आंशिक समानार्थक भू भाषिकी, मध्यमभाषिकी, क्षेत्रीय भाषिकी, क्षेत्र भाषिकी, भौगोलिक भाषिकी, बोलीविज्ञान, बोली-सर्वेक्षण, बोली भूगोल, आदि शब्द विद्वानों द्वारा समय-समय पर सुझाए गए हैं। शब्द-भूगोल के स्वरूप की स्पष्टता के लिए यहाँ इन पर संक्षिप्त टिप्पणी आवश्यक है।

10.3.1. भूभाषिकी की व्याख्या Mario Pei ने इस प्रकार की है—वक्ताओं की संख्या, भौगोलिक वितरण, आर्थिक, वैज्ञानिक और सांस्कृतिक महत्व व उच्चरित तथा लिखित रूपों के विशेष सन्दर्भों के साथ भाषाओं का वर्तमान स्थिति में अध्ययन ही भूभाषिकी है [1],, इस रूप में यह परिभाषा भाषा-भूगोल को ही लक्षित करती है।

भूभाषिकी के अन्तर्गत Ascoli तथा Pisani नामक विद्वानों के कार्य परिगणित किए जाते हैं। भूभाषिकी का सर्वाधिक महत्वपूर्ण योगदान Ascoli का अधस्तलभाषा सिद्धान्त' है, जो 1940 ई० में प्रकाशित इनके ग्रन्थ Geolinguistica e indo europeo में निबद्ध है।[2]

Ascoli ने अपने प्रतिष्ठित कार्य में जिन जातीय प्रक्रियाओं तथा अधस्तल-भाषा के तत्वों को प्रदर्शित किया था, वे क्षेत्रीय तुलना के दृढ़ नियम के विषय रहे हैं। उनके कार्य से नवप्रवर्तन की धारा, जटिलीकरण, व पराच्छादन, आदि तत्व स्पष्ट रूप में मिलते है। उन्होंने अपने अधस्तलभाषा सिद्धान्त को इस प्रकार प्रस्तुत किया था—"यदि कोई जनसंख्या अपनी मातृभाषा को दूसरी मातृभाषा के पक्ष में छोड़ देती है, तो परवर्ती भाषा के प्रभाव से पूर्ववर्ती भाषा अपरिहार्य रूप से परिवर्तित हो जाती है और फिर भाषिक अधस्तल को प्रदर्शित करती है।[3]

Ascoli ने अपने उपर्युक्त सिद्धान्त से कार्डिया जैसे सम्मिश्र भाषाओं वाले सम्भाग में क्षेत्रीय तुलना के माध्यम से अतिप्राचीन जातीय या भाषिक पक्षों को पहचाना था, जो आंशिक रूप से तुस्कन की अधस्तलता के कारण अस्पष्ट हो गए थे।

M G Bartoli ने अपने Neolinguistica के तृतीय अध्याय (पृ० 39—49) में यद्यपि अधस्तल भाषिक सिद्धान्त को आंशिक रूप (जातीय मिश्रण) में ही स्वीकार किया था तथापि परवर्ती नव्यभाषाविज्ञानियों की कृतियों में वह कुछ परिष्कृत रूप में मान्य रहा है।[4]

10.3.2. नव्यभाषिकी—बोलीगत अध्ययन के परिणामस्वरूप आदर्शवाद और सौन्दर्यवाद के अनुयायी इटली के कुछ भाषा विज्ञानियों के सिद्धान्तों ने उन्नीसवीं शताब्दी के अन्तिम चरण में नव्यवैयाकरणों के विरोध में नव्यभाषिकी सम्प्रदाय को जन्म दिया था। जिसके प्रतिनिधि पुरस्कर्ता Humboldt, Vossler, Schuchardt, Croce, Bartoli Bartoni, तथा Spitzer, आदि विद्वान् हैं। जिनका प्रमुख उद्देश्य भौगोलिक क्षेत्रों में नवप्रवर्तन की प्रक्रिया का

अध्ययन है, व जिनके कार्य को यदा-कदा क्षेत्रीय भाषिकी, क्षेत्र-भाषिकी, भौगोलिक भाषिकी, आदि कह दिया जाता है।[6]

अपने सिद्धान्तों की समीक्षा के लिए नव्यभाषा विज्ञानियों ने Gillieron की भाषा-मानचित्रावली को ही आधार बनाया था। इस प्रकार एक ढंग से उन्होंने भाषा-भूगोलविषयक तथ्यों के उद्घाटन का कार्य किया है। Milka Ivic के अनुसार 'हम इन विद्वानो के इसलिए आभारी है कि इन्होने भाषा-भूगोल के सिद्धान्तों को प्रचारित करने मे हमारी बहुत सहायता की है।'[7]

नव्यभाषाविज्ञानी Bartoni ने क्षेत्रीय भाषिकी को तुलनात्मक पद्धति का एक विकसित रूप माना है। क्षेत्रीय भाषिकी की उनकी अधोलिखित व्याख्या से उपर्युक्त कथन प्रामाणिक माना जा सकता है—वस्तुतः संकालिक दृष्टि से क्षेत्रीय भाषिकी एक तुलना है। इसमें दो या दो से अधिक भाषाओं, बोलियों, या उपबोलियों के रूपों या ध्वनियों की तुलना की जाती है।'[8]

भूगोल को बोलियों के इतिहास का मूल मन्त्र मानने वाले नव्यभाषाविज्ञानियों में इटली के Matteo Giulio Bartoli (1873-1946) का नाम सर्वप्रथम आता है। Milka Ivic ने उन्हें इस धारा का प्रमुख प्रवर्तक माना है।[9] Bartoli ने 1910 ई० में Alle Fronti del Neolatino नाम से एक लेख प्रकाशित करवाया था तथा 1925 ई० में उनकी Breviario di Neolinguistica (मोदेना) व Introduzione alla Neolinguistica (जेनेवे) पुस्तकें छपी थी, जिनमें से प्रथम पुस्तक के सहयोगी लेखक Giullio Bartoni थे। इन तीनो ही रचनाओं में उन्होंने भाषा-भूगोल के अध्ययन से व्युत्पादित भाषाई परिवर्तन के कुछ सिद्धान्तों को निबद्ध किया है। B. Croce के दर्शन से आप्लावित इन सिद्धान्तो के आधार पर उन्होंने भाषाविज्ञान में जिस नवीन विचारधारा को नव्य वैयाकरणों के विरोध में प्रवर्तित किया, उसे नव्यभाषिकी कहा।

Bartoli के नव्यभाषिक सिद्धान्तों का वास्तविक प्रचार 1945 ई० पर्यन्त इटली से बाहर नहीं हो सका, क्योंकि वे इतालवी भाषा में ही मुद्रित थे। सर्वप्रथम Word नामक पत्रिका (खण्ड 1, भाग 1) में Bartoni का एक लेख अंग्रेजी में छपा, जिसमें उन्होंने नव्यभाषिकी पद्धति को अन्य पद्धतियों की तुलना में सर्वोत्कृष्ट घोषित किया था। उस समय Bartoli के सभी सिद्धान्तों को समझने के लिए विद्वान अधिक लालायित थे, किन्तु मूल ग्रन्थ इतालवी में होने के कारण उन्हें उपर्युक्त लेख से ही सन्तोष करना पड़ा। वस्तुतः बहुत समय तक उसका महत्व किसी की समझ में न आ सका।[10]

कालक्रम से विद्वानो ने Bartoli के निषेधात्मक तथा स्वीकारात्मक दोनो ही पक्षो पर विचार किया है। नव्यवैयाकरणों की कटु आलोचना व उस सम्बन्ध में यदा-कदा अनुचित निर्णय इसका निषेधात्मक पक्ष है तथा सिद्धान्तो का गठन व अन्य युक्तिपूर्ण तर्क उसका स्वीकारात्मक पक्ष है। यहाँ Bartoli की विचार धारा को सक्षेप में प्रस्तुत किया जा रहा है।

10.3.2.1. Bartoli द्वारा प्रस्तावित छह प्रतिमान

भाषा भूगोल के सिद्धान्तो को संहिताबद्ध करके भाषा-क्षेत्रो के मध्य क्षेत्रीय सम्बन्धो की व्याख्या के लिए Bartoli ने अधोलिखित छह प्रतिमानो को समुच्चय के रूप में प्रस्तुत किया था।

(क) प्राचीन क्षेत्र का प्रतिमान।

(ख) पृथक्भूत क्षेत्र का प्रतिमान—ऐसा क्षेत्र जो अलग-अलग हो जाता है व आवागमन की सुविधाओं से वंचित रहता है, वह प्राचीनतर रूपो को संजोए रखता है।

(ग) पार्श्विक क्षेत्र का प्रतिमान—जहाँ कोई केन्द्रीय क्षेत्र पूर्ववर्ती समरूप क्षेत्र से बँटा हो, वहाँ भी किनारे में प्राचीनतर रूप बने रहते है।

(घ) परिधीय या विशाल क्षेत्र का प्रतिमान—यदि क्षेत्र दो खण्डो में विभक्त हो गया हो, तो वृहत्तर खण्ड प्राचीनतर रूप को बनाए रख सकता है। भाषाई क्षेत्र की परिधि सामान्यतया अनेक आर्ष तत्वो को सुरक्षित रख सकती है किन्तु इसका अर्थ यह नही है कि परिधि में मिलने वाली भाषाई विशेषताएँ आर्ष हो ही।

(ङ) परवर्ती क्षेत्र का प्रतिमान—ऐसा क्षेत्र जो अभी-अभी विजित हुआ है तथा जिसमें तत्वो का आदान हुआ है, उसमें भी प्राचीन रूप मिल जाते है।

(च) अविकसित क्षेत्र का प्रतिमान।

परवर्ती क्षेत्र का प्रतिमान सर्वाधिक स्फुट होता है, जिससे विजेता भाषा निष्क्रिय क्षेत्र [11] में बढ़ती है तथा किनारो को छोड़ कर सर्वत्र फैल जाती है।[12] उपर्युक्त प्रतिमानो में प्रथम, द्वितीय, तृतीय, तथा षष्ठ प्रतिमान भाषा विज्ञानियो को स्वीकार्य हैं, किन्तु चतुर्थ तथा पचम के विषय में विवाद रहा है।

10 3.2.2. अतिभाषिक दृष्टि

बोलीविज्ञान के अन्तर्गत इन नव्यभाषाविज्ञानियो ने भाषाई समस्याओ के समाधान के लिए ऐतिहासिक, सामाजिक, व भौगोलिक पद्धति का निर्माण किया था। इन्होने सम्बद्ध बोलियों की तुलना में विशेष रुचि ली है तथा उनके भौगो

लिक कारणों पर बल दिया है, जो बोलीगत तत्वों के क्षेत्र को निर्धारित करते हैं।

10.3.2.3. शब्दप्रक्रियात्मक अध्ययन

नव्यभाषाविज्ञानियों की दृष्टि शब्दप्रक्रियात्मक अध्ययनों पर अधिक थी। उन्होंने स्वतंत्र शब्द के इतिहास में विशेष रुचि ली है। शब्दों का उत्पत्तिस्थान, समय, कारण, व दिशा पर विचार करते हुए उन्होंने यह जानने का प्रयास किया है कि उनका प्रयोग पहले किसने किया तथा सर्वप्रथम वे किस सामाजिक वर्ग में प्रयुक्त हुए। वे यह भी जानना चाहते हैं कि क्या पहले कोई शब्द आलंकारिक था या तकनीकी था और कुछ, तथा उसने किस शब्द को स्थानापन्न किया, किस शब्द के साथ उसे संघर्ष करना पड़ा, व किन शब्दों ने उसके अर्थ और रूप को प्रभावित किया, एवं उसका प्रयोग किस वाक्य, कहावत, शब्द या पंक्ति में हुआ है। इस प्रकार नव्यवैयाकरणों द्वारा उपेक्षित शब्दों के स्वतंत्र इतिहास पर नव्य-भाषाविज्ञानियों ने पहली बार गम्भीरता से विचार किया है।

नव्यभाषाविज्ञानी यह मानते हैं कि जिस प्रकार दो व्यक्तियों का समान इतिहास नहीं होता, उसी प्रकार दो शब्दों के समान इतिहास की कल्पना अनुचित है। उनकी धारणा है कि शब्दों में परिवर्तन उपस्थित करने वाले प्रत्येक कारण (यथा ऐतिहासिक, क्षेत्रीय, प्रसार-केन्द्रीय, व अन्य) का ज्ञान आवश्यक है।

नव्यभाषाविज्ञानियों ने नव्यवैयाकरणों के ग्राम्य व शिष्ट भाषा जैसे शब्द के प्रयोगों को असमीचीन करार किया है। उनके अनुसार भाषा एक संहिति है उसे ऐसे टुकड़ों में विभाजित नहीं किया जाना चाहिए।

नव्यभाषाविज्ञानी इस मत के समर्थक हैं कि ध्वनिकीय परिवर्तन शब्दों में ह घटित होते हैं, शब्दों के बाहर नहीं। अतएव यह समझना आवश्यक है कि शब क्या है ? उसका प्रयोग किसने किया ? वह किस क्षेत्र से आया ?

10.3.2.4. आयुक्षेत्रानुमान

नव्यभाषाविज्ञानी Bartoli द्वारा प्रस्तुत 'आयुक्षेत्रानुमान' भाषा के अ लक्षणों की आयु (काल) व उनके विस्तृत क्षेत्र में वितरण पर आधारित है त इसकी प्रमाणिकता पुरातात्विक सामग्री के अध्ययन पर निर्भर करती है। इस प्रव इसके आधार पर किसी क्षेत्र के भाषाई इतिहास की पुनर्रचना जातीय व पु तात्विक सामग्री के तालमेल से की जा सकती है। अनुमान इन बातों को ले किया जाता है—

(क) यह प्रकल्पना इस बात पर निर्भर करती है कि जिस प्रकार किसी तालाब में एक पत्थर फेंकने से तरंगे फैल जाती है उसी प्रकार भाषा के महत्वपूर्ण अभिलक्षणो का प्रसार किसी एक क्षेत्र से नवप्रवर्तन के माध्यम से होता है।

तरंगवत् ये नवप्रवर्तन किसी भी समय उस भाषा क्षेत्र को घेर सकते हैं, जहाँ से उनका प्रादुर्भाव हुआ है, किन्तु किनारे वाले क्षेत्रो में परिवर्तन की लहर नही पहुँच पाती, जिससे वहाँ भाषा के प्राचीन अभिलक्षण मिल सकते है।

(ख) नवप्रवर्तन व पार्श्ववर्ती क्षेत्रो मे मिलने वाली भाषिक प्रवृत्तियाँ भिन्न-भिन्न हो सकती है, जिनके आधार पर दोनो क्षेत्रो की आयु की कल्पना की जा सकती है।

90.3.2.5. भाषा-भूगोल

नव्यवैयाकरणो ने भाषा-भूगोल की पूर्णतया उपेक्षा करके अपनी अव्यावहारिकता (व्यवहार की भाषा के प्रति अनास्था) का ही परिचय दिया है। नव्यभाषाविज्ञानी केवल इतना ही नही मानते कि प्रत्येक शब्द का अपना निजी इतिहास होता है, अपितु यह भी स्वीकार करते है कि प्रत्येक शब्द (ध्वनि, रूप, आदि) का अपना निजी क्षेत्र होता है। इसीलिए उन्होने प्रत्येक भाषाई लक्षण को क्षेत्रीय वितरण के प्रसग म देखने का प्रयास किया है।

10.3.2.6. निरपवाद ध्वनिपरिवर्तन पर आघात

नव्यभाषाविज्ञानियो ने जहाँ नव्यवैयाकरणो व ध्वनिनियम की कटु आलोचना की है, वही उन्होने नव्यवैयाकरणो को इस दम्भोक्ति पर आघात किया है कि उनके नियम (ध्वनि परिवर्तन) निरपवाद होते है। नव्यभाषाविज्ञानी यह मानते है कि प्रत्येक ध्वनि व रूप एक प्रकार से अपवाद ही है तथा यही अपवाद उनका जीवन है, नियम है। इस प्रकार नव्यभाषाविज्ञानी व्यष्टि के पोषक है तथा नव्यवैयाकरण समष्टि के।[1]

10.3.2.7. नव्यभाषाविज्ञानियो के प्रति अमरीकी विद्वानो कीउपेक्षापूर्ण दृष्टि

कुछ अमरीकी भाषाविज्ञानी नव्यभाषाविज्ञानियो के कार्यो क प्रति उपेक्षा-दृष्टि रखते है। Robert A, Hall इनमें अगुआ है। उन्ही के शब्दो में—'we have, in short, missed nothing by not knowing or heeding Bartoli 's principles, theories, or Conclusions to date, and we shall miss nothing if we disregrad them in future

XXX There is no need for us to add these titles "[14] उनका मत है कि Bloomfield, Palmer, व Gray की कृतियाँ क्षेत्रीय भाषिकी में महत्त्वपूर्ण हैं, Bartoli या किसी अन्य नव्यभाषाविज्ञानी की कृतियों को अपने अध्ययन में सम्मिलित करने की आवश्यकता नहीं है।[15]

Robert A Hall जैसे प्रौढ भाषाविज्ञानी के इस कथन को पढ़ कर किसी को भी आश्चर्य होगा। सच तो यह है कि अमरीकी भाषा भूगोल यूरोपीय कृतियों के अनुकरण पर ही विकसित हुआ है तथा Hall ने उपर्युक्त जिन विद्वानों की कृतियों को नव्यभाषाविज्ञानियों की कृतियों का स्थानापन्न कहा है, वे भी यूरोप के नव्यभाषिक आन्दोलन से प्रभावित हैं। उदाहरणार्थ, Bloomfield की Laguage में 'प्रत्येक शब्द के निजी इतिहास'पर व्यापक टिप्पणी मिलती है, जो नव्यभाषाविज्ञानी Schuchardt की उक्ति है। उनकी इस पुस्तक के Dialect Geography नामक अध्याय में Gillieron के कार्य की स्पष्ट छाप देखी जा सकती है। इस प्रकार 'मूल' को छोड़ कर 'प्रभाव' के अध्ययन का उपदेश *अतार्किक और पक्षपातपूर्ण है। वस्तुस्थिति तो यह है कि भाषा भूगोल पर लिखने* वाला कोई भी अमरीकी विद्वान् नव्यभाषाविज्ञानियों के सिद्धान्त या निष्कर्ष को भुला नहीं पाया। यह दूसरी बात है कि उसने मूल की सदैव उपेक्षा की है। उदाहरणार्थ, C P. Hockett ने A Course in Modern Linguistics क Dialect geography नामक 56 वे अध्याय के अन्तर्गत Inferences in sedentary areas को प्रस्तुत किया है, जो Neolinguistica के तत्सम्बन्धी अंश का भावानुवाद है, यद्यपि Hockett इसे कहीं सन्दर्भिका में स्वीकार भी नहीं करते।

10.3.3. बोलीविज्ञान और बोली-क्षेत्रकी

बोलीविज्ञान में स्वतन्त्र बोलियों के अध्ययन के आधार पर उनके पारस्परिक सम्बन्धों को समझने का प्रयास किया जाता है। Daniel Steible ने बोली-विज्ञान की व्यापक रूपरेखा प्रस्तुत करते हुए उसे भाषाविज्ञान की वह शाखा माना है, जो बोलियों के अध्ययन से सम्बद्ध है।'[16] Mario Pei ने इसे सामाजिक व भौगोलिक सन्दर्भों में देखने का प्रयास किया है।[17] बोलीविज्ञान तथा बोली भूगोल आज इतने अन्योन्याश्रित हैं कि उन्हें पृथक् नहीं किया जा सकता, जैसा कि उपर्युक्त परिभाषाओं से प्रतीत होता है। इसीलिए W P. Lehmann जैसे विद्वानों ने बोलीविज्ञान को बोलीभूगोल का पर्याय मान लिया है।[18] Marvin K. Mayers ने बोलीविज्ञान की सूक्ष्म विवेचना करते हुए, इस प्रकार का

मत व्यक्त किया है—Dialectology or dialect studies more narr owly conceived, involves those linguistic studies that indic ate dialect distinction or definition The goal of such rese arch is to establish a sound base from which to protect for ther structual and historical linguistic studies Effective dia lectology is dependent on two main facto s . (1) the provi sion of extensive diagnostic linguistic materials, (2) and the Confir ration of results from various disciplines such as geography, anthropology, psychology, and sociology."[19]

बोलीविज्ञान से ही मिलते जुलते शब्द बोली-क्षेत्रकी को Mcintosh ने बोली-अध्ययन की सभी शाखाओं के लिए मान कर उसे भी बोली भूगोल या भाषा भूगोल का समानार्थी स्वीकार किया है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि भू भाषिकी, नव्यभाषिकी, क्षेत्रीय भाषिकी, क्षेत्र भाषिकी, भौगोलिक भाषिकी बोलीविज्ञान, तथा बोली-क्षेत्रकी, आदि शब्दों को कम-से-कम आंशिक विवक्षा की दृष्टि से प्राय भाषा-भूगोल का पर्याय माना जाता है।

टिप्पण और सन्दर्भ

1. Mario Pei, 'Glossary of Linguistic Terminology' New york, 1966, p 104.

2 G Bonfante, 'On reconstruction and linguistic met-hod,' Word (1946) 1 151

3 Milka Irends in Linguistics, The Hague, 1965, and Masio Pei, Ibid, p 265

4 Robert A Hall, Bartoli's Neolinguistica', Language (1946) 22 275

5 G Bonfante, 'The Neolinguistic position', Language (1947) 23 344 75.

6 Mario Ibid, P 179.

7. Milka Ivic, Ibid

8. G Bonfante, Ibid, p 136

9. Milka Ivic, Ibid.

10 Robert A Hall, Ibid, p 273

11 निष्क्रिय क्षेत्र के लिए C F. *Hockett*, 'Sedentary are ι,' A Course in Modern Linguistics, pp 4480 4, द्रष्टव्य ।

12 Dwilight Bolinger, Aspects

13 G Eonfante, Ibid.

14 Robert A Hall, Ibid, P 283

15 Ibid

16 Daniel Steible, Concise Handbook of Linguistics, p 39

17 Mario Pei, Ibid, p 68

18 W P Lehmann, Historical Linguistics,

19 Marvin K Mayers Current trends in Linguistics, Vol 4, Mouton, The Hague, 1968, p 310

II

भाषा-भूगोल या बोली-भूगोल अथवा शब्द-भूगोल

11.1. भाषा-भूगोल या बोली-भूगोल

भाषाविज्ञान के अन्तर्गत आज बोली-भूगोल तथा भाषा भूगोल पर्याय के रूप में प्रयुक्त होते हैं। अतएव Bloomfield, Hockett, Lehmann, Lounsbury आदि विद्वानों ने जहाँ स्वेच्छया 'बोली-भूगोल' शब्द का प्रयोग किया है, वहाँ Dauzat, Potter, Allen, Hall, तथा Ivic, प्रभृति विद्वान् 'भाषा-भूगोल' का व्यवहार करते हैं।

भाषा-भूगोल या बोली-भूगोल का विकास उस युग में हुआ था, जब अर्वाचीन भाषिकी की अनेकानेक पद्धतियों या शाखाओं का जन्म भी नहीं हुआ था। ऐसी स्थिति में भाषिकी की विविध विधाओं के विकास के साथ भाषा-भूगोल या बोली-भूगोल के सम्बन्ध में व्यक्तिपरक विभिन्न धारणाएँ मिलती हैं। काल क्रमानुसार कुछ परिभाषाएँ इस प्रकार है—

11.1.1. Albert Dauzat—वर्तमान रूप-प्रकारों के वितरण के आधार पर शब्दों, व्याकरणिक रूपों, व वाक्य समुच्चयों के इतिहास का पुनर्निर्माण भाषा-भूगोल का प्रमुख लक्ष्य है। यह वितरण किसी आकस्मिक घटना का परिणाम नहीं होता। यह एक भूतकालिक प्रक्रिया होने के साथ भौगोलिक व मानवीय परिस्थितियों का प्रतिफलन है।[1] (1922)

11.1.2. Leonard Bloomfield—किसी भाषा-क्षेत्र में स्थानीय भिन्नताओं का अध्ययन बोली भूगोल है।[2] (1933)

11.1.3. Harold B. Allen—भाषा-भूगोल में भाषा रूपों के क्षेत्रीय वितरण और भिन्नताओं का अध्ययन होता है।[3] (1956)

11.1.4. Gledhill Cameron—बोली-भूगोल के नाम से अभिहित भाषा-भूगोल भाषा-विभेदों का किसी विशिष्ट क्षेत्र (सामान्यतया देश या प्रदेश)

में क्रमबद्ध अध्ययन करता है। भिन्नताएँ उच्चारण, शब्दावली, या व्याकरण की होती हैं।[4] (1956)

11.1.5. Simeon Potter —'भाषा भूगोल में स्थानीय भाषा-रूपों को विस्तृत क्षेत्र के सन्दर्भ में देखा जा सकता है।[5] (1957)

11.1.6. Charles. F. Hockett—'बोली-भूगोल में भाषाई रूपों तथा प्रयोगों के माध्यम से ऐतिहासिक अनुमानों को या तो आन्तरिक या बाह्य प्रमाणों के माध्यम से खोजने का प्रयास होता है।[6] (1958)

11.1.7. Augus Mc Intosh—'विविध प्रकार की तुलनीय भाषाई इकाइयों के वितरण से भाषा-भूगोल का सम्बन्ध अधिक है। इसमें उन इकाइयों की बोली व्यवस्था से अपेक्षाकृत कम सम्बन्ध होता है। × × × भाषा भूगोल में स्थानीय समानताओं और असमानताओं पर बल दिया जाता है तथा बोली-भूगोलवेत्ता का प्रमुख कर्त्तव्य बोली की सम्पूर्ण व्यवस्था का अध्ययन नहीं होता। इसकी पद्धति प्रायः सामयिक बोलियों के अध्ययन के साथ चलती है, किन्तु इसमें यह भी ध्यान रखना चाहिए कि यदा-कदा इसे विगत स्थितियों के साथ भी सम्बद्ध किया जा सकता है। इस कार्य की पूर्ण सफलता के लिए हमें अत्यधिक सामग्री की आवश्यकता होती है तथा उसमें बोलीगत भिन्नताओं की स्पष्टता पर भी ध्यान दिया जाता है। इस प्रकार के अध्ययन के लिए प्राचीन बोली उतनी सन्तोषप्रद नहीं है, जितनी कि आधुनिक जीवित बोलियाँ[7] (1961)

19.1 8. *W. P. Lehmann*—'एक ही भाषा में विविध वाक्‌रूपों का अध्ययन बोली भूगोल या भाषा-भूगोल है।[8] (1963)

11.1.9. Robert A. Hall—'एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति की भाषा में ही अन्तर नहीं होता, अपितु एक समुदाय (परिवार, गाँव, नगर, क्षेत्र) के एक उपवर्ग से दूसरे उपवर्ग में भी भाषा की भिन्नता पाई जाती है। विविध सामाजिक, व्यवसायिक, या सांस्कृतिक वर्ग के लोग एक ही समुदाय के अन्तर्गत अपनी भाषाई भिन्नता दिखाते हैं। ये भिन्नताएँ आकस्मिक नहीं होतीं, अपितु इन्हें क्षेत्रीय और सामाजिक कारणों से भी सहसम्बद्ध किया जा सकता है तथा उनका अध्ययन भाषाविज्ञान व नृतत्वशास्त्र के मध्य शृंखलित विश्लेषण को प्रस्तुत करता है। मानव में किसी भी प्रकार का वर्गभेद उसकी भाषाई भिन्नता में प्रतिबिम्बित होता है। इन भिन्नताओं का विश्लेषण तथा उनका भौगोलिक-सामाजिक सहसंबंध भाषा भूगोल के नाम से जाना जाता है। उस स्थिति में जब उसमें क्षेत्री सम्बन्धों की चर्चा नहीं होती, तब भी उपर्युक्त कारणों से भाषा-भूगोल कह दिया जाता है।[9] (1964)

अपने कथन की विशद व्याख्या करते हुए Robert A. Hall ने अन्यत्र लिखा है—'भाषा-भूगोल पर प्राचीनतर कार्य पूर्णतया स्थानीय दृष्टि से किए गए थे, जिसमें बोलीगत तत्वो को दुहरे आयामो में देखा गया था और विविध पीढियो या सामाजिक वर्गों की बोली में किसी प्रकार का अन्तर नही बताया जाता था। अब आधुनिक कार्यों में प्रत्येक स्थान के लिए कम-से-कम दो सूचको के चुनाव पर बल दिया जाता है, जिससे प्रौढ और युवक दोनो ही पीढियो के मध्य मिलने वाली विभिन्नता का बोध हो। बडे नगरीय क्षेत्र से पाँच से दस तक की संख्या में सूचक चुने जा सकते है, जिससे नगर के अनेक क्षेत्रो के सामाजिक—आर्थिक स्तरो का प्रतिनिधित्व हो सके। इस प्रकार की व्यापक दृष्टि विकसित होने के साथ अब बोली-भूगोल की यह प्राचीनतर विचारधारा कि 'उसमें ऊपरी तौर पर ग्रामीण शब्दावली का ही अध्ययन होता है' समाप्त हो गई है तथा उसके स्थान पर अनेक आयामो से युक्त अध्ययन की विचारधारा सामने आई है, जिसके अनुसार भाषा में सामाजिक और भौगोलिक दृष्टि से निश्चित विचारधारा को नगरो व ग्रामो के सन्दर्भ मे देखा जाता है।'[10]

11.1.10. Milka Ivic—'शब्दों के इतिहास की व्याख्या करते समय भौगोलिक, सामाजिक, व ऐतिहासिक कारणो के ज्ञान की परम्परा इस समय स्थापित हो गई है। राष्ट्रीय मनोविज्ञान का भी अध्ययन हुआ है तथा विगत व वर्तमान भाषाई प्रमाणो को सावधानी के साथ परखा गया है। वास्तव मे भाषा-भूगोल के अनुयायी यह मानते है कि उन सभी तत्वो का अध्ययन होना चाहिए, जिन पर भाषा का जीवन आधारित है।'[11] (1965)

11.1.11 Floyd G Lounsbury—'बोली-भूगोल की पद्धति किसी विशाल भाषा-समुदाय के भाषाई परिवर्तनो के वितरण व विस्तार स सम्बन्ध है।'[12] (1965)

11.2. उपर्युक्त परिभाषाओ की समीक्षा

उपर्युक्त परिभाषाओं में प्रथम पाच बोली भूगोल के संकालिक और विवरणात्मक स्वरूप तक सीमित हैं तथा प्रथम व षष्ठ में ऐतिहासिक महत्व को भी स्वीकार किया गया है। सातवी में इन दोनों ही विरोधी विचारधाराओ का समन्वय मिलता है। इनमें से कोई भी व्याख्या बोली भूगोल के सम्पूर्ण स्वरूप को प्रस्तुत नहीं कर सकी। एक दृष्टि से Robert A. Hall ने पहली बार बोली-भूगोल को व्यापक सन्दर्भ में देखने का प्रयास किया है। उनकी विवेचना में

बोली-भूगोल के अतिभाषिक व अनेक आयामित पक्ष भी स्फुट हुए हैं, जो Ivic की परिभाषा में भी मिलते है। Hall की परिभाषा में यदि बोली-भूगोल की संरचनात्मक दृष्टि का भी समावेश हो जाय, तो वह बोली-भूगोल के यथार्थ स्वरूप को वांछित सीमा तक व्यक्त कर सकती है।

11.3. भाषा-भूगोल या बोली-भूगोल अथवा शब्द-भूगोल

विगत अध्याय में कहा गया है कि सैद्धान्तिक दृष्टि से शब्द-भूगोल का एक अंग है, किन्तु व्यावहारिक दृष्टि से अभी तक वह भाषा-भूगोल ही है। यहाँ इस कथन का स्पष्टीकरण आवश्यक है।

भाषा-भूगोल की चर्चा करते हुए अनेक विद्वानों ने इसे ध्वनिप्रक्रियात्मक भूगोल, रूपप्रक्रियात्मक भूगोल, शब्द-भूगोल, तानात्मक भूगोल, व वाक्यरचनात्मक भूगोल, आदि उपविभागों में विभाजित किया है, किन्तु यह भी संकेत दे दिया है कि अभी तक अन्तिम दो पर आधारित कार्य नहीं हुए। ऐसी स्थिति में जो कार्य अभी तक हुआ है, वह शब्द-भूगोल के व्यापक क्षेत्र के अन्तर्गत आ जाता है। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि यदि भाषा-भूगोल के खण्डेतर ध्वनिप्रक्रियात्मक व वाक्यरचनात्मक भेद करने है, तो वह शब्द-भूगोल का समानार्थी नहीं बन सकता, किन्तु दुर्भाग्यवश विद्वानों ने इस पर केवल सैद्धान्तिक पक्ष को ही प्रस्तुत किया है; व्यावहारिक दृष्टि से वे ध्वनि, रूप, शब्द, और शब्दार्थ को ही उपस्थित करते रहे हैं। अतएव विगत कार्यों को देखते हुए शब्द-भूगोल को भाषा-भूगोल का पर्याय मानने में कोई विरोध नहीं होना चाहिए, क्योंकि उच्चारण में तो स्वतंत्र ध्वनियाँ ही मिल कर शब्दों की रचना करती हैं और वे ही शब्द रूपिमीय नियमों के अनुसार ढाल लिए जाते है। तदनुसार शब्द की संरचना-विषयक A. W. de Groot की यह मान्यता इस प्रसंग में सही प्रतीत होती है—The Structure of a word is the Structural order of the phonemes with in this word. The morphemes within a word have varying degrees of Centrality with regard to one another." [13]

भाषा-भूगोल वेत्ताओ ने मानचित्रावलियो से सम्बद्ध जिन वितरणात्मक कार्यों को प्रस्तुत किया है, वे शब्दों की रचना से ही अधिक सम्बद्ध है। अतएव Robert A. Hall ने भी शब्द-भूगोल को भाषा-भूगोल का एक प्रचलित और समीपी पर्याय माना है—'Lexicographical distribution is the main concern of most linguistic geographers, and a frequent

near—Synonym for linguistic geography is word geography."[14]

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि भाषा की अन्तिम इकाई को लेकर भाषिक जगत् में समय-समय पर अनेक विवाद हुए हैं। भारत में पतंजलि और उसके पूर्ववर्ती विद्वान् 'शब्द' को अन्तिम इकाई के रूप में स्वीकार करते थे। भर्तृहरि ने 'वाक्य' को अन्तिम इकाई माना। उन्नीसवी शताब्दी के अनेक विदेशी विद्वानों ने 'शब्द' पर बल दिया था, जब कि आनिक भाषाविज्ञानी 'वाक्य' को ही भाषा की अन्तिम इकाई मानते है। ऐसी स्थिति में यदि 'भाषा-भूगोल' शब्द के प्रयोग को सैद्धान्तिक ढंग से प्रस्तुत करना हो, तो भाषा-मानचित्रावली में प्रदर्शित लक्षणों की अभिव्यजक रेखाओं को अन्तिम इकाई 'वाक्य' के आधार पर Isosyntagmic lines (या Isosyntagmas) कहा जाना चाहिए, Isoglottic lines (या isoglosses) नही।[15] Bolinger तो स्पष्टतया Isogloss को भाषिक लक्षणो का मानचित्रात्मक प्रदर्शन न मान कर उसे शब्द की समरेखा मानने के पक्ष में हैं।[16]

निष्कर्षत यह कहा जा सकता है कि भाषा मानचित्रावली में अभी तक प्रयुक्त प्रमुख इकाई Isogloss 'शब्द' की ही द्योतक है, 'वाक्य' की नही (क्योकि वाक्यस्तर पर अनुतान की भौगोलिक पकड़ समव नही है), किन्तु वैसा प्रयोग चल पडने के कारण आज उसे भ्रम से भाषा के अन्तर्गत सभी तत्वो का वाचक मान लिया जाता है। वस्तुत भाषा के सभी समान तत्वो का समष्टि रूप में वाचक शब्द Isosyntagma होना चाहिए, जिसके अन्तर्गत Isophone, Isomorph, Isogloss इत्यादि भेद किए जाएँगे। चूँकि भाषा भूगोल में अब तक सम्पन्न कार्य और सिद्धान्त शब्द की सीमा से दूर अर्थात् वाक्य की सीमा तक नही जा सके है, इसलिए व्यावहारिक दृष्टि से भाषा भूगोल या बोली भूगोल को शब्द-भूगोल कहना तब तक अनुपयुक्त न होगा, जब तक समवाक्यमीय रेखाओ की कल्पना साकार नही हो जाती।

टिप्पणी और सन्दर्भ

1. Albert Dauzat, La geographic linguistigue, paris Flammarion, 1922, p. 27 English translation Linguistic geography has its essential purpose to reconstruct the history of words, flexions, and syntactic groupings, according to the distir bution of present forms and types this distiibution is not the result of chance, it is a function of the past, and also

of geographic conditious and the milieu to which men belong.

2. Leonard Bloomfield, Language, ch. 19.

3. Harold B Allen, 'The Linguistic Atlas : our New Resources, The English Journal (1956) 45 : 188-94.

4. Gledhill Cameron, 'Some words stop at Marietta, Ohio', Colliers, June 25, 1956.

5. Simeon Potter, Modern Liuguistics, ch. dialect geography.

6. Charles F.Hockett, A Course in Modesn linguistics, New york, 1958, p. 472.

7. A. Mclntosh, An Introduction to a survey of Scottish dialects, New york, 1961.

8. W. P. Lehmann, Historical linguistics, New york, 1963.

9. Robert A. Hall, Introductory linguistics, Philadelphia, 1964, p. 293.

10. Ibid, p. 242.

11. Milka Ivic, Trends in linguistics, The Hague, para 147.

12. Floyd G. lounsbury, 'Dialect geography,' Anthropology Today (ed. A L. Krober), *London, 1965*, p. 413.

13. A. W. de Groot, 'Structural linguistics and word classes,' Lingua (1948) 1 : 427-507,

14. Robert A. Hall, Ibid, p 251.

15. भाषा-मानचित्रावली में प्रदर्शित Isogloss समशब्दता का वाचक है, क्योंकि अंग्रेजी के glossary, glosserial, glossator, *glossography*, glossologist, glossology, तथा gloss, आदि शब्द किसी-न-किसी रूप में 'शब्द' के ही वाचक हैं।

16. Dwilight Bolinger, Aspects of Language, New york, 1968,

12

शब्द-भूगोल का स्वरूप

12.1. भाषा-भूगोल या बोली-भूगोल की संसिद्धि शब्द-भूगोल को स्वीकार कर लेने पर विविध विद्वानो की एतद्विषयक परिभाषाओं का समाहार करते हुए शब्दभूगोल का यह स्वरूप दिया जा सकता है—किसी भाषा-समुदाय मे संकालिक और कालक्रमिक दृष्टियों से शब्द-रचना और प्रयोगो का व्यवस्थित भौगोलिक व भाषिकेतर अध्ययन शब्द-भूगोल है ।

इस परिभाषा के अन्तर्गत अधोलिखित विषयो को परिगणित किया गया है।

12.2. भाषा-समुदाय

शब्द-भूगोल की कार्यविधि पारस्परिक बोधगम्यता वाले किसी भाषा समुदाय से सम्बद्ध है ।[1]

12.3. संकालिक और कालक्रमिक दृष्टि

1939 ई० में Gray ने अपने ग्रन्थ Foundations of Language (Newyork) के ग्यारहवें व तेरहवें अध्यायों में भाषा-भूगोल को मानव जाति के इतिहास पर नया प्रकाश डालने वाला स्वीकार कर उसे दो उपविभागों में वर्गबद्ध किया था—संकालिक बोलीविज्ञान तथा ऐतिहासिक बोलीविज्ञान । उनका विचार था कि संकालिक बोलीविज्ञान को जातीय मानचित्रों के समान भाषाई मानचित्रों में प्रस्तुत किया जा सकता है तथा इस प्रकार के विविध कालक्रमो वाले मानचित्रो से ऐतिहासिक अनुमानो तक पहुँचा जा सकता है। Gray के इस कथन के पश्चात् C. F. Hockett जैसे संरचनावादी भाषाविज्ञानियो ने बोली-भूगोल को एकमात्र ऐतिहासिक अनुमानों पर आधारित माना तथा बोलीविज्ञान को उसके अन्तर्गत सम्मिलित न कर Synchronic dialeotology को पृथक् अध्याय में प्रस्तुत किया ।[2] अन्यत्र कहा जा चुका है कि Hockett का dialect geography नामक अध्याय नव्यभाषाविज्ञानियो की दृष्टि से प्रभावित है, जिन पर (यथा निष्क्रिय क्षेत्र) आधुनिक शब्द-भूगोलवेत्ता उतना ध्यान नही देता ।

वस्तुस्थिति तो यह है कि भाषा-भूगोल का संकालिक और कालक्रमिक स्वरूप

Gllieron की कृति से ही प्राप्त हो जाता है। यह भिन्न बात है कि इनके संरचनात्मक स्वरूप पर लोगों का ध्यान 1950 ई० के पश्चात् ही गया। आज शब्द-भूगोल को संकालिक-कालक्रमिक, असंरचनात्मक-संरचनात्मक प्रकार के दूसरे रूपों में प्रस्तुत किया जाता है। इसका विस्तृत विवरण अग्रिम परिच्छेदों में दिया गया है।

12.4. शब्द-रचना और प्रयोग

किसी भाषा-समुदाय में शब्दों की बाह्य (ध्वनियाँ) व आन्तरिक (व्याकरणिक रूप) रचना की भिन्नता का अध्ययन होता है। इस रूप में Augus Mcintosh की यह धारणा शब्द भूगोल में समानार्थी कि शब्दों के वितरण पर विचार किया जाता है,[3] एकांगी है। व्यापक परिधि में हम शब्द-भूगोल के अन्तर्गत ध्वनि, रूप, शब्द, व अर्थ का विश्लेषणात्मक वितरण प्राप्त करना चाहते हैं।

12.5. व्यवस्थित अध्ययन

शब्द-भूगोल की कार्यविधि में प्रश्नावली, समुदायों, व सूचकों, आदि के चयन में एक व्यवस्था आवश्यक है। इसे अधिक विश्वसनीय और प्रामाणिक बनाने के लिए सांख्यिकीय पद्धतियों की सहायता अनिवार्य है। यह दुर्भाग्य का विषय है कि भारतीय भाषाविज्ञानी समुदाय, सूचक, सामग्री, आदि के चयन में यह इच्छा दिखाते हैं। फलस्वरूप अधिकतर भाषाई कार्यों पर शंका होना स्वाभाविक है।

12.6. भौगोलिक अध्ययन

शब्द-भौगोलिक अध्ययन में भौगोलिक भिन्नता का अत्यधिक महत्व रहा है। पहाड़ी क्षेत्र मैदानी क्षेत्र की तुलना में एक भाषिक परिधि है। मैदानी क्षेत्र में यातायात के साधनों के कारण वेगगति से नवप्रवर्तन होते हैं, जब कि पहाड़ी क्षेत्र अपनी भाषिक स्थिति के कारण उनसे अछूते रहते हैं।

सम्भवतः हम एक स्थान से दूसरे स्थान पर मिलने वाले शब्दगत परिवर्तनों से अधिक परिचित होते हैं। ये परिवर्तन वहाँ भी लक्षित होते हैं, जहाँ अभी हाल में बस्तियाँ बसी हैं तथा जनसंख्या गतिशील है। किन्तु ऐसे स्थल जहाँ जनसंख्या चिरकाल से स्थायी हो चुकी है तथा गतिशीलता कम है, वहाँ क्षेत्रीय परिवर्तन और भी कम होते हैं। यदि हम अपने हा प्रदेश (देश कौन कहे) के एक छोर तक साइकिल से जाएँ या पैदल-यात्रा करें, तो हमें प्रत्येक गाँव के बीच कुछ-न-कुछ अन्तर मिलेगा और जब हम बिलकुल दूसरे छोर पर पहुँचेंगे, तो स्थानीय भेद यात्रा-प्रारम्भ करने के स्थान से इतना अधिक बढ़ जाएगा कि दोनों क्षेत्रों की

बोलियाँ कठिनाई से बोधगम्य होगी । इस प्रकार के भेद स्थानीय बोलियो तक ही सीमित नही रहते, अपितु आदर्शभाषा (यथा हिन्दी) में भी मिल जाते हैं ।

12 7 भाषिकेतर अध्ययन

शब्द-भूगोल के अध्येताओ को उन सम्पूर्ण तत्वो का ज्ञान होना चाहिए, जो भाषाविज्ञान की परिधि से बाहर है । जिन परिवेशो में शब्दो का व्यवहार होता है, उनकी विस्तृत पृष्ठभूमि के अभाव में शाब्दिक दृष्टि केवल यान्त्रिक बन कर रह जाएगी तथा अनेक तत्वो की व्याख्या भी भ्रान्त होगी । इसके अतिरिक्त हमारा युग विविध विषयो के मध्य पारस्परिक सम्बन्धो की खोज का युग है, अतएव यह आवश्यक है कि एक विषय से दूसरे विषय के मध्य मिलने वाली कडियो पर ध्यान दिया जाए तथा उनके परस्परावलम्बन को समझा जाए ।

वस्तुस्थिति तो यह है कि भाषिकेतर अध्ययन तथा शब्द-भूगोल का प्रगाढ सम्बन्ध है । भाषिकेतर तत्वो के अन्तर्गत सास्कृतिक वस्तुएँ आती है । इन दो अनुष्ठानो के सयोजन को इटली के विद्वान शब्द-वस्तु (Worter und Sachen = Words and things)—व्यापार कहते है । शब्दवस्तु-व्यापार को बताने वाली भाषाविज्ञान की आज एक नई शाखा विकसित हो गई है, जिसे अतिभाषिकी या संस्थानिक भाषिकी कहा जाता है । इसके अन्तर्गत अधोलिखित उपशाखाएँ शब्दो के भौगोलिक वितरण को समझने के लिए प्रस्तुत की जाती हैं—

(क) नृतत्त्वभाषिकी तथा जातिभाषिकी
(ख) समाजभाषिकी
(ग) तात्विक भाषिकी

12.71 सस्कृति के प्रति लोगों की रुचि मे जैसे जैसे अधिकाधिक विकास हुआ है, वैसे-वैसे भाषा और सस्कृति क सह सम्बन्ध का एक नई विचारधारा भी सामने आई है । सम्प्रति भाषाओ को कोई पृथक् व्यवस्था न मान कर उन्हे सस्कृति के परिप्रेक्ष्य में देखने की मान्यता बलवती होती जा रही है ।

नृतत्वशास्त्री आज यह स्वीकार करते हैं कि भाषा कभी सस्कृति से अलग नही होती, अपितु वह सस्कृति का अपरिहार्य अग है । शब्दो के आधार पर सस्कृतियो को खोजने का कार्य पिछले दो दशको में अत्यधिक मात्रा में हुआ है । लोगो का यह निष्कर्ष है जिस समुदाय म जिस व्यवहार या वस्तु की प्रधानता होती है, वहाँ की भाषा के शब्दो में उसकी अनेकरूपता होती है । नृतत्वशास्त्री यह भी मानते हैं कि किसी जाति का पूरा विवरण प्राप्त करने के लिए उस समय की उसमें प्रचलित शब्दावली का अध्ययन महत्वपूर्ण है ।

12.7.2. जब तक शब्द-भूगोलवेत्ता अपनी रुचि भाषाविज्ञानी के अतिरिक्त समाजशास्त्री की नहीं बनाता, तब तक प्रश्नावली की इकाइयों के स्वतंत्र अस्तित्व से उसका सम्बन्ध अपेक्षाकृत कम ही रहता है। वह रैखिक क्रियाओं से केवल सीमा-रेखा बताने का ही कार्य करता है।[4]

ऐसी स्थिति में आवश्यक है कि वह भाषा-समुदाय में मिलने वाली भिन्नता के दूसरे पक्ष पर भी ध्यान दे, जिसे भाषिक-समाजार्थिक समष्टिज कहा जाता है। भाषा-समुदाय आपेक्षित दृष्टि से सरल से लेकर अतिजटिल रचनाओं को प्रदर्शित करते हैं। आदिवासी समाज में बिखराव, अत्यल्प व्यावसायिक विशेषीकरण, व बाह्य सम्पर्क प्राय: कम होता है। इसी प्रकार कथात्मक रूप या धार्मिक व्यवहार में भाषा की भिन्नता उतनी नहीं होती, जितनी शैलीगत विभेदकता प्राप्त होती है। यह भी देखा गया है कि समाज का आर्थिक आधार जैसे ही सुदृढ़ हो जाता है, शैलीगत व बोलीगत भिन्नताएँ भी बढ़ती जाती हैं। सामाजिक शक्तियाँ, यथा कृषि के अनुसार लोगों का विभाजन, औद्योगिक विशिष्टीकरण, जाति का सुदृढ़ व कठोर पारम्परिक वर्गीकरण, तथा नगरीय केन्द्रों के विकास, आदि भाषागत विभेदकता के विस्फोट को प्रोत्साहित करते हैं। ग्रामीण जनता में शैलीगत भेद कम होता है, जब कि नागर जन में वह अधिक मिलता है, क्योंकि ग्रामीणों का सम्बन्ध नगरों के समान बहुविध समाजों से नहीं हुआ करता। ग्रामीण क्षेत्र के लोग अपेक्षाकृत रूढ़िवादी होते हैं। नगरीय क्षेत्र में रूढिवादिता शनै: शनै: समाप्त हो जाती है।

परम्परागत शब्द-भूगोल ने बोली के ही अन्तर्गत मिलने वाली भिन्नताओं की उपेक्षा करने की एक प्रवृत्ति सी बना ली थी, जिसपर लोगों का ध्यान पिछले दशक में ही गया है। अब लोगों ने यह अनुभव किया है कि परम्परागत विवरण में जिन्हें अनियमित या प्रमुख भेद कह कर टाल दिया जाता रहा है, वे विस्तृत प्रसंग में सामाजिक संगठन के सहायक तत्वों के वाचक हैं। इस प्रकार की सामाजिक शैलीगत रीत को समाज-बोली नाम दिया गया है।

समाज-बोलियों को परस्पर-संचार की मिति का एक अंग माना जाता है, जिसमें किसी समुदाय के अन्तर्गत बोली जाने वाली भाषा भिन्नताएँ ही नहीं होतीं, अपितु उस समुदाय के दुभाषी अल्पसंख्यकों की मातृभाषा भी होती है। इससे मिलती-जुलती एक दूसरी विचारधारा यह है कि भाषा एक अन्तर्व्याप्ति है, जो क्रियात्मक रूप से ऐसी व्यवस्थाओं को रखती है, जिनकी व्याख्या उन्हीं व्यवस्थाओं के सन्दर्भ में हो सकती है। इससे किसी विदेशी समुदाय की दो चरम स्थितियों वाली बोलियों का ज्ञान होता है, जिन्हें आदर्श तथा ग्रामीण कहा जाता

है। कुछ लोगो का विचार हैं कि इनके मध्य रूढ़िवादी मातृभाषी होते है, जो दोनो छोरो को मिलाने का कार्य करते हैं। इनको बोली आदर्श तथा ग्रामीण भाषा के लिए एक प्रकार से माध्यम है।

शब्द-भूगोल का अन्वेषक परम्परागत पद्धति के किसी विशेष परिवेश में स्थानीय भिन्नताओ को खोजना चाहता है अर्थात् वह विवेच्य बोली की मनोयोग से व्याख्या करता है (यथा, वह बघेलखंड में सिघाड़ा पैदा करने वाली जाति या मछली मारने वाली जाति की बोलोगत भिन्नता को परख सकता है)।

एक ही भाषा-समुदाय के अन्तर्गत बोलियो की स्थिति की सुव्यवस्थित व्याख्या नही मिलती तथा वह अपूर्ण भाषिकेतर सामग्री पर ही आधारित होता है। जब तक सामाजिक निरन्तर को बताने वाले प्रमुख तत्वों का अध्ययन नहीं होता, तब तक सामाजिक वर्गों को बताने वाली बोलियो के विवरण भी नही प्रस्तुत किए जा सकते। इनमें अधोलिखित बातें महत्वपूर्ण है—

(क) जातीय और सास्कृतिक पृष्ठभूमि
(ख) आयु
(ग) शिक्षा
(घ) व्यावसायिक वर्ग
(ङ) वशावली (जननी-जनक सम्बन्ध)
(च) ग्रामीण और नगरीय परिवेश
(छ) वैवाहिक स्थिति
(ज) लिंग

इन सभी वर्गात्मक कसौटियो के संयोजन के पश्चात् वर्गगत स्तरीकरण को विश्वसनीय ढंग से उपस्थित किया जा सकता है।

भाषिकेतर परिवेश की सावधानी के साथ परीक्षा करने के अतिरिक्त हम सामाजिक बोलियो के अध्ययन के परिणामस्वरूप शैलीगत भिन्नताओ पर भी ध्यान देते है। प्रारम्भिक कार्यों से यह ज्ञात होता है कि इस प्रकार की भिन्नता नगरीय बनाम ग्रामीण बोलियो में अधिक होती है। समाजार्थिक इतरेतर सम्बन्धो से इन पर अच्छी व्याख्या की जा सकती है। कहा जा सकता है कि जहाँ औद्योगीकरण द्रुतगति से होगा, वहाँ भाषा में समनुरूपता स्वाभाविक है, जो कि आदर्शभाषा के नाम से जानी जाती है।[9]

12.7.3. किसी विशेष उच्चारण के प्रति वक्ताओ की प्रवृत्ति को हम चाहे Bloomfield के शब्दो में गौण प्रत्युत्तर कहें, चाहे Trager के शब्दों में तत्व भाषिक सन्दर्भ (तत्त्वभाषिक सन्दर्भ का प्रयोग Trager ने whorf की

कृतियों के लिए किया है), शब्द भूगोल के अध्येता को उन पर ध्यान देना आवश्यक है। ऐसे स्थलों पर किसी शब्द-रचना या प्रयोग के प्रति सूचक की आकस्मिक टिप्पणी महत्वपूर्ण होती है।[6]

12.8. इस प्रकार शब्द भूगोल जहाँ सैद्धान्तिक तथा पद्धतिमूलक स्वाधीनता का अधिकारी है, वहाँ उसके योगदान का मूल्यांकन व्यापकतर समाजशास्त्रीय व सांस्कृतिक एकताओं एवं अनेकताओं को समझने के लिए आवश्यक है। यूरोप में शब्द भूगोल मानव-भूगोल के प्रश्नों का उत्तर देने में सहायक रहा है, किन्तु *अमरीका के परवर्ती अधिकतर भाषाविज्ञानी भाषागत विभिन्नता में एकमात्र* भूगोल को कारण मान कर कार्य कर रहे है।

टिप्पण और सन्दर्भ

1. 'भाषा-समुदाय' पर प्रस्तुत लेखक की 'क्षेत्र-भाषिकी' पुस्तक द्रष्टव्य है। परिशिष्ट—1 में इसकी संक्षिप्त व्याख्या प्रस्तुत की गई है तथा तृतीय अधिकरण में बघेलखंड के सन्दर्भ में देखा जा सकता है।
2. C. F. Hockett, A course in modern linguistics, ch 56
3 Augus McIntosh, survey of scottish dialects, vide ci word geography,
4 Dwilight Bolinger, Aspects of language, Newyork, 1968, p. 141-150.
5 *J T. Wright* Enc clopaedia of Linguistics, oxford, *1961*, p 259
6 तत्व-भाषिकी पर अधोलिखित लेख द्रष्टव्य हैं—

(क) Trager, Georgel.

'The theory of paralanguage', American Linguistics, (1961) 3 · 17-21.

'Paralanguage : a first approximation' studies in Linguistics (1958) 13 : 1-12

(ख) Henry, Jules

'The Lingustic expression of emotion' American anthropologist (1936) 38 250 5.

(ग) Stankiewicz, Edward
'Expressive language', in style in Language (ed. A. Sebeok) Newyork, 1960.

(घ) Deutch, Felix
'Analysis of Postural behavior' Psychoanalytical quarterly (1947) 16 : 192-213.

13

शब्द-भूगोल तथा भाषाविज्ञान की अन्य शाखाएँ

13.1. दशम अध्याय में शब्द-भूगोल की सम्बद्धता की चर्चा विविध बोली-अध्ययनों के सन्दर्भ में की गई है। यहाँ शब्दकोश, वर्णनात्मक भाषाविज्ञान, तथा तुलनात्मक भाषाविज्ञान से उसकी तुलना प्रस्तुत की जा रही है।

13.2. शब्द-भूगोल तथा शब्दकोश

एक ही शब्द के विविध रूप व एक ही शब्द के विविध अर्थ शब्दप्रक्रियात्मक भूगोल का विषय है। इस प्रकार यदि कोई शब्द-भूगोलवेत्ता आधुनिक बोलियो पर कार्य करता है, तो निस्सन्देह वह कोशकार की अपेक्षा अधिक प्रामाणिक सूचनाओ का सग्रह करेगा व अपेक्षाकृत उसका कार्य उत्कृष्ट होगा।

शब्द भूगोलवेत्ता तथा कोशकार दोनो ही क्षेत्रीय शब्दो का सकलन करते हैं, किंतु कोशकारों ने जो शब्दकोष प्रस्तुत किए हैं, उनमें उनकी दृष्टि शब्द-भूगोलवेत्ताओ के समान व्यापक नही रही। अधिकाश कोशो में प्राप्त सामग्री के स्थान का भी उल्लेख नही रहता, जिससे कोशकारो के द्वारा सम्पादित कार्य संग्रहमात्र बन कर रह जाते हैं।

कोशकार सम्मिश्रण की समस्या का हल निकालने में असमर्थ है और उसके लिये उसे शब्द-भूगोल का आश्रय लेना आवश्यक है।

यदि कोशकार सुनिश्चित क्षेत्र-पद्धति से शब्दो के सग्रह का कार्य करे, तो उसका कार्य निस्सन्देह शब्द-भूगोलवेत्ता के लिए सहायक हो सकता है।

13.3. शब्द भूगोल और वर्णनात्मक भाषाविज्ञान

शब्द-भूगोल तथा वर्णनात्मक भाषाविज्ञान दोनों ही सामग्री संचय की पद्धतियाँ है, किन्तु दोनो में कुछ आधारभूत अन्तर है। सामान्य वर्णनात्मक भाषाविज्ञानी अधिक समय तक सूचको के साथ कार्य कर सकता है, वह शब्द-भूगोलवेत्ता के समान पूर्व निर्धारित प्रश्नावली से बँधा नही रहता। उसके पास

प्रचुर सामग्री होती है तथा आवश्यक नही है कि वह सारी समस्याओं पर विचार करे ही, जब कि शब्द-भूगोलवेत्ता सीमित सामग्री के सहारे सारी समस्याओं पर विचार करना चाहता है।

वर्णनात्मक भाषाविज्ञानी बोली में मिलने वाले विविध स्तरो की कल्पना भी नही करता। वह यह भी जानने का प्रयास करता कि किस क्षेत्र के किस व्यक्ति की बोली को लेना चाहिए। अपने निवास स्थान में ही किसी भी व्यक्ति की भाषा को लेकर अपने शोध का गुणगान करना व पूरे के पूरे समुदाय को छोड़ देना उसका पुनीत धर्म है। McIntosh ने वर्णनात्मक भाषाविज्ञानी को पुरातन-पंथी और संकुचित दृष्टि वाला माना है।[1]

इसके विपरीत शब्द भूगोलवेत्ता की दृष्टि गागर म सागर भरने की होती है, क्योंकि वह अल्प सामग्री को अधिक स्थानों व अधिकाधिक सूचकों से प्राप्त करके उसे भाषिक तथा भाषिकेतर दोनो ही सन्दर्भों में स्वयं में पूर्ण मानचित्रों के माध्यम से प्रस्तुत करता है। शब्द भूगोलवेत्ता वर्णनात्मक भाषाविज्ञान के सिद्धांतो में दक्ष होते हुए भूगोल, इतिहास, समाजशास्त्र, व अन्य विषयो में समान रुचि लेता है और भाषाविज्ञान को व्यापक व व्यावहारिक दिशा प्रदान करता है।

13.4. शब्द भूगोल और तुलनात्मक भाषाविज्ञान

तुलनात्मक दृष्टि दो प्रकार की हो सकती है। सर्वप्रथम एक बोली के शब्दो की तुलना इतिहास क्रम से उसी बोली मे की जाती है। उदाहरणार्थ, प्राचीन बघेलखडी और आधुनिक बघेलखडी की तुलना। इस प्रकार की तुलनाएँ काल-क्रमिक कही जाती हैं। यह ऐसी पद्धति है, जिसमें इतिहासकार के रूप में हम बोली के क्रमिक विकास को देखते हैं। भाषाई अध्ययन में इस कालक्रमिक दृष्टि का आधुनिक युग तक बोलवाला रहा है। यथावसर शब्द भूगोल की दृष्टि भी ऐतिहासिक हो गई है। 1950 ई० के पूर्व शब्द भूगोल ने ऐतिहासिक सन्दर्भों को खोजने में अपना बहुमूल्य योगदान दिया है। कभी कभी तो इसके बिना शब्द-भूगोल की अनेक समस्याओ का हल निकालना कठिन हो जाता है।

इस प्रकार की तुलनात्मक दृष्टि में एक क्षेत्र की प्रचलित बोलियो की इकाइयों की तुलना दूसरे क्षेत्र में व्यवहृत इकाइयों से की जाती है। यह शब्द भूगोल की सकालिक पद्धति है।

टिप्पणी

1. Augus McIntosh, In Introduction to a survey of scottish dialects, Edinburgh, 1952.

14

शब्द-भूगोल का वर्गीकरण

14.1. शब्द भूगोल की प्रकृति से यह स्पष्ट हो गया है कि भूगोल व भाषिकेतर कारणों से किसी क्षेत्र की जनभाषा में पर्याप्त भाषिक भिन्नता प्राप्त होती है। इतना ही नहीं तथाकथित आदर्शभाषा, यथा हिन्दी, में भी स्थान-स्थान परता बोवगम्यता की मात्रा में पर्याप्त अन्तर मिलता है। रेडियो, चलचित्र, पत्र-पत्रिकाओ, पुस्तकों, व प्रचार की सामग्री के व्यापक प्रभाव के बावजूद हम जिन जिन शब्दो का प्रयोग करते हैं, उनमें से कुछ को तो हमारे प्रदेश के हिन्दीभाषी लोग ही नही समझ पाते। इस प्रकार की क्षेत्रीय भिन्नता के कारण शब्दो की रचना में बहुविध परिवर्तन अवश्यम्भावी हैं। ऐसे परिवर्तनों के आधार पर हम शब्द भूगोल को अधोलिखित वर्गों में विभाजित कर सकते है—

(क) ध्वनिप्रक्रियात्मक भूगोल।
(ख) रूपप्रक्रियात्मक भूगोल।
(ग) शब्दप्रक्रियात्मक भूगोल।
(घ) अर्थप्रक्रियात्मक भूगोल।

शब्द भूगोल के इन उपविभागो में निरन्तर एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में उनके प्रयोगा के बीच अन्तर के आधार पर तुलनाएँ प्रस्तुत की जाती है तथा व्यतिरेकी घटनाओ के चित्रण को मानचित्राकित किया जाता है। यहाँ यह जानना आवश्यक है कि 'तुलना करने' से क्या तात्पर्य है तथा उपर्युक्त तत्वों की तुलना के लिए कौन सी विधियाँ हैं—उनके क्या आधार है ?

यह कहा जा सकता है कि शब्द भूगोलवेत्ता जिस प्रकार की तुलनाओ को प्रस्तुत करता है, वे असख्य हो सकती है, तथा अलग अलग उपविभागो में वे अत्याधिक मात्रा में भिन्न भी हो सकती हैं। यहाँ विविध उपविभागो की व्याख्या के साथ उनके तुलनीय अनुसधान के प्रक्रम को सक्षेप में A McIntosh के A survey of scottish dialects के छायानुवाद के रूप में प्रस्तुत किया जा रहा है।

14.2. ध्वनिप्रक्रियात्मक भूगोल

किसी क्षेत्र के अन्तर्गत विविध स्थानीय बोलियों की ध्वनियों की परस्पर तुलना ध्वनिप्रक्रियात्मक भूगोल का प्रमुख लक्ष्य है। यह एक स्वीकृत तथ्य है कि विविध स्थानों में प्रयुक्त बोलियों में कुछ न कुछ मात्रा में ध्वनिकीय भिन्नता मिलती है।

सामान्य कोटि की विभिन्नता यह है कि एक बोली में जो ध्वनियाँ प्रयुक्त होती हैं, वे दूसरी बोली में बिल्कुल ही उपलब्ध नहीं होती। उदाहरणार्थ, हिन्दी की कुछ बोलियों में अग्रतालव्य अघोष संघर्षी (श्) प्रचलित है, जबकि बघेलखंडी में उसका प्रयोग नहीं मिलता। इसी प्रकार अरबी, फारसी, तथा अंग्रेजी की आदत्त ध्वनियों, यथा दन्तोष्ठ्य अघोष संघर्षी, अनिजिह्व अघोष अल्पप्राण, कोमलतालव्य अघोष संघर्षी, आदि के सम्बन्ध में कहा जा सकता है। उपर्युक्त अंतरों को इस क्षेत्र की बोली से अपरिचित व्यक्ति भी समझ सकता है।

द्वितीय प्रकार की भिन्नता को वक्ताओं के सन्दर्भ में उपस्थित किया जा सकता है। अत्येक निश्चित शब्द के व्यापक प्रचलन से परिचित होता है तथा वह यह जानता है कि एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में उच्चारण बदलता रहता है, *यथा बघेलखंड में आदित्यवार के लिए* अइत्त् + वार्, अइत्त् + वार्, अइत्वार्, अइत्वार, अयत्वार् अयत्वार, ऐत्वार, ऐत्वार्, इत्त् + वार्, इत्त् + बार्, इत्वार्, इत्वार, अत्त् + वार, अत्त् +वार् अत्वार्, अत्वार् (बघेलखंडी की शब्दमानचित्रावली, मानचित्र 21, 40, द्रष्टव्य), आदि। उसके इस विश्वास के लिए कारण भी विद्यमान हैं कि सभी रूप बोलीगत भिन्नताओं को ही प्रदर्शित करते हैं, जिसे सामान्य भाषा में 'एकमेव शब्द' कहा जाता है। इससे वह यह निष्कर्ष भी निकाल सकता है कि अगर प्रत्येक शब्द के सुदूर इतिहास में वह जाए, तो एक ऐसी स्थिति मिलेगी, जब उच्चारण सम्बन्धी कोई भेद न रहा होगा (उपर्युक्त उदाहरण में दित्यवार व पुन आदित्यवार), क्योंकि ऐतिहासिक दृष्टि से वे सभी रूप 'एकमेव शब्द' (यथा आदित्यवार) से आए हैं। यहाँ सन्दर्भ का एक 'निश्चित स्थान' ऐसा बोध कराने में सक्षम होता है कि ध्वनिपरिवर्तन 'एकमेव शब्द' से सम्बद्ध है। सन्दर्भ के 'निश्चित स्थान' व व्यतिरेकी तत्त्वों के मध्य तुलना (जिन्हें तुल्यार्थक कहा जाता है) ध्वनिप्रक्रियात्मक भूगोलवेत्ता का प्रमुख लक्ष्य है। उदाहरणार्थ, रेवाप्रस्थ में व्यवहृत / बेर्री / "गेहूँ + चना" कैमोरप्रस्थ में /बुयर्रा/ सुनाई पड़ता है (बघेलखंड की शब्द-

मानचित्रावली, मानचित्र 266)। कोई वक्ता इस प्रकार के परिवर्तन को देखकर चकित हो सकता है।

वैसे विश्लेषण को दृष्टि से /बेंर्‌री/तथा/ब्यर्‌रा/ में मिलने वाला ध्वनिगत परिवर्तन 'चश्मा' के (बघेलखड की शब्दमानचित्रावली, मानचित्र 10, 24, 33) ध्वनिगतपरिवर्तनों—चस्मा, तस्मा, चछ्मा, चेंस्मा, चल्स्मा, तस्मम्, टेंस्मा, त्यस्मा, टेस्मा, चलिस्मा, चच्मा, चस्म्, तुयस्मा, चलिछ्मा—की तुलना में बहुत पुराना माना जा सकता है। शब्दावली तथा अन्य तत्त्वों के समान ध्वनियाँ भी शनै शनै तितर-बितर हुई है। उपर्युक्त दोनो प्रयोगो के मध्य मिलने वाले क्षेत्रीय अन्तर के सम्बन्ध में कहा जा सकता है कि वे समान 'आद्य प्ररूप' से अपसरित हुए होंगे। इस ऐतिहासिक आधार पर उनका वर्गीकरण प्राय सुविधाजनक हो जाता है। यदि हम ऐसा विवेचन करते हैं, तो स्पष्ट है कि हम /बेंर्‌री/तथा/ब्यर्‌रा/ के [—ई] व [—आ] को या [च्—] ~ [त्—] ~ [ट्—] को मूलत 'एकमव ध्वनि' मानते हैं। यद्यपि ध्वनिकीय दृष्टि से ये शब्द-रूप उतने ही भिन्न हैं, जितने कि दो (या तीन) भिन्न शब्द, जिनसे ये दोनो या तीन ध्वनियाँ आती हैं, किन्तु उन शब्दों में इस प्रकार का कोई परस्पर सम्बन्ध नही होता।

इस प्रकार का ध्वनिप्रक्रियात्मक वर्गीकरण करते समय हम इस सामान्य अनुभव पर कार्य करते हैं कि हम "एकमेव शब्द" के भिन्न रूपो का विवेचन कर रहे हैं, तथा उस क्षेत्र की व्याख्या करना चाहते हैं, जहाँ प्रत्येक रूप आधुनिक बोलीगत प्रयोगो में सामान्येन नियमित रूप से प्रयुक्त होता है। एक शब्द को लेकर इस प्रकार हम जितना हो अनुसन्धान करते हैं, हमें बोलियों के मध्य उच्चारण का उतना ही अधिक भेद मिलता है। सांख्यिकीय दृष्टि से इसका यह अर्थ कदापि नही है कि वितरण के साथ हमें अधिकाधिक अन्तर मिलेंगे। यहाँ यह ध्यातव्य है कि ऐसे उदाहरणो में शब्द का अर्थ सभी स्थानो पर एक-सा नहीं हो सकता। यदि समान अर्थ नहीं मिलता, तो अन्वेषक को सन्तोष करना पड़ेगा कि एक समय वह एक सा रहा होगा। उदारणार्थ, बिलासपुर जिले से सलग्न मेकलप्रस्थ में /ब्यर्‌रा/ शब्द 'गेहूँ + चने' का वाचक न हो कर किसी भी कु-मिश्रण का वाचक है।

प्रथम दृष्टि में ध्वनिप्रक्रियात्मक भूगोल हमें शब्दो के सग्रह के अतिरिक्त कुछ न लगेगा, अतएव इसकी कुछ जटिलताओं पर विचार करना आवश्यक है। किसी बोली में /ब्यर्‌री/ मिलता है, /ब्यर्‌रा नही, इस कथन का तात्पर्य यह कदापि नही है कि उसमें [—आ] नही है। यहाँ 'ध्वनियो की जिस भिन्नता' का

अध्ययन किया जा रहा है, या तो वह किसी विशेष शब्द के साथ जुड़ी होती है या शब्दों के समुच्चय के साथ सम्बद्ध होती है। इस प्रकार की तुलनाओं की जटिलता का विवेचन इसी स्थिति में होना चाहिए।

कोई व्यक्ति जो किसी बोली में प्रयुक्त ध्वनियों की एक सारिणी बनाना चाहता है या उन्हें वर्गबद्ध करना चाहता है, उसे शीघ्र ही यह ज्ञात हो जाता है कि ऐसी ध्वनियाँ असंख्य हैं। एक सुप्रशिक्षित ध्वनिविद् ऐसी सैकड़ों ध्वनियों की खोज कर सकता है। उदाहरण के लिए, /अब/ में मिलने वाली [अ–] का उच्चारण वही नहीं है जो /अहसान/ के [अ–] में है। इसी प्रकार, /यह/ के /य/ के पश्चात् [–अ–] का उच्चारण वही नहीं है, जो /वह/ के /व/ के बाद मिलता है। यहाँ प्रत्येक [अ] की व्याख्या शब्दगत ध्वनिकीय सन्दर्भ में ही की जा सकती है। इसके अन्तर, जो प्रायः प्रकरण, अर्थात् पड़ोसी ध्वनियों, पर आश्रित होते हैं, अर्थभेदक नहीं होते।

1950 ई० के पूर्व तक शब्द-भूगोल में ध्वनिव्यवस्था की जो उपेक्षा हुई है, उससे यह प्रश्न उठना स्वाभाविक ही था कि क्या संरचनात्मक बोलीविज्ञान (या शब्द-भूगोल) सम्भव है? यदि 'एकमेव शब्द' के अध्ययन को प्रस्तुत करने वाले ध्वनिप्रक्रियात्मक भूगोल में हम बोलीगत शब्दों के उच्चारण के सम्बन्ध में कुछ नहीं जानते, तो वैसी स्थिति में हम ऐतिहासिक दृष्टि से शब्दों की समानता को खोजने में सफल नहीं हो सकते। हम यह तो बता ही सकते हैं कि इस प्रकार का स्वर-भेद ।बयोरा। से भिन्न है या उन सभी शब्दों से पृथक् है, जिनमें [अ] थी।

दो भिन्न बोलियों के समान शब्दों के उच्चारण के मध्य भिन्नताएँ अनेक कारणों से उत्पन्न हो सकती हैं तथा इस प्रकार की भिन्नताओं का महत्व हमारी अनुमानपरक पद्धति पर है। इसे समझने के लिए न केवल 'आद्य प्ररूप' बोली की ध्वनिव्यवस्था को समझना आवश्यक है, अपितु आधुनिक बोलियों की ध्वनि व्यवस्था से भी परिचय प्राप्त करना सुविधाजनक है।

यहाँ भिन्नताओं के कुछ प्रकारों की चर्चा की जा सकती है। जब यह कहा जाता है कि 'एकमेव शब्द' का उच्चारण भिन्न हो गया है, तो प्रथमतः उसके कारणों की खोज में हमारी रुचि नहीं होती, अपितु उच्चारण के वितरण पर अधिक ध्यान जाता है। वैसे पूर्ववर्ती शब्द-भूगोल वेत्ताओं की दृष्टि ऐसे प्रसंगों में 'पूर्वरूप' पर ही रही है। यदि इस प्रकार की भिन्नताओं या अपसरणों के ढेर सारे उदाहरणों का निरीक्षण किया जाए, तो यह ज्ञात हो सकता है कि ऐसा

अपसरण मूलभूत व्यवस्था में बहुविध परिवर्तनो की घटना ही है। इस प्रकार के परिवर्तनो में प्रत्येक क्षेत्र की बोली की अपनी विशेषताएँ होती हैं।

किसी एक बोली के अन्तर्गत भी मूलभूत व्यवस्था में अनेक विधियो से बहुत प्रकार के परिवर्तन हो सकते हैं। यह उल्लेखनीय है कि केवल ध्वनिकीय परिवर्तन व्यवस्था में किसी प्रकार का प्रभाव नही डालता। बोलियों के मध्य इस प्रकार सुस्पष्ट ध्वनिकीय अन्तर बिना व्यवस्था-भेद के मिल सकते हैं। यहाँ व्यवस्था पर प्रभाव डालने वाले बाहरी तत्व या प्रतिष्ठित भाषा पर विचार कर लेना भी आवश्यक रहता है।

उपर्युक्त परिवर्तनो के अतिरिक्त अन्य बहुविध परिवर्तन भी घटित हो सकते हैं, जिनमें समीकरण, विषमीकरण, अघोषीकरण, सघोषीकरण, अल्पप्राणीकरण, आदि तत्व क्रियाशील होते हैं। इस प्रकार का क्षय और संचय किसी भाषा के प्रभाव से भी हो सकता है और बिना प्रभाव के भी। प्रभावो को बताने वाली परिस्थितियाँ अत्यन्त जटिल है, अतएव इनकी चर्चा विशेष सन्दर्भ में ही की जाएगी।

इस विवरण से यह भी संकेत मिलता है कि विविध बोलियो के मध्य परिवर्तन की विविध दिशाओ को जानने के लिए अनेक उपायो का सहारा लेना पडता है। विविध बोलियो का जितना ही अधिक सर्वाङ्गतीण विश्लेषण किया जाएगा, उतना ही अधिक ऐसी समस्याओ का सरलता से निराकरण हो सकेगा।

14.3. रूपप्रक्रियात्मक भूगोल

रूपप्रक्रिया सामान्यतया शब्दो की रूपसिद्धि तथा व्युत्पादन से सम्बद्ध है। शब्द-भूगोल में रूपप्रक्रिया की ये दोनो ही शाखाएँ महत्वपूर्ण होती हैं तथा किसी बोली में इनके अन्तर्गत मिलने वाले अनेक व्यतिरेकी तत्व भी दृष्टिगत होते है। जब हम इन पर अन्वेषण-कार्य प्रारम्भ करते हैं, तो हमें सदा की तरह 'सन्दर्भ के निश्चित स्थान' की आवश्यकता होती है और इस रीति से यह शब्दप्रक्रियात्मक भूगोल से मिलती-जुलती है।

किसी रूप सिद्धि से यह समझा जाता है कि किसी प्रसंग में कार्यकारिता के अनुसार नियमित परिवर्तन होते है, जिन्हे 'एकमेव शब्द' के अनेकविध रूपप्रक्रियात्मक परिवर्तन कहा जा सकता है; यथा घ्वाड़्, घ्वड़्वा से घ्वाड़न, घ्वड़्वन बहुवचन (बघेलखंड की शब्दमानचित्रावली, 135, 139, 143, 349 मानचित्र द्रष्टव्य), इसी प्रकार घ्वड़ऊ, घ्वड़उवे से घ्वड़उना, घ्वड़उने (बहुवचन); तया हय्, हवय्, हे से हँय्, हमयँ, हेमयँ बहुवचन (बघेलखंड

की शब्दमानचित्रावली, 95, 97, 106, 121, 125, आदि मानचित्र द्रष्टव्य)। वास्तव में यह भी कहा जा सकता है कि शब्दों के इन तीन समुच्चयों में हम पृथक्-पृथक् चौदह शब्दों की रचना करते है। हय्, हवय्, हे (= है); हँय्, हमयँ, हेमयँ (= है) (जिन्हें तकनीकी दृष्टि से रूपतालिका का समुच्चय कहा जाता है) को रूपो का समुच्चय कहा जाएगा। यह भी सम्भव है कि एक समुच्चय के विविध सदस्यो में परप्रत्ययो की विद्यमानता या अविद्यमानताहो, यथा कुत्ता-कुत्ते; या इनमें शब्दमध्यग कोई परिवर्तन मिलता हो, यथा मुड़ना—मोड़ना, या रूप मे आमूलचूल परिवर्तन हो, यथा जा, ग—। वैसे यदा-कदा एकाधिक रूपो को एक ही समुच्चय का सदस्य मानने या उन्हे शब्दप्रक्रियात्मक रीति से पृथक् करने का सन्देह बना ही रहता है।

शब्द-भूगोल में रूपो के समुच्चययो से हमारा सीधा सम्बन्ध नही होता, अपितु हम यह देखते है कि एक ही शब्द के प्रकार को बतलाने वाले विविध रूप विविध स्थानो में किस प्रकार मिलते है। उदाहरणार्थ, हम इस पर विचार कर सकते हैं कि बघेलखंड में अनेक स्थानो पर 'माली' का स्त्रीलिंग 'मलिनी' मिलता है तथा अन्यत्र वह मालिन्, मलिनिआ, मलिनिन्, मलिआइन, मालेन, मालिनाइन, मालिनि (बघेलखंड की शब्दमानचित्रावली, मानचित्र 136 द्रष्टव्य) है। *व्यावहारिक दृष्टि से हम कह सकते है कि यहाँ 'माली' के स्त्रीलिंग को बताने के* लिए अनेक रीतियाँ है। इस प्रकार की विविध रीतियाँ (यथा सेठ से सयठाइन, सेठिन्, सेँडिआइन्, सयठानी, सेठागी, सठिआइन्, सठिनिआ, सयठइनिआ, सयठइनिआइन, मानचित्र 134, 141 द्रष्टव्य) व्यतिरेकी घटना है। इसी प्रकार इतर व्याकरणिक कोटियो पर भी विचार किया जा सकता है। इस प्रकार के उदाहरणो में हम *'सन्दर्भ के निश्चित स्थान'* की अपेक्षा जटिल प्रक्रम से कार्य करते है। सर्वप्रथम हम प्रत्येक रूप में समान स्त्रीलिंगवाची प्रकार्य को मान कर चलते हैं, यथा *'मलिनी'* तथा *'मालिन'* में। ऐसी स्थिति में हमारे 'सन्दर्भ के निश्चित बिन्दु' के अन्तर्गत स्त्रीलिंग का तत्व भी परिगणित हो जाता है। यदि *ऐसा हो कि बघेलखंडी मे प्रत्येक संज्ञा स्थान के अनुसार (—नी) या (—इन)* स्त्रीलिंगवाची प्रत्यय से युक्त हो, तो हमें दूसरे 'सन्दर्भ-बिन्दु' की आवश्यकता नही होगी। तब हम एक स्थान की किसी संज्ञा के स्त्रीलिंग की तुलना दूसरे स्थान की किसी के स्त्रीलिंग से कर सकते है। किन्तु प्रायः ऐसा होता नही है। *विविध क्षेत्रो के अन्तर्गत विशेष शब्दो के व्यापार में हमें अधिकांशतः रूपिमीय* युक्तियों की परीक्षा करनी पडती है। रूपिमीय दृष्टि से एक क्षेत्र के भूतकालिक 'रहा' (= था) की तुलना दूसरे क्षेत्र के 'ते' (= था; मानचित्र 87, 89, 91,

92, 104, आदि) से करना सम्भव है। इसमें कोई गारटी नही है कि जिस क्षेत्र में 'रहा का प्रयोग हो रहा है, वहाँ 'ते' का भी होगा या जहाँ 'ते' प्रयुक्त है, वहाँ 'रहा' भी होगा। ऐसी स्थिनि में सामान्य तौर पर किसी उदाहरण में किसी एक शब्द (या शब्दो की सहिति) के व्यापार को ले कर ही 'विशेप कार्य' आरम्भ करना चाहिए। विविध स्थानो में रूपप्रक्रिया की आरम्भिक बातो को जानने के लिए हम एकमेव शब्द' (एकमवाद्वितीयम्) को चुनते हैं। तब हमारे पास 'सन्दर्भ के निश्चित बिन्दु, की वह दूसरी ही स्थिति होती है। वस्तुत हमे इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि विशेष कार्य से हमारा तात्पर्य यह देखना है कि 'एकमेव शब्द' के रूपो के समुच्चय का एक सदस्य पूर्णतया प्रत्येक समुदाय में समान हैं। इसे अन्य व्यतिरेकी उदाहरणो के माध्यम से प्रस्तुत किया जा सकता है। यह हम 'रहा—ते' जैसी व्यतिरेकी घटनाओ पर विचार कर रहे हो, तो कभी-कभी यह निर्णय करना कठिन हो जाता है कि क्या वे शब्दप्रक्रियात्मक रूप में हैं या रूपप्रक्रियात्मक रुप में ? इन पर विचार किया जाना चाहिए (एक दृष्टि से ये दोनों ही है)।

रूपो का वितरण किसी भी उदाहरण (शब्द प्रक्रिया या रूप प्रक्रिया) में रुचिकर विषय है। यदि एक ही बोली—रूप में सभी स्थितियो में एक रूप व अन्य बोलियो में दूसरे रूप का व्यवहार होता है, तो भ्रान्ति की सम्भावना भी नहीं होती। यहां यह ध्यातव्य है कि ऐसे उदाहरणो से हम 'सन्दर्भ के उन्ही स्थानो' को लेते है, जो 'एकमेव अर्थ' के ज्ञापक होते हैं। उदाहरणार्थ बघेलखंड में यदि सहायक क्रिया 'है' के पूर्व कोई प्रश्नवाची क्रिया विशेषण प्रयुक्त होता है (तेरा वह कौन है), तो क्षेत्र के अनुसार आय्, आही, हो, हएँ, हवे, लागै, आदि रूप (बघेलखड की शब्द-मानचित्रावली, मानचित्र 287, 344, द्रष्टव्य) प्राप्त होते है।

रूप प्रक्रियात्मक दृष्टि स क्रमवद्ध अध्ययन से व्यतिरेकी स्वभाव के अनेक तत्त्व प्राप्त होते है। विशेष रूप से इनके माध्यम से हम किसी क्षेत्र में विविध प्रकार के बोली रूपों की सहविद्यमानता व उनकी क्रिया को देख सकते हैं। लोग शब्दावली की अपेक्षा रूप सिद्धि की शुद्धता पर अधिक बल देते हैं। यद्यपि उच्चारण में भी इस प्रकार के आदर्शों से वे सजग रह सकते है, तथापि वे अपनी बोली में रूप प्रक्रियात्मक समायोजन तो कर लेते हैं, किन्तु ध्वनिकीय अनुकूलन में कठिनाई होती है। अतएव किसी क्षेत्र में एक निश्चित सीमा तक ध्वनि प्रक्रियात्मक लक्षण भिन्नता को अवश्यमेव प्रदर्शित करते हैं। इस प्रकार की भिन्नता का परीक्षण सदैव उपयोगी होता है। शब्द प्रक्रियात्मक प्रसग में इसकी चर्चा की जाएगी।

रूप सिद्धि से पृथक् दूसरे प्रकार की रूप प्रक्रियात्मक घटना व्युत्पादन का परीक्षण करना भी आवश्यक है। इसके अन्तर्गत मिश्र एवं यौगिक शब्दो की रचना का अध्ययन होता है। इसमें उनकी व्याकरणिक रूप सिद्धि की चिन्ता नही की जाती। बघेलखंड में इसका एक उदाहरण लघुतावाची पर प्रत्ययो की रचना है, जैसे—ऊ (घोड़ऊ)—उना (घोड़उना),—अउन् (घोड़उन्),—एँब (घोड़ेंब्)—वा (घोंडबा, मानचित्र 139)। यद्यपि विभक्ति मूलक व व्युत्पादक रचना-प्रकारो के मध्य पूर्ण भेद नही होता, तथापि उनका ज्ञान आवश्यक है। ऐसे प्रसगो म अधो-लिखित दो बातें अवधारणीय हैं—

(क) किसी क्षेत्र में एक या दूसरे प्रकार के लघुता या गुरुतावाची पर प्रत्ययों की अपनी विशेष प्रवृत्ति हो सकती है।

(ख) लघुता या गुरुतावाची पर प्रत्ययो की रचना के लिए कोई विशेष पद्धति हो सकती है या पर प्रत्ययो को जोड़ने के अतिरिक्त तत्समान कोई अन्य परम्परा भी हो सकती है।

ऐसे प्रसंगो में हमारा ध्यान हठात् रूप प्रक्रिया व वाक्यविन्यास के सहसम्बन्ध पर चला जाता है। प्रथम उदाहरण में जिस रचना की प्राप्ति किसी एक पद्धति से होती है, द्वितीय उदाहरण में उसकी उपलब्धि की विधि अन्य ही हो सकती है। इस प्रकार का क्रियात्मक सम्बन्ध केवल रूप प्रक्रिया व वाक्यविन्यास में नही होता, अपितु दोनो के मध्य शब्दावली मे भी हो सकता है।

वाक्यविन्यास का विवेचन भाषा भूगोल वेत्ता के सम्मुख एक कठिन समस्या है। कुछ तो इसलिए कि उसे प्रारम्भ करने के लिए 'सन्दर्भ के निश्चित स्थान' की खोज कठिन है तथा कुछ इसलिए कि किसी विशेष वाक्यविन्यास के सम्बन्ध की घटना को निकाल पाना दुष्कर कार्य है। इस धर्म सकट म अभी तक भाषा-भूगोल एकमात्र शब्द-भूगोल बन कर रह गया है।

14.4. शब्द प्रक्रियात्मक भूगोल

शब्द प्रक्रियात्मक भूगोल प्रधानतया शब्दावली के अध्ययन से सम्बद्ध है। इसमें सर्वप्रथम भौगोलिक वितरण की यथासम्भव सूचनाओ को सग्रह करने का प्रयास होना है। तदुपरात यह देखा जाता है कि सूचना से क्या निष्कर्ष निकाला जा सकता है। सामान्यतया शब्दो के भौगोलिक वितरण से सन्दर्भ के किसी निश्चित स्थान से 'एकमेव वस्तु' की प्राप्ति का अर्थ लिया जाना चाहिये। उदाहरणार्थ, यदि कोई अन्वेषक यह जानता है कि फलाँ जीव, जैसे 'मेंढक', सम्पूर्ण बघेलखण्ड में पाया जाता है, तो ऐसी कल्पना वह सकारण कर सकता है कि

अध्येय बघेलखंड में उसके लिए विविध नामो का प्रयोग होना होगा (बघेलखंड में 'मेंढक' के लिए गूलर्, गुल्रा, में था, मेफक्, मेंक्क, मचका मेंढ्का पंघा, मेंभुकर्, वेंग्चा, बेंगा, वेंघा, वेंग्, कट्रा, टेंट्का, टट्का, आदि शब्द रूप मिलते होंगे। यहाँ अनिवार्यरूप से 'सन्दर्भ का निश्चित बिन्दु' मेंढक है तथा इसके व्यतिरेकी तत्त्व वहाँ पर इसके लिए प्रयुक्त विविध नाम हैं। इस अवसर पर यथातथ्य रूपो के जुटाने का प्रश्न नही होता, अपितु प्रमुख बात यह है कि जो कुछ भी संग्रहीत किया जा रहा है, वह शब्दो का एक समुच्चय है, जिनका अर्थ तो समान है, भले ही उनकी व्युत्पत्ति भिन्न-भिन्न हो।

समग्र क्षेत्र से सूचनाओ की उपलब्धि के पश्चात् प्रमाणो से यह अवगत होगा कि या तो सर्वत्र एक ही शब्द प्रयुक्त होना है अथवा दो या उससे अधिक। जब संग्रहीत सामग्री से यह ज्ञात होता है कि एक से अधिक शब्दों का प्रयोग है, तो सरलतया यह निष्कर्ष निकलेगा कि इनमें प्रत्येक का भिन्न-भिन्न भौगोलिक वितरण है और शब्द भूगोलवेत्ता का यह कार्य हो जाता है कि वह इन वितरणो को मानचित्र में अंकित करे। अतएव शब्द-भूगोलविद् की रुचि 'एकमेव वस्तु' के लिए प्रयुक्त अधिकाधिक शब्दो के अन्वेषण में ही नहीं होती, अपितु उसे प्रत्येक शब्द के प्रचलन-क्षेत्र की भी यथातथ्य व्याख्या करनी पड़ती है।

संग्रहीत सामग्री से जब यह ज्ञात होता है कि किन्ही निश्चित स्थानों से किन्ही विशेष प्रश्नो का उत्तर नही मिला, तब यह खोजना आवश्यक हो जाता है कि 'क्या वह वस्तु वहाँ अपरिचित है!' या 'परिचित होते हुए भी उस वस्तु का वहाँ कोई नाम नहीं है!' प्रथम के उदाहरण के रूप में बघेलखड के सिंगरौली क्षेत्र के उन स्थानो को प्रस्तुत किया जा सकता है, जहाँ 'नर्स' के लिए कोई शब्द नही है (मानचित्रानुक्रम 329), तथा द्वितीय के उदाहरण में दक्षिण बघेलखड के कुछ पुष्पो व पौधों को रखा जा सकता है, जिनको लोग वस्तु के रूप में तो जानते है, किन्तु जिनके लिए शब्द नही बता सकते। किसी वस्तु (या क्रिया या विशेषण, आदि) के लिए किसी स्थान पर शब्द का नितान्त अभाव व अन्य स्थान पर उसकी विद्यमानता—ये अपने-आप में व्यतिरेकी घटना को उपस्थित करते है।

भाषाविज्ञानी को यह स्मरण रखना चाहिए कि शब्दो के भौगोलिक वितरण से सम्बद्ध सामग्री की व्याख्या में भाषिक विश्लेषण के साथ सभाजैतिहासिक पृष्ठभूमि भी होती है (वैसे उसे यह विषय महत्वहीन सा प्रतीत होगा)। इस प्रकार के अध्ययन-क्रम में मिलने वाली व्यतिरेकी घटनाएँ इतर क्षेत्रों के साथ उस क्षेत्र के सम्बन्ध को बताती हैं शब्दावली में क्षेत्रीय अन्तर को प्रदर्शित करने वाले

सुनियोजित अध्ययन हमें इन भिन्नताओ की प्रकृति-भिन्नता व साम्मिश्रता की शिक्षा देते हैं।

14.4.1. शब्द प्रक्रियात्मक भूगोल तथा नामिक भूगोल के मध्य मिलने वाले अन्तर भी इस प्रसंग में नही भुलाए जा सकते। स्थाननामो के व्यापक अध्ययन ने यह दिखा दिया है कि उनके माध्यम से क्षेत्र-विशेष से बाहर आने वाले लोगो के प्रभावो की भरपूर सूचना संचित की जा सकती है व कालक्रम से उनकी व्याख्या भी की जा सकती है। स्थान नाम तथा शब्द-भूगोल वेत्ता के शब्दो के वितरण की प्रकृति की तुलना कर के प्रभावो को युक्तियुक्त व्याख्या करना उपयोगी है।

नामिक भूगोल यद्यपि शब्द-भूगोल के परिणामो को सहसम्बद्ध करने में सहायक है, किन्तु उसे अपनी व्याख्या के अनुसार हम शब्द-भूगोल के अन्तर्गत परिगणित नही कर सकते, क्योकि शब्द-भूगोल का लक्ष्य 'एकमेव' (शब्द या वस्तु) की खोज है, जब कि नामिक भूगोल 'अनेकमेव' को ले कर चलता है।

14.5. अर्थप्रक्रियात्मक भूगोल

सन्दर्भ के किन्हीं निश्चित स्थानों को लेकर 'एकमेव वस्तु' या नाम के विविध अर्थो के प्रयोग को अर्थवैज्ञानिक भूगोल के माध्यम से प्रस्तुत किया जा सकता है। उदाहरणार्थ, यदि अन्वेषक 'गदेला' शब्द की विद्यमानता से परिचित है, तो वह इसके ध्वनिकीय परिवर्तनों (गद्याल, गर्देलुवा) के साथ यह भी जानता है कि इसका अर्थ विविध क्षेत्रो में भिन्न-भिन्न है। उदाहरण के लिए, उपरिहार (त्योंथर क्षेत्र में यह 'लडके' का वाचक है, सीधी-क्षेत्र में 'बिस्तर' का, व शेष बघेलखंड में 'बड़ी गदेली' या 'देट्टे' का अर्थ देता है (बघेलखड की शब्दमानचित्रावली, मानचित्र 333)। इस आधार पर वह अर्थ के वितरण को मानचित्र में प्रदर्शित कर सकता है। यहाँ सन्दर्भ का एक निश्चित बिन्दु, "गदेल" नामक शब्द है, जैसा कि ध्वनिप्रक्रियात्मक भूगोल म हमने 'ब्यर्रा' को लिया था, किन्तु यहाँ पृथक् तत्व सर्वथा पृथक् हैं।

14.6. निष्कर्ष

उपर्युक्त उदाहरणो से यह स्पष्ट है कि शब्द-भूगोल के विविध उपविभागों के वितरणात्मक अध्ययन में 'सन्दर्भ के निश्चित बिन्दु' तथा व्यतिरेकी घटना' पर बल दिया जाता है, इससे यह भी सकेत मिलता है कि इनमें से अनेक का संयोग भी सभव है, यथा एक ही नाम या शब्द के विवि उच्चारण (ध्वनिप्रक्रिया-

त्मक) व विभिन्न अर्थो (अर्थप्रक्रियात्मक) को एक ही साथ प्राप्त किया जा सकता है। वितरण का एक परिणाम यह भी हो सकता है कि दो वितरणो में कही असम्भावित सहसम्बद्धता (उच्चारण तथा अर्थ में भिन्नताएँ) भी मिलती हो। ऐसी स्थिति में विविध प्रकार की तुलनाओ में मिलने वाले मूलभूत अन्तरो को ध्यान में रखना चाहिए। यह भी सम्भव है कि इनका समाधान प्राय. एक ही तकनीक से न हो।

तकनीको के सम्बन्ध में यह आवश्यक है कि हम प्रारम्भिक निर्णय बड़ी सावधानी से करें—यह ध्यान रखें कि कौन सी सूचना महत्वपूर्ण है तथा कौन सी गौण है। इसके पश्चात उन सूचनाओ की प्राप्ति की उत्कृष्ट विधि पर हम निर्णय ले सकते हैं।

McIntosh ने शब्द भूगोल वेत्ता की स्थिति की तुलना एक मछुए से की है।[1] वह जिस प्रकार की मछली पकड़ना चाहता है, तदनुसार किसी एक युक्ति (जाल या कांटे) से वह मछली पकड़ सकता है।' यह भी सम्भव है कि उसे विविध प्रकार की मछलियो को फँसाने के लिए विविध तकनीको का सहारा लेना पड़े। इसी प्रकार शब्द-भौगोलिक सूचनाओ को संग्रह करने वाला व्यक्ति भी अपनी आवश्यकतानुसार किसी एक या अनेक तकनीको को अपना सकता है।

सन्दर्भ

1. Augus McIntosh, An Introduction to a Survey of Scottish dialects, Edinburgh, 1952.

I

तृतीय अधिकरण

मानचित्रावलीय सर्वेक्षण

शब्द भूगोल प्रमुखतया विविध भाषिक समुदायो से सम्बद्ध रहा है, जिसकी भाषाविज्ञान की इतर शाखाओ ने उपेक्षा की है। सम्प्रति शब्द भौगोलिक अध्ययन प्रचलित विविध पद्धतियाँ प्राचीन शब्द भूगोल की पद्धतियों से अधिक प्रमाणिक और सशोधित है। 1948 ई० के पूव शब्द भौगोलिक तकनीकें व्यक्तिनिष्ठ थी और आज वे वस्तुनिष्ठ हैं। इन पद्धतियो में मापन और विश्लेषण की पद्धतियाँ विशेष उल्लेखनीय है। इस प्रकार आज परिमाणात्मक समुदाय, सूचक, व सामग्री का मनोनयन आवश्यक माना जाता है। फलस्वरूप इनके विवेचन व प्रस्तुतीकरण म तकनीकें स्वीकार की जाती हैं। इस प्रकार की तकनीको का विकास सांख्यिकीय भाषाविज्ञान के जन्म के साथ हुआ है।

किसी भी अध्ययन की पूर्णता अध्येय सामग्री की यथार्थता व विश्वसनीयता पर है अतएव यह आवश्यक है कि अध्ययन-योग्य सामग्री विश्वसनीय स्रोतों से प्रामाणिक तकनीको के माध्यम से सकलित की जाए तथा वह स्रोत के अनुसार सूक्ष्म व स्थूल हो। सामग्री प्राप्ति के स्रोत अनेक हो सकते हैं, जिससे एक निश्चित सीमा तक विश्वसनीयता भी भिन्न भिन्न हो सकती है। ऐसी स्थिति में सामग्री को प्रतिचयन विधियो से प्राप्त करना अधिक उपयोगी होगा।

किसी भी अध्ययन में मूलभूत सामग्री का सग्रह लिखित (लेखबद्ध श्रोतों) व उच्चरित (भाषिक सर्वेक्षण) दोनो ही प्रकार से किया जा सकता है। ऐतिहासिक विश्लेषण में सहायक किसी भाषिक क्षेत्र लिखित सामग्री (प्रकाशित या अप्रकाशित) अनेकविध हो सकती है, जिसे सामान्यतया अधोलिखित वर्गों में प्रस्तुत किया जा सकता है—

(क) शिलालेख या ताम्रपत्रादि।

(ख) हस्तलिखित।

(ग) प्रकाशित ।

(घ) क्षेत्र से सम्बद्ध मानचित्रादि ।

(ङ) प्रवासेतिहास ।

(च) विविध जनगणना-प्रतिवेदन ।

(छ) स्थानवृत्त ।

(ज) ऐतिहासिक विवरण ।

(झ) समाजार्थिक विश्लेषण ।

(ञ) भौगोलिक अध्ययन ।

(ट) यातायात की सघनता ।

(ठ) विविध ज्ञातव्य बातें ।

शब्द-भूगोल के अन्तर्गत *शब्द-मानचित्रावलीय सर्वेक्षण* सर्वाधिक महत्वपूर्ण है तथा आज यह स्वीकार किया जाता है कि सामग्री को संरचनात्मक स्वरूप देने के लिए प्रारम्भिक सर्वेक्षण आवश्यक है ।

सर्वेक्षणों के माध्यम से सूचना-संग्रह में प्रायः यह लोभ बना रहता है कि अधिकाधिक सामग्री एकत्र कर ली जाए। किन्तु एक तो पूर्ण सूचना का संग्रह कठिन कार्य होता है, दूसरे अनुपयोगी व अधिक सामग्री का संकलन निरर्थक है। समय और शक्ति की सीमाओं को देखते हुए ऐसा करना सम्भव भी नहीं प्रतीत होता। ऐसी स्थिति में किसी ऐसे विकल्प की आवश्यकता है, जिससे सहज रीति से उस क्षेत्र की विशिष्ट शब्दावली का संग्रह हो सके तथा उस संग्रह-कार्य में किसी भी प्रकार का पूर्वाग्रह न हो ।

इस प्रकार की सहज रीति सम्प्रति एकमात्र प्रतिचयन विधि है। इस आधार पर सम्पूर्ण जनसंख्या की प्रतिनिधि स्वरूप सामग्री प्राप्त की जा सकती है। प्रतिचयन की प्रमुख विधियाँ अधस्तन हैं—

(क) क्रमबद्ध प्रतिचयन

(ख) यादृच्छिक प्रतिचयन

(ग) स्तरित प्रतिचयन

इनमें आवश्यकतानुसार किसी एक विधि का उपयोग किया जा सकता है। इनमें से यदि एक बार प्रतिचयन के नमूनों को चुन लिया गया, तो नमूने के आकार में ह्रास या वृद्धि सम्भव है। आदर्शरूप में नमूने को यथासम्भव छोटा होना चाहिए, किन्तु वह इतना छोटा न हो कि प्रतिनिधि स्वरूप विश्वसनीय सूचनाओं का संग्रह न हो पाये ।

सर्वेक्षण में समय व शक्ति पर ध्यान रखने के साथ यह भी विस्मृत नहीं

किया जाना चाहिए कि प्रामाणिक व विश्वसनीयता उसकी आत्मा है, अन्यथा प्राप्त नमूने सामान्य विवरणमात्र होंगे। आदर्श नमूने के आकार के निर्णय के लिए उन्नतोन्नत सांख्यिकीय विधियाँ है, जिनका उपयोग किया जा सकता है। प्रतिदर्श मानक विचलन के ज्ञान से मानक त्रुटि की गणना की जा सकती है, जिसके आधार पर नमूने-योग्य इकाइयों की संख्या को निश्चित किया जा सकता है।

प्रस्तुत अधिकरण के चार अध्यायों में सैद्धान्तिक चर्चा की अपेक्षा व्यावहारिक समीक्षा है, जिसके माध्यम से समुदाय, सूचक, व सामग्री की कार्य-पद्धति को समझा जा सकता है।

(ग) प्रकाशित ।
(घ) क्षेत्र से सम्बद्ध मानचित्रादि ।
(ङ) प्रवासेतिहास ।
(च) विविध जनगणना-प्रतिवेदन ।
(छ) स्थानवृत्त ।
(ज) ऐतिहासिक विवरण ।
(झ) समाजार्थिक विश्लेषण ।
(ञ) भौगोलिक अध्ययन ।
(ट) यातायात की सघनता ।
(ठ) विविध ज्ञातव्य बातें ।

शब्द-भूगोल के अन्तर्गत शब्द-मानचित्रावलीय सर्वेक्षण सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है तथा आज यह स्वीकार किया जाता है कि सामग्री को संरचनात्मक स्वरूप देने के लिए प्रारम्भिक सर्वेक्षण आवश्यक है ।

सर्वेक्षणों के माध्यम से सूचना-संग्रह में प्रायः यह लोभ बना रहता है कि अधिकाधिक सामग्री एकत्र कर ली जाए। किन्तु एक तो पूर्ण सूचना का संग्रह कठिन कार्य होता है, दूसरे अनुपयोगी व अधिक सामग्री का सकलन निरर्थक है। समय और शक्ति की सीमाओं को देखते हुए ऐसा करना सम्भव भी नहीं प्रतीत होता । ऐसी स्थिति में किसी ऐसे विकल्प की आवश्यकता है, जिससे सहज रीति से उस क्षेत्र की विशिष्ट शब्दावली का सग्रह हो सके तथा उस संग्रह-कार्य में किसी भी प्रकार का पूर्वाग्रह न हो ।

इस प्रकार की सहज रीति सम्प्रति एकमात्र प्रतिचयन-विधि है । इस आधार पर सम्पूर्ण जनसंख्या की प्रतिनिधि स्वरूप सामग्री प्राप्त की जा सकती है । प्रतिचयन की प्रमुख विधियाँ अधस्तन हैं—

(क) क्रमबद्ध प्रतिचयन
(ख) याच्छिक प्रतिचयन
(ग) स्तरित प्रतिचयन

इनमें आवश्यकतानुसार किसी एक विधि का उपयोग किया जा सकता है। इनमें से यदि एक बार प्रतिचयन के नमूनों को चुन लिया गया, तो नमूने के आकार में ह्रास या वृद्धि सम्भव है । आदर्शरूप में नमूने को यथासम्भव छोटा होना चाहिए, किन्तु वह इतना छोटा न हो कि प्रतिनिधि स्वरूप विश्वसनीय सूचनाओं का सग्रह न हो पाये ।

सर्वेक्षण में समय व शक्ति पर ध्यान रखने के साथ यह भी विस्मृत नहीं

किया जाना चाहिए कि प्रामाणिक व विश्वसनीयता उसकी आत्मा है, अन्यथा प्राप्त नमूने सामान्य विवरणमात्र होंगे। आदर्श नमूने के आकार के निर्णय के लिए उन्नतोन्नत सांख्यिकीय विधियाँ है, जिनका उपयोग किया जा सकता है। प्रतिदर्श मानक विचलन के ज्ञान से मानक त्रुटि की गणना की जा सकती है, जिसके आधार पर नमूने-योग्य इकाइयों की संख्या को निश्चित किया जा सकता है।

प्रस्तुत अधिकरण के चार अध्यायों में सैद्धान्तिक चर्चा की अपेक्षा व्यावहारिक समीक्षा है, जिसके माध्यम से समुदाय, सूचक, व सामग्री की कार्य-पद्धति को समझा जा सकता है।

15

भाषिकेतर भूगोल

15.1. शब्द-भूगोल भाषाविज्ञान की एक आनुप्रयोगिक विधा है। उसका लक्ष्य एकमात्र भाषिक विश्लेषण नहीं है, अपितु भाषिकेतर सन्दर्भों की व्याख्या भी है। ऐसी स्थिति में किसी भी शब्द-भूगोलवेत्ता के लिए यह आवश्यक है कि अध्येय क्षेत्र के मानचित्रावलीय सर्वेक्षण के पूर्व वह वहाँ के भूगोल, इतिहास, प्रशासन, समाज, शिक्षा, अर्थव्यवस्था, आदि के सम्बन्ध में विस्तृत सूचना जुटा ले; जिनके आधार पर मानचित्रावली के समभाषांशों व समभाषांश-रेखाओं का भाषिकेतर विश्लेषण सहसम्बद्धता की विधियों के आधार पर अधिक वैज्ञानिक व व्यावहारिक बन सके।

चूँकि प्रस्तुत प्रबन्ध में 'बघेलखंड का शब्द-भूगोल' और बघेलखंड की शब्द-मानचित्रावली से ही उदाहरण दिए गए हैं, अतएव यहाँ बघेलखंड की संक्षिप्त भाषिकेतर भूमिका प्रस्तुत है।

15.2. भारत वर्ष के मध्य भाग में विन्ध्य की कैमोर और मेकल शृंखलाओं की चोटियों, घाटियों, और उपत्यकाओं के बीच स्थित बघेलखंड प्रकृति देवी की क्रीड़ा-भूमि सा प्रतीत होता है। जिसके मस्तक पर पुण्यसलिला तमसा का मन्थर प्रवाह चल रहा है, जिसके शीर्ष भाग पर पुरवा, चचाई, क्योटी, और बहुती के जलप्रपात घोषनाद कर रहे हैं, जिसके दक्षिण में पतितपावनी नर्मदा और सोनभद्र का उद्गम है और एक विपरीत दिशा में जोहिला अपने उर्मिल प्रवाह से पर्वत-मालाओं को विदीर्ण करती हुई घाटियों में बल खाती हुई चली जा रही है, जहाँ पर सोनमूड़ा, कपिलधारा, दूधधारा जैसे जलप्रपात लाखों यात्रियों का चित्त-रंजन करते हैं, जिसके पूर्वी भाग के देवसर सिंगरौली के गहन वन्यप्रदेशों में भयावह वन्य पशुओं का आवास है, जहाँ पर भारतीय संस्कृति की प्रतीक रावण-माड़ा

की तपोभूमि की अनेक गुफाओं और पहाड़ियों की चोटियों से झरनों के उर्मिल प्रवाह की वेगवती धाराएँ व करमुआ के कदली वन अनायास अपनी ओर चित्त को खींच लेते हैं, जिसके पश्चिमी घाट से पन्ना और अजयगढ़ की नयनाभिराम घाटियों के दृश्य प्रारम्भ होते हैं, जिसके एक छोर से दूसरे छोर तक सोहागी, छुहिया, गोरसरी, कोहरारघोह, हरदीघाट, किरर, करैंगरा, बदरापानी, उमरगोहान, और जालेश्वर के संकीर्ण गिरिपथ उत्तर और दक्षिण के यात्रियों की साहसिक कथाएँ करते हैं'[1]—बघेलखंड संज्ञक यह भूमि सम्प्रति मध्यप्रदेश के अन्तर्गत है।

15.3. मध्य प्रदेश के रीवा संभाग के सतना, रीवा, सीधी, और शहडोल जिले प्रशासकीय दृष्टि से बघेलखंड कहे जाते हैं। बघेलखंड का यह प्रशासकीय रूप 1862 ई० में निश्चित हुआ, जब कि यह भूभाग ब्रिटिश-शासनकाल में 'सेन्ट्रल इंडिया एजेन्सी' के अन्तर्गत आया। 'बघेलखंड' शब्द का प्रचलन इसके पूर्व भी था, किन्तु इस व्यापक अर्थ में उसका प्रयोग नहीं होता था।

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि इस क्षेत्र के लिए हमें अन्य नाम प्राप्त होते हैं, जो विभिन्न कालों में प्रचलित थे। ध्यान देने की बात यह है कि ऐतिहासिक क्रम में ये नाम इस भूभाग पर शासन करने वाले किसी वंश से प्रसूत हैं अथवा इसके अंचल विशेष के नाम से। परिवर्तित युगों के साथ ये नाम स्थायी न हो सके और उनका प्रयोग समाप्त हो गया। इन नामों के सम्बन्ध में विशेष ज्ञातव्य यह भी है कि इनमें से कोई भी उस समूचे भूभाग का बोध नहीं कराता, जितने को बघेलखंड के नाम से जाना जाता है।

बघेलखंड 22°3′ व 25°12′ उत्तरी आक्षांश तथा 80°21′ व 83°51′ पूर्वी देशांश के मध्य स्थित है। उत्तर से दक्षिण की लम्बाई 165 मील तथा पूर्व से पश्चिम यह 140 मील में व्याप्त है। इस पूरे भाग का क्षेत्रफल लगभग 14258 वर्ग मील है।

इसके उत्तर में बांदा, इलाहाबाद, तथा मिर्ज़ापुर, पूर्व में मिर्ज़ापुर तथा सरगुजा; दक्षिण में मंडला और बिलासपुर; एवं पश्चिम में जबलपुर और पन्ना जिले हैं।

15.4. बघेलखंड मुख्यत. पर्वतों, नदियों, और वनों का क्षेत्र है। इसके मध्य भाग में कैमोर पर्वतशृङ्खला विस्तृत है, जिससे बघेलखंड को दो प्रमुख प्राकृतिक विभागों में विभक्त किया जा सकता है—

(क) कैमोर पर्वत का उत्तरी भाग या उत्तर-पूर्वी बघेलखंड।

(ख) कैमोर पर्वत का दक्षिणी भाग या दक्षिण-पश्चिमी बघेलखंड कैमोर पर्वत के उत्तरी भाग के तरिहार तथा उपरिहार, व दक्षिण भाग के डहार क्षेत्र तथा पहार क्षेत्र नाम उपविभाग किये जाते हैं।

15.5. यह खंड ऐतिहासिक दृष्टि से म०त्वपूर्ण तथा गरिमामय रहा है। अगस्त्य से लेकर अब तक सैकडो सक्रातियाँ इस क्षेत्र से होकर निकल गई है। अगणित जल वृष्टियो की स्मृतियाँ आम्रकूट के सानुओ पर काली काई के अमिट अक्षरो में अंकित हुई हैं और असख्य अलक्षित वसन्तो की वनश्री सूख कर मुरझा गई है। राम का वनाभिगमन, महाभारत के वीरयोद्धा भीमसेन का अभियान, पुष्यमित्र की दिग्विजय, अशोक की धर्मविजय, कनिष्क की धर्मयात्रा, कलचुरियो का आधिपत्य, चन्देलो का पराभव, तथा गोडो, सेंगरो, और बघेलो के प्रभुत्व-सन्देशो की कहानी आज भी इस प्रदेश के पत्थर पत्थर पर लिखित है।

15.6 बघेलखंड में गुप्तसाम्राज्य को स्थापना से लेकर अंग्रेजी-शासन के प्रादुर्भाव तक प्रचलित प्रशासनिक परम्परा का राज या अठारह गढ, गढ़ या चौरासी या परगना, तालुक, व ग्राम के रूप में एक उत्तराधार क्रम था। अंग्रेजो के आगमन के पश्चात् प्रशासन का स्वरूप परिवर्तित हुआ। स्वातंत्र्योदय के पश्चात् पुन अनेकविध परिवर्तन हुए।

15.7. बघेलखडी लोकजीवन और संस्कृति का सही परिचय हमे किसी ठेठ बघेलखडी गाँव को ही देखने से प्राप्त हो सकता है। यहाँ के अधिकतर घर 'खपडेल' व घासफूस की छनो से आच्छादित हैं। गाँवो में वर्गानुसार बस्तियाँ बसी है। प्रत्येक गाँव में एक मन्दिर अवश्य होता है। गाँव के मुखिया या 'ठाकुर' के घर के सामने चौपाल होती है, जो एक प्रकार से सार्वजनिक सास्कृतिक केन्द्र है।

इस क्षेत्र के लोग बड़े परिश्रमी तथा कर्मठ है, किंतु फसल से अतिरिक्त दिनों में कृषि के अतिरिक्त कोई कार्य न होने पर निठल्लू बैठे रहते है।

15.8. बघेलखंड में आर्य तथा आदिम जातियो के लोगो की अधिकता है। मुसलमानो ईसाइयो, और अन्य जातियो के लोगो की विशेष अल्पता है। शिक्षा की कमी और नवीन सभ्यता से सम्पर्कहीनता के कारण प्राय. सभी वर्गों में अनेक रूढियाँ मिलती है।

जातियो मे भेद प्रभेद अत्यधिक मात्रा मे विद्यमान है, अतएव पारस्परिक संघर्ष और वैमनस्य स्वाभाविक है।

15.9. बघेलखंड के लोगो की आर्थिक स्थिति अत्यन्त दयनीय है। यहाँ के अस्सी प्रतिशत श्रमजीवी कृषि मे सलग्न हैं, किंतु वे कुल बारह प्रतिशत भूमि

पर ही खेती करते हैं। कृषि-कार्य में सिचाई की सुविधा उपलब्ध न होने के कारण वे भाग्यवादी है। तथा रिक्त समय को पारस्परिक सघर्ष में ही गँवा देते हैं।

15.10. बघेलखंड के ग्रामो को नवजागृति का सन्देश देने में सामुदायिक विकास-योजना का इनकी असफलता के बावजूद महत्त्वपूर्ण योगदान है। 1954 ई० तक बघेलखंड का सम्पूर्ण क्षेत्र इसके अन्तर्गत आ गया था तथा यह पहला था, जब इस क्षेत्र के गाँव-गाँव में विकास योजनाओ को प्रारम्भ करने का कार्य किया गया। ग्राम-पंचायतो, विधानसभा तथा लोकसभा के चुनावो के कारण अब यहाँ के निवासियो की कूपमंडकता के साथ निरक्षरता भी समाप्त हो रही है तथा हिन्दी के प्रति उनका अनुराग बढ़ रहा है।

15.11. प्राचीन काल में उत्तर और दक्षिण भारत के मध्य यातायात और व्यापार का एक माध्यम बघेलखड भी था। वाराणसी व उत्तर भारत के अन्य धार्मिक स्थलों को प्रति वर्ष सैकडो यात्री इसी भूमि से ही होकर जाते थे। उस समय रेलमार्ग व राजमार्ग के अभाव में लोग बैलगाड़ियो, बैलो, या टट्टुओ पर सामान लाद कर गाँव तक पहुँचाते थे। इस कार्य में बंजारा नामक जाति अग्रणी थी, जिसे बघेलखड मे 'लमाना' कहा जाता है। लमाना लोग बैलों से व्यापार करते थे। वे जिस पथ से निकलते थे, वह प्राय. यात्री-मार्ग बन जाता था। लमानो का सबसे बड़ा व्यापारिक मार्ग मिर्ज़ापुर से नागपुर को जाता था। *अठारहवी शताब्दी के अन्तिम दशक में T- Motte तथा* Captain J. T. Blunt नामक दो यूरोपीय यात्रियो ने उपर्युक्त मार्ग से ही यात्रा की थी।

लामाना लोगो द्वारा प्रशस्त और ब्रिटिश यात्रियो द्वारा स्वीकृत यह मार्ग अंग्रेजी-शासनकाल में 'ग्रेट डकन रोड' के नाम से प्रसिद्ध हुआ। आज इसे 'नेशनल हाई वे' के नाम से जाना जाता है। आज बस यातायात की दृष्टि से बघेलखड को अकिंचन नही कहा जा सकता, किंतु यहाँ रेलमार्ग सीमित है, जिसके कारण यहाँ का आर्थिक विकास अवरुद्ध है।

16

प्रतिचयनात्मक सर्वेक्षण की कार्य-पद्धति

16.1. बघेलखंड की शब्द-मानचित्रावली' के लिए बघेलखंड का बोली-सर्वेक्षण दीर्घकालिक शृंखलाबद्ध विविध चरणों में पूरा किया गया था। इस सर्वेक्षण में बोली-सर्वेक्षण के लिए स्वीकृत पूर्ववर्ती पद्धतियों के दोषों से बचने का प्रयास रहा था। एतदर्थ प्रतिचयन-विधि के माध्यम से अधिकाधिक प्रामाणिकता और विश्वसनीयता प्राप्त की गई थी। इस प्रकार समुदाय, सूचक, व सामग्री की प्रतिचयनात्मकता की दृष्टि से बोली-सर्वेक्षण को अधोलिखित दो भागों में सम्पादित किया गया था :—

(क) प्रारम्भिक सर्वेक्षण या प्रतिचयनात्मक सर्वेक्षण

(ख) व्यापक सर्वेक्षण या संरचनात्मक सर्वेक्षण

16.2. किसी व्यापक सर्वेक्षण को अधिक प्रामाणिक बनाने के लिए आज एक मात्र निदान प्रारम्भिक सर्वेक्षण को ही माना जाता है। प्रारम्भिक सर्वेक्षण के माध्यम से जहाँ एक ओर विश्वसनीय सामग्री का संकलन किया जा सकता है, वहीं दूसरी ओर उससे शब्द-भूगोल के लिए संरचनात्मक सामग्री भी उपलब्ध की जा सकती है। इसी तथ्य को ध्यान में रख कर मैंने बघेलखंड के प्रारम्भिक सर्वेक्षण की योजना बनाई थी। इस योजना की कार्यपद्धति का विवरण अग्रिम पृष्ठों में है।

16.3. प्रारम्भिक सर्वेक्षण के लिए बघेलखंड के परिप्रश्न के विविध स्थानों का चुनाव याहच्छिक प्रतिचयन-विधि से किया गया था। इस प्रतिदर्श का आधार 1951 ई० में रीवा से प्रकाशित 'बघेलखंड की ग्रामसूची' थी; जिससे प्रत्येक 250 गाँवों के पश्चात् एक गाँव को सर्वेक्षण-हेतु निश्चित किया गया था। इसमें पूर्वाग्रह का कोई स्थान न था। उस सूची के आधार पर जिन समुदायों का सर्वे-

किया गया था, उनमें तीन नगर तथा इक्तीस गाँव सम्मिलित थे। यादृच्छिक प्रतिदर्श के आधार पर चुने गए स्थान बघेलखंड की पन्द्रह तहसीलों में से नौ तहसीलों तक ही सीमित थे। इनमें रीवा जिले को छोड़ कर प्रत्येक जिले के एक-एक नगर को भी स्थान मिल गया था।

16.4. शब्द-भूगोल के अन्वेषण का परिणाम इस बात पर आधारित होता है कि प्रश्नावली कैसे तैयार की गई है? बोली की ध्वनिप्रक्रिया, रूपप्रक्रिया, शब्दप्रक्रिया, व अर्थप्रक्रिया की आवश्यक विशेषताओं को बतलाने वाले उदाहरण वहाँ विशेष सावधानी के साथ खोजे गये थे।

अध्ययन-योग्य भाषिकेतर समस्याओं को पहले से ही निश्चित कर लेने पर अनुसन्धाता को उस समय कठिनाई आती है, जब वह भौतिक संस्कृति का अध्ययन करता है। उदाहरणार्थ, कृषि से सम्बद्ध बातें कुछ विशिष्ट क्षेत्र की ही विशेषताएँ हो सकती हैं व कभी एक दूसरे क्षेत्र में इनका अभाव भी महत्त्वपूर्ण सिद्ध हो सकता है। इस प्रकार की वस्तुओं का अध्ययन शब्दकोष के अध्ययन की अपेक्षा भिन्न होता है। यद्यपि यह शब्द-भूगोल का कार्य नहीं है, किन्तु इस अनुसंधान में उसका कार्य महत्त्वपूर्ण हो सकता है। यदि शब्द भूगोलवेत्ता भौतिक संस्कृति की उपेक्षा कर रहा है—उन्हें गौण समझकर त्याग रहा है—तो उसे शीघ्र ही ऐसा प्रतीत होगा कि वह अपनी भाषिक उपलब्धि को विषम रिक्तता से भर रहा है।

यह ध्यातव्य है कि यदि किन्हीं दो क्षेत्रों में एक वस्तु के दो नाम हैं, तो इसका यह अर्थ नहीं है कि वस्तु आकार या प्रकार में अलग ढङ्ग की ही होगी या इसका कार्य पृथक् होगा। इसके विपरीत, यदि दो विभिन्न क्षेत्रों में एक निश्चित नाम मिलता है, तो यह भी अर्थ नहीं है कि वह दोनों स्थानों में एक ही वस्तु का बोध कराए। तथापि अनेक कारणों से वस्तुओं के नाम और उन नामों का वितरण भौतिक संस्कृति के विद्यार्थी के लिए उपयोगी होता है। नामों के वितरण का एक नमूना (व्युत्पत्ति के आधार पर) कई उदाहरणों में यह संकेत दे सकता है कि जिन वस्तुओं का बोधक वह नाम है, उनका खचित भाव क्या है? ऐसे उदाहरणों में भाषिक प्रमाणों की व्याख्या भाषिकेतर पृष्ठभूमि में की जानी चाहिए।

भाषिक और भाषिकेतर विषयों के परस्पर सम्बन्ध की प्रगाढ़ता को भौतिक संस्कृति मनमोहक ढङ्ग से प्रस्तुत करती है। एक ओर भौतिक संस्कृति के उपादानों के वितरण व प्रमुखता की समस्या होती है, तो दूसरी ओर भौतिक संस्कृति के नामों की प्रमुखता व उनके वितरण का प्रश्न होता है। एक का अध्ययन

दूसरे की सहायता के बिना नहीं किया जा सकता। इतना होते हुए भी कुछ शब्द-भूगोलवेत्ता एकान्त कार्य करने के अभ्यस्त है और इस प्रकार उनके परिणाम अप्रामाणिक सिद्ध होते है। उदाहरणार्थ, किसी ध्वनिकीय विश्लेषण में अर्थ की उपेक्षा की जा सकती है, जबकि शब्दो के अध्ययन में वैसा सम्भव नहीं है।''

अतएव प्रारम्भिक सर्वेक्षण की प्रश्नावली को बनाते समय जाति-भाषिक तथ्यो पर विशेष ध्यान दिया गया था। इस प्रकार एक 'मिश्र प्रश्नावली' बनाई गई थी जिसमें 525 इकाइयाँ थी।

इस प्रश्नावली की रचना निर्णयात्मक प्रतिचयन-विधि से की गई थी, जिसमें सामग्री का चयन विषय के अनुसार किया गया था। क्षेत्र-कार्यपुस्तिका में कुल 29 विषयो को शामिल किया गया था। इन विषयो का निर्णय सर्वप्रथम दो व्यक्तियो ने किया था, जिनमें एक बघेलखंडी मातृभाषी तथा दूसरे कौरवी-मातृभाषी थे। ये दोनो मातृभाषी क्रमशः पूर्वी हिन्दी और पश्चिमी हिन्दी के प्रतिनिधि है। इससे यह निर्णय सहज ही लिया जा सकता था कि कौन से शब्द केवल बघेलखंडी-क्षेत्र में ही प्रचलित हैं।

प्रारम्भिक प्रश्नावली के परीक्षा-प्रश्न व उनमें निहित परीक्षा-शब्द अधोलिखित विषयो में वर्गबद्ध थे—

(क) दिनों के नाम
(ख) वर्ष के महीनों की सूची
(ग) उत्सव व प्रकृति
(घ) रिश्ते-नाते व विकृतियाँ
(ङ) पेशेवर जातियाँ
(च) वस्त्र
(छ) आभूषण
(ज) जीवजन्तु व पशु-पक्षी
(झ) शरीरांग
(ञ) निषिद्ध
(ट) खाद्यपदार्थ एवं पेय
(ठ) पेड़-पौधे व फल-फूल
(ड) कृषि
(ढ) घरेलू उपयोग की वस्तुएँ
(ण) रसोईघर
(त) मकान आदि

(थ) गृहस्थी के सम्बद्ध
(द) अन्य
(ध) उच्चारणात्मक शब्द
(न) विशेषण
(प) क्रिया विशेषण
(फ) अव्यय
(ब) सर्वनामिक विशेषण
(भ) संख्यावचक विशेषण
(म) सर्वनाम-पद
(य) लिङ्ग-विचार
(र) क्रिया रूप
(ल) वाक्य
(व) अर्थ-पद

समान विषय में सूचकों की रुचि या ध्यान रखते हुए उपर्युक्त विषय-क्रम स्वीकार किया गया था। इस प्रश्नावली का नियोजन ध्वनिप्रक्रिया, रूपप्रक्रिया, शब्दप्रक्रिया, व अर्थप्रक्रिया को ध्यान में रख कर किया गया था। वर्ग (ध) में उच्चारणात्मक इकाइयों के अन्तर्गत ऐसे शब्दो को निबद्ध किया गया था, जो श़, फ़, ज़, ख़, ग़, आदि ध्वनियो के प्रयोग से सम्बद्ध है। यद्यपि मेरे द्वारा किए गए पूर्व अध्ययन Contrastive Distribution of Bagheli Phonemes में ये ध्वनियाँ उपलब्ध नहीं हुई थी, तथापि क्षेत्र की व्यापकता को ध्यान में रखते हुए इस सम्बन्ध में एक बार पुन. परीक्षा कर लेना आवश्यक प्रतीत हुआ। परीक्षा-शब्दो के अन्तर्गत ऐसी वस्तुओं को ही स्थान दिया गया था, जिनसे बघेलखंड के सामान्य निवासी परिचित हैं इसके साथ ही नूतन अभिव्यक्तियो की भी उपेक्षा नही की गई। रूपो के चयन के समय एक ओर जहाँ उनके सन्दर्भ-रहित एकल प्रयोग को ध्यान में रखा गया था, वहाँ उनको यथाप्रसंग प्रस्तुत करने की दृष्टि से वाक्यों में भी निबद्ध किया गया था। यद्यपि अर्थप्रक्रियात्मक अनेक शब्द परीक्षा-शब्दो में वर्गबद्ध थे, तथापि अर्थपरिवर्तन के प्रक्रम को समझने के लिए उनका एक पृथक् वर्ग भी बनाया गया था।

16.5. स्थानों के चुनाव के समान सूचको का भी चुनाव प्रतिचयन की यदृच्छा-विधि से किया गया था। इसके लिए प्रत्येक स्थान मे वहाँ के निवासियो से दस ऐसे व्यक्तियो के नामो को पूछा गया था, जो बघेलखंडी मातृभाषी हो। इन दस नामो में से सातवें नाम वाले व्यक्ति को सूचक के रूप मे नियुक्त कर लिया जाता था।

इन सूचको को इस प्रकार वर्गबद्ध किया जा सकता है

सूचको की वर्गबद्ध सारणी

जात्यनुसार	ब्राह्मण	9
	क्षत्रिय	1
	वैश्य	6
	हरिजन	5
	आदिवासी	3
अवस्थानुसार	युवक .	9
	प्रौढ़	13
	वृद्ध	2
शिक्षानुसार	अशिक्षित	12
	माध्यमिक शाला तक शिक्षा	6
	उच्चतर माध्यमिक शाला	3
	उपाधि स्तर तक शिक्षा	3
व्यवसायानुसार	स्वतंत्र	9
	नौकरी	14
	दासवृत्ति	1
भाषाज्ञानानुसार	एक भाषी	13
	द्विभाषी	6
	बहुभाषी	5
यात्रानुसार	सीमित यात्रा	13
	व्यापक यात्रा	11

16.6. प्रारम्भिक मर्वेक्षण की सामग्री का संकलन-कार्य अक्टूबर 1967 ई० से *प्रारम्भ किया गया था तथा वह उसी वर्ष दिसम्बर में पूरा हुआ।*

16.7. सामग्री की प्राप्ति-हेतु जिन तकनीकों का प्रयोग किया जाता है, उनकी तुलना अपराध—विशेषज्ञों द्वारा अपराध के पूर्ण विवरण को जानने की तकनीकों से की जा सकती है। इस प्रकार कभी तो एक ही तकनीक लक्ष्य की प्राप्ति में सहायक हो सकती है और कभी अनेक तकनीकें भी पूर्ण नहीं कही जा सकती। इस प्रकार 525 इकाइयों वाली सामग्री को प्राप्त करने के लिए मैंने अधोलिखित तकनीकें अपनाई थी। इनका प्रयोग क्षेत्र व परिस्थिति के अनुसार भिन्न-भिन्न प्रकार से किया गया था—

(क) वार्तालाप की पद्धति

(ख) प्रश्नोत्तर-शैली

(ग) वस्तुसंकेत-विधि

(घ) चित्र-प्रदर्शन की विधि

(ङ) रिक्त अश की पूर्ति-विधि

(च) विविध क्रमों को गिनाने की पद्धति

(छ) मन में वस्तुओं का चित्र उपस्थित करने की पद्धति

परिप्रश्न-विधि में सूचक से सीधे या अनुवाद-प्रणाली से किसी प्रकार की सामग्री को प्राप्त करने की सहज रीति से सदैव बचा गया था तथा अभिप्रेत शब्द का नाम सूचक को कभी नहीं बताया गया।

सामग्री के सचय में जहाँ पूर्व नियोजित कार्य को पूरा किया गया था, वहाँ परवर्ती सर्वेक्षण के निमित्त बहुत-से सुझाव भी नोट किए गए थे।

16.8. प्रारम्भिक सर्वेक्षण की सामग्री को सर्वप्रथम तुलनीयता के लिए बड़े रजिस्टर में उतारा गया था व प्रत्येक शब्द की आवृत्ति गणना के पश्चात् उसे भाषिक विश्लेषण के निमित्त $5\frac{1}{2}'' \times 3\frac{1}{2}''$ के कार्डों में उतारा गया था। इस प्रकार प्रारम्भिक सर्वेक्षण की सामग्री को 12600 कार्डों में सम्पादित किया गया था।

17

प्रतिचयनात्मक सर्वेक्षण की समीक्षा व व्यापक सर्वेक्षण की कार्य-पद्धति

17.1. प्रारम्भिक सर्वेक्षण बघेलखण्ड के शब्द भूगोल के लिए कोई अन्तिम लक्ष्य न था, अपितु वह एक प्रतिचयनात्मक सर्वेक्षण था, जिसके अनुभवो और निष्कर्षों के आधार पर व्यापक सर्वेक्षण की परियोजना को क्रियान्वित किया गया था। यहाँ व्यापक सर्वेक्षण की कार्यविधि की सक्षिप्त चर्चा है तथा तुलना के लिए पूर्ववर्ती शब्द भूगोलवेत्ताओ की पर्गतिमूलक कसौटियो का भी उल्लेख किया गया है।

17 2. प्रतिचयनात्मक सर्वेक्षण में बघेलखड के बोली समुदायों का चयन याथच्छिक रीति से किया गया था, किन्तु प्रतिचयन की इस विधि में पूरे क्षेत्र की व्याप्ति नही हो पाई थी। अतएव व्यापक सर्वेक्षण की प्रगति में यह निश्चित किया गया कि समुदायो का चयन प्रतिनिधि—प्रतिचयन के माध्यम से किया जाय। इस प्रतिनिधि—प्रतिचयन में अधोलिखित कसौटियों को स्वीकार किया गया।

(क) बघेलखड के जिलो व तहसीलो के सभी मुख्यालय।

(ख) बघेलखड के सभी नगर।

(ग) प्रत्येक तहसील से कम से-कम दस समुदाय।

(घ) राजनैतिक सीमा बनाने वाले समुदाय।

(ङ) पचास प्रतिशत समुदाय मैदानी क्षेत्र के व पचास प्रतिशत पहाड़ी क्षेत्र के।

(च) नदियों के तट पर बसे हुए समुदाय।

(छ) प्राचीन मुख्यालयो व केन्द्रों वाले समुदाय।

(ज) रेलमार्ग व राजमार्ग के किनारे पर स्थित समुदाय।

(झ) सम्पर्करहित दूर बसे हुए समुदाय।

(ञ) सबसे अधिक व सबसे कम जनसंख्या वाले समुदाय।

(ट) ऐसे समुदाय, जहाँ केवल हरिजन और आदिवासी जातियाँ रहती है।

उपर्युक्त कसौटियो के आधार पर बघेलखंड के कुल 7756 नगरो व गाँवो में से केवल 200 समुदायो को ही व्यापक सर्वेक्षण के लिए चुना गया, जिनमें 11 नगर तथा 189 गाँव है।

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि Gillieron ने अपने ALF के लिए प्रश्नप्रश्न के स्थलो का चुनाव यान्त्रिक रूप मे ज्यामितिक विधि से किया था। परिणामत. Edmont को अपनी यात्रा के दौरान मूल योजना में कुछ संशोधन भी करना पड़ा था। अन्वेषक मे जिस वस्तुनिष्ठता की आवश्यकता है, उसके अनुसार *Edmont का यह कार्य उपयुक्त नही कहा जा सकता।*

प्रारम्भिक सर्वेक्षण के अनुभवो के आधार पर मैने अध्ययन-योग्य स्थानो का चुनाव पहले से ही कर लिया था तथा क्षेत्र में जा कर पूर्व-निर्धारित स्थानो को कभी बदला नही गया, भले ही उस स्थान मे सूचना प्राप्त करने में अनेको मुसीबतें आई। स्थानों के चुनाव में उपर्युक्त कसौटियो में जातिभाषिक सिद्धान्त को कभी विस्मृत नही किया गया। क्षेत्र के विश्वसनीय पूर्व ज्ञान के आधार पर वहाँ के हरिजनो व आदिवासियो की स्थिति के अनुसार ही लिया गया, जहाँ हरिजन या आदिवासी जनता का निवास नही है। इसका निश्चयीकरण जनगणना-प्रतिवेदनों व प्रारम्भिक सर्वेक्षण में लोगों की सूचनाओ पर था। समुदायो के चयन मे बघेलखड के देशी राज्यो के इतिहास भी सहायक रहे है।

17.2.1. बघेलखंडी बोली के अन्तर्गत उपलब्ध भेद समग्र रूप से क्षेत्रीय ही नही कहे जा सकते, क्योंकि अनुभव से यह सिद्ध है कि एक ही स्थान के लोग भी एक समान नही बोलते। यह समस्या यहाँ इसलिए भी खडी हुई है कि आदर्श भाषा हिन्दी का प्रयोग लगभग प्रत्येक क्षेत्र में कुछ व्यक्ति निश्चित उद्देश्य से करते है। स्वतंत्रता-प्राप्ति के पश्चात् बघेलखंड में हिन्दी का प्रयोग दिनो दिन बढ रहा है। यह विद्यालयो में शिक्षा के माध्यम के रूप में प्रयुक्त की जाती है, शासकीय कर्मचारी इसका व्यवहार करते है, यह पुस्तको व समाचारपत्रो में पढी जाती है, व्याख्यानो, रेडियो, व चलचित्रो मे सुनी जाती है, तथा तार व पत्राचार में इसका व्यवहार होता है।

इतना होते हुए भी बघेलखंड के अलग-अलग क्षेत्रो के निवासियों की बघेलखडी में क्षेत्रगत प्रभाव बना हुआ है। यदि हिन्दी ने बघेलखडी को प्रभावित किया

है, तो बघेलखंडी से भी यहाँ की हिन्दी प्रभावित हुई है। उच्चारण में यह प्रवृत्ति विशेष रूप से परिलक्षित होती है।

इस प्रकार यहाँ के समुदायों में एक जटिल भाषिक स्थिति विद्यमान है, क्योंकि समुदाय के सदस्यों में उच्चारण व ध्वन्येतर बातों तथा बातचीत के तौर-तरीकों में अत्यधिक भिन्नता मिलती है। इसके अतिरिक्त बोली के आर्द रूपों का प्रयोग करने वाले लोग भी हैं, जो बाहर के प्रभाव से अछूते हैं तथा ऐसे भी लोग हैं, जिनकी बोली में क्षेत्रीय भिन्नता बिलकुल ही नहीं मिलती है। इन दोनों छोरों के मध्य ऐसी अनेक मध्यवर्तिनी बोलियाँ हैं, जिन पर कुछ लोगों का (एक या एकाधिक बोलियों पर) अधिकार है तथा प्रत्येक का प्रयोग यथावसर किया जाता है।

इस तथ्य को सामाजिक नृतत्वशास्त्र (समाजशास्त्र) तथा शब्द भूगोल की दृष्टि से महत्वपूर्ण मानना चाहिए। यहाँ के अनेक समुदायों में बोलियों का एक जाल है तथा वे एक-दूसरे को प्रभावित कर रही हैं।

इन बातों को ध्यान में रखते हुए सूचकों के चुनाव में विशेष सावधानी बरती गई है।

17.3. प्रारम्भिक सर्वेक्षण में सूचकों का चयन यादृच्छिक विधि से किया जाने के कारण जाति, अवस्था, शिक्षा व्यवसाय, भाषाज्ञान, व बाहरी सम्पर्क के आधार पर उनमें अनेकरूपता थी।

बघेलखंड की जनता में आज भी अपने को जाति के आधार पर परिचित कराने की परम्परा है तथा ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य हरिजन, व आदिवासियों की सामाजिक स्थिति में स्वतन्त्रता प्राप्ति के कई वर्षों के पश्चात् भी कोई उल्लेखनीय परिवर्तन नहीं आया है। इन जातियों में सामाजिक स्तर के कारण अनेक जाति-बोलियाँ बन गई हैं, जिनकी चर्चा 'बघेलखंड का शब्द भूगोल' के प्रथम खण्ड (भाग दो) में है।

प्रारम्भिक सर्वेक्षण की सामग्री के आधार पर इन जातियों की बोलीगत भिन्नता को मोटे तौर पर दो उपवर्गों में विभाजित किया जा सकता है—

(क) प्रवर लोगों की बोली—इसके अन्तर्गत ब्राह्मण, व वैश्य, आदि की बोली आती है।

(ख) अवर लोगों की बोली—इसके अन्तर्गत हरिजन व आदिवासियों की बोली परिगणित की जा सकती है।

प्रथम वर्ग विदेशी तत्त्वों के आदान के साथ द्वितीय वर्ग की प्रतिष्ठा का केन्द्र है। द्वितीय वर्ग में हरिजनों व आदिवासियों की बोली में भी स्पष्ट भेदक अन्तर

देखने को मिलते है। इन दोनो मे विशेष अन्तर यह है कि आदिवासियों की बोली में गोड़ी की अधस्तलता भी मिल जाती है, जब कि हरिजन किसी प्रकार के अधस्तल से दूर हैं। आदिवासियो की तुलना में हरिजनो का सम्पर्क प्रवरों से अधिक रहा है, अतएव उनकी बोली अपेक्षाकृत अधिक प्रभावित हुई है। इन दोनो ही वर्गों की भाषिक भिन्नता पर विचार भाषिकेतर विश्लेषण' नामक अधिकरण म किया गया है। यहाँ प्रारम्भिक सर्वेक्षण के असरार नामक समुदाय के प्रवर व अवर लोगों की बोली के कुछ भेदक शब्द-रूप दिए जा रहे है।

प्रवरो न अवरो की बोली में शब्दगत भिन्नता

प्रवर	अवर	
	हरिजन	आदिवासी
सकर्‌कन्द्	सक्‌ला	सक्‌ड़ा
रेंड़ी	र्‌यांड़ी	आंड़ी
ऊमर्	कमर्	हूमर्
अज्‌माइन्	अमाइन्	जमाइन्
गइआ	गउआ	गऊ
बह्‌नोई, जीजा	बह्‌नोई	भाटो
गूदी	ख्वड्‌री	खोड़ी
खीर्	खजाउर्	जाउर्

जाति के अतिरिक्त शिक्षा व व्यावहारिक शैली के आधार पर बघेलखड की समाजबोलियों को अधोलिखित प्रमुख वर्गों में निबद्ध किया जा सकता है—

बघेलखंड की समाजबोलियाँ

प्रवरों की बोली | अवरों की बोली

अवरों की बोली: हरिजनों की बोली | आदिवासियों की बोली

प्रवरों की बोली: ब्राह्मणों की बोली | क्षत्रियों की बोली | वैश्यों की बोली

ब्राह्मणों की बोली: शिक्षितों की बोली | अशिक्षितों की बोली

क्षत्रियों की बोली: शिक्षितों की बोली | अशिक्षितों की बोली

वैश्यों की बोली: शिक्षितों की बोली | अशिक्षितों की बोली

शिक्षितों की बोली: औपचारिक शैली | अनौपचारिक शैली
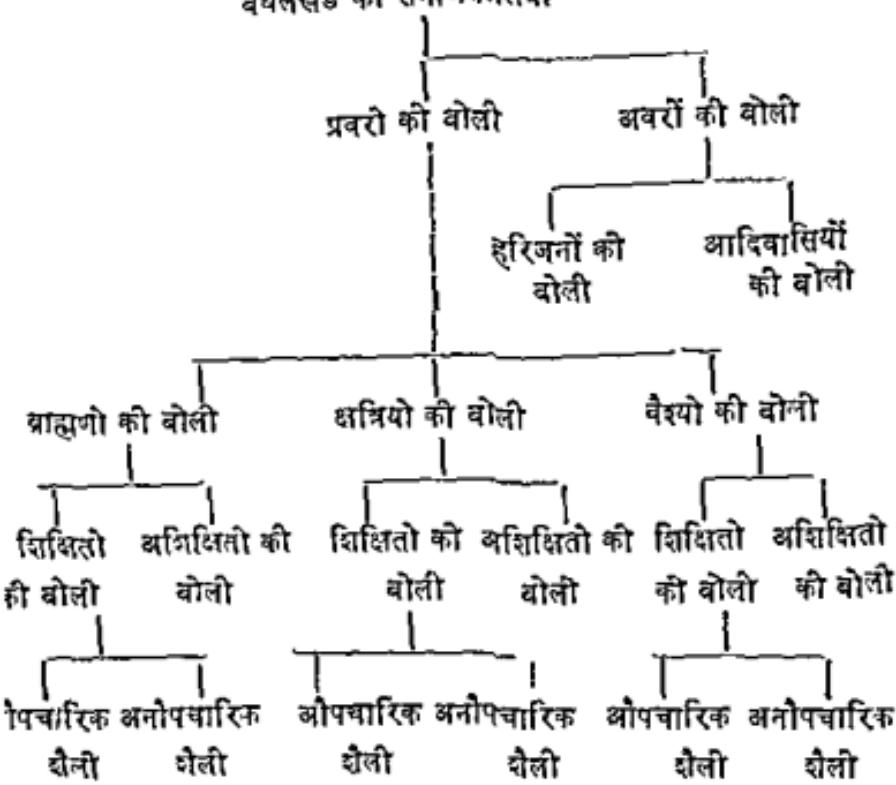
यहाँ प्रवरों की बोली को शिक्षा के आधार पर दो वर्गों मे बाँटा जा सकता है, किन्तु शिक्षा के अभाव मे अवरों की बोली को वैसा विभाजित नही किया जा सकता। शिक्षित लोगों की बोली में आदान अपेक्षाकृत अधिक है और अशिक्षितों की बोली में कम है। इसी प्रकार शिक्षितों में दो शैलियाँ प्रचलित हैं। वे घर में अशिक्षितों की (कुछ परिवर्तित) बघेलखंडी का प्रयोग करते है, किन्तु बाहर खड़ी बोली को ही उपयोग में लाते है। अशिक्षितों की बोली के विरोध में उनकी ध्वनिमीय सूची में क़्, ग़्, ख़्, फ़्, ज़्, आदि ध्वनियाँ सर्वथा नई हैं तथा अनेक व्यंजनगुच्छ भी अशिक्षितों के लिए अपरिचित हैं। अंग्रेजी, संस्कृत, व फारसी के शब्दों के प्रभाव भी शिक्षितों में जात्यनुसार मिलते हैं। यह एक रुचिकर बात ही कही जाएगी कि मेरे प्रारम्भिक सर्वेक्षण में शिक्षित ब्राह्मणों का झुकाव संस्कृत की ओर, *शिक्षित वैश्यों (विशेषकर कायस्थों) का झुकाव* फारसी की ओर, व क्षत्रियों का झुकाव अंग्रेजी की ओर देखने को मिला था।

शिक्षा व शैली के अलावा अन्य विविध कसौटियों के आधार पर प्रवर लोगों की बोली में अनेक भेदों की कल्पना की जा सकती है, किन्तु अवर लोगों की बोली में शिक्षा के अभाव, निर्धनता, तथा बाहरी सम्पर्क से रहित होने, आदि के कारण अपेक्षाकृत कम भिन्नता है।

उपर्युक्त विवेचन से सिद्ध होता है कि बघेलखंड में ब्राह्मण, क्षत्रिय, और वैश्य लोगो की बोली के नमूनो को प्रस्तुत करने के लिए प्रत्येक स्थान से कम-से-कम तीन (*शिक्षितो की औपचारिक शैली, शिक्षितों की अनौपचारिक शैली, एवं* अशिक्षितो की बोली) सूचकों को नियुक्त करना पडता। उसके बाद भी समाज-भाषिक लक्ष्य पूरा नही हो पाता। अतएव व्यापक सर्वेक्षण के लिए यह निश्चित कर लिया गया कि प्रवरो को सूचक के रूप में न चुना जाए तथा एकमात्र अवरो की बोली का ही अध्ययन हो, जिनमें समाज-भाषिक दृष्टि से अपेक्षाकृत कम *भिन्नता मिलती है। हरिजन व आदिवासी लोगो को सूचक बनाने के कुछ कारण* अधोलिखित हैं—

(क) इन जातियो का प्रवर जातियों की अपेक्षा आवागमन सीमित होता है, जिससे इनमें बाहरी प्रभाव अपेक्षाकृत कम होते हैं।

(ख) इन जातियों में शिक्षा का प्राय अभाव है, अतएव भाषागत शैक्षणिक भेद व *औपचारिक—अनौपचारिक शैलियाँ नही मिलती।*

(ग) ये जातियाँ प्राय एकभाषी है, जब कि प्रवरो में अनेक द्विभाषी भी हो चले है।

(घ) ये सभी जातियाँ प्राय निर्धन वर्ग की है, जब कि प्रवरो में कई आर्थिक स्तर मिलते है।

(ङ) इसके पूर्व छुटपुट अध्ययनो में लोगो ने बघेलखडी की जो सामग्री जुटाई थी, उसमें अवर वर्ग की बोली के नमूनो का नितान्त अभाव है।

(च) यहाँ की हरिजन जातियो को प्रवर आज भी अस्पृश्य मानते है तथा *आदिवासियो के साथ दासवत् व्यवहार करते है।*

यहाँ के अवर-वर्गों के सम्बन्ध मे कहा जा सकता है कि यहाँ के प्रत्येक समुदाय मे एक आर्ष बोलीरूप मिलना है, जो उस क्षेत्र में बोले जाने वाले अन्य बोलीरूपो की तुलना में बाहर के आधुनिक प्रभावो से अछूता है। इस प्रकार के बोलीरूपो का प्रयोग करने वाले लोगो को सुविधा की दृष्टि से **'प्रतिरोधनशील प्रकार'** के लोग कहा जा सकता है। ये लोग प्राय यह प्रमाण देते रहे है कि जिस स्थान का अन्वेषण किया जा रहा है, उस क्षेत्र में उनके जीवन का अधिकाश भाग बीता है या वे वही पर रहते आ रहे है। सामान्यतया ऐसे लोगो मे पौढ व वृद्ध पुरुष थे।

प्रौढ व वृद्ध लोगों के सम्बन्ध में कहा जा सकता है कि उन्होने कुछ हद तक अपनी युवावस्था के प्रचलित रूपो को स्थिर रखा है (इसमें चाहे जो कारण हो) तथा वे रूप कही कही इतने अल्पप्रयुक्त है कि उसी समुदाय के वयस्क लोगो

में प्रचलित नही है। प्रारम्भिक सर्वेक्षण के सूचको की सामग्री के आधार पर हम इस बात पर भी ध्यान दे सकते है कि लोग अपनी भाषिक प्रवृत्तियो को प्रौढावस्था की अपेक्षा युवावस्था मे ही अधिक परिवर्तित करते है और उस प्रकार का प्रभाव भावन की स्वतत्रता के साथ बढा है। ऐसे लोग जो स्वतत्रता के पूर्व ही प्रौढ हो गए थे, उनमें इसप्रकार के प्रयोग कम मिलते हैं, जितने कि उनके पुत्रो व पौत्रो में प्राप्त होते है। उन्होने बचपन स जो भाषा सीखी थी, वह प्राचीन रीति की भाषा से वे हटे भी नहीं।

ऐसे लोग जो युवक है, उनको बोली दशाब्दियो तक अध्ययन के लिए प्राप्त होती रहेगी। अतएव उन्हे व्यापक सर्वेक्षण म सम्मिलित नही किया गया। इसी प्रकार, सामाजिक मर्यादा तथा सभी क्षेत्रो म उनकी सरलता से न मिल पाना, आदि विविध कारणो से स्त्रियो को भी इस सर्वेक्षण में स्थान नही दिया गया है। इस व्यापक सर्वेक्षण के सभी सूचक हरिजन व आदि वासियो की प्रमुख उपजातियो (चमार, कुम्हार, बसोर, गोंड़, कोल, तथा बैगा) के प्रतिनिधि है।

17.3.1. अच्छे सूचकों की कसौटियो (अवस्था, लिंग, वातावरण से परिचय, आदि) पर विचार करते समय हमें दो विरोधी बातें पढने को मिलती है। एक ओर तो AIS के सम्पादक है, जिन्होने अपनी कार्य-विधि म विशेष सुधार किया है। वे यह समझते है कि क्षेत्रकर्मी को सूचक के चुनाव मे किसी विशेष नियम पर अडिग नही रहना चाहिए। इनका एक योग्य क्षेत्रकर्मी Scheurmier भी इस बात का समर्थन करता है। दूसरी ओर Sever Pop जैसे व्यक्ति कठोर नियमो के समर्थक है तथा सूचकों के चुनाव मे कम से कम सोलह कसौटियो को गिनाते हैं। उन्होने इनका उपयोग अपनी रूमानिया की मानचित्रावली (ALR) की सामग्री के लिए किया था। Pop के पूर्व या उनके पश्चात् इन नियमो या इनके समान नियमो पर दृढ रहने की अनिवार्यता का अनुभव नही किया गया है।

बघेलखड की शब्द—मानचित्रावली के लिए सूचको के निर्णयात्मक प्रतिचयन में अधोलिखित बातो पर ध्यान दिया गया है—

(क) किसी समुदाय में पहुँच कर सर्वप्रथम यह ज्ञात किया जाता था कि वहाँ हरिजन व आदिवासी जातियो में बहुलता किस जाति की है। जिस जाति की बहुलता होती थी, उसमें पुन यह देखा जाता था कि कौन सी उपजाति वाले लोगो की सख्या अधिक है और अन्त में उस उपजाति के प्रतिनिधिस्वरूप किसी एक व्यक्ति को सूचक बनाया जाता था।

(ख) इसके अतिरिक्त इस उपजाति में भी सूचक के चयन में निम्नांकित बातों पर ध्यान दिया जाता था, जिसकी विस्तृत जानकारी 'बघेलखंड का शब्द-मानचित्रावलीय सर्वेक्षण' नामक पुस्तक के चतुर्थ अध्याय में मिलेगी।

(I) अवस्था
(II) आजीविका
(III) शिक्षा
(IV) सामाजिक स्तर (प्रवरों का उनके प्रति रुख)
(V) सामाजिक सम्बन्ध
(VI) यात्रा
(VII) पूर्वजों का स्थान
(VIII) अन्य भाषाज्ञान

सूचक के चुनाव पर अदंतता की कमियों पर उतना ध्यान नहीं दिया गया, क्योंकि उपर्युक्त कसौटियों के आधार पर निश्चित बिना दाँत वाले सूचक भी कभी-कभी दाँत वालों की तुलना में अच्छे वक्ता प्रमाणित हुए हैं।

17.3.2. यहाँ यह निर्णय करना आवश्यक है कि क्या एक मात्र एक सूचक दो सूचकों से अच्छा होता है। शब्द भूगोल के अधिकतर कार्यों में एक ही सूचक के प्रत्युत्तर को निबद्ध किया गया है। Edmont को यदा-कदा दो या तीन सूचकों से प्रश्न करना पड़ता था तथा Griera ने अपनी कैटेलियन मानचित्रावली (ALC) के लिए भी यही रीति अपनाई थी। Scheurmier व अन्य इतावली-स्विस मानचित्रावलियों के संग्राहकों ने इसी प्रकार एक ही सूचक के चुनाव पर बल दिया था। Pellis की इतावली भाषा मानचित्रावली भी इसी क्रम में थी। किंतु Pop ने सम्पूर्ण क्षेत्र के परीक्षण के पश्चात् अनेक सूचकों की आवश्यकता को प्रतिपादित किया था। Bottiglioni ने अपनी कार्सिका-मानचित्रावली (ALEIC) के लिए केवल एक सूचक का उपयोग किया था, तथापि उन्होंने अन्य सूचकों के संशोधन को भी स्वीकार किया था। ऐसे लोग जो एक सूचक के नियम पर दृढ़ हैं (ALP, ALC, AIS), उन्हें समय-समय पर अन्य सूचकों की सहायता लेनी पड़ी है।

प्रस्तुत सर्वेक्षण (WAB) के लिए भी एक स्थान से एक ही सूचक वाले सिद्धान्त को स्वीकार किया गया है, तथापि 22 स्थानों पर दो दो सूचकों (प्रमुख व गौण) को भी साभिप्राय लिया गया है। इनमें गौण सूचक प्रवर जाति के हैं, जिनमें प्राध्यापक, शिक्षक, राजनैतिक नेता, व समाचारपत्र के सम्पादक भी सम्मिलित हैं। सुविस्तृत क्षेत्र की वाक्यरचनात्मक प्रवृत्तियों की यथार्थ जान-

कारी इनसे प्राप्त की गई थी तथा इनसे प्राप्त वाक्यों का प्रयोग प्रमुख सूचक से सामग्री लेते समय रिक्तास-पूर्ति-विधि में किया जाता था।

17.4. 'प्रारम्भिक सर्वेक्षण' के अन्तर्गत यह स्पष्ट किया जा चुका है कि शब्द भूगोल पर व्यापक सर्वेक्षण के पूर्व प्रतिचयनात्मक सर्वेक्षण की कार्य-पुस्तिका में 525 इकाइयो को सम्मिलित किया गया था। उस पुस्तिका को ले कर मैंने चौबीस सूचकोंका 'इंटरव्यू' लिया था। उनसे प्राप्त सूचनाओं के आधार पर 'व्यापक सर्वेक्षण' की कार्य-पुस्तिका की रचना की गई थी।

प्रतिचयन विशेषज्ञों की भाँति अब भाषाविज्ञानी भी यह स्वीकार करने लगे है कि सम्पूर्ण सूचना का सकलन कदापि सम्भव नहीं है तथा इसीलिए एक परम्परा बन गई है कि आंशिक रूप ही ग्रहण किया जाए तथा प्रतिनिधि-प्रतिचयन के माध्यम से सही निष्कर्षों तक पहुँचा जाय।

इस प्रकार के प्रतिचयन में प्रामाणिकता और विश्वसनीयता को बनाए रखने के लिए मैंने प्रतिनिधि-प्रतिचयन को ही स्वीकार किया था। इस आधार पर प्रारम्भिक प्रश्नावली में जिन 29 वर्गों को स्थान दिया गया था, प्रतिचयन के पश्चात् उनमे से आभूषण, उच्चारणात्मक शब्दों, सर्वनामपदो, तथा क्रियारूपो को पूर्णरूपेण निकाल देना पड़ा। सप्तम वर्ग (आभूषण) को सर्वेक्षण की प्रश्नावली में इसलिए शामिल नहीं किया गया कि भौतिक सस्कृति से सम्बद्ध इन वस्तुओं का उपयोग यहाँ की निर्धन अवर जातियाँ बहुत कम करती हैं। उनसे क्षेत्रीय भिन्नता का सम्पूर्ण स्वरूप उभर कर नही आ सकता था। उच्चारणात्मक शब्दों (उन्नीसवी इकाई) के अन्तर्गत प्राय उन (ऐतिहासिक दृष्टि से विदेशी) ध्वनियों को सम्मिलित किया गया था, जिनके आदान की सम्भावना अरबी, फ़ारसी, व अँग्रेजी के माध्यम से की गई थी, किन्तु सर्वेक्षण से यह ज्ञात हुआ कि ये ध्वनियाँ सर्वेक्षणीय जातियो की ध्वनि-सूची में नही हैं, अतएव इस वर्ग को व्यापक सर्वेक्षण में स्थान नही दिया गया। इसके अतिरिक्त सर्वनाम पदों व क्रिया-रूपों का बिना प्रसग के एकल प्रयोग अव्यावहारिक समझा गया और उन वर्गों को छाँट दिया गया तथा उनमे से अनेक रूपो को वाक्यात्मक सामग्री के अन्तर्गत रख दिया गया।

व्यापक सर्वेक्षण की कार्यपुस्तिका के निमित्त प्रारम्भिक सर्वेक्षण की कार्य-पुस्तिका से जिन इकाइयो का सकलन किया गया है, वे आवृत्तिगणना पर आधारित हैं। व्यापक सर्वेक्षण की इकाइयो में उन्ही शब्दों को सम्मिलित किया गया, जिनमें अवशिष्ट शब्दो की तुलना में परिवर्तन की अधिक प्रवृत्ति थी तथा जो बोली-सीमा बनाने में सहायक सिद्ध हो सकते थे।

इसके अतिरिक्त, व्यापक सर्वेक्षण के निमित प्रश्नावली को बनाते समय ध्वनिप्रक्रिया, रूपप्रक्रिया, शब्दप्रक्रिया, व अर्थप्रक्रिया पर भी यथासम्भव विचार किया गया था, जिससे सर्वेक्षण को संरचनात्मक रूप दिया जा सके।

इस प्रकार, विविध 24 व्यक्तिबोलियो की व्यतिरेकात्मक विशेषताओ के आधार पर ही प्रश्नावली का पूरा ढांचा आधारित है। इस ढांचे को प्राप्त करने के लिए सर्वप्रथम प्रत्येक व्यक्तिबोली का सामान्य वर्णनात्मक अध्ययन किया गया था, जिसमें ध्वनिमी और रूपिमी पर अधिक ध्यान दिया गया था। ध्वनियो व संध्वनियो की सूची के पश्चात् कुछ आधारभूत शब्दो की सूची तैयार की गई थी व रूपिमीय तथा अर्थकीय शब्दो पर विचार किया गया था।

इस प्रकार कुल 288 शब्दो की प्रश्नावली को 200 इकाइयो मे सन्नियोजित किया गया था। ये इकाइयां अधोलिखित 25 उपवर्गों में विभक्त थी (व्यापक सर्वेक्षण, क्षेत्र-कार्यपुस्तिका, परिशिष्ट 2, द्रष्टव्य)।

i. सप्ताह के दिनो के नाम (7)
ii. वर्ष के महीनों की सूची (12)
iii. उत्सव व प्रकृति (2)
iv. रिश्ते-नाते व विकृतियाँ (6)
v. पेशेवर जातियाँ (5)
vi. वस्त्र (6)
vii. जीव-जन्तु व पशु-पक्षी (9)
viii. शरीराङ्ग (3)
ix. निषिद्ध (5)
x. खाद्य पदार्थ एव पेय (7)
xi पेड-पौधे तथा फल-फूल (11)
xii. कृषि (6)
xiii. घरेलू उपयोग की वस्तुएँ (9)
xiv. रसोई-घर से सम्बद्ध (3)
xv. मकान आदि (3)
xvi. गृहस्थी से सम्बद्ध (8)
xvii *अन्य (1)*
xviii विशेषण (7)
xix. क्रियाविशेषण (4)
xx. अव्यय (5)

xxi. सार्वनामिक विशेषण (9)
xxii. संख्यावाचक विशेषण (9)
xxiii. लिङ्ग-विचार (2)
xxiv. वाक्य (51)
xxv. अर्थ-पद (10)

व्यापक सर्वेक्षण की इस प्रश्नावली को बताते समय इन बातों पर भी ध्यान दिया गया था—

(क) प्रश्नावली छोटी हो, जिससे 'इंटरव्यू' अल्पावधि तक ही चले।

(ख) प्रश्नावली की इकाइयाँ अस्पष्ट न हों।

(ग) प्रश्नावली में ऐसी ही इकाइयों को स्थान दिया जाए, जो सर्वत्र प्रचलित हों, और जिनमें स्थानीय विशेषताएँ भी विद्यमान हों।

(घ) आदान की प्रक्रिया को समझने के लिए कुछ नूतन अभिव्यक्तियों को भी स्थान दिया जाए।

(ङ) सभी (दो सौ) स्थानों में एक समान प्रश्न पूछे जाएँ।

(च) प्रश्नावली में यथासम्भव ऐसे शब्द लिए जाएँ, जो उपबोली-क्षेत्र बनाते हों।

(छ) जिन इकाइयों या शब्दों को बताने में प्रारम्भिक सर्वेक्षण के सूचकों ने हिचकिचाहट या असमर्थता व्यक्त की थी, उन्हें बिलकुल ही न रखा जाए।

(ज) ऐसे शब्द अधिक हों, जो रूपप्रक्रियात्मक अन्तरों को दर्शाएँ।

(झ) प्रश्नावली में ऐसी अनेक इकाइयाँ जोड़ी जाएँ, जो सामाजिक व मनोवैज्ञानिक विश्लेषण में सहायक हों।

17.5. किसी भी बोली-सर्वेक्षण की योजना को बनाते समय यह निर्णय कर लेना आवश्यक होता है कि वाञ्छित शब्दों को किस प्रकार प्राप्त किया जाए। इस सम्बन्ध में पूर्ववर्ती शब्द-भूगोलवेत्ताओं की विधियाँ भिन्न-भिन्न थीं।

Gillieron ने जिन प्रश्नों को अपनी कार्यपुस्तिका में सम्मिलित किया था, उन्हें Edmont ने यथावसर अपने ढंग से परिवर्तित कर लिया था। यही बात O. Bloch तथा Gardette के लिए भी कही जाती है, जिनकी प्रश्नावलियाँ कई बार बदली गई थीं। इनके विपरीत, Italian-Swiss Atalas के लिए सामग्री का संग्रह करने वालों के लिए प्रश्न पूछने की समनुरूपता एक आवश्यक नियम था, तथा pop व Pellis ने भी इसका दृढ़ता के साथ पालन किया था। इस वर्ग के लोगों का यह विचार था कि यदि एक ही रीति से प्रश्न नहीं पूछे जाते, तो उनके उत्तर तुलनीय नहीं हो सकते।

प्रश्न पूछे जाने पर प्रथम अनुक्रिया सूचक म जिसका उच्चारण करता है, वही उत्तर सर्वोत्कृष्ट है—इस धारणा के साथ लोगो का यह भी विश्वास है कि तुलनात्मक लक्ष्य की पूर्ति के लिए प्रश्नो में समनुरूपता आवश्यक है।

जहाँ तक प्रस्तुत सग्राहक का सम्बन्ध है, उसने अपने आपको सभी पूर्वाग्रहो से दूर रखना चाहा है। अधिकतर यह प्रयास किया गया कि विविध इकाइयो के माध्यम से प्रश्नावली सूचक के मन में वाछित, किंतु अनुपस्थित, वस्तु के शब्द का एक रूप उपस्थित कर दे। जिन अभिव्यक्तियो को प्राप्त करना होता था, वे किसी भी यथोचित समय व यथोचित उत्तेजना के द्वारा प्राप्त की जानी थी। इस प्रकार, सामग्री को प्राप्त करने के लिए अधोलिखित प्रश्न-विधियाँ स्वीकार की गई थी—

(क) सर्वप्रथम सूचको से यह कहा जाता था कि वे सप्ताह के दिनो व महीनो के नाम बताएँ तथा एक से लेकर नौ तक की संख्या गिनाएँ।

(ख) इसके पश्चात् लक्ष्यवेधी प्रश्नो के माध्यम से इटरव्यू' समारम्भ किया जाता था, यथा 'जो पाठशाला म बच्चो को पढाता है, उसे क्या कहते है (VI. 31)'।

(ग) प्रश्नावली में सम्मिलित अनेक वस्तुओ (जिन्हें मैं सदैव अपने साथ रखता था), यथा प्रश्नावली शब्दक्रमाक 65, 68-73, को दिखा कर उनका नाम पूछता था, यथा 'फाउण्टेन पेन' को दिखा कर पूछता था—'इसे आप क्या कहते हैं (शब्दक्रमाक 80)'।

(घ) सूचक की ही बोली में वार्तालाप के दौरान सूचक के द्वारा प्रयुक्त व्याकरणिक रूपो को याद रखता था या उन्हें नोट कर लेता था।

(ङ) बघेलखडी के पूर्व-निश्चित वाक्यो में से कोई एक शब्द निकाल कर उस अंश की पूर्ति के लिए कहता था।

(च) लिङ्ग-परिवर्तन का अभ्यास करा कर 'सेठ' व 'माली' के स्त्रीरूपो को प्राप्त करता था।

व्यापक सर्वेक्षण की क्षेत्र कार्यपुस्तिका की इकाइयों के सम्मुख प्रश्न-विधि का भी सकेत दिया गया है, जिससे सम्पूर्ण प्रश्नो को प्राप्त करने की पद्धति की जानकारी मिल सकती है।

यहाँ यह उल्लेख है कि प्रश्न सदैव वार्तालाप की शैली में ही किए गए थे व चुने हुए व्यक्ति के अतिरिक्त अन्य किसी व्यक्ति से सूचना लेने का कभी प्रयास नही किया गया।

17.6. सूचक ने किसी प्रश्न को सुन कर जो अनुक्रिया सर्वप्रथम की थी, उसी अनुक्रिया को सर्वाधिक महत्त्व दिया गया था, किन्तु उसके गौण प्रत्युत्तरों की भी उपेक्षा नही की गई। 'बघेलखंड का शब्दभूगोल' के द्वितीय खण्ड (पंचम अध्याय) में इन गौण अनुक्रियामूलक शब्दों का भी उल्लेख है। उनके माध्यम से यह परीक्षण किया जा सकता है कि कौन से शब्द तेजी के साथ समाप्त हो रहे हैं तथा कौन से उन्हें स्थानापन्न कर रहे हैं। इस के शब्दों में यह देखा गया है कि कौन सा शब्द अधिक प्रतिरोधनशील प्रकृति का है।

17.7. क्षेत्र से सामग्री का लिप्यंकन 'अन्तर्राष्ट्रीय ध्वनिलिपि' में किया गया था तथा सम्पादन के समय उसे अनुरूप देवनागरी लिपि में ढाला गया। इन चिह्नो की संकेत-तालिका 'बघेलखंड का शब्द-भूगोल' (प्रथम खंड, प्रथम भाग) के प्रारम्भ में दी गई है।

17.8. व्यापक सर्वेक्षण की दो सौ इकाइयों वाली (दो सौ समुदायों के दो सौ सूचकों पर आधारित) सामग्री को $5\frac{1}{2}'' \times 3\frac{1}{2}''$ के कार्डों में उतारा गया था। इस प्रकार के कुल कार्डों की संख्या 57600 थी। गौण सूचकों के कार्डों को भी सम्मिलित कर लेने पर उनकी संख्या 63936 हो जाती है तथा प्रारम्भिक सर्वेक्षण की सामग्री के कार्डों को मिला कर कुल कार्ड 76586 हो जाते है।

अब तक सम्पूर्ण सामग्री को मानचित्रों के माध्यम से प्रस्तुत करने की एक सामान्य परम्परा रही है। सैद्धांतिक रूप से तो यह अच्छा है, क्योंकि एक ही दृष्टि में यह देखा जा सकता है कि भौगोलिक दृष्टि से वितरणों का क्या स्वरूप है? किन्तु व्यावहारिक रूप से इसमें कुछ बाधाएँ है और सबसे बड़ी बाधा यह है कि मानचित्रों की रचना एक महँगा काम है।

18

क्षेत्रीय अनुभव

18.1. क्षेत्रान्वेपक के रूप मे प्रस्तुत लेखक

Gillieron इस मान्यता के थे कि भाषाविज्ञानी को अन्वेपक के रूप में कार्य नही करना चाहिए, क्योकि संकलन के समय वह आलोचक बन कर सामग्री को अस्वाभाविक बना सकता है किन्तु ALF के पश्चात् मानचित्रावलियो के क्षेत्रान्वेपक प्राय भाषाविज्ञानी ही रहे है, जिनमें Oscar Bloch Griera, Gachat, Tappolet, *Scheurmier*, *Wagner*, Pop, Kurath, McDavid, आदि के नाम उल्लेखनीय है। मै अनुभव करता हूँ कि Gillieron ने जिस आलोचना का सन्देह किया था, वह कर्तव्यनिष्ठ भाषाविज्ञानी नही कर कर सकता। ऐसा व्यक्ति, जो पूर्ण मनोयोग मे सूचक के चयन व सूचना-संग्रह में संलग्न है, वह क्षेत्र में जा कर अपनी निधि को अन्यथा कैसे होने देगा ? वह तो यथोच्चारण लिप्यंकन करते हुए सामग्री को नियोजित करता है। उसे अपने कार्य मे इतना अधिक वस्तुनिष्ठ रहना पडता है कि ध्वनिनियम या अन्य किसी भाषिक युक्ति या पूर्वाग्रह की बात उसके मन मे आनी ही नही चाहिए।

विदेशी अन्वेपक या उस क्षेत्र की बोली को न जानने वाल अन्वेपक की तुलना में वहाँ की मातृभाषा को बोलने वाले अन्वेपक अधिक उपयुक्त है,—इसमें दो मत नही हो सकते। आज प्राय सभी विद्वान् यह स्वीकार करते है कि क्षेत्रा न्वेपक को उस क्षेत्र का अच्छा ज्ञान होना चाहिए।

Gillieron यह मानते थे कि एक के स्थान पर अनेक अन्वेपकों के प्रयोग से सामग्री में एकरूपता सम्भव नही है। आज अधिकतर विद्वान् क्षेत्र-विस्तार और समय की बचत को दृष्टि मे रख कर अनेक अन्वेपकों की नियुक्ति के पक्ष में हैं। 'बघेलखंड की शब्द-मानचित्रावली' के लिए मैंने स्वयमेव सामग्री जुटाई है।

18.2. चित्रकूट से अमरकंटक तक की यात्रा

बघेलखड से सामग्री का संग्रह करने के लिये मैंने चित्रकूट से अमरकंटक तक के दो सौ स्थानों की पैदल, तथा साइकिल, बैलगाडी, ट्रक, मोटर, व रेल से हजारों मील की यात्रा की है। इस यात्रा के दु ख सुख मिश्रित अनुभवों को अग्रिम पृष्ठों में प्रस्तुत किया जा रहा है, जो इस क्षेत्र में कार्य करने वाले परवर्ती विद्वानों के लिए सहायक सिद्ध हो सकते हैं।

18.2.1. अनवरत यात्रा के कष्ट

सामग्री-संकलन के समय यह आवश्यक था कि मै एक गाँव में एक से अधिक दिन न बिताऊँ, नही तो सचय का कार्य महीनों तक चलता रह सकता था। ऐसी स्थिति में एक समुदाय की सामग्री के संग्रह के पश्चात् मै दूसरे पूर्व-निश्चित समुदाय की ओर चल पडता था। मुझे सैकडो मील की पैदल-यात्रा करनी पड़ी है, अतएव अकेले पैदल-यात्रा के कष्टो से मैं पूरी तरह परिचित हूँ। चूँकि मेरी अधिकतर यात्राएँ ग्रीष्मावकाश में हुई है, अतएव अपेक्षाकृत शारीरिक ताप भी अधिक सहन करना पडा है। रास्ते में प्यास लगती थी और कोसो तक कोई गाँव नजर नही आता था —मेरी उस छटपटाहट को कोई भुक्तभोगी ही समझ सकता है। असह्य गर्मी के कारण नाक फूटना व पैरो में छाले पड़ जाना तो सामान्य ताप थे।

18.2.2. बोली-समुदायो मे प्रवेश

किसी नए व अपरिचित समुदाय में प्रवेश करने के लिए कुछ क्षेत्र-भाषा-विज्ञानी जिन विधानों की चर्चा करते हैं, वे किसी एक समुदाय के सम्बन्ध में लागू हो सकते हैं, किन्तु सैकड़ों समुदायों के लिये वे व्यावहारिक नही प्रतीत होते। मैंने बघेलखड के समुदायो में प्रवेश करने के लिए प्रमुख दो मार्गों को अपनाया था—(क) क्षेत्र में जाने से पूर्व रावा स प्रकाशित दैनिक समाचार-पत्र 'नवजागरण' के माध्यम से बघेलखंडी-जनता में उसकी बोली के प्रति दैन्यभाव की समाप्ति व स्वाभिमान जगाने का प्रयास करना था, जिससे संचार-साधन वाले स्थानों के लोग मेरे कार्य की प्रकृति से परिचित हो जाएँ।

(ख) इसके पश्चात् जिस समुदाय की यात्रा करनी होती थी, वहाँ के किसी प्रतिष्ठित व्यक्ति के नाम अपने पूर्वपरिचित (व जो उससे भी परिचित होता था) व्यक्ति से एक परिचय-पत्र ले जाता था, जिससे वह सूचक[1] के चुनाव में

मेरी सहायता कर सकें और अवर लोगों को यह समझा सकें कि मेरा यह कार्य अद्यतन लोकवाणी की सोद्देश्य परीक्षा है—

कोस-कोस म पानी बलदै, चार कोस म बानी।

18.2.3. सूचकों पर न तो दबाव और न उनसे झूठा वायदा

मैंने अपने सूचकों पर न तो कभी दबाव डाला है और न ही उनसे झूठा वायदा किया। यद्यपि ऐसा करने से (कि मैं शासकीय कर्मचारी हूँ—उस समय मैं मध्य प्रदेश शासन के शिक्षा विभाग में एक राजपत्रित अधिकारी था) मुझे अधिक सहयोग मिल सकता था, किन्तु न करने से कम भी नहीं मिला। मुझे सन्तोष है कि जब कभी मैं क्षेत्र में दुबारा जाऊँगा, वे मुझे प्रवंचक तो न कहेंगे।

18.2.4. सामग्री-संकलन के विविध स्थान

मैंने सामग्री का संकलन नाई की दुकान, कचहरी, होटल, खेत, सूचक के निवास स्थान, नदी-तट, जगल, व सराय, आदि विविध स्थानों से किया है। कभी-कभी मोटर में बैठकर भी उत्तर जुटाये गए हैं। उदाहरणार्थ, 'ताला' नामक गाँव का सूचक मोटर से ब्योहारी आ रहा था। मैं उसके साथ मोटर मे बैठकर कार्यपुस्तिका को भरता रहा। इसी प्रकार, 'अमकई' स्थान के सूचक के साथ आठ मील पैदल चल कर सामग्री संचित की थी। वह बाजार के काम से नागौद जा रहा था।

हरिजन व बैगा सूचकों के साथ उनके घरो में बैठ कर काम करना भी एक प्रकार से नासिकाक्षि-परीक्षा थी। चमारो के घरो में सड़े हुए चमड़े की गन्ध, कुम्हारो के घरों में पालतू सुअरो की दुर्गन्ध, व बसोरों के घरो मे मैले की बदबू में, इसी प्रकार बैगाओं की आदत कि वे तम्बाकू खा कर पिच पिच थूकते। इन सबसे मन भिनभिना जाता था, किन्तु वैसा भाव कभी व्यक्त नहीं होने दिया।

18.2.5. भोजन व शयन की समस्या

अनेक गाँव जहाँ पर मैं पहले से किसी प्रकार का पूर्व-परिचय स्थापित नहीं कर पाया था, वहाँ भोजन व शयन की एक विकट समस्या थी। गाँवों में भोजन आदि की व्यवस्था न हो पाने से कई दिनों तक मुझे भूखा रह जाना पड़ा है तथा गाँव की जनता जब रात्रि में गाँव के अन्तर्गत मेरे निवास की अनुमति नहीं देती थी, उस समय मैं खेतों में बने हुए मचानों पर ही बिना सोए हुए सारी रात बिता देता था।

13.2.6. असहयोग की भावना

अपरिचित व्यक्ति को स्वीकार करने में समुदाय के लोगों की हिचकिचाहट भी स्वाभाविक थी। मैंने अपनी योजना की प्रकृति व लक्ष्य को समझाने का यथासम्भव प्रयास किया था, किन्तु कई बार असफल रहा। वे लोग, जिनका जीवन अपनी अजीविका के लिए कार्य करने में ही निकल जाता है, क्या समझें कि उनकी बोली का अध्ययन भी एक महत्त्वपूर्ण कार्य है। मेरे प्रश्नों को वे मूर्खता कहते थे और उपदेश दिया करते थे कि इस प्रकार की बातों में आप समय बर्बाद न करें। कभी कभी सामग्री के संग्रह के समय वे आशंकित भी हो उठते थे और पूछ बैठते थे—'ऐसा तो नहीं कि जो कुछ आप पूछ रहे हैं, उसमें कोई फँसने वाली बात हो और होम करते हुए हमारा हाथ जले.'

18.2.7. अभद्र व्यवहार

कुछ गाँव वालों का व्यवहार मेरे प्रति सौहार्दपूर्ण न था। उदाहरणार्थ, देवरा ग्राम के लोगों ने न तो पीने के लिए पानी ही दिया और न ही किसी ने मुझसे वार्तालाप करना उचित समझा। मैं गाँव के मुखिया से मिलना चाहता था, किन्तु उसने भी दर्शन नहीं दिया। ऐसी स्थिति में पड़ोसी गाँव के एक व्यक्ति की सहायता से उस गाँव के एक व्यक्ति से पारिश्रमिक देने के पश्चात् सामग्री प्राप्त की।

18.2.8. गाँव में मुखिया का भय

अनेक समुदायों के निवासियों ने बिना गाँव के मुखिया की आज्ञा के मुझसे बात करना भी उचित नहीं समझा था। इटमा गाँव के सूचक का कहना था कि 'यदि कहीं यह पता चल गया कि मैंने "गाँव की बानी" लिखाई है, तो मुखिया की स्वीकृति लेनी पड़ती थी।'

18.2.9. गुप्तचर होने का सन्देह

किसी भी नए स्थान में पहुँच कर लोगों से भाँति-भाँति के अपूर्व प्रश्न करना व कई पेंसिलों व कलमों का प्रयोग करना वहाँ के लिए सन्देह का विषय हो सकता है और उस सन्देह से तीन स्थानों के लोग मुझे चीनी जासूस मान बैठे थे। इतना ही नहीं, 'मझगवाँ' नामक स्थान में तो एक पुलिस-अधिकारी पूछ ताछ के लिए मुझे कई घंटों तक रोके रहा था और मुख्यालय से जानकारी प्राप्त कर पूरी तरह सन्तुष्ट हो जाने के पश्चात् ही उसने मुझे मुक्त किया।

18.2.10. सन्ततिनिरोध-अधिकारी होने का भय

जिन दिनो मैं बघेलखड का बोली-सर्वेक्षण कर रहा था, उन दिनो संतति-निरोध का प्रचार-कार्य तेजी पर था तथा शासकीय डॉक्टर बिना इच्छा के किसी भी व्यक्ति (चाहे वह अविवाहित ही क्यो न हो) नसबन्दी कर दिया करते थे। ग्रामीण जनता बहुत भयभीत थी और किसी भी नवागन्तुक को डॉक्टर समझ कर उससे बचना चाहती थी। अनेक समुदायो ने इसी प्रकार मुझे भी देख कर यह समझ लिया था कि मै उनके ऑपरेशन के लिए आया हूँ। 'शाहपुर' का सूचक तो मेरे सामने रो दिया था और कह रहा था कि मेरी नसबन्दी न कीजिए, मेरे अभी कोई सन्तान नही है, अभी छह महीने पूर्व मेरा विवाह हुआ है। मेरे समझाने पर उसका भय दूर हुआ।

18.2.11. बोलो पर टैक्स

कुछ व्यक्तियो को यह आशंका अन्त तक बनी रही कि शासन ने अब एक नया तरीका अपनाया है तथा वह बोलने वालो के अधिक या कम बोल' पर भी अधिक या कम कराधान करेगा। 'गडरिया' नामक स्थान में तो मेरे कारण यह चर्चा का एक विषय बन गया था। कुछ लोग तथाकथित इस नए टैक्स के पक्ष और विपक्ष में बोल रहे थे। एक वृद्ध सज्जन का कथन था कि आज के पढ़े-लिखे लड़के बहुत पटर-पटर करते है, इस नए टैक्स के लग जाने से वे गम्भीरता सीखेंगे। एक दूसरे सज्जन को यह चिन्ता थी कि ऐसी स्थिति में गाँव में कीर्तन व भजन बन्द हो जाएँगे, क्योकि अधिक लोगो के एक-साथ गाने से टैक्स भी अधिक चुकाना पड़ेगा।[1]

18.2.12. एकमात्र अवरों के सामग्री-संग्रह मे सन्देह

कुछ समुदायो के लोग इस बात पर आशक्ति थे कि जब प्रत्येक वस्तु की जानकारी ब्राह्मणो व क्षत्रियो से प्राप्त की जाती है, तो क्या कारण है कि उनकी *'बानी' को नही लिखा जाता व हम लोगो की 'भाखा' को लिखा जा रहा है?* इस भेद-भाव में उन्हे कोई बड़ी साजिश नजर आती थी।

18.2.13. 'हम नही जानो' कहने की प्रवृत्ति

कभी-कभी सूचक उत्साह के साथ 'इटरव्यू' देने के लिए तैयार हो जाते थे, *किन्तु प्रश्नावली की बातो में फिर उनकी रुचि नही रहती थी* और तब प्रत्येक प्रश्न का उत्तर 'हम नही जानो' (मैं नही जानता) में मिलता था। ऐसी स्थिति में कार्य स्थगित करना पड़ जाता था।

18.2.14. वार्तालाप करने का पारिश्रमिक

क्षेत्र में सामान्य अनुभव यही रहा है कि उचित पारिश्रमिक देने या वायदा पर कोई भी व्यक्ति घण्टों साथ रह सकता था और हर प्रकार की सहायता के लिए उद्यत रहता था। उपहार व पैसे, आदि से कोई वर्णनात्मक भाषाविज्ञानी अपने सूचक को सन्तुष्ट कर सकता है, किन्तु शब्द-भूगोलवेत्ता, जिसे सैकड़ो सूचकों के साथ साक्षात्कार करना पड़ता है, उसके लिए यह महँगा सौदा है। ऐसे स्थानो से, जहाँ सूचको का सहयोग अन्य किसी भी प्रकार से नही मिल पा रहा था, मैंने पारिश्रमिक दे कर सामग्री प्राप्त की।

18.2.15. लोग समझते थे कि मुझे इस कार्य के लिए पैसा मिलता है

नगरीय क्षेत्र के अनेक सूचकों ने कभी यह विश्वास नही कि संग्रह-कार्य मै वैयक्तिक रूप से अपने लिए कर रहा हूँ। रीवा के उपरहटी मुहल्ले के सूचक की पत्नी अपने पति से बार-बार यह कहती रही कि इन्हें तो इस कार्य के लिए पैसा मिलता होगा। हमें क्या मिलेगा ? हम इतनी फुर्सत में नही है कि दिन भर बैठ कर इनसे बेतुकी बातें करते रहे। पत्नी के कहने पर पति अधूरा काम छोड़ कर जाने लगा और जब मैंने उससे आग्रह किया कि मै उसे आज दिन भर का पारिश्रमिक दे दूँगा, वह मेरे शेष प्रश्नो का उत्तर दे दे, तब पति का कथन था कि आप चाहे कितना पैसा दें,—हम आपसे बेमतलब की बातें नही करना चाहते। वह नही रुका, और मुझे दूसरे मुहल्ले में एक सूचक नियुक्त करना पड़ा।

18.2.16. प्रश्नावली की कुछ इकाइयों को सुन कर संकोच व भय

प्रारम्भिक सर्वेक्षण के समय जिन इकाइयों के उच्चारण में सूचको ने संकोच किया था, यद्यपि उन्हे व्यापक सर्वेक्षण की प्रश्नावली से निकाल दिया गया था, व्यापक सर्वेक्षण के दौरान यह मालूम हुआ कि 'दुश्चरित्रा स्त्री, (शब्दानुक्रम 28), 'मासिकधर्म' (शब्दानुक्रम 53), व 'विष' (शब्दानुक्रम 61) के समानार्थी शब्दो को बताने में सूचक आना-कानी करते थे। प्रथम इकाई से सम्बद्ध शब्द के लिए जब मैंने प्रश्न किया, तो उनका उत्तर था, 'हमारे गाँव में कोई स्त्री ऐसी नही है। हम क्या जानें, उसे क्या कहते है।' इसी प्रकार, द्वितीय इकाई से सम्बद्ध शब्दो को बताने में वे संकोच करते थे। तृतीय शब्द को बताने में वे संकोच करते थे। कभी-कभी वे भयभीत हो उठते थे। इटमा का सूचक तो उससे इतना सहम गया था कि बीच में ही उठ कर चला गया और बाद में मेरा नेक इरादा समझने के बाद ही वह कार्य करने के लिए तैयार हुआ। गाँव के एक प्रतिष्ठित व्यक्ति

से जब उसके सम्बन्ध में बात हुई, तो पता चला कि एक बार उस पर भाई को विष खिला कर मार डालने का आरोप लगाया गया था।

18.2.17. घातक हमला

ऐसे अनेक स्थान हैं, जहाँ मुझे अकेले पा कर लोगो की नेकनीयत समाप्त हो जाती थी और वे मेरा सामान व रुपए-पैसे लूट लेना चाहते थे। इस प्रकार की अनेक विपत्तियो से मैं सदैव बच गया हूँ। शायद नियति ही मेरे साथ थी, नही तो बीहड़ वनो में भटकते हुए मुझे कभी भी लूट लिया जाता। उदाहरणार्थ, एक ऐसी घटना गोविन्दगढ से आमिन की यात्रा करते समय घटी थी। एक व्यक्ति गोविन्दगढ से ही मेरा पीछा कर रहा था, और जब मैं कैमोर पर्वत शृंखला वाले मार्ग को पार कर रहा था, तब उसने मुझ पर आक्रमण कर दिया। उसके द्वारा फेंके गए छुरे के वार से मैं बाल बाल बच गया। इसी समय कुछ ग्रामीण आ गए थे और उसके भाग जाने से अनहोनी टल गई। इसी प्रकार, 'बरौंधा' नामक गाँव में जब मैं सो रहा था, तब एक व्यक्ति मेरे सचित सामग्री के झोले को ले कर भाग निकला और मेरे द्वारा पीछा करने पर उसने मुड़ कर वार किया लेकिन मैं बच गया और मैंने उसे पत्थर मार कर झोला छोड़ जाने के लिए विवश कर दिया।

18.2.18. डाकुओ की गिरफ्त मे

बाँदा से सलग्न कौहारी नामक स्थान पर जब नागोद से बस की यात्रा करते हुए मैं पहुँचा, उस दिन की घटना अत्यत लोमहर्षक है। गाँव के लिए रास्ता एक बियावान जगल से होकर जाता है। जब मैं उसे पार कर रहा था, तो डाकुओं के एक दल ने (जिसमें लगभग बीस लोग थे) मुझे रोका और बन्दूक दिखा कर यह कहा कि हमारे पीछे-पीछे चले आओ, नही तो तुम्हें गोली से उड़ा दिया जाएगा। मेरी आँखो पर पट्टी बाँध दी गई थी और मैं उनके पीछे पीछे बन्दूक की नाल पकड कर चल रहा था। उनका निवास एक पहाड़ी की खोह में था, शायद वह कालिजर से कुछ ही दूरी पर था। खोह में जा कर पता चला कि डाकुओ का इरादा मुझे अपहरण कर के मेरे घर वालो से दस हजार रुपए प्राप्त करने का था। उन्होने मुझसे कहा कि घर वालो को लिखो कि दस हजार रुपए ले कर एक व्यक्ति उनसे अमुक अमुक स्थान पर मिले, किन्तु मैंने पत्र नही लिखा। उनसे झूठ बोल गया कि मेरे सिवाय मेरा और कोई नही है। मैं नही चाहता था कि मेरे कारण घरवालों को कोई कष्ट उठाना पडे। मेरी

अस्वीकृति पर मुझे भाँति-भाँति की यातनाएँ दी गईं। उस समय मैं शासकीय सेवा में संस्कृत का सहायक प्राध्यापक था। उनकी इच्छा थी कि मैं अपने मालिक को लिख कर दस हजार रुपए मँगाऊँ, किन्तु जब उन्होंने यह जाना कि मैं शासकीय कर्मचारी हूँ, तो उन्हें वैसा करवाने का इरादा भी छोड़ना पड़ा। तब मुझे वहाँ कुछ लोगों के संरक्षण में रख दिया गया।

डाकुओं का चार-पाँच दिन तक अध्ययन करने के पश्चात् मुझे ऐसा लगा कि इन लोगों में धार्मिक प्रवृत्तियाँ अभी शेष हैं। इतर डाकू जब वहाँ से निकल जाते थे, तब मैं डाकुओं के सरदार (वह कहीं नहीं जाता था, वृद्ध था) को यदा-कदा प्रवचन देने लगा। मेरी बातों में उसकी गहरी रुचि थी। मैं रामायण, महाभारत, व गीता के प्रसङ्गों को सुना कर उसकी धार्मिक भावना को उकसा रहा था और वह मेरा भक्त बन गया था। उसके आदेश से गुफा के दस्युसदस्य मेरे आज्ञाकारी बन गए थे। सातवें दिन उसने मुझे मुक्त कर दिया। चलते समय उनकी आँखें भरी हुई थीं। हत्या और स्नेह की इस विचित्र घटना को मैं कभी भुला नहीं सकता। ब्राह्मण और संस्कृतज्ञ समझ कर सम्पूर्ण डाकुओं ने चलते समय मेरा चरण-स्पर्श किया था। मेरी सारी पीड़ाएँ उनके स्नेहजल से घुल गई थीं।

18.2.19. हत्या की साजिश

डाकुओं से बिदा लेने के पश्चात् मैं जब पूर्वनिर्धारित गाँव कौहारी में पहुँचा उस समय रात्रि के आठ बजे थे। मुझको देख कर गाँव वालों को आशंका हुई और उनमें से चूँकि किसी व्यक्ति ने मुझको किसी प्रकार सम्भवतः जंगल में खोह के आसपास, डाकुओं के साथ देख लिया था, अतएव गाँव वालों का यह विश्वास हो गया कि मैं डाकुओं का मुखबिर हूँ। मैं भी डाकुओं वाली घटना डाकुओं के आतंक से उन्हें बताना नहीं चाहता था और इधर उन डाकुओं के ये शत्रु लोग मेरी हत्या की साजिश कर रहे थे। गाँव वालों के साथ वार्तालाप के समय मुझे इसका तनिक भी आभास नहीं हुआ। इन लोगों में 'गोसाईं' उपनामधारी एक शिक्षित व्यक्ति भी थे, जो मेरे कार्य की प्रवृत्ति को समझ कर मुझे कम-से-कम डाकुओं के गिरोह का तो नहीं मानते थे। उन्होंने पता नहीं उन लोगों को क्या समझाया-बुझाया और रात्रि के दस बजे वे मुझे अपने घर ले गए। वहाँ उन्होंने बताया कि 'आपको मालूम नहीं है, ये लोग मीठी-मीठी बातें कर के आपको फँसाए रखना चाहते थे और डाकुओं का सदस्य मान कर आधी रात के पश्चात् आपका वध कर डालते।'

18.2.20. सूचकों का सहानुभूति

इन छुट-पुट घटनाओं के होने हुए भी अधिकतर लोगों की मेरे प्रति सहानुभूति रही है। बघेलखंड के अनेक गाँवों के निवासियों ने मेरा स्वागत किया है व अपनी सामर्थ्य के अनुसार आतिथ्य सत्कार करने में भरसक प्रयास किया है। इनके घरों में बनी हुई वस्तुओं (यथा, ज्वार व महुए की रोटियों) को मैंने बहुत ही रुचि के साथ खाया है, जिनको सामान्य स्थिति में पचा भी नहीं सकता था।

18.2.21. गाँव के लोग चाहते थे कि मैं उनके दुःख दर्द को समझूँ

यहाँ के बहुत-से निवासियों का यह विचार था कि मैं शासन की ओर से इनकी शिकायतों को सुनने-लिखने के लिए आया हूँ, अतएव ये लोग मुझे आत्मीय समझ कर मुझसे अपना दुखड़ा कहते थे।

18.2·22. लोग बात करना चाहते थे और चाहते थे कि उनका नाम छपे

कुछ लोग ऐसे भी थे, जो चाहते थे कि उनका 'इंटरव्यू' लिया जाय व उनका नाम छपे। लोग आत्मचेतन न हो जाएँ, व उनकी अनुक्रिया स्वाभाविक बनी रहे, इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए अपने कार्य के सम्बन्ध में उनकी जिज्ञासा की शांति के लिए मैं प्रायः यह कहता था—'एक स्थान से दूसरे स्थान पर वस्तुओं के नाम कैसे बदल जाते हैं, इस बात की मैं जानकारी जुटा रहा हूँ। उनसे मैंने यह कभी नहीं कहा कि मैं आपकी भाषा का अध्ययन कर रहा हूँ।

18.2.23. गाँव की बोली को विशुद्ध बना कर लिखने का आग्रह

लोग चाहते थे कि यदि उनकी भाषा का अध्ययन किया जा रहा है, तो उसे वैसा ही प्रस्तुत न किया जाए, जैसा वे बोलते हैं। 'मऊगज' के सूचक का यह आग्रह था कि आप मेरी 'बानी' को सुधार लीजिएगा। यदि आप वैसा ही लिखेंगे, जैसा मैं बोलता हूँ, तो मेरे गाँव की बदनामी होगी। लोग कहेंगे, इस गाँव के लोग शुद्ध बोलना भी नहीं जानते।

18.2.24. समुदायों में प्रवेश के सहज मार्ग

'बघेलखंड की शब्द-मानचित्रावली' पर कार्य करते हुए ऐसा अनुभव हुआ है कि लोकगीतों के माध्यम से वहाँ की अशिक्षित, निर्धन, व अवर जनता को आकृष्ट किया जा सकता है और वे बहुत अच्छे सहयोगी सिद्ध हो सकते हैं। इसका एक कारण सम्भवतः यह है कि विगत दो दशाब्दियों से यहाँ के विविध क्षेत्रों से लोग

गीतों का संग्रह करते आ रहे हैं, अतएव यहाँ की जनता उनके कार्य की प्रकृति से परिचित है। किन्तु इसके लिए यह आवश्यक है कि अन्वेषक भी इनके गीतों को जानता हो। उन्हें गुनगुना सकता हो। एक बार यदि इनकी गीत इन्हें सुना दिया गया, तो ये उस व्यक्ति में बहुत रुचि लेने लगते हैं, उसे आत्मीय मानने लगते हैं।

चतुर्थ अधिकरण

मानचित्रण-प्रविधि और शब्द-मानचित्रावली

सर्वेक्षण से संचित किन्तु अविश्लेषित सामग्री के संस्कार के पश्चात् द्वितीय चरण में सामग्री चाक्षुष प्रस्तुतीकरण किया जाता है, जिसके लिए प्रमुख रूप से मानचित्रों की सहायता ली जाती है तथा गौण रूप से विविध रेखाचित्र, वृत्तचित्र, व संकेत आदि सहायक सिद्ध हो सकते हैं।

शब्द-भूगोलवेत्ता का प्रमुख उद्देश्य भाषिक अभिलक्षणों को समुदायानुसार वर्गबद्ध करके उन्हें मानचित्रों में दर्शाना होता है। इस प्रकार के मानचित्रों को दो वर्गों में रखा जा सकता है—

(क) सांकेतिक मानचित्र

(ख) रैखिक मानचित्र

इनमें से चाहे जिस-किसी वर्ग के मानचित्र का मनोनयन किया जाए, किन्तु प्रमुख लक्ष्य यह होता है कि सूचनाओं का प्रभावोत्पादक ढंग से अंकन हो। अतएव मानचित्र न तो अधिक ग्रथिल और न अधिक सुसज्जित होने चाहिए; उनका प्रस्तुतीकरण उत्तम मानचित्रण-प्रविधि के अनुसार किया जाना चाहिए, जिसमें स्वच्छ अंकन तथा सुस्पष्ट संकेत हो।

इस अधिकरण के प्रथम अध्याय में मानचित्रावली की रचना की सामान्य तकनीकें दी गई हैं तथा अन्तिम दो अध्यायों मे 'बघेलखंड की शब्द-मानचित्रावली' की भूमिका उद्धृत की गई है। इनके आधार पर मानचित्रावली विषयक विविध बातों की सैद्धान्तिक व व्यावहारिक जानकारी हो सकती है।

19

शब्द-भूगोल की सामग्री का मानचित्रात्मक प्रदर्शन

19.1. शब्द-मानचित्रावली ऐसे मानचित्रो का सग्रह है, जो प्रतिचयनात्मक विधि से प्रतिलिखित किन्ही विशेष वाक्रूपो की किसी विशेष क्षेत्र व समय में विद्यमानता को दर्शाते है। इनके माध्यम से कुछ विशेष शब्दो का चयन कर बोली-क्षेत्र की सीमाओ को बतलाने का प्रयास किया जाता है।

19.2. सामग्री का संकलन, सम्पादन, तथा प्रकाशन

किसी देश या वृहद् क्षेत्र के लिए शब्द-मानचित्रावली बनाते समय सामग्री-चयन, सम्पादन, व प्रकाशन का कार्य अत्यन्त व्यापक है। इसके लिए अधिक समय व धनराशि के साथ अनेक सहकर्मियो की आवश्यकता पडती है।

शब्द मानचित्रावली के लिए सामग्री का सग्रह एक दीर्घकालिक प्रक्रिया है। सामग्री के मनोनयन के पूर्व एक प्रारम्भिक सर्वेक्षण को सिद्धान्तरूप में आज स्वीकार किया जाता है, [1] जिससे यह देख लिया जाए कि कौन-कौन सी क्षेत्रीय भिन्नताएँ विद्यमान हैं, व्यावहारिक रूप में विश्व की अधिकांश मानचित्रावलियो के निमित्त सामग्री-सकलन करते समय प्रारम्भिक सर्वेक्षण पर ध्यान नही दिया गया है, फलस्वरूप सरचना की वास्तविक खोज में भटकाव ही मिलता है।

प्रारम्भिक सर्वेक्षण के आधार पर बनाई गई प्रश्नावली की वैज्ञानिकता पर दो मत नही हो सकते, क्योकि क्षेत्र के अनुरूप सुनियोजित व सुविचारित होने के कारण यह अन्वेषको का सूचको के साथ व्यर्थ का अपव्यय कराए बिना महत्त्वपूर्ण सूचनाएँ एकत्र करा सकती है। जिन स्थानो का अनुसन्धान किया जाना है, उनकी सख्या अन्वेषणीय क्षेत्र के विस्तार के साथ बढ सकती है।

चूँकि अधिकतर सूचक ग्रामीण होते हैं और चूँकि प्रतिलेख्य अनेक इकाइयाँ ग्रामीण जीवन के शब्द होती है, अतएव यह आवश्यक है कि 'इटरव्यू' घरेलू वाता

वरण में ही हो, जिससे सूचक अपने दैनन्दिन जीवन के प्रसंगो को प्राप्त कर सके, या उन्हे स्मृतिपटल मे लाने में उसे सरलता हो।

अन्वेषक को सुश्रवणशक्ति सम्पन्न और ग्रामीण जीवन में दक्ष होना चाहिए तथा उसे अपने सूचकों का चुनाव सावधानी के साथ करना चाहिए। उसे विशेषज्ञों को यह विश्वास दिलाना होगा कि सूचकों की बोली स्थान-विशेष का प्रतिनिधित्व करती है एवं प्रामाणिक है।

'इंटरव्यू' के समय अन्वेपक सूचक के प्रत्युत्तर को सूक्ष्म ध्वनिकीय लिपि मे लिखता है तथा यदि कार्य योजनाबद्ध हो रहा है, तो यह सचित सूचनाओ की एक प्रति अपने मुख्यालय मे भेजता रहता है।

सूचनाओ के संग्रह के पश्चात् उनका सावधानी के साथ सम्पादन किया जाता है। सम्पादित सामग्री प्रतिचिन्हो के माध्यम से मानचित्रो मे सचित की जाती है और सुविधानुसार एक या अनेक खण्डो मे उसका 'मानचित्रावली' के रूप में प्रकाशन होता है।

19.3. मानचित्रो का रूपाकन

मानचित्रो को प्रतिचिन्ह करने की इस समय समान्यतया अधोलिखित पद्धतियाँ प्रचलित है—

(क) समरेखाओ का प्रयोग

(ख) वृत्तो मे निदर्शन

(ग) परम्परागत चिह्नो का प्रयोग

(घ) समयुग्म रेखाओ का प्रदर्शन

19.3.1. Gillieron की ALF के मानचित्रों मे समभाषाशो का रेखाबद्ध चित्रण मिलता है। उसमे समभाषाशो का चित्रण इसलिए भी सम्भव है कि किसी समुदाय या स्थान का प्रतिनिधित्व एकल मातृभाषी ही करता है। इस सम-भाषाश-रेखा से भिन्न-भिन्न रूप वाले समुदाय पृथक् हो जाते है। प्राय. ये सम-रेखाएँ एक ठोस रचना के समान किसी स्थल के एक विशद खण्ड को प्रदर्शित करती है। उदाहरण के लिए, दक्षिणी फ्रासीसी-क्षेत्र को [k] से चिह्नित किया गया है, जो Chandele की आरम्भिक ध्वनि है।

19.3.2. किन्तु कभी-कभी इससे भी अधिक जटिल प्रस्तुतीकरण छितरे हुए समुदायों के सम्बन्ध मे होता है। इन्हें अतिरिक्त रेखाओ द्वारा अकित करने की परम्परा है, जिससे एक रूप वाले स्थान घेरे से अन्तर्गत आ जाएँ। इसके अतिरिक्त अन्य समुदाय जहाँ पर कोई एक अन्य रूप बिखरा हुआ मिलता है

(उदाहरणार्थ ALF मे rabbin के लिए Comin), जिसे जोड़ना कठिन होना है, तो उसे (समभाषाश रेखा को) भी बिखरे हुए घेरो म दिखाया गया है।

19.3.3. इस प्रकार की जटिल परिस्थितियो म विविध प्रकार के परम्परागत चिन्हो का उपयोग किया गया है, जिनम चतुष्कोण, त्रिकोण, धन, गुणक, ऋण, तारा, आदि के चिन्ह है। अनेक मानचित्रावलियो में समभाषाश रेखाओ क पूर्ण प्रदर्शन के बिना ही इस प्रकार के चिन्हो को अंकित करने की परम्परा है।

19.3.4. अमरीकी मानचित्रावलियो की सामग्री को प्रदर्शित करने वालो के सम्मुख दूसरे ही प्रकार की समस्याएँ रही है, क्योकि उनके सयोजको ने एक स्थान के प्रतिनिधित्व के लिए एक से अधिक समुदायो का चयन किया है। इस प्रकार प्रत्येक स्थान पर एक वृद्ध तथा अशिक्षित सूचक तथा एक अपेक्षाकृत कम वृद्ध व अधिक आधुनिक सूचक का उपयोग किया गया है। कुछ विशेष स्थानो में एक तीसरे प्रकार के सूचक का भी समावेश है—पूर्ण शिक्षित और सस्कृत वक्ता, जो उस क्षेत्र के शिष्ट प्रयोग का प्रतिनिधि है। इस प्रकार मानचित्र म एक ही स्थान पर शब्दो के अनेक रूप मिलते हैं (यथा Sot down, set down, व sat down), जो आधुनिक व शिष्ट प्रयोगो के प्रतिनिधि है। इतना ही नही, एक सूचक कभी कभी तो एक से अधिक शब्द-रूपो का प्रयोग करता है। उदाहरण के लिए, McDavid को एक सूचक ने see के परोक्ष भूत वाले चार रूप दिए थे—(9) seen, seed, saw, तथा see रूप।[2] इन उदाहरणों में स्पष्टतया यह असम्भव है कि sot, set, या sat को पृथक् करने वाली कोई रेखा खीची जाए तथा यह भी अव्यावहारिक होगा कि sot के क्षेत्रों को ही अंकित किया जाए, जब कि अन्य उदाहरणो में एक ही रूप वाले क्षेत्र को अंकित करना सरल होता है।

रेखांकन की ऐसी समस्याओ को हल करने के लिए E B Atwood ने यह सुझाव दिया है कि यदि समभाषाशो को दो भाषिक सीमा के मध्य विभाजक रेखा न मानकर बाहरी सीमा माना जाए, तो समस्या निराकरण (उसका विवेचन) सम्भव है। उन्हो के शब्दो में—'Isoglosses based on American Atlas materials should in all cases be regarded as an outer limit, not as dividing line between the two speech forms'[3]

Atwood ने जिन उदाहरणो के आधार पर इस प्रकार के समभाषाशो के प्रदर्शन की चर्चा की है, वे वस्तुत आदर्श व ग्राम्य बोलियो के प्रदर्शन से सम्बद्ध है। किन्तु ऐसे भी अनेक रूपो के युग्म मिलते हैं, जो अपने अपने क्षेत्र में आदर्श

है।[4] इन युग्मो के लिए भी हम उपर्युक्त पद्धति का प्रयोग कर सकते है। इन स्थितियो में हमे सर्वप्रथम बाहरी सीमा का एक रूप अंकित कर लेना चाहिए। तत्पश्चात् इसी प्रकार अन्य रूपो को भी चिन्हित किया जा सकता है। कुछ स्थानो पर दोनो रेखाएँ एक दूसरे से टकराएँगी तथा मिले जुले प्रयोग वाले समुदाय को घर लेंगी। इस प्रकार की विभाजक रेखा को Atwood ने 'दुहरे समभाषांश' कहा है।[5]

19.4. मानचित्रांकन मे सैद्धान्तिक व व्यवहारिक कठिनाइयाँ

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि पूर्ण भेदक्ता की चित्रात्मकता में अभी सैद्धांतिक तथा व्यावहारिक समस्याएँ है। शब्द-भूगोल म अद्यावधि रेखांकन की पद्धति के विकास की आवश्यकता है। इन कठिनाइयो का हल दैत्याकार मानचित्र ही कर सकते है, जो अभी अव्यावहारिक प्रतीत होते है।

अभी तक शब्द-मानचित्रो मे भाषिक विभेदो के भौगोलिक विवरण को उपचिह्नो की पद्धति से प्रस्तुत करने की जो परम्परा है, उसमें उपचिह्नो के अंकन में भाषिकेतर पक्षो पर विचार नही किया जाता। जब तक विविध आयामो वाले शब्द-भूगोल के परिणामो (मानचित्रो) को प्रस्तुत करने के लिए किसी विश्वसनीय पद्धति का आविष्कार नही हो जाता, तब तक मानचित्रावलियो में रेखांकन का कार्य पूर्ण नही कहा जा सकता।

19.5. कुछ गौण युक्तियाँ

मुद्रणालय में प्रकाशित होने वाली मानचित्रावलियो में कुछ गौण युक्तियो का भी प्रयोग किया गया है, जो अधोलिखित है—

(क) भांति भाँति की रेखाओ से चित्रण
(ख) भाँति भाति की सख्याओ स चित्रण
(ग) रेखाओ का अक्षर-क्रम से अभिधान
(घ) विविध रङ्गो स प्रदर्शन

चूँकि मानचित्रावली के मानचित्रो को चिह्नित करना अनुपयोगी है, क्योंकि शब्द मानचित्रावली एक मूल्यवान् (व्ययसाध्य) सम्पत्ति है, जिस बहुत कम लोग अपने लिए रख सकते हैं या यदि वह किसी की सम्पत्ति है, तो कोई भी उसे विनष्ट नही करना चाहेगा। अतएव आज विश्लेषक अपने मानचित्रो को कोरे कागज या 'आधार मानचित्रो' में दिखाता है, जो मानचित्रो से आच्छादित क्षेत्रो के एक प्रकार से भूरेखीय मानचित्र होते है। ऐसे मानचित्रो मे मानचित्रावली के स्थानो की सख्याएँ लिखी रहती हैं।

19.6. मानचित्रों के प्रकार

भाषिक भिन्नता को प्रदर्शित करने के लिए शब्द-भूगोल के अन्तर्गत आज चार प्रकार के मानचित्रों का प्रयोग होता है—

19.6.1. ध्वनिप्रक्रियात्मक मानचित्र

इसमें एक ही शब्द के अन्तर्गत मिलने वाली उच्चारणगत भिन्नता दिखाई जाती है।

19.6.2. रूपप्रक्रियात्मक मानचित्र

यह व्याकरण की भिन्नताओं को द्योतित करता है।

19.6.3. शब्दप्रक्रियात्मक मानचित्र

इसमें एक वस्तु या क्रिया को दिखाने के लिए किसी क्षेत्र के लोगों द्वारा प्रयुक्त विभिन्न शब्दों को दिखाया जाता है।

1.96.4. अर्थप्रक्रियात्मक मानचित्र

इसमें शब्द के विविध अर्थों का चित्रांकन होता है। शब्द-भूगोल से हम बोली-क्षेत्रों की तुलना के अतिरिक्त समनामता से उत्पन्न शब्दप्रक्रियात्मक विकास के लिए कसौटियों का ही अनुमान नहीं करते, अपितु एकार्थता व अनेकार्थता के विविध पक्षों का भी अनुमान लगा लेते है। अनेक श्रेणियों में प्रतिबिम्बित करने की विचारसरणि को प्रारम्भ करने के बजाय यदि इसको शब्द से प्रारम्भ करते हैं, तो हम यहाँ अर्थप्रक्रियात्मक मानचित्र बना सकते हैं—जहाँ एक ही शब्द के भिन्न अर्थ परस्पर पृथक् क्षेत्रों की विशिष्टता को बताते हैं तथा उन्हें भी चित्रित कर सकते हैं, जहाँ अध्यारोपण की प्रक्रिया अभी तक पूर्ण नहीं हुई, किन्तु गतिशील है, या जहाँ अर्थकीय क्षेत्र परचापसरण करते हैं तथा एक–दूसरे से सम्पर्क खो बैठते हैं। उनकी अनेक स्थितियाँ अर्थकीय क्षेत्रों की तुलना में देखी जा सकती हैं।

इस प्रकार किसी क्षेत्र के परिपार्श्व में अर्थ कम स्थिर व निर्बल होते हैं, जब कि मध्य क्षेत्र में वे एक निश्चित क्रम को पहुँचने के लिए समूची प्राणशक्ति के साथ संघर्ष करते है।

अनेकार्थता बोलचाल की भाषा में घटित होती है। उस समय विशेष रूप से देखी जा सकती है, जब मानवीय कार्यकलाप के एक ही क्षेत्र में दो विचार सम्मिलित रहते हैं।

15.7. शब्द-मानचित्रावली का परीक्षण

शब्द मानचित्रों व उनके विवरणात्मक स्वरूप को समझने के लिए हमारे पास

पूर्वस्थापित प्रक्रिया है। सर्वप्रथम हम वितरणों की यथासम्भव व्यापकता पर विचार करते हैं। उदाहरण के लिए बघेलखण्ड में 'वटिहा' के वितरण को देखना चाहेंगे। विविध मानचित्रों के वितरणात्मक पक्ष पर विचार कर लेने के पश्चात् हम इन महत्वपूर्ण बातों पर ध्यान देते हैं—

(क) सर्वप्रथम हम वितरण पद्धति के उद्भव व उसकी महत्वपूर्ण सीमाओं पर विचार करते है। यदि उसमें कालावधि भी जोड़ दी जाए, तो कहना होगा कि हम शब्द-रूप के प्रसार—क्षेत्र व समय पर विचार करते है।

(ख) यदि हम प्रसार के मार्ग को समझाने में समर्थ हो सकें, तो सम्भवतः हम उसके स्थान व उत्पत्ति के समय को भी खोजने में समर्थ हो सकेंगे।

(ग) मानचित्रों की ऐतिहासिक व्याख्या के आधार पर शब्दों की यात्रा, समय, व क्षेत्र का ज्ञान सम्भव है—इसे अधस्तन रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है—

समकालिक व्याख्या ↓		कालानुक्रमिक व्याख्या ↑
	1. क्षेत्र का वितरण	
	2. प्रसार की दिशा	
	3. उत्पत्ति स्थल	
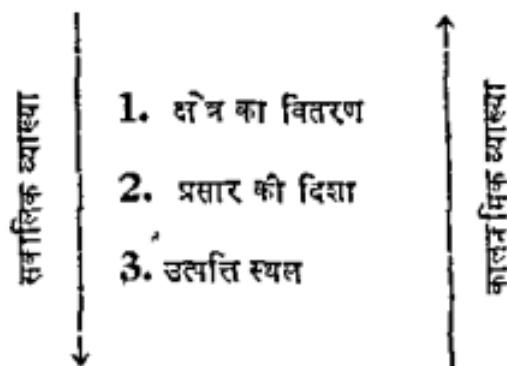
19.8. मानचित्रों में बोली-सीमा

मानचित्रों में बोली-सीमा की चर्चा उस समय सम्भव है जब वितरण की अनेक सीमाएँ या तो मिल जाती हैं या पास-पास चलती है, जिससे मानचित्रों में 'रेखाओं के सघात' दिख जाते है। इस रीति से हमारी विश्लेषण-विधि सांस्कृतिक भूगोलवेत्ताओं के समान है।

बोली-सीमाओं को निर्धारित करने के लिए हमारे पास एक सरल विधि है—हम यथासम्भव अधिकाधिक मानचित्रों को एक के ऊपर दूसरे को रख कर पराच्छादन विधि से सीमाओं को अंकित करते हैं, जहाँ सघात गुँथे होते है। इस कार्य के लिए पारदर्शी कागज पर बने आधार मानचित्र उपयोगी होते हैं। इन सघातों के भीतर बोली-सीमाओं को खोज लेना सरल है।

बोली-क्षेत्रों को समझने के लिए अधोलिखित बातों पर विचार करना आवश्यक है—

(क) बोली-क्षेत्र या बोली-सीमा

(ख) बोली-प्रसार

(ग) प्रतिष्ठा-केन्द्र

बोली-क्षेत्रों का निर्धारण केवल केन्द्र-स्थल व प्रसार-क्षेत्रों से ही नहीं होता, अपितु मानचित्रण-प्रविधि की गुणात्मकता की दृष्टि से उसमें, धर्म राजनीति, समाज, अर्थ, आदि का भी योगदान हो सकता है। अग्रिम अध्यायों में इस पर विस्तृत चर्चा है।

टिप्पण और सन्दर्भ

1. J. J. Gumperz, 'Phonological differences in three Hindi dialects,' Language (19›8) 34 : 212-24.

Robert A. Hall, Introductory Linguistics, Philadelphia,

2. Raven I. Mc David, 'Ought't and Had'nt ought' College English, May 1953.

3. E. Bagby Atwood, 'A study of geographical Variation,' Studies in English, 1950.

4. Hans Kurath के A Word geography of Eastern United States में Pail तथा bucket का 66 वाँ मानचित्र।

5. E. Bagby Atwood, Ibid.

20

मानचित्रावली का सम्पादन

20.1. विविध शब्दो की यात्रा का विवरण तथा उनका भाषिक व भाषिकेतर मूल्याकन बहुविध मानचित्रों के माध्यम से ही सम्भव है। 'बघेलखंड की शब्द मानचित्रावली' में इस प्रकार के 400 मानचित्रो की सहृति से लोकव्यवहार मूलक शब्द यात्रा का प्रवर्तन है—

लोकस्य व्यवहारेण शब्दयात्रा प्रवर्तते।

20.2. 'बघेलखड की शब्द-मानचित्रावली' के अध्ययन का अनुभाग यद्यपि सम्पूर्ण बघेलखंड है, तथापि उसके पार्श्ववर्ती नौ जिलो—मिरजापुर, इलाहाबाद, बाँदा, पन्ना, जबलपुर, मडला, बालाघाट, बिलासपुर, व सरगुजा—के आंशिक या पूर्ण क्षेत्र को मानचित्रानुक्रम 357 में सम्मिलित किया गया है, जिससे सममापाश-रेखाओ के प्रसार की दिशा का सकेत मिल सके।

20.3. मानचित्रों के विविध वर्ग और परिचयात्मक मानचित्र

मानचित्रावली के मानचित्रो को सुविधा की दृष्टि से सात वर्गों मे विभाजित किया जा सकता है। प्रथम वर्ग (I-XXV) परिचयात्मक मानचित्रो का है। इसके लिए यद्यपि Survey of India तथा The Census of India में सामग्री मिलती है, तथापि सम्पूर्ण बघेलखड के पृथक् विवरण को प्रस्तुत करने वाले पृथक् मानचित्रो का अभी तक प्रकाशन नही हुआ। परिचयात्मक मानचित्रों में नवीनता यह है कि बघेलखड के चार जिलो की जनगणना-प्रतिवेदनीय सामग्री को एक ही मानचित्र में सुव्यवस्थित रूप से प्रस्तुत कर दिया गया है। इन पच्चीस मानचित्रो के माध्यम से अग्रिम वर्गों में परिगणित शब्द-मानचित्रो को समझने में सहायता मिलेगी।

20.4. मानचित्रार्थ सामग्री का परिमाणी-प्रतिचयन—द्वितीय खंड के पंचम अधिकरण में संग्रहीत सामग्री को यहाँ परिमाणी-प्रतिचयन के माध्यम से मानचित्रांकित किया गया है। परिणामस्वरूप ऐसे शब्दो को ही मानचित्रण के लिए उपयुक्त माना गया है, जो सुस्पष्ट उपबोली-सीमा को बनाने मे सहायक हो। इस विधि से द्वितीय खण्ड के पंचम अधिकरण में विवेचित 282 शब्दो की सामग्री में 50 शब्दो को मानचित्र के योग्य नही समझा गया। ये अ—मानचित्रित शब्द (बघेलखंड का शब्द-भूगोल, चतुर्थ खंड, परिशिष्ट) भाषिक अभिरचना की दृष्टि से अधस्तन सारणी में शब्दानुक्रमेण निर्दिष्ट है—

शब्दानुक्रम (पंचमाधिकरण के अनुसार)	ध्वनिप्रक्रियात्मक	रूपप्रक्रियात्मक	शब्दप्रक्रियात्मक	अर्थप्रक्रियात्मक
	9,10,17 19,32, 281	143,171, 177,198 217,223, 235,240, 249,251	51,62,71, 82,85,87, 97,103, 118,187, 189	21,24,30,33,37, 49,55,61,67,75, 80,81,86,96, 100,105,261, 268,269,270,279
कुल शब्द	6	10	11	23

इस प्रकार उपर्युक्त सामग्री के अतिरिक्त शेष 232 शब्दों पर आधारित कुल एकल मानचित्र 350 है।

20.5. विविध शब्द-मानचित्र

मानचित्रावली के सभी शब्द-मानचित्रो को संकालिक दृष्टि से प्रस्तुत किया गया है, जिससे विविध परिवर्तों या वर्णनात्मक अभिरचना का बोध हो सके। संरचनात्मक या ऐतिहासिक मानचित्र इनके आधार पर बनाए जा सकते हैं।

शब्द-मानचित्रो को अधोलिखित चार वर्गों में विभाजित किया गया है।

ध्वनिप्रक्रियात्मक मानचित्र—56

रूपप्रक्रियात्मक मानचित्र —180
शब्दप्रक्रियात्मक मानचित्र—71
अर्थप्रक्रियात्मक मानचित्र—43

ध्वनिप्रक्रियात्मक मानचित्र

मानचित्रों के इस (द्वितीय) वर्ग के अन्तर्गत 39 शब्दों में मिलने वाली ध्वनियों का विविध स्थितियों के आधार पर विश्लेषण करने के पश्चात् 56 मानचित्र बनाए गए हैं। इन मानचित्रों को अधोलिखित प्रमुख दस शीर्षकों में उपस्थित किया गया है।

1. स्वरसवादी मानचित्र	मानचित्रानुक्रम	1-15
2. सन्ध्यक्षर सवादी मानचित्र	,,	16
3 अनुनासिक सवादी मानचित्र	,,	17
4. शून्य स्वर सवादी मानचित्र	,,	18-19
5. व्यजन-सवादी मानचित्र	,,	20-37
6. शून्य व्यंजन-सवादी मानचित्र	,,	38
7 स्वरक्रम सवादी मानचित्र	,,	39-46
8 व्यजनगुच्छ संवादी मानचित्र	,,	47 52
9 सन्धिज-सवादी मानचित्र	,,	53
10 अक्षर सवादी मानचित्र	,,	54-56

रूपप्रक्रियात्मक मानचित्र

तृतीय वर्ग मे रूपप्रक्रियात्मक मानचित्र सम्मिलित है। इनमें 133 रूप-साधक तथा 47 व्युत्पादक मानचित्र अधस्तन दस शीर्षकों में क्रमबद्ध है—

1. मूलक्रिया-रूपसाधक मानचित्र	57-85
2 सहायक क्रिया-रूपसाधक मानचित्र	86 116
3 प्रेरणार्थक रूपसाधक मानचित्र	117 118
4. कृदन्तीय रूपसाधक मानचित्र	119 133
5. सज्ञा रूपसाधक मानचित्र	134 146
6. सर्वमान-रूपसाधक मानचित्र	147-174
7. सार्वनामिक विशेषण रूपसाधक मानचित्र	175 189
8 सार्वनामिक क्रियाविशेषण-रूपसाधक मानचित्र	190 196
9. कारकीय परसर्गों व प्रत्ययों के वितरणात्मक मानचित्र	197-220
10 बलवाची-रूपव्युत्पादक मानचित्र	221-236

शब्दप्रक्रियात्मक मानचित्र

मानचित्रानुक्रम 237-307 तक के मानचित्र शब्दप्रक्रियात्मक है। विषया-
नुसार इन मानचित्रों को 19 शीर्षकों में नियोजित किया गया है—

1. उत्सव	237
2. रिश्ते-नाते व विकृतियाँ	238-42
3. वस्त्र	243-48
4. जीव-जन्तु व पशु-पक्षी	249-55
5. शरीराङ्ग	256
6. निषिद्ध वस्तु	257
7. खाद्य पदार्थ एवं पेय	258-62
8. पेड़-पौधे तथा फल-फूल	263-70
9. कृषि	271-73
10. घरेलू उपयोग की वस्तुएँ	274-75
11. रसोईघर की वस्तुएँ	276-77
12. मकान आदि	278-81
13. गृहस्थी से सम्बद्ध	282-86
14. क्रिया	287
15. सर्वनाम	288-90
16. विशेषण	291-95
17. कारकीय परसर्ग	296-301
18. क्रियाविशेषण	302-306
19. समुच्चयबोधक अव्यय	307

अर्थप्रक्रियात्मक मानचित्र

पंचम वर्ग में परिगणित 43 अर्थप्रक्रियात्मक मानचित्रों का वर्गीकरण अ
कीय कोटियों के अनुसार है—

1. गणनात्मक मानचित्र	308-11
2. भावना व विश्वासद्योतक मानचित्र	312-14
3. परिमापात्मक मानचित्र	315-16
4. अनेकार्थक मानचित्र	317-31
5. समनामिक मानचित्र	332-40

6. व्याकरणिक रूपो के विसंवादी मानचित्र 341-50 अन्तिम उपवर्ग

मानचित्रो मे व्याकरणिक रूपो के परस्पर संघर्ष को प्रदर्शित किया गया है तथा उनसे उत्पन्न होने वाली अस्पष्टता पर सुस्पष्ट विचार है ।

20.6. संघातात्मक मानचित्र

षष्ठ वर्ग के मानचित्रो में मानचित्रो की एकल विशेषताओ या चित्रण न हो कर उनकी समरेखाओ के सघातो का विवेचन है । इस प्रकार 1-350 तक के मानचित्र केवल समभाषाशो के अभिव्यंजक है, जब कि षष्ठ व सप्तम वर्ग के मानचित्र उनकी समरेखाओ के सघानात्मक चित्र को उपस्थित करते हैं । समभाषाश-रेखाओ के संघातो के रेखाकन में बाहरी सीमा को ही आधार माना गया है । संघातात्मक मानचित्रो मे समध्वनिरेखाओ के सघात (351), समरूप-रेखाओं के संघात (352), समशब्द-रेखाओ के संघात (353), तथा समार्थ-रेखाओ के सघात (354) वाले मानचित्र है ।

20.7. उपबोलीक्षेत्रानुबोधक मानचित्र

सप्तम वर्ग के मानचित्र यद्यपि प्रकृत्या सघातात्मक मानचित्र ही हैं, तथापि उनसे उपबोली-क्षेत्रो की सीमाओ की सुस्पष्टता का भी ज्ञान होता है । 355 सख्याक मानचित्र में केवल चार से कम सघातो के परस्पर आच्छादन के आधार पर जो 17 उपबोली-क्षेत्र प्रकल्पित है, वे इस सत्य के उद्घोषक है कि एकमात्र समशब्द-रेखाओ के माध्यम से बोली क्षेत्रो के विभाजन का अब तक प्रचलित भाषा-भूगोलवेत्ताओ का सिद्धान्त वैज्ञानिक नही है तथा सघातचतुष्टय की सह-सम्बद्धता के आधार पर ही बोली क्षेत्रो का वैज्ञानिक रीति से सीमाकन सम्भव है । 356 सख्याक मानचित्र में इसी प्रकार की सहसम्बद्धता के आधार पर 15 उपबोलीक्षेत्र निश्चित होते है । 357 सख्याक मानचित्र में बघेलखण्ड के उप-बोलीक्षेत्रो की बाहरी सीमा अंकित है । 358 वे मानचित्र मे कैमोर पर्वत तथा सोन नदी को समभाषाश-रेखाओ के प्रसार के प्रमुख अवरोधक के रूप मे चित्रित किया गया है । 359-73 तक के मानचित्रो मे बघेलखड के पृथक्-पृथक् 15 उपबोलीक्षेत्रो की सीमाएँ निर्धारित की गई है तथा 374 वें मानचित्र में सम्मिश्र शब्दो के क्षेत्रो की कल्पना है व 375 वें मानचित्र में परम्परागत बोलीक्षेत्रो—नवप्रवर्तन-क्षेत्र, सक्रमण-क्षेत्र, तथा अवशिष्ट क्षेत्र—का निदर्शन है ।

20.8. मानचित्रो के उपर्युक्त वर्गीकरण से स्पष्ट है कि यद्यपि मानचित्र विषय-क्रम में हैं, तथापि प्रत्येक मानचित्र किसी भी पूर्ववर्ती या परवर्ती मानचित्र से उतना ही सम्बद्ध किया जा सकता है, जितना कि किसी अन्य से । इसी प्रकार प्रत्येक मानचित्र परवर्ती मानचित्र के अध्ययन के लिए कुछ नवीन मूल्यो को लेकर

उपस्थित होता है तथा विविध मानचित्रो की तुलना के माध्यम से अनेकविध निष्कर्ष प्राप्त किए जा सकते है।

20.9. मानचित्नावली की मौलिकता

शब्द-मानचित्रावली म नब्बे प्रतिशत मानचित्र ऐसे विषयो से सम्बद्ध है, जो इनसे पूर्व कभी मानचित्रित नही हुए शेष दस प्रतिशत मानचित्रो म ऐसी सूचनाएँ अकित है, जिन पर पहले से सामग्री तो मिलती है किन्तु जिनका प्रस्तुतीकरण सर्वथा नवीन है।

20.10. मानचित्नावली की उपयोगिता

मानचित्रावली में सन्निविष्ट 1 236 तक के मानचित्रो से बघेलखडी बोली के अध्येता ही नही, अपितु हिदी व गोडी बोलियो म रुचि लेने वाले भाषाविज्ञानी भी सूचनाएँ प्राप्त कर सकते हैं। 237 350 पर्यन्त मानचित्र केवल भाषाविज्ञानी के लिए ही उपयोगी नही है, अपितु समाजशास्त्री, मनोवैज्ञानिक, व शब्द-यात्रा में रुचि रखने वाले लोगो के लिए भी प्रेरणास्पद सिद्ध हो सकते है। नृतत्त्वशास्त्रियो के लिए यह विशेष उपयोगी सिद्ध हो सकती है, क्योकि इसके लिए दो तिहाई सूचनाएँ आदिवासी सूचको से ही जुटाई गई है। इसके आधार पर 'जातिभाषिक मानचित्रावली' की सम्भावनाओ पर भी विचार किया जा सकता है।

शब्द भूगोलवेत्ता इन मानचित्रो के आधार पर ऐतिहासिक व सरचनात्मक मानचित्रो की रचना कर सकते है तथा शब्द भूगोल से सम्बद्ध विविध सैद्धान्तिक समस्याओ पर सर्वथा नए ढग से विचार किया जा सकता है।

21

मानचित्रण-प्रविधि

21.1. आधार मानचित्र

बघेलखंड की शब्द-मानचित्रावली के निमित्त आधार मानचित्र का अंकन Survey of India के Nagpur Plate से किया गया है। स्थानों का निर्देश 1-200 तक की संख्याएँ करती है। तथा प्रत्येक अंक के पास उसकी यथार्थ स्थिति की सूचना देने वाला बिन्दु भी है। संपादन के समय इस बात का विशेष ध्यान दिया गया है कि संकेत या विविध रंगों का प्रयोग यथार्थस्थितिज्ञापक बिन्दु पर ही हो।

मानचित्रों के भीतर अंकित संख्याएँ साकल्येन समुदायों व सूचकों की क्रमिक संख्याओं को प्रस्तुत करती हैं, जिन पर विस्तृत सूचना बघेलखंड के शब्द-भूगोल के द्वितीय खंड से जुटाई जा सकती है।

21.2. मानचित्रों की मापनी

अधिकांश मानचित्र 1″ 20 मील व 1″ 16 मील के मापों में से किसी एक माप से सम्बद्ध है। प्रथम प्रकार की माप वाले 243 मानचित्र व द्वितीय प्रकार की माप वाले 134 मानचित्र है। इनके अतिरिक्त शेष 3 मानचित्र अपेक्षाकृत भिन्न-भिन्न माप वाले है। मानचित्रों की स्वतन्त्र स्थिति को ध्यान में रख कर प्रत्येक मानचित्र में मापक संकेत को भी अनिवार्यरूप से प्रस्तुत किया गया है।

21.3. मानचित्रों का प्रक्षेपण

बघेलखंड व उससे संलग्न क्षेत्रों के सभी मानचित्र Survey of India के प्रक्षेपण के अनुरूप है। बघेलखंड के मानचित्रों के अन्तर्गत 20° 3′ व 25°

12′ उत्तरी अक्षांश तथा 80° 21′ व 83° 51′ पूर्वी देशांश का मध्यवर्ती क्षेत्र आता है, जो कुल 14258 वर्ग मील में व्याप्त है।

21.4. मूलभूत सूचना

मानचित्रावली के परिचयात्मक वर्ग के मानचित्रों की सूचनाएँ Survey of India, the Census of India, व बघेलखड के विविध देशी राज्यों की भूगोल की पुस्तकों से जुटाई गई हैं, जब कि शेष मानचित्रों के लिए लेखक ने स्वयमेव सकलित की है, जिसका सम्पादन द्वितीय खड के पचम अधिकरण म किया गया है।

21.5. मानचित्रों का रूपाकन

मानचित्रों का रूपाकन पृथक् मानचित्र की आवश्यकतानुसार विविध सङ्केतो, रङ्गो, व रेखाओं से किया गया है। समभाषाशो के प्रदर्शन म सङ्केतो व रङ्गो का आश्रय लिया गया है तथा समभाषाशो के प्रसार की दिशा समरेखाओ के माध्यम से निर्दिष्ट है। सङ्केतो को इस रीति से सुस्पष्ट किया गया है कि वे एक ही दृष्टि में समरूपी तथा असमरूपी तत्वों को प्रदर्शित कर दें। अतएव जहाँ अनेक सङ्केतो की आवश्यकता पडी है, वहाँ विविध सङ्केतों को भाँति भाँति के रङ्गो में दिखाया गया है। शब्द प्रक्रियात्मक मानचित्रो म सङ्केतो व रङ्गो की सर्वथा नूतन प्रकल्पना है। इसकी पूर्ववर्ती मानचित्रावलियो में किसी वस्तु के लिए प्रयोग में आने वाले विविध सङ्केत शब्दो को तो दिखाया गया था, किन्तु किसी एक शब्द क परिवर्तों (ध्वनिकीय अपन्यय वाले एक ही शब्द के विविध भेदो) की चर्चा नहीं की गई थी। लेखक ने पहली बार एक वस्तु के लिए प्रयुक्त विविध शब्द व उन शब्दो के अन्तर्गत मिलने वाले विविध परिवर्तनो को भी प्रस्तुत किया है, जिससे शब्दयात्रा के विविध रूपो को देखा जा सकता है। इस प्रकार, समान रङ्गो में चित्रित विविध सङ्केत एक ही शब्द के विविध परिवर्तों के वाचक है। शब्दप्रक्रियात्मक मानचित्रो को रोमन अक्षरो में सकेतित किया गया है, जब कि अन्य मानचित्रो को परम्परागत चिह्नो म दर्शाया गया है, जिनमें वृत्त, चतुष्कोण, त्रिकोण, तारा, आदि है।

351-57 तक की सख्यानुक्रम वाले मानचित्रो के निर्माण के अपेक्षाकृत अधिक व्ययसाध्य विधि का आश्रय लेना पडा था, जिसके फलस्वरूप 1″ 8 मील के बृहत्काय मानचित्रो का निर्माण करवाना पडा था तथा पराच्छादन—विधि से एकैक मानचित्रो की समरेखाएँ अंकित की गई थी, जिन्हे समध्वनिरैखिक मानचित्र, समरूपरैखिक मानचित्र, समशब्दरैखिक मानचित्र, तथा समार्थरैखिक मानचित्र के रूप में वर्गबद्ध किया गया था। इस प्रकार की रेखाओ के सवादी मानचित्रो के

नमूने 1-10 तक के मानचित्रो में मिलेंगे। प्रत्येक मानचित्र के रैखिक चित्र की 'मानचित्रावली' में सम्मिलित नही किया गया, क्योकि प्रत्येक की चार-चार प्रतियों के निकलवाने का तात्पर्य था लगभग 10,000 रुपयो का अधिक आर्थिक भार, जिसको वहन करना लेखक की आर्थिक सीमाओं से परे था।

ध्वनि, रूप, शब्द, तथा अर्थ के एकल मानचित्रो के पराच्छादन से क्रमश समध्वनिरेखाओ के संघात, समरूपरेखाओ के संघात, समशब्दरेखाओ के संघात, व समार्थरेखाओं के सघात के वाचक अनुक्रमेण 351-54 मानचित्र मूलप्रति की छाया हैं। इन चारो प्रकार के सङ्घातो के प्रतिचयन के पश्चात् समभापाश-रेखाओ के सघातो की प्रकल्पना की गई थी, जिसका वाचक मानचित्रानुक्रम 357 है। 356 संख्याक मानचित्र केवल तीन प्रकार के सघातो के पराच्छादन पर आधारित है। इसे मैंने 'ऋणात्मक समभापाश-रेखाओं के सघात' के नाम से प्रकल्पित किया है।

रूपाकन-कार्य की अवधि में ऐसा अनुभव हुआ है कि समभापाश-रेखाओ के संघातो की रचना-प्रक्रिया की सुस्पष्ट व्याख्या के लिए 1″ 1 मील के मानचित्र अधिक सहायक हो सकते हैं। इस प्रकार के मानचित्रो के निर्माण का कार्य अधिक व्ययसाध्य है।

21.6. शब्दानुक्रम व संकेत-शब्द

1-350 तक के मानचित्रो मे शब्दानुक्रम भी दिया गया है, जिसके आधार पर किसी विशिष्ट मानचित्र की सामग्री, समुदाय, व सूचक पर द्वितीय खण्ड से विस्तृत भाषिकेतर व भाषिक सूचना जुटाई जा सकती है तथा प्रश्नविधि पर ध्यान दिया जा सकता है।

मानचित्रों के निचले भाग में सकेत शब्द भी वे दिए गये है। संकेत-शब्द का निर्धारण परम्परागत ऐतिहासिक (व्युत्पत्तिमूलक) दृष्टि से न कर बघेलखंड के समुदायो में किसी शब्द-रूप की प्रधानता के आधार पर किया गया है, जो विशुद्ध सद्धान्तिक दृष्टि ही कही जायेगी।

21.7. मानचित्रानुक्रमणिका व मानचित्रित शब्द-रूपावली

मानचित्रावली के प्रारम्भ में मानचित्रानुक्रमणिका दी गई है तथा उसके पश्चात् मानचित्रित शब्द-रूपावली प्रस्तुत है इस प्रकार मानचित्रानुक्रमणिका व मानचित्रित शब्द रूपावली दोनों के ही माध्यम से वाञ्छित मानचित्र को खोजने में सहायता मिलेगी। प्रथम से वर्गानुसार मानचित्रो की जानकारी मिल सकती है तथा द्वितीय से अकारादिक्रम से विविध मानचित्र खोजे जा सकते हैं।

21.8. पारदृश्य मानचित्र

मानचित्रावली के अन्त में दो पारदृश्य मानचित्र भी संलग्न है। इनमें से प्रथम समरैखिक रेखाओं के सङ्घातों के अकन के एक नमूने के रूप में है। विभिन्न मानचित्रों को समझने के लिए 1″ 16 मील के द्वितीय मानचित्र को मानचित्रावली से पृथक् कर उपयोग में लाया जा सकता है।

पंचम अधिकरण

सिद्धान्त

22. समभाषांश तथा समभाषांश रेखाएँ
23. समभाषांश-रेखाओं के संघात और बोली-सीमा
24. परम्परागत बोली-क्षेत्र
25. नवप्रवर्तन और आदान
26. प्रत्येक शब्द का अपना निजी इतिहास होता है
27. शब्दप्रक्रियात्मक विकास
28. भाषिक अयस्तलता

22

समभाषांश तथा समभाषांश-रेखाएँ

22.1. मानचित्रावली की सामग्री का मानचित्र या सारणियों में सग्रह या अङ्कन करने के पश्चात् विश्लेपक उसके भौगोलिक वितरण का कार्य प्रारम्भ करता है। उसका प्रथम व सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्य इन मानचित्रो में किन्ही, भाषिक तत्वो के विस्तार का सकेत व रेखाओ का अकन होना है, जिसे परम्परया क्रमश समभापाश व समभापाशरेखा कहा जाता है।

22.2. समभापाश रेखाओ की कल्पना का आधार

समभापाश रेखाओ की कल्पना सम्भवत ऋतु-मानचित्रों म खीची जाने वाली रेखाओं के अनुकरण पर हुई है। ऋतुविज्ञान में समभाररेखा या समतापरेखा के सम्बन्ध में कहा जाता है कि वह एक ऐसी काल्पनिक रेखा है, जो पृथ्वी की सतह पर उन बिंदुओं से होकर गुजरती है, जिनका एक सा भार या ताप होता है। ऐसी स्थिति म Simeon Potter ने कहा है कि समभापाश रेखा एक ऐसी रेखा है, जो ऐसे स्थानो से गुजरती है, जहाँ के निवासी एक ही प्रकार के भापाश का प्रयोग करते है।[1]

समभापाश रेखाओं को साकल्येन 'समभाररेखा' के सन्दभ म प्रस्तुत करना उपयुक्त नही प्रतीत होता, क्योकि वे सम्बन्धो को जोड़ने वाली नही होती, अपितु समान लक्षणो को बताने वाले क्षेत्रो को पोरवेष्टित करने वाली या सलग्न करने वाली भी होती हैं। तदनुसार W P. Lehman ने कुछ सशोधन के साथ इस व्याख्या को इस प्रकार प्रस्तुत किया है—'समभाररेखा तथा समतापरेखा की रीति पर समभापाश—रेखा एक ऐसा शब्द है, जो एक स्थान से दूसरे स्थान तक खीची गई रेखा का बोधक है व जिसके साथ अन्य उल्लेखनीय विशेपताएँ भी रहती हैं।[2]

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि समभाररेखा समान वायुभार के बिन्दुओ को मिलाती है, जब कि समभाषाश रेखा समान भाषाश वाले बिन्दुओ से नही खीची जाती। समभाषाश रेखाओ का कार्य विविध लक्षणो वाले क्षेत्रो को प्रदर्शित करना होता है, J T Wright के अनुसार यातायात में 'अल्पसचार-रेखा' के समान है।[3] इस प्रकार समभाषाश रेखाएँ या तो एक-दूसरे का परिचय देती है या संवारती है।[4] इस रूप में 'वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली के स्थायी आयोग, शिक्षा-मन्त्रालय, भारत सरकार' के 'मानविकी शब्दावली भाषाविज्ञान (1969, पृष्ठ 42 में उसे 'समभाषाश-सीमारेखा' कहा गया हो, तो उसकी आशिक उपयुक्त अवश्यमेव है। यह भिन्न बात है कि सग्राहको ने Isogloss, Isoglottic line, Isograph, आदि सभी के लिए उपर्युक्त शब्द का ही प्रयोग किया है, जो सैद्धान्तिक दृष्टि से अतार्किक है। इसके अतिरिक्त यह भी विचारणीय है कि सभी समभाषाश पूर्णरूपेण सीमारेखा बनाने का ही कार्य नही करते।

समभाषाश-रेखाओ की उपमा कटिबन्ध या पट्टी से भी दी जाती है। Hans Kurath ने इन्हे सन्धि रेखा के रूप म प्रकल्पित किया है।[5] उपमेयता की दृष्टि से हम चाहे, तो इन्हे रैखिक सीमाएँ भी कह सकते है। ये सीमारेखाएँ प्राय भाषाशों को एक दूसरे पर प्रत्यारोपित करती हुई अनवरत रूप मे परिवर्तित होती है। अतएव Simeon Potter ने इनकी तुलना वर्णपट के रगो से की है, जो अनुक्रम में एक-दूसरे को (एक रग को दूसरे मे) विलीन करते रहते है।[3]

22.3 विविध परिभाषाएँ और उनकी समीक्षा

22.3.1. समभाषाश-रेखाओ की विविध अभिरचनाओ की व्याख्या तथा उनका भाषिक महत्व उस समय अधिक पुष्ट हुआ, जब जर्मन तथा फ्रेंच-बोलियो की सामग्री का विश्लेषण एव वितरण प्रारम्भ किया गया। इसके अतिरिक्त शब्द-भूगोल के अध्ययन के विकास के साथ साथ परवर्ती शब्द साधको ने पूर्ववर्ती अध्ययनो के आधार पर समभाषाश रेखाओ की वैज्ञानिक परिभाषा प्रस्तुत करने का प्रयास किया। इनमें से कालक्रमिक रूप मे कुछ परिभाषाएँ अधोलिखित है।

1 Bloomfield—'Lines between places which differ to any feature of language (1939)'[7]

2 Sturtevant—Each feature of linguistic difference will tend to have its own boundary which is technically known as isogloss (1947)'[8]

3 Hockett—'the geographical boundaries of usage' (1958)'

4 Gleason – 'A line indicating the limit of same degree of linguistic change (1959)'[10]

5 Steible— A line drawn on a map by a dialect linguist to mauk the outer boundaries or limits of the area in which a regionally distributed feature is found (1967)'[11]

22.3.1.1. इन परिभाषाओ में कोई भी परिभाषा ऐसी नही है, जिससे समभापाश या समभापाश रेखा पर व्यापक अन्तर्दृष्टि मिलती हो, तथापि अन्तिम कथन अपेक्षाकृत सुपरिभाषित कहा जा सकता है। उपर्युक्त मतो की समीक्षा करते हुए हम तद्विषयक अधोलिखित बातो हर विचार कर सकते है।

(क) कुछ विद्वानो (Bloomfield Gleason, Steible) ने समभापाशो को भाषिक रूपो के क्षेत्रीय वितरण व उनकी सीमाओं को बताने वाली एक रेखा माना है, किन्तु समभापाश एक रेखा नही है, अपितु समान भाषिक लक्षणों का वाचक है। Isoglottic line को ही हमे समभापाश रेखा के रूप में स्वीकार करना चाहिए, जैसा Louis H Gray ने स्पष्ट मत व्यक्त किया है।[12] इस प्रकार समभापाश एक तत्व है, भाषिक सत्य है, जब कि समभापाश रेखा उस तत्व की वाचक एक काल्पनिक भौगोलिक रेखा है। अनेक भाषाविज्ञानियो ने इन दोनो को पूर्ण प्रर्याय क रूप में प्रस्तुत किया है हमें इनके मध्य मिलने वाली भेदकता पर सजग रहना चाहिए।

इसके अतिरिक्त हमे यह भी ध्यान में रखना चाहिए कि समभापाश-रेखाएँ काल्पनिक होती हैं, यथार्थ नही। उनसे हम समभापाशों में केवल एक मोटा अन्दाज' लगा सकते है।

मानचित्रो म खींची जाने वाली समभापाश रेखा को न तो पूर्ण हो माना जाना चाहिये, और न ही राजनैतिक क्षेत्रो के समान विभाजक रेखा या सीमा के रूप में ही उसे स्वीकार कर लेना चाहिये, क्योंकि प्रत्येक भाषिक तथा भौगोलिक अध्ययन केवल स्थानो और सूचको के नमूनो का ही प्रतिनिधित्व करते हैं। इतना ही नही, यदि हम किसी क्षेत्र के व्यक्ति की बोली की सामग्री का नमूना प्राप्त कर लें, तो भी हम सीमा निर्धारण की पूर्ण रेखाएँ नही खीच सकते, क्योंकि मानव न तो पौधे हैं और न ही वृक्ष, जो स्थिर रहें। वे निरन्तर एक स्थान से दूसरे स्थान पर गतिशील रहते हैं। यदि सीमाकन की चर्चा आवश्यक है, तो यह कहना अधिक उपयुक्त होगा कि कोई समभापाश रेखा या तो किसी भाषिक लक्षण के

परिणामस्वरूप बाहरी सीमा का प्रतिनिधित्व करती है या आन्तरिक सीमा को बता सकती है। यहाँ यह भी संकेत कर देना आवश्यक है कि आन्तरिक सीमा के अन्तर्गत तुलनीय रूप नहीं होते।

(ख) अन्तिम परिभाषाकार के अतिरिक्त किसी विद्वान ने यह चर्चा नहीं की कि तथाकथित ये सीमाएँ कहाँ अंकित की जाएँ तथा उनका अंकन किसके द्वारा किया जाए। Steible ने इसकी ओर लक्ष्य करते हुए ठीक ही लिखा है कि इन समभाषाशों का मानचित्र में किसी बोलीविज्ञानी द्वारा ही किया जाता है।

(ग) उपर्युक्त परिभाषाओं में इसकी चर्चा नहीं है कि समभाषाश-रेखाएँ न केवल भाषिक भिन्नताओं या समानताओं को प्रदर्शित करती हैं, अपितु अपने अन्तर्गत भाषिकेतर तथ्यों को भी छिपाए रहती हैं, जिसके फलस्वरूप शब्द-भूगोल अनेक आयामों में विवेच्य होता है।

22.3.1.2. उपर्युक्त समीक्षा का उपसंहार करते हुए यहाँ समभाषाश-रेखा तथा समभाषाश की अधोलिखित परिभाषा दी जा सकती है—

'बोलियों के अध्ययन में रुचि लेने वाले किसी व्यक्ति के द्वारा किसी समान शब्द-रचना या भाषिकेतर तत्वों (यथा, यातायात की सघनता) की प्रतिनिधि एवं बाह्य या आभ्यन्तर सीमा की अभिलक्षक मानचित्र में अंकित की जाने वाली सांख्यिकीय अपकर्षण की केन्द्रभूत काल्पनिक रेखा को 'समभाषाश-रेखा' कहा जाता है, तथा उसके द्वारा अभिव्यक्त भाषिक तत्व समभाषाश (A word geography of Baghelkhand, p. 41)

इस परिभाषा में 'शब्द-रचना' का प्रयोग साभिप्राय है। पिछले अध्याय में *कहा गया है कि Isogloss (जिसका अनुवाद मैंने 'समभाषाश' किया है) मानचित्र में अंकित समान शब्द-तत्व का वाचक है, उसे भाषा की रेखा कदापि नहीं कहा जा सकता। दो वर्ष पूर्व D. Bolinger ने यही मत व्यक्त किया था।*[13] ऐसा स्वाभाविक भी है, क्योंकि तथाकथित भाषा-भूगोल या बोली-भूगोल की दृष्टि अभी तक शब्दों की संरचना तक गई है, तथा उसमें भाषा या बोली की अन्तिम इकाई वाक्य की खोज का प्रश्न अभी विवादास्पद है। ऐसी स्थिति में यदि केवल मानचित्रों से भाषा की सम्पूर्ण इकाई को ही द्योतित करना है, तो Isograph शब्द का प्रयोग होगा।[14]

समभाषाश सांख्यिकीय अपकर्षण के केन्द्र कहे जाते है,[15] जिन्हें सरलता से नहीं देखा जा सकता। Gleason के अनुसार अधिक या कम समानता रखने वाली जनसंख्या (भाषा-समुदाय) में किसी समभाषाश के प्रादुर्भाव की गति के अनुसार भाषिक परिवर्तन को बहुत सरलता से खोजा जा सकता है। वैसे अभी

तक समभाषाशों का सादृश्य दिया जाता है, उनकी यथार्थता कभी नहीं मिलती। इस प्रकार के तत्वों को इंगित करने वाली जो रेखा खींची जाती है, वह अन्वेषक के निष्कर्ष को ही बताती है और वह निष्कर्ष है कि एक रेखा के अन्तर्गत एक उच्चारण, रूप, शब्द, या अर्थ प्रचलित है तथा उसके बाहर दूसरा प्रचलित है। जैसे ही किसी परिवर्तन का प्रसार होता है, वैसे ही कुछ ऐसे भी मातृभाषी होते हैं, जो अपने पड़ोसी की अपेक्षा चिरकाल तक प्राचीन रूपों को बनाये रखते हैं। क्षेत्र के बाहर ऐसे लोग भी हो सकते हैं, जिनको हमने समभाषाश-रेखाओं से सीमित कर दिया है तथा जिन्होंने अपने पड़ोसी की नई विशेषताओं को अपना लिया है।[16] इस प्रकार Gleason के अनुसार 'समभाषाश-रेखाएँ सांख्यिकीय सम्भावनाओं की प्रतिनिधि हैं।'[17] इस दृष्टि से विश्लेषण का यह एक सरल साधन है, तथापि क्षेत्रों के मध्य प्रत्यक्ष एवं प्रबल भेदों की उपेक्षा पर यह भ्रमास्पद सिद्ध हो सकता है। अनेक स्थानों पर समभाषाश-रेखाओं को खींचते समय आवश्यकता से अधिक स्पष्टता बरतनी पड़ती है। इतना होने पर भी अस्पष्टता बनी ही रहती है, क्योंकि जिस जटिल सामग्री पर वह आधारित है, उसको किसी ने देखा नहीं।

22.4. समभाषाशों व समभाषाश-रेखाओं के प्रकार

चूँकि समभाषाश किसी भाषा के शब्दों की रचना से सम्बद्ध भाषिक तत्व हो सकते हैं, अतएव आन्तरिक और बाह्य रचना के आधार पर उन्हें व उनकी रेखाओं को सैद्धान्तिक दृष्टि से अधोलिखित प्रकारों में वर्गबद्ध किया जा सकता है।

(क) समध्वनि तथा समध्वनिक रेखा
(ख) समध्वनिम तथा समध्वनिमीय रेखा
(ग) समरूपध्वनिम तथा समरूपध्वनिमीय रेखा
(घ) समरूप तथा समरूपिम रेखा
(ङ) समशब्द तथा समशाब्दिक रेखा
(च) समार्थ तथा समार्थक रेखा

22.4.1. समध्वनि तथा समध्वनिक रेखा

किसी ध्वनि का किसी भाषा में क्या स्तर है, इसका विचार उस ध्वनि के अस्तित्वमात्र की खोज से किया जा सकता तथा उसकी विद्यमानता (बनाम अविद्यमानता) को बताने वाली रेखा को समध्वनिक रेखा कहा जा सकता है। Mario Pei के अनुसार—'A line indicating the boundaries of

phonetically homogeneous speech areas, where identical phonetic features prevail into pronunciation of a language (is a Isophonic line)'[18] यह ध्वनिक रेखा शब्द के आदि, मध्य, या अत्य किसी भी ध्वनि की हो सकती है। इसके अतिरिक्त परिपूरक वितरण वाली ध्वनियों को भी इसके अन्तर्गत देखा जा सकता है।

22.4.2. समध्वनिम तथा समध्वनिमीय रेखा

ध्वनिमों की व्यवस्था (सूची) तथा उनके व्यतिरेकों के साम्य पर बोलियो में समध्वनिम को देखा जा सकता है तथा उनके भाव-अभाव की समध्वनिमीय रेखा खीची जा सकती है। उदाहरणार्थ, क बोली में । ज । की उपस्थिति तथा ख बोली में उसके अभाव का निदर्शन समध्वनिमीय रेखा का विषय है। यदा कदा ध्वनिम-व्यवस्था की खोज के बिना कुछ स्थितियों या परिवेशों में उसका संकेत मात्र कर दिया जाता है। उदाहरणार्थ, बोलियो में किसी ध्वनिम की विद्यमानता के बावजूद एक में उसकी प्राप्ति आदि स्थिति में हो सकती है तथा दूसरी में अत्य में।

22.4.3. समरूपध्वनिम तथा समरूपध्वनिमीय रेखा

किसी रूपिम की ध्वनिमीय आकृति के अन्तर को व्यक्त करने वाली रेखा समध्वनिमीय रेखा है तथा वह अतर समरूपध्वनिमीय रेखा का उदाहरण है।

22.4.4. समरूप तथा समरूपिम रेखा

व्याकरणिक रूपों (रूपसिद्धि व व्युत्पादन) के समभाषाश समरूप हैं तथा रूपों की समानता को मानचित्र में अभिव्यक्त करने वाली रेखा समरूपिम रेखा है। Mario Pei के अनुसार—'A line on a Linguistic map indicating boundaries of uniformity of grammatical forms, inflections and other morphemic feature (is Isomarphemic line)'[19]

22.5. समशब्द तथा समशाब्दिक रेखा

शब्द का समभाषाश समशब्द है तथा Mario Pei के अनुसार समशाब्दिक रेखा की अधोलिखित परिभाषा है—'A line on a linguistic map indicating the approximate boundaries of speech areas where there is a uniformity in the vocabulary of speakers and the use of the words' [20]

22.6. समार्थ तथा समार्थक रेखा

अर्थ की समानता वाले भाषांश समार्थ हैं तथा उनको अभिव्यक्त करने वाली रेखा समार्थक रेखा कही जाती है। रूपों तथा शब्दों में मिलने वाला भौगोलिक अर्थभेद मानचित्र में समार्थक रेखा से दर्शाया जाता है।

टिप्पण और सन्दर्भ

1 Simeon Potter, Modern Linguistics p 134

2 W P Lehmann, Historical Linguistics–'on the pattern of Isobar and Isotherm, Isogloss is a term used for a line drawn from location to location along the outer limits of characteristic features'

3 J T Wright, 'Language varieties', Encyclopaedia of Linguistics, Information and Control (eds A R *Meetham and R A Hudson*), *Oxford, 1969, p 247*

4 Robert A Hall, Introductory Linguistics,

5 Hans Kurath A Word geography of Eastern united States, Introduction

6 Simeon Potter, Ibid,

7 Leonard Bloomfield, Language, Chap IXX

8 E A Sturtevant, An Introduction to the Linguistic Science, Ch, linguistic geography

9 C F Hockett A Course in Modern Linguistics p 473-

10 H A *Gleason, Introduction to Descriptive Linguistics*

11 Daniel Steible, Concise Handbook of Linguistics 1967, p 68

12 Louis H Gray, Foundations of Language, pp 115 43

13 D Bolinger, Aspects of Language, 1968, p 141-150

14 Louis H Gray, Ibid

15. H. A. Gleason, Ibid.

16. Ibid.

17. Ibid.

18. Mario Pei, Glossary of Linguistic Terminology, p. 134.

19. Ibid.

20- Ibid.

23

समभाषांश-रेखाओं के संघात और बोली-सीमा

23.1. पिछले अध्याय में किसी क्षेत्र में किसी भाषिक रूप के प्रवेश के दूरवर्ती बिन्दुओं को मानचित्र में प्रस्तुत कर के सीमा बनाने वाली समभाषांश-रेखा की चर्चा की गई है। मानचित्र में इस प्रकार की समभाषांश-रेखाएँ (उसके विविध प्रकार) साथ-साथ चल कर जब एक-दूसरे से गुँथ जाती हैं, तो उनके गुँथाव को 'समभाषांश-रेखाओं का संघात' कहा जाता है, जिसके लिए अंग्रेजी में bundle of Isoglostic lines या foscicle of Isoglosses कहा जाता है। Daniel steible ने इसकी विवेचन करते हुये कहा है—'The result when a number of Isoglosses move across a dialect area and pile at or near the boundary.'[1]

23.2. समभाषांश-रेखाओं के संघात की रचना-प्रक्रिया

शब्द-भूगोलविदों का यह सामान्य अनुभव है कि यातायात की सघनता सभी स्थानों में समान नहीं होती। Gleason ने इसकी रचना-प्रक्रिया पर अपना मत करते हुए कहा है—'मान लिया जाए कि किसी प्रकार के अवरोध के कारण भाषा-क्षेत्र दो समान भागों में बँट गया है। सम्भव है कि अवरोधण का कार्य किसी नदी, पर्वत, या प्राकृतिक सीमा ने किया हो। परिणामस्वरूप अवरोध से बाहर के लोगों के साथ कम संचार हो सकेगा। अवरोध कभी पूरी तरह लागू नहीं होते। अतएव विचित्र ढङ्ग से कुछ-न कुछ आवागमन चलता ही रहता है। अब कल्पना कीजिये कि परस्पर संचार करने वाले एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति में नवप्रवर्तन हो रहा है। इस प्रभाव को उस समभाषांश-रेखा के माध्यम से देखा

जा सकता है, जो क्षेत्र के बाहर गतिशील है । जब यह समभापाश-रेखा यातायात के अल्प घनत्व वाले क्षेत्र में पहुँचती है, तब इसकी गति मे बाधा आ जाती है। हम यह सम्भावना कर सकते है कि अवरोध को पार करते समय समभापाश-रेखा को यहाँ अधिक समय लगेगा, जबकि दूसरे स्थानों मे वह समान गति से चली जायेगी। यदि एक समभापाश-रेखा की अपेक्षा अनेक समभापाश-रेखाएँ बाहर की ओर गतिशील हैं, तो अवरोध के पास वे एक समूह के रूप में रुक जाएँगी। इसका परिणाम समभापाश-रेखाओ का संघात होगा।''[2]

समभापाश-रेखाओ के संघात के अन्तर्गत मिलने वाली समभापाश-रेखाओ में प्रत्येक का इतिहास भिन्न-भिन्न होगा। कुछ तो इस स्थिति में संघात की रचना के समय आये होंगे तथा कुछ की विद्यमानता अतिप्राचीन हो सकती है। कुछ अपेक्षाकृत स्थिर लग सकते है तथा कुछ संघात से बहिर्गमन के लिए आतुर हो सकते है। कुछ की गति एक दिशा की ओर हो सकती है तथा कुछ दूसरी दिशा की ओर चलायमान हो सकते हैं।

23.3. बोली-सीमा

समभापाश रेखाओ के माध्यम से एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में भाषिक लक्षणों के संक्रमण को सुस्पष्ट रूप से बताया जाता है तथा समभापाश-रेखाओ के संघातो मे आपेक्षिक दृष्टि से वह संक्रमणीयता और भी अधिक स्पष्ट हो जाती है। अतएव उन्हे क्षेत्र का निर्देश करने वाला कहा जाता है और वे बोली की सीमा का संकेत देते हैं। संघातों की महत्ता उनके गुथाव में है। जितना ही अधिक व्यापक शब्द-जाल होगा, समभापाशो के संघातो के द्वारा अभिलक्षित सीमाएँ भी उतनी ही यथार्थ होगी।

एक बोली से दूसरी बोली में हम जितना भी अधिक विभेद के तत्वो को खोजते हैं, उतना ही अधिक हम पाते हैं कि किसी खास क्षेत्र की बोली अपने ही तत्वों से विशिष्ट नही है, अपितु दूसरी बोली के तत्व भी उसमे बराबर मिल रहे हैं। इस दृष्टि से बोली सीमा की कल्पना अयथार्थ हो सकती है तथा एकमेव लक्षण रखने वाली समभापाश-रेखाएँ असतोषप्रद प्रतीत होती हैं। बोली-सीमा के सुस्पष्ट न होने के प्रमुख दो कारण है—

(क) भिन्न-भिन्न समभापाश-रेखाएँ जिस संक्रमण को बताती है, उनमें कोई क्रम नहीं मिलता। जैसे ही हम एक बोली-क्षेत्र से दूसरे बोली-क्षेत्र में जाते हैं, वहाँ कुछ नई विशेषताएं अवश्य मिलती हैं, किन्तु ऐसा कभी नही होता कि एक बोली एकाएक दूसरी बोली को स्थान दे दे।

(ख) किसी संघात में विभिन्न समभाषांश शायद ही कभी आपस में मिलते हों।

एक शताब्दी पूर्व Gaston Parie तथा Paul Meyer, आदि विद्वानो ने यह अनुभव किया था कि भाषिक विचित्रताओं का वितरण एक-सा नहीं होता। समभाषांशीय (=बोली) सीमाएँ एक-दूसरे से मिलनी नहीं है, अपितु स्वतंत्र रहती हैं। अर्थात् विभिन्न रूपों की भाषिक सीमाएँ अपने विस्तार में विरले ही एक-सी चलती हैं। इस सम्बन्ध में उनके प्रमाण Gillieron के ALF पर आधारित थे, जिसमें प्रत्येक भिन्नता की अलग-अलग सीमा मिलती है। इस तथ्य को उदाहरणों से स्पष्ट करते हुए Vendryes ने लिखा है—"अनुमान कर लीजिये की फ्रेंच-क्षेत्र में एक दर्जन गाँव विस्तृत भूभाग मे बिखरे हुए हैं। इन सभी गाँवों के निवासी एक ही भाषा बोलते हैं (इस अर्थ में कि उनकी बोली मे विशेष प्रकार की फ्रेंच से समानता मिलती है तथा ऐसा उस क्षेत्र में एक ही भाषा के स्वतन्त्र विकास के कारण हुआ है)। ध्वनिकी, व्याकरण, तथा शब्दावली की दृष्टि से प्रत्येक गाँव का एक अलग ही ब्यौरा दिया जा सकता है। फिर भी यह अस्वाभाविक ही है कि एक गाँव की विचित्रताएँ दूसरे पड़ोसी गाँवों मे न मिलती हों। किन्तु यदि प्रत्येक विचित्रता की भौगोलिक सीमाओं को एक कर लें, तो वे मुश्किल से ही आपस में मिलेंगी।"[4]

'बघेलखंड की शब्द मानचित्रावली (WAB संक्षिप्त नाम) के आधार पर इस पूर्वपक्ष को प्रस्तुत किया जा सकता है। बघेलखंड में चार ऐसे क्षेत्र है, जो 'शनैश्चर' (शनिवार) शब्द का उच्चारण अलग अलग करते है, जैसा कि मानचित्रानुक्रम 25 से देखा जा सकता है। इस मानचित्र में सीमाकन रेखा प्रथमत. [—सच्—] के उच्चारण में होगी, [चुच्] पर नहीं। दूसरी ओर, यह [—ʃ—] के बजाय [—च्—] पर है। इन दो ध्वनिक घटनाओं के क्षेत्र आपस में कभी मिलते नहीं हैं।

इसी प्रकार, दानार्थक धातु के [दे] (मेकलविन्ध्येतर क्षेत्र) 'द' (मेकल-क्षेत्र), व 'दया' (विन्ध्य प्रस्थ) भाषिकान्तर रूपों का वितरण जिन क्षेत्रों में है, उनका 'शनैश्चर' के क्षेत्र से कोई साम्य नहीं है (मानचित्रानुक्रम 62)।

जब हम बघेलखंड की शब्दावली का अध्ययन करते हैं, तब हम 'रेंड़आ' के लिये अलग-अलग (ध्वनिपरिवर्तन-युक्त) चार शब्द—रेरुँआ (या रेंड़आ, हेरुँआ, ररुआ) नेनुँआ, फतुरुनी, डोड़का (या डोडिका, ड्वँड़्का, जुवड़्का)—पाते हैं। जिन क्षेत्रों से ये शब्द आए, वे 'रेरुँआ' से कभी नहीं मिले (मान-

चित्रानुक्रम 263)। इन चार क्षेत्रों की उपर्युक्त भाषिक अभिलक्षणों वाले क्षेत्रों से समनुरूपता नहीं मिलती।

यही बात अर्थप्रक्रियात्मक मानचित्रों के सम्बन्ध में भी लागू होती है। बरौंधा-क्षेत्र में 'कड़ू' तिक्त अर्थ को देता है, ग्वौंचर—मउगंज—देवसर—गोरदबनास—मेकल क्षेत्र में वही 'नमकीन' का वाचक है, तो शेष बघेलखंड में 'कड़ू' अर्थक है। (मानचित्रानुक्रम 331)।

ध्वनि, रूप, शब्द, तथा अर्थ के द्वारा प्रस्तुत उपर्युक्त भाषिक सीमाएँ (उपर्युक्त उदाहरणों में) अपने पूरे विस्तार में कदाचित् ही कहीं मिल पाती हैं। उनका वितरण एक समान नहीं मिलता। ऐसी स्थिति में उपर्युक्त कथन में आंशिक सत्यता अवश्यमेव है।

कभी-कभी अविरल होकर, यहाँ तक कि अत्यन्त निकट आ कर, समभाषांश-रेखाओं के संघात काफी दूर जा सकते हैं और बाद में बिखर सकते हैं। जर्मनी में दक्षिणी जर्मन-बोलियों को उत्तर जर्मन-बोलियों से पृथक् करने वाला समभाषांश-रेखाओं का संघात इसका उदाहरण है। बहुत दूरी तक इसकी सीमा सुस्पष्ट है। अर्थात् बोलीगत भिन्नताओं वाली समभाषांश-रेखाएँ बहुत पास-पास चलती हैं, यद्यपि वे एक जटिल त्रिभुज बना कर एक दूसरे को काटती रहती हैं। किन्तु जैसे ही वे राइन-घाटी पर पहुँचती हैं, वे अलग-अलग हो जाती हैं। कुछ तो उसी धारा में बनी रहती हैं तथा कुछ दक्षिण की ओर व अन्य उत्तर की ओर मुड़ जाती हैं। *कहने का तात्पर्य यह है कि पूर्व की अपेक्षा राइन की सीमा बहुत कम स्पष्ट है।*[5]

बघेलखंड के बाधोगढ़ व सोहागपुर क्षेत्रों की विभाजक सीमा अधिक दूरी तक जोहिल नदी के साथ-साथ चलती है। नदी के दोनों ही किनारे समभाषांश-रेखाओं का प्रभूत आच्छादन मिलता है, किन्तु जैसे ही जोहिला से घोड़छुट नदी का सङ्गम होता है, सघात रेखाओं के कुछ संघात तो वहीं स्थिर रहते है तथा कुछ छितरा कर पूर्व व पश्चिम की ओर चले जाते है। इस प्रकार कहा जा सकता है उत्तर या दक्षिण की अपेक्षा दक्षिण-पश्चिम में जोहिला नदी की सीमा सुस्पष्ट नहीं है (मानचित्रानुक्रम 355)।

सीमाओं की सुस्पष्टता के सम्बन्ध में Simeon Potter ने यह तर्क दिया है कि "विस्तृत समुद्र, अलंघ्य नदियाँ, अगम कान्तार, अपार घाटियाँ, ऊँचे पर्वत, दलदली-क्षेत्र, कृत्रिम राजनैतिक सीमाएँ" *बोलियों की सीमाओं को सुस्पष्ट करने* में सहायक होती हैं तथा "परिवर्तन के प्रत्यक्ष कारणों के रहने पर भी बोली-सीमा शताब्दियों तक बनी रह सकती है।"[6] अपने मत के समर्थन में उन्होंने

लंकाशायर की रिवल नदी का उदाहरण दिया है, जहाँ एक ही समभाषांश-रेखा तेरह सौ वर्षों से स्थिर है, बघेलखंड में रेंड (रिहंद) नदी इसका उदाहरण है जो सघन मोहन-वन से होकर बहती है तथा जहाँ विगत बाइस सौ वर्षों (भरहुत-काल) से एक ही समध्वनिक रेखा स्थिर है।[7]

Potter का उपर्युक्त मत उसी प्रकार पूर्णरूपेण विश्वसनीय नहीं है, जिस प्रकार का पूर्व पक्ष कि बोलियों की सुस्पष्ट सीमाएँ नहीं मिलती। इस प्रकार के सभी उदाहरण प्राय अपवादस्वरूप ही उद्धृत किये जाते हैं। Gleason के अधोलिखित कथन में Potter का विरोध प्रतिलक्षित है—'हम प्राकृतिक सीमाओं को ही समूचे भेदों का आधार नहीं मान सकते, क्योंकि प्राकृतिक सीमाएँ यद्यपि यातायात को प्रतिबन्धित करने में सहायक है, तथापि उनका भाषिक महत्व बहुत कम है। अप्पालेशियन-प्रस्थ इसका उदाहरण है। इसके अतिरिक्त कुछ बड़ी-बड़ी बोली-सीमाएँ किसी भी प्रकार की प्राकृतिक सीमाओं को नहीं दिखाती। भौगोलिक वर्णन की जटिलता, किसी भाषिक जाति के बसने का इतिहास, अन्तर्क्षेत्रीय यातायात व, क्षेत्रीय केन्द्रों की प्रतिष्ठा के कारण बोली-सीमाएँ प्राय सदिग्ध, जटिल, व दुष्कर रूप से अनुसन्देह होती हैं।"[8]

उपर्युक्त विरोधाभासों के पक्षधर अनेक बोलीविज्ञानियों ने यह मत व्यक्त किया था कि बोलियों का अस्तित्व ही नहीं होता। इस प्रकार के विचार का समर्थन रोमन-भाषाविज्ञानी Gaston Parie तथा Paul Meyer ने भी किया था। Parie का मत यहाँ अनूदित है—'No real boundary separates French people of Midi From one end of our national soil to the other. Our popular speech extends like a huge tapestray whose varied colours shade into another in a scarcely perceptible gradations at every point."[9]

23.4. बोलियों की अखंडता

Gaston Parie तथा उनके अनुयायी अन्य पारम्परिक बोलीविज्ञानियों ने सुस्पष्ट बोली-सीमाओं का निर्धारण एक असम्भव कार्य माना है।[10] भाषामान-चित्रावलियों के विशालकाय पृष्ठों की तुलना करने के उपरान्त उन्होंने बोलियों की यथार्थता पर प्रश्न चिह्न लगा दिया था तथा यह स्वीकार किया था कि 'बोली-अखंडता' ही एकमात्र सत्य है तथा इस अखंडता को खंडित (भिन्न) सरचकों में विभक्त नहीं किया जा सकता। बोलियों की इस अखंडता को Gaston Parle ने अपनी इस रेखाचित्रमय कहानी से समझाया है, जिसमें एक यात्री

पेरिस से इटली जाता है। कई मील की यात्रा करने व स्थानीय बोलियों के अनुसार अपनी बोली का परिष्कार करने के पश्चात् वह यात्री उस अन्तराल में फ्रेंच-क्षेत्र की बोली में कुछ अन्तर शायद ही पाए। उसे शायद उस समय भी कोई परिवर्तन लक्षित न हो जब वह महसूस, तथा इटली की सीमा को पार कर रहा हो। इतना ही नहीं, यदि वह जर्मन-भाषी क्षेत्र में निकल जाता है, तो भी उसकी भाषा में ऐसे कोई परिवर्तन न आएँगे, जिससे उसे अनुभव हो कि वह जर्मनी में आ गया है।[२२]

Gaston Parie ने जिस प्रकार का मत फ्रेंच-भाषा के सम्बन्ध में व्यक्त किया है, उसी प्रकार मेरे द्वारा क्षेत्राधीन गोंड़ी भाषा के सम्बन्ध में भी कहा जा सकता है। हिन्दू तथा मुस्लिम आक्रामक व यात्री जिस भूमि को गोंडवाना नाम से सम्बोधित करते थे, वहाँ की वन्यजाति सामान्यतया गोंड़ कही जाती है तथा गोंड अपने को 'कोइतोर' कहते हैं। 'कोया' या 'कोई' इसके स्थानीय भेद हैं। अतएव हम उनकी भाषा को 'कोइतोर' कह सकते है। ऐसा करने पर इस भाषा के लिए प्रचलित विविध स्थानीय नाम, यथा पारसी, मुरिया, अबूझमाड़िया, दोर्ली, कोइ, गायतीर, नाइकी, आदि की भ्रान्तियों से बच सकते हैं। सभी कोइ-तोर विभाषाओं का आधार एक ही है। यद्यपि विस्तृत भूभाग में इस जनजाति के प्रसार के कारण उच्चारणगत स्थानीय भेद मिलते हैं, किन्तु उससे बोधगम्यता में किसी प्रकार की कठिनाई नहीं आती। यदि आप उत्तर में होशंगाबाद व बेतूल से नागपुर व भण्डारा जिलों को पार करते हुए यवतमाल तथा आदिलाबाद में प्रवेश करें और प्राणहिता को लाँघ कर चाँदा पहुँचें व वहाँ से मुरिया देश होकर अबूझ-माड के पर्वतीय क्षेत्र में विचरण कर नीचे की ओर दडामी-भूमि में जाएँ—तो पाथेयस्वरूपा विविध बोलियाँ परस्पर इस प्रकार एक दूसरे में विभाजित होती जाएँगी कि प्रत्येक परिवर्तन को अनुभवगम्य बनाना कठिन होगा, तथा विविध बोलियों की सत्ता पर आपको अविश्वास होने लगेगा। इससे यह प्रतीत होता है कि इन बोलियों की क्षेत्रीय सीमाएँ सुस्पष्ट नहीं है।

इस प्रकार प्राचीन बोली विज्ञानियों के अनुसार बोलियों का सुस्पष्ट वर्गीकरण न तो कभी सम्भव था और न आज है। इस वस्तुस्थिति को समझते हुए भी हम आज स्पष्ट वर्गीकरण चाहते है और उसे सामान्य व्यक्ति के सिर पर थोप देते है।

भाषाभूगोलवेत्ताओं ने जिस समय बोलियों के अस्तित्व पर ही कुठाराघात किया, उस समय रोमांस क्षेत्र में एक बहुत बड़ी हलचल मच गई थी तथा इसका तीव्र विरोध किया गया था, क्योंकि नव्यवैयाकरण जिस आधार को ले कर चल रहे थे, वही उन्हें गिरता हुआ नजर आया। निस्सन्देह परम्परावादी शब्द भूगोल

वेत्ताओं का 'बोलियों की अखण्डता' विषयक सिद्धान्त उनकी प्रथम उपलब्धि है। द्वितीय उपलब्धि शब्दो मे सम्बद्ध है, जिसकी चर्चा अग्रिम अध्याय मे है।

24.5. बोली-सीमाओ की व्यावहारिकता

परम्परागत बोलीविज्ञान के बोलियो के अस्तित्व पर उपर्युक्त 'नेती नेति' के बावजूद तथाकथित 'बोली' का विचार ऐसा है, जिससे भाषाविज्ञान छुटकारा नही पा सकता। सैद्धान्तिक दृष्टि से बोलियो को भले ही न स्वीकार किया जाये, किन्तु व्यावहारिक दृष्टि से बोली—विचार की उपयोगिता अवश्यमेव है।

24.6. बोली सीमाओ के निर्धारण मे Kurath तथा उनके पूर्ववर्ती विद्वानो की अवैज्ञानिक दृष्टि शब्द-सीमा और बोली-सीमा

विश्व के विविध देशो में शब्द-भूगोल से सम्बद्ध विभिन्न कार्य अधिकतर शब्द प्रक्रियात्मक भूगोल की प्रकृति के ही है। अतएव सामान्यतया समशाब्दिक रेखाओं के सघातो के ही आधार पर बोली-क्षेत्रो के निर्धारण की एक परम्परा सी बन गई है। यद्यपि Henry Lee Smith ने एक प्रसग[12] में यह उल्लेख किया था कि बोली-क्षेत्रो को निर्धारित करने के लिए उच्चारण, रूप, शब्द, व अर्थ पर भी विचार किया जाना चाहिये, किन्तु उनके उपर्युक्त कथन पर Kurath के परवर्ती विद्वानो का ध्यान नही गया। यद्यपि कुछ ऐसी भी मानचित्रावलियाँ बनी हैं, जिनमें उच्चारण के आधार पर बोली-सीमाओ को निर्धारित करने का प्रयास है, उस समय भी सीमा निर्धारण का कार्य एक सकुचित दायरे में ही बँधा हुआ माना जाएगा। बघेलखण्ड की शब्दमानचित्रावली के निष्कर्षों को देख कर पूर्ववर्ती कार्यों की विश्वसनीयता और प्रामाणिकता पर सदेह होता है।

मानचित्रावली में समाविष्ट मानचित्रो के रैखिक अध्ययन से ऐसा स्पष्ट मत स्थापित किया जा सकता है कि उच्चारण, रूप, शब्द, या अर्थ में से किसी एक को प्रामाणिक मान कर खीची जाने वाली रेखाओं के सघातों पर आधारित बोली-सीमाएँ सदैव एकागी होने के कारण अविश्वसनीय होती है तथा उनकी पूर्णता व विश्वसनीयता तभी सम्भव है, जब इन चारो प्रकार के सघातो की सहसम्बद्धता के आधार पर बोली-सीमाएँ (अर्थात् समभाषाद्य रेखाओं के सघात) अकित की जाएँ।

प्रस्तुत मत की प्रामाणिकता की परीक्षा की दृष्टि से मानचित्रावली के 351-54 अनुक्रम वाले मानचित्र देखे जा सकते हैं। इनमें प्रथम मानचित्र समध्वनि रेखाओ के सघातो का उपलक्षक है। इस मानचित्र से यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि समध्वनिक रेखाओ के सघात से बनी बोली-सीमाएँ तीनों प्रकार के सघातों

की तुलना में अपेक्षाकृत कम सुस्पष्ट हो पाती है। इसके आधार पर कैमोर पर्वत के दक्षिण में समध्वनिक रेखाओं के संघात 8 क्षेत्र बनाते हुए प्रतीत होते हैं; जब कि उत्तर में समध्वनिक रेखाएँ इतनी अधिक छितराई हुई है, कि उनका संहतिबद्ध रूप प्रस्तुत नही किया जा सकता।

द्वितीय मानचित्र समरूपरेखाओं के संघातो का है। इसके आधार पर कैमोर पर्वत के दक्षिण में 7 उपबोली-क्षेत्र ही निर्धारित होते है, जब कि प्रथम मानचित्र के आधार पर उनकी संख्या 8 थी। इस मानचित्र से कैमोर पर्वत के उत्तर में प्रथम मानचित्र की तुलना मे समरूपरेखाओ के संघात स्पष्टतर है तथा उत्तर बघेलखण्ड में भी 8 उपबोली—क्षेत्र निर्धारित होते है। इसमें मैहर तथा अमरपाटन—सतना के मध्य संघातात्मकता की यात्रा अधिक स्पष्ट नही है।

तृतीय मानचित्र समशब्दरेखाओ के संघातो को दिखाता है। इस आधार पर कैमोर पर्वत के दक्षिण में 9 उपबोली-क्षेत्र निश्चित होते है तथा उत्तर में भी इसी प्रकार कम-से-कम 9 उपबोली-क्षेत्र माने जा सकते है।

चतुर्थ मानचित्र समार्थ रेखाओ के संघातो को व्यक्त करता है, जिनके आधार पर कैमोर पर्वत के दक्षिण में 8 तथा उत्तर मे 10 अस्पष्ट उपबोली-क्षेत्र बनते है।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट प्रतीत होगा कि चारो प्रकार के संघातो के द्वारा अलग-अलग बनाई जाने वाली बोली—सीमाओं में अत्यधिक अन्तर है। समध्वनिरेखाओं के सघातो के आधार पर जहाँ कम बोली-क्षेत्र बनते हैं, वहाँ *समशब्द-रेखाओ व समार्थ-रेखाओ के द्वारा उनकी संख्या बढ़ जाती है।*

ऐसी स्थिति में यह मत स्थापित किया जा सकता है कि समध्वनिरेखाओ के सघातों, समरूपरेखाओ के संघातों, समशब्दरेखाओ के संघातो, व समार्थ रेखाओ के संघातों की सहसम्बद्धता के आधार पर ही बोलियो की सुस्पष्ट क्षेत्रीय सीमाएँ अंकित की जा सकती हैं; (अर्थात् समभाषाश-रेखाओ के सघात के अभाव मे बोली-सीमाएँ अनिश्चित व अपूर्ण रहती हैं)। इनमे से किसी भी एक प्रकार के संघातों के अभाव में सीमाओ की अस्पष्टता बनी रहती है। उदाहरण के लिए, 355 वें मानचित्र मे तीन प्रकार की रेखाओ के सघातों के आधार पर जिन बोली-क्षेत्रो को प्रदर्शित किया गया है, वे सख्या में 17 है, जो निष्कर्षरूप में स्थापित वास्तविक क्षेत्रो की तुलना मे दो अधिक हैं। इन विविध संघातो के अध्ययन से एक तथ्य और भी हृदयङ्गम किया जा सकता है कि समरूप-रेखाओ के सघातो का आधार बोलियों की क्षेत्रीय सीमाओ के अंकन में अपेक्षाकृत यथार्थोन्मुख है, क्योंकि उसके द्वारा भी 15, और तत्समान, उपबोली-क्षेत्र

प्राप्त हुए हैं। चूंकि अभी तक सभी मानचित्रावलियो में समरूपरेखाओं के सघातो के आधार की अपेक्षा की गई है, अतएव कहा जा सकता है कि पूर्ववर्ती भाषा-विज्ञानिया द्वारा निर्धारित बोली-सीमा (शब्द सीमा) एकागी होने के कारण प्रामाणिक व विश्वसनीय नही है। एकमात्र सत्य समभाषाश—सीमा है।

इस प्रकार बोली-सीमाओ को निर्धारित करने की सामान्य पद्धति समभाषाश-रेखाओ की खोज होनी चाहिये और यथासम्भव उनकी समनुरूपता भाषिवेतर कारणो से दिखाई जानी चाहिये।

टिप्पणी और सन्दर्भ

1. Daniel Steible, Concise Handbook of Linguistics, 1967, p 68
2 H A Gleason, An Introduction to Descriptive Linguistics New york 1959
3. Joseph Vendreyes, Language (Taon by Paul Randin) London, 1925.
4. Ibid
5 H A, Gleason, Ibid.
6 Simeon Polter, Modern Linguistics, London, 1957, Ch, dialect geography
7. भरहुत की प्राकृत में सस्कृत के 'आषाढ' का उच्चारण 'असडा' मिलता है तथा सिगरौली क्षेत्र (माड़ा) में आज भी वही उच्चारण प्रचलित है, जब कि शेष बघेलखड में 'असाढ्' है।
8. H A. Gleason, Ibid
9 Quoted trom Joseph Vendryes, Ibid,
10 G Francescato, 'Dialect borders and linguistic system, Proceedings of the Ninth International congress of Linguis tics, The Hague, 1964, p, 110
11. W. P. Lehmann Historical Linguistics (Ch. dialalect geography)
12. Henry Lee Smith, 'Review of a Word geography of Eastern United States by Kurath', Studies in Linguis tics (1951) 9 . 10,

24

परम्परागत बोली-क्षेत्र

24.1. समभाषांश रेखाओ के संघात से जो भौगोलिक क्षेत्र घिर जाते है, उन्हें बोली क्षेत्र या भाषा क्षेत्र कहा जाता है। बोली क्षेत्र यद्यपि एक सामान्य नाम है तो भी उस क्षेत्र की बोली कभी एक सी नही होती। भाषिक घटना के व्यापक अध्ययन से शब्द भूगोलवेत्ता को किसी बोली-क्षेत्र के अन्तर्गत अधोलिखित तीन प्रकार के क्षेत्रो का परिचय मिलता है।

(क) केन्द्रीय क्षेत्र

(ख) संक्रमण क्षेत्र

(ग) अवशिष्ट क्षेत्र

24.2. केन्द्रीय क्षेत्र

बोलियाँ यद्यपि समान स्तर म रहती है तथापि बोली क्षेत्र की बोली एक रूप नही होती। बोली-क्षेत्र प्राय उस एक स्थल की ओर केन्द्रित रहते हैं, जिनका स्पर्श अपेक्षाकृत कम समभाषांश रेखाएँ करती हैं। इस प्रकार के क्षेत्र प्रतिष्ठा के स्थान कहे जाते है। चूंकि भाषा क्षेत्र में किसी भी नवप्रवर्तन का प्रसार किसी केन्द्र स्थान से होता है, अतएव इसको केन्द्रीय क्षेत्र कहा जाता है। कुछ लोग इसे प्रतिष्ठा या प्रसार-केन्द्र भी कहते है। Mario Pei ने केन्द्रीय क्षेत्र की परिभाषा इस प्रकार दी है—' A region whose Characteristic Speech features are limited in neighbouring regions and from which Innovatiors spread [1] Alva L Davis व Raven I McDavid के अनुसार— A Focal Area is one whose economic Cultural or political prestige hus Caused its speech—forms to spread into surrounding areas' [2] इससे

मिलता-जुलता मत Danial Steiblc का भी है— 'In the study of a dialect, the apparent major cultural center of a dialect area as shown when the Isog'o ses are branched somewhat closely together and quite even distant from such a center."[3]

कुछ भाषिक तत्त्व किसी बोली में ऐसे भी होते है, जहाँ उनका कोई प्रतिद्वन्द्वी नहीं होता। उदाहरण के लिए, बघेलखंड में 'विवाह' के लिए 'काज्' अकेला ऐसा शब्द है, जो रीवा के आस-पास व्यापक क्षेत्र में मिलता है (मानचित्रानुक्रम 237)। इस प्रकार जब कोई ध्वनि, रूप, शब्द, या अर्थ किसी विशेष स्थान या केन्द्र की ओर केन्द्रीभूत किसी एक संहत क्षेत्र में सार्वदेशिक रूप से प्रचालित हो; तो कहा जाता है कि यह केन्द्रीय क्षेत्र की रचना है।[4]

24.2.1: केन्द्रीय क्षेत्र की प्रमुख विशेषताएँ

(क) केन्द्रीय क्षेत्र ऐसे क्षेत्र हैं, जिनकी आर्थिक, सामाजिक; या सांस्कृतिक प्रतिष्ठा भाषिक रूपों को अन्यत्र प्रसार का अवसर देती है। उदाहरणार्थ, बरौंधा-क्षेत्र में चित्रकूट, मैहर-क्षेत्र में मैहर, सतना-अमरपाटन क्षेत्र में सतना, रीवा क्षेत्र में रीवा, मऊगंज-क्षत्र तथा में मऊगंज केन्द्रीय क्षत्र है।

इनके अतिरिक्त अन्य अनेक नगर भी केन्द्रीय क्षेत्र हैं। चूँकि बड़े नगरों के बध्य संचार छोटे नगरों या गाँवों की अपेक्षा सुगम होता है, अतएव एक नगर से दूसरे नगर में भाषा-रूप बहुत शीघ्रता के साथ फैल जाते हैं।

ये नगर सामाजिक कार्यकलाप के केन्द्र होते हैं, जहाँ पर लोग बाजार, कानूनी व्यवहार के सौदे, धार्मिक उत्सव, राजनैतिक प्रशासन, व धार्मिक पूजा के लिए जाते हैं। अत्यधिक या निरन्तर व्यवहार में किसी समाज की भाषा प्रभावित होती है। निरन्तर घटित होने वाले संचार स्वाभाविक रूप से व्यक्तिगत विभिन्नता को दूर कर देते हैं।

(ख) केन्द्रीय क्षेत्र की उच्चारण सम्बन्धी विशेषताओं में प्रतिष्ठा रहती है। उनके अनुकरण की भावना युवकों या मेल-जोल वाले पार्श्ववर्ती क्षेत्र के लोगों में अधिक होती है।

(ग) केन्द्रीय क्षेत्र के द्वारा जो नवप्रवर्तन प्रसारित किये जाते हैं, वे आस-पास के क्षेत्रों के द्वारा स्वीकार कर लिए जाते हैं। जैसे-जैसे केन्द्रीय क्षेत्र की प्रतिष्ठा बढ़ती है, वैसे-वैसे नवप्रवर्तन भी बढ़ते जाते हैं।

(घ) केन्द्रीय क्षेत्र यद्यपि दूसरे क्षेत्र की बोली को प्रभावित करते है, तथापि वहाँ की बोली स्थिर रहती है। Louis H. Gray ने केन्द्रीय क्षेत्र की बोली

को आदर्श भाषा का क्षेत्र माना है।[5] कुछ लोग केन्द्रीय क्षेत्र से उस बोली-क्षेत्र की बोली की उत्पत्ति का भी अनुमान करते है।

(ङ) यह एक उल्लेखनीय तथ्य है कि जो लोग केन्द्रीय क्षेत्र से बहिर्गमन करते है, वे अपनी भाषा को उन लोगो की अपेक्षा अधिक स्थिर रखते हैं, जो निर्गमन नही करते। दक्षिण बघेलखंड की बोली उत्तर बघेलखंड की बोली की तुलना में आज भी अधिक आर्ष प्रतीत होती है।

24.2.2. केन्द्रीय क्षेत्र के अध्ययन की ऐतिहासिक उपयोगिता

सरलतम उदाहरणो में किसी केन्द्रीय क्षेत्र में किसी शब्द (ध्वनि या व्याकरणिक रूप) की विद्यमानता (यथा, रीवा के समीपवर्ती क्षेत्र में 'काज्' की विद्यमानता) हमें यह बताती है कि यह वहाँ चिरकाल से रहा होगा तथा सम्पूर्ण क्षेत्र के अन्तर्गत व्यवहृत होने में इसे दीर्घ अवधि लगी होगी और उसने सम्पूर्ण प्रतिस्पर्धी तत्त्वो, यथा कन्न्या+दान्, काज्+दान्, बिबाह, बिहाव्, बिहाह्, बिआह्, ब्याह्व्, ब्याब्ह्, ब्याह् आदि को एक किनारे कर दिया है। इतना होने पर भी किसी केन्द्रीय क्षेत्र में किसी अभिलक्षण की विद्यमानता अपने आप में कोई प्रमाण नही है कि वह वहाँ प्राचीनकाल से रहा होगा या देशी विकास का परिणाम होगा। ऐसे घटना-तत्त्व जो आज किसी केन्द्रीय क्षेत्र को अधिकृत किए हुए है, ऐसे भी हो सकते है, जिनका प्राचीन काल मे कही बाहर से आगमन हुआ हो (उदाहरणार्थ, उत्तर बघेलखंड में 'नाभि' के लिए 'बोड़्री' जो एक गोंडी-शब्द है तथा जिसका आगमन दक्षिण से हुआ है) तथा समय के अन्तराल मे वहाँ भली-भाँति स्थिर हो गये। यदि हम भाग्यशाली हुए, तो हमें इसके पूर्ववर्ती प्रतिस्पर्धी अवशिष्ट क्षेत्रो मे यत्र-तत्र जीवित मिल सकते है या फिर वे बिल्कुल लुप्त भी हो सकते हैं।

24.2.3. केन्द्रीय क्षेत्र के संकालिक अध्ययन की उपयोगिता

केन्द्रीय क्षेत्र का सकालिक दृष्टि से अध्ययन इसलिए उपयोगी है, कि वे बोली के आदर्श रूप की अभिरचनाओ को व्यवस्थित करते है।

24.3. संक्रमण-क्षेत्र

सुविश्लेषित बोली-क्षेत्रो की सीमाओ पर हम संक्रमण-क्षेत्र पाते हैं। यहाँ दो पार्श्ववर्ती केन्द्रीय क्षेत्रों की विशेषताएँ भी देखने को मिल सकती हैं। इस क्षेत्र में निरन्तर बाहरी प्रभाव पड़ते रहते है, जिसमे यह सदैव परिवर्तन की दिशा में रहता है। Alva L. Davis तथा Raven I. Mcdavid ने संक्रमण-

क्षेत्र का विश्लेषण करते हुए लिखा है—'A transition area is one which has undergone infeuence from two or more directions, so that competing forms exist in it side by sidl.'[6] Robert A Hall ने उदाहरणों सहित इसकी व्याख्या करते हुए लिखा है—'इस क्षेत्र में 'सोडा पॉप' के लिए 'टॉनिक' जैसा तत्व कुछ स्थानो तक छुटपुट ही मिलता है तथा यहाँ अन्य लक्षण भी प्रतिस्पर्धा में रहते है। इस प्रकार के क्षेत्र में अनेक प्रकार की समभाषाश रेखाएँ एक दूसरे को काटती है या पार करती है। इन्हे पारगामी समभाषाश-रेखा कहते है। ऐसी प्रक्रिया वहाँ होती है, जहाँ यातायात सुविकसित है। यहाँ ये समभाषाश-रेखाएँ या तो प्रलम्बमान होती है या पखे की तरह फैल जाती है। इस प्रकार के आकस्मिक प्रसार का सर्वोत्तम उदाहरण 'राइन नदीय पख' है। दक्षिणी जर्मनी के 'मकेन', आदि शब्दो में [क्] का [ख] ही गया है। उत्तरी तथा दक्षिणी क्षेत्रो को विभाजित करने वाली रेखाएँ पूर्वी जर्मनी में बिलकुल साथ साथ चलती है, किन्तु वे राइन के पूर्व कोलोर्ग के पास अलग हो पखाकृति बनाती है। ऐसे क्षेत्रो को, जिनमें इस प्रकार के प्रसार मिलते है। या आकस्मिक रूप से विस्तार प्राप्त होते हैं, परिवर्त्य क्षेत्र या सक्रमण-क्षेत्र कहा जाता है।'[7]

24.3.1 संक्रमण-क्षेत्र के अध्ययन की ऐतिहासिक उपयोगिता

''किसी बोली-क्षेत्र में सक्रमण-क्षेत्र की विद्यमानता से हमें ज्ञात होता है कि वहाँ अभी कोई प्रसार चल रहा है या हाल ही में ऐसा कोई प्रसार हुआ है। किन्तु मानचित्र के द्वारा प्रस्तुत स्थिर रेखाओं के माध्यम से हम यह नहा कह सक्ते कि प्रसार किस दिशा म हो रहा है तथा यह भी नही बता सक्ता 'टॉनिक' लुप्त हो रहा है या जीवित रहने की आधार भूमि बना रहा है। प्राय हम ऐसा सोचने के लिए प्रेरित होते हैं कि केन्द्राय क्षेत्र के किनारे कोई सक्रमण-क्षेत्र उसके (केन्द्रीय क्षेत्र) विस्तार को बताता है और यह बात प्राय सत्य घटित होती है। किन्तु कभी-कभी जब सूचक अन्वेपक को किसी रूप की प्राचीनता या नवीनता की जानकारी देते हैं, उस समय हमारी सम्भावनाएँ निर्मूल हो जाती है।'[8] उदाहरणार्थ, इतालवी मानचित्रावली के सूचकों के द्वारा तुस्कन के 'अइआ' तथा 'मघैलाइओ के स्थान पर मघैलारो' विशेष रूप से नए बताए गए थे। इस उदाहरण में तुस्कन का प्राचीन केन्द्रीय क्षेत्र प्रत्यक्षत अपने विस्तार में केन्द्रीय-पने को खो रहा है तथा र्-युक्त रूपो का दक्षिण-पूर्वी सक्रमण-क्षेत्र से आदान हो रहा है। यही बात बघेलखड के उन क्षेत्रों में लागू होती है, जहाँ भोजपुरी के

प्रभाव से 'मदार्', 'एँगुर्' व 'सेंदुर्' के स्थान पर 'मनार्', 'एनुर', व 'मेनुर्' (मानचित्रामुकम 267,277) उच्चारण प्रचलित है।

24.3.2 संक्रमण-क्षेत्र के अध्यय की संकालिक उपयोगता

सक्रमण-क्षेत्र यह अनुभव कराने में हमारी सहायता करते हैं कि प्राचीन उपनिवेश से *नवीन उपनिवेश की ओर जब जनसख्या का प्रसार होता है या जब* विविध सास्कृतिक आधारो वाले क्षेत्रो के मध्य सचारातिरेक फैल जाता है, तो क्या परिणाम होते हैं। सक्रमण-क्षेत्र की वागभिरचना अन्य दो क्षेत्रो की अपेक्षा अधिक जटिल हो सकती है। कारण से अभी तक सक्रमण क्षेत्र पर सकालिक दृष्टि से बहुत कम अध्ययन हुआ है। इस पर आधारित साख्यिकीय सहसम्बद्ध-तापरक कार्य Alva L Davis तथा Cavid w Reed (देखिए, ग्रन्थसूची) के हैं। बघेलखड के अन्तर्गत अधिकाश दक्षिणी बघेलखड सक्रमण-क्षेत्र के रूप को उपस्थित करता है।

24.4 अवशिष्ट क्षेत्र

भौगोलिक तथा सास्कृतिक अलगाव क कारण जो क्षेत्र केन्द्रीय क्षेत्र की समभाषांश रेखाओं से अप्रभावित रह कर बोली रूप को दीर्घ अवधि तक अपरिवर्तित बनाए रखना है, उसे अवशिष्ट क्षेत्र कहा जाता है। इसे उपान्त क्षेत्र भी कहा जाता है। Mario pei ने इसकी यह परिभाषा दी है—' A regiong regaining older linguisitic forms which have lost or undergone other regions— ' Clva L Aavis व Raven I Mc David ने प्राचीन भाषिक रूपो की अवशिष्टता के कारण पर प्रकाश डालने हुए *इसकी व्याख्या इस प्रकार प्रस्तुत की है*—'A relic area is one whose geo raphic or Cultural Irolation has permitted the p eservation of ol ler forms that have been lost elsewhere and has prev ented the spread of local forms''[10]

24.4 1 अवशिष्ट क्षेत्र की प्रमुख विशेषताएँ

अवशिष्ट क्षेत्र की प्रमुख विशेषताएँ अधोलिखित हैं—

(क) अवशिष्ट क्षेत्र प्राय ऐसे भूखड होते हैं, जहाँ सास्कृतिक, राजनैतिक, या भौगोलिक कारणों से प्रवेश कठिन होता है तथा व्यापारिक मार्ग या अन्य सचार वहाँ तक पहुँचने म सहायक नही होते। इस प्रकार विविध कारणो से ये 'यातायात के मार्ग' से अलग हो जाते है।

(ख) यह आवश्यक नहीं है कि अवशिष्ट क्षेत्र भौगोलिक दृष्टि से सीमान्त या उपान्त हो ही (यदि सीमान्त में है, तो उन्हे पार्शविक क्षेत्र कहना अधिक उपयुक्त होगा)। वे अन्य प्रकार से भी अलग हो सकते हैं। उदाहरण के लिए, बघेलखंड की अत्यंत रूढिवादी महलाएँ, जो अनेकविध निषेधो का पालन करती है।

(ग) यदि किसी क्षेत्र में कोई लक्षण ऐसा मिलता हो, जो इतर क्षेत्रों में अविद्यमान हो, तो उसकी विद्यमानता को दिखाने वाले क्षेत्र को अवशिष्ट क्षेत्र को अवशिष्ट क्षेत्र कहा जाएगा।

(घ) किसी विशाल नगरीय क्षेत्र के मध्य में भी किसी भाषा-द्वीप के कारण किसी अवशिष्ठ बोली-समुदाय की रचना हो सकती है। भौगोलिक दृष्टि से पृथकाव् आवश्यक नहीं है।

(ङ) इस प्रकार अवशिष्ट क्षेत्र विच्छिन्न होते है। इन्हें बचा खुचा निराकृत क्षेत्र कहा जा सकता है।

(च) अवशिष्ट क्षेत्र समभाषाश रेखाओ से प्राय: दूर रहते हैं, अतएव उनके प्रसार की सम्भावना नहीं होती।

(छ) अवशिष्ट क्षेत्र सामाजिक दृष्टि से भले ही महत्वपूर्ण न हो, परन्तु भाषिक दृष्टि से प्रमुख होते है, क्योंकि बोली की प्राचीनता को सिद्ध करने के लिए इस क्षेत्र के पुराने रूपों से सहायता मिलती है।

बघेलखड के अन्तर्गत सिगरौली क्षेत्र, उत्तरी बाघोगढ, उत्तर-पूर्वी तरिहार, आदि अवशिष्ट क्षेत्र है।

24.4.2. अवशिष्ट रूप

अवशिष्ट रूप अनपढ, वृद्ध, और चिरकाल से एक ही स्थान में रहने वाले (सभी यात्रा न करने वाले) लोगो की बोली में प्रचुर संख्या में मिलते हैं। इन्हें बाह्य बोलियो के अछूते प्रयोग भी कहा जा सकता है।

शब्द-भूगोल के लिए सर्वोत्तम सामग्री अवशिष्ट रूपो के द्वारा ही मिलती है, जो भाषा को किसी-न-किसी प्राचीनता को प्रदर्शित करते हैं। ये एकाकी रूप होते हैं, जो पार्श्ववर्ती जनसंख्या के द्वारा नहीं प्रयुक्त होते। नवप्रवर्तन की बाढ़ को रोकने में ये महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है।

नए लोगो की दृष्टि में ये प्रयोग अप्रगतिशील होते हैं। वैसे आदत्त शब्दो और प्रयोगो की अपेक्षा इसका विश्लेषण व इसके प्राचीन सम्बन्धों का अन्वेपण अधिक सरल है।

24.4.2.1. बघेलखंड के अवशिष्ट रूप

ग्रामीण जनता की बोली के अनेक तत्व बघेलखंड से शीघ्रता से लुप्त हो रहे हैं। कुछ तो प्रायः निर्वाण की अवस्था में हैं तथा कुछ बिलकुल ही छोड़ दिए गए हैं। कैमोर पर्वत के दक्षिण क्षेत्र में, विशेषकर सिगरौनी तथा उत्तरी बांधोगढ़ में, स्थानीय तत्व अधिक सुरक्षित हैं, जब कि कैमोर पर्वत के उत्तरी क्षेत्र में अपेक्षाकृत कम। उत्तरी क्षेत्र में भी कहीं-कहीं अवशेष देखने को मिल जाते हैं।

जब किसी भाषिक तत्व का कोई अवशेष उत्तर तथा दक्षिण दोनों ही क्षेत्रों मिलता है, तो यह कल्पना की जानी चाहिए कि प्राचीन काल में यह बघेलखंड की कुछ जातियों व परिवारों में सर्वत्र प्रचलित रहा होगा।

24.4.3.अवशिष्ट क्षेत्र के ऐतिहासिक अध्ययन की उपयोगिता

अवशिष्ट क्षेत्र के ऐतिहासिक महत्व पर Robert A. Hall की टिप्पणी उद्धरणीय है—'यदि हम किन्हीं लक्षणों को केवल अवशिष्ट क्षेत्र में ही पाते हैं, तो निष्कर्ष निकलेगा कि ये कभी पूरे क्षेत्र में व्याप्त रहे होंगे। ...... यदि इस प्रकार की अनेक इकाइयों के भौगोलिक वितरण को मानचित्र में दिया जाए, तब एक वृहद् अवशिष्ट क्षेत्र की पट्टी मिल सकती है।"[11] यह ध्यातव्य है कि अवशिष्ट क्षेत्र में मिलने वाले सम्पूर्ण भाषिक अभिलक्षण अनिवार्यरूप से प्राचीन नहीं कहे जा सकते।

24.4.4. अवशिष्ट क्षेत्र के क्षंकालिक अध्ययन की उपयोगिता

भाषाओं का प्राचीन और नवीन स्थितियों पर प्रकाश डालने के लिए अवशिष्ट क्षेत्र का अध्ययन उपयोगी होता है। बघेलखंड में उत्तरी बांधोगढ़ एक विचित्र अवशिष्ट क्षेत्र है।

24.5. परम्परागत बोली-क्षेत्रों का निर्धारण : एक नवीन मान्यता

परम्परागत बोली-क्षेत्रों का निर्धारण पूर्ववर्ती शब्द-भूगोलवेत्ताओं ने भिन्न-भिन्न कसौटियों से किया है, जिनमें भाषेतर दृष्टि प्रमुख है। किन्तु मेरे विचार से विशुद्ध भाषिक दृष्टि से, बिना इतिहास के सहारे, बोली-क्षेत्रों का विभाजन सम्मिश्रण शब्दों के माध्यम से भी किया जा सकता है। तदनुसार 'बघेलखंड की शब्दमानचित्रावली' के 374 वें मानचित्र में ऐसे क्षेत्र दिखलाए गए हैं, जहाँ सम्मिश्रण प्राप्त होता है व ऐसे क्षेत्रों का संकेत है, जहाँ सम्मिश्रण नहीं मिलता। इस प्रकार के सम्मिश्रण-रहित क्षेत्र अवशिष्ट क्षेत्र

स्वीकार किए गए है, क्योंकि ऐसे क्षेत्रो में पार्श्ववर्ती बोली क्षेत्रो का प्रभाव अपेक्षाकृत अत्यल्प है। इसके अतिरिक्त ऐसे क्षेत्र जहाँ सम्मिश्रण मिलता है, समभाषाश-रेखाओ के बिखराव के आधार पर उन्हे नवप्रवर्तन-क्षेत्र माना गया है। सक्रमण क्षेत्र की तुलना मे कम सम्मिश्रण मिलता है। इस प्रकार कैमोर पर्वत और सोन नदी के उत्तर का भाग नवप्रवर्तन-क्षेत्र सिद्ध होता है तथा उसके दक्षिण का भाग सक्रमण-क्षेत्र है। नवप्रवर्तन-क्षेत्र के प्रमुख केन्द्र चित्रकूट, सतना, तथा रीवा है, और सक्रमण-क्षेत्र के प्रमुख केन्द्र अमरकटक तथा शहडोल हैं। ऐतिहासिक दृष्टि से विचार करने पर कहा जा सकता है कि सोलहवी शताब्दी तक बघेलखण्ड की राजधानी बांधोगढ थी तथा सोलहवी शताब्दी के अन्त मे 1597 ई० में रीवा को राजधानी बनाया गया था। 374 वें मानचित्र से बाधोगढ अवशिष्ट क्षेत्र सिद्ध होता है। अतएव कुछ सीमा तक बोली-क्षेत्रो के निर्धारण की उपयुक्त कसौटी सही प्रतीत होती है। बघेलखण्डी के विकास के प्रारम्भिक चरण में सोलहवी शताब्दी तक कैमोर पर्वत के दक्षिण में स्थित बांधोगढ राजधानी उस क्षेत्र की प्रतिष्ठा की वाचक थी। ऐसी स्थिति में यह कहना तर्कसगत होगा कि उस युग में रीवा क्षेत्र सक्रमण क्षेत्र रहा होगा। किन्तु सोलहवी शताब्दी के पश्चात् रीवा प्रतिष्ठा का मुख्य केन्द्र बन गया तथा बाधोगढ ने भी अपनी प्राचीनता बनाये रखी। ऐसी स्थिति म यदि दोनो ही क्षेत्रो में—कम या अधिकमात्रा में—सम्मिश्रण मिलता है, तो इसके मूल में विशिष्ट ऐतिहासिक कारण है, जिनका विवेचन सघातों की रचना प्रक्रिया में है। यहाँ यह भी ध्यातव्य है कि बघेलखण्डी की प्राचीन सामग्री दक्षिण क्षेत्र से ही प्राप्त हुई है (बघेलखण्डी का शब्द-भूगोल, 1.3 8.3 3 द्रष्टव्य)।

टिप्पण और सन्दर्भ

1. Mario Pei, Glossary of Linguistic Terminology, New york 1966, p 92
2. Alwa L. Davis and Raven I Mc David, Northestern Ohio A Transitional area', Lan_uage (1950) 264
3. Daniel Steible Concise Handbook of Linguistics, London, 1967, p 49.
4. Robert A Hall Introductory Lin uistics
5. Louis H. Gray, Foundations, of Language, New york, 1939.

6 Alva L Davis and Raven I McDavid, Ibid, p 268
7 Robert A Hall, Ibid.
8 Ibid
9 Mario Pei, Ibid, p 232
10 Alva L Davis and Raven I McDavid, Ibid, p 261.
11 Robert A, Hall, Ibid

25

नवप्रवर्तन और आदान

25.1. किसी स्थान में जब कोई तत्त्व उद्भूत होता है, तो उसे नवप्रवर्तन कहा जाता है तथा नवप्रवर्तन का आदान होना है। अर्थात् आस-पास के वक्ता उसका अनुकरण करते हे। इस प्रकार के अनुकरण के मूल में या तो सम्मान की भावना या आवश्यकता की अभिप्रेरणा रहती है। जैसे ही नवप्रवर्तन गतिशील होता है, उस क्षेत्र की बाह्य सीमा संक्रमण-क्षेत्र का दृश्य उपस्थित करती है है तथा अन्त में नव प्रवर्तित तत्त्व अनुकूल परिस्थिति में विजयी होकर उसे केन्द्रीय क्षत्र में परिवर्तित कर देता है एवं पराजित प्रतिस्पर्धी केवल अवशिष्ट क्षेत्र में जीवित बचते हैं। विस्तार की व्यापक प्रक्रिया के अन्त में अवशिष्ट क्षेत्र भी अदृश्य हो जाते हैं तथा प्रामाणिक रूप से समूचे क्षेत्र में नवप्रवर्तन देखने को मिल जाता है।

25.2. बघेलखंड मे नवप्रवर्तन

बघेलखंड में नवप्रवर्तन कई प्रकार से घटित होते हैं। इनमें से अधिकाश राष्ट्रभाषा हिन्दी से आए हैं। स्वतंत्रता-प्राप्ति के पश्चात् हिन्दी के प्रचार और प्रसार का यहाँ अधिक अवसर मिला है और आज सिनेमा, रेडियो, समाचार-पत्र, व पाठशालाओं, आदि विविध माध्यमो से हिन्दी बघेलखडी जनता को अभिभूत कर रही है (बघेलखंड का शब्द-भूगोल, 2.1.2.1.1. द्रष्टव्य)। ऐसी स्थिति में हिन्दी इस क्षेत्र की प्रमुख प्रतिष्ठा-भाषा बनती जा रही है तथा हिन्दी के अनेक आदर्श रूपो ने बघेलखडी के स्थानीय शब्दो व अभिव्यक्तियों का स्थान ले लिया है। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि हिन्दी के माध्यम से आने वाले नवप्रवर्तन तद्भव शब्द ही नहीं हैं, अपितु संस्कृत, बंगला, मराठी, गुजराती, अरबी, फ़ारसी, अंग्रेज़ी, आदि भाषाओं के (तत्सम, तद्भव, देशी, व विदेशी) तत्त्व भी

अन्तर्भूत है। आदान की चर्चा के प्रसग म पार्श्ववर्ती बोलियो के प्रभाव को भी अस्वीकार नही किया जा सकता, जिनमें बुन्देली, भोजपुरी, अवधी, छत्तीसगढी, व गोडी प्रमुख है।

लिखित भाषा खडी बोली के माध्यम से विकिरणशील नवप्रवर्तनो का यहाँ के विद्यालयो द्वारा यद्यपि अनेक स्थानो से प्रसार हुआ है, तथापि ग्रामीण क्षेत्रो की तुलना में नगरीय क्षेत्रो का इस नवप्रवर्तन में प्रमुख योग रहा है। इसीलिए रीवा व सतना में प्रचलित शब्द-रूपावली बहुत कुछ सीमा तक सिगरौली व मेकल-क्षेत्र की शब्दावली से भिन्न है।

खड़ी बोली के माध्यम से प्रसारित 'माप्टर्' (मानचित्रानुक्रम 12,51) 'नरस्' (शब्दानुक्रम 29), अक्बार् (शब्दानुक्रम 81), तथा अम्ले (शब्दानुक्रम 32), आदि शब्द इसी शताब्दी के प्रतीत होते है। इनमें अम्ले (एम० एल० ए०) शब्द स्वतन्त्रता के पश्चात् आया है। उसका इतिहास बहुत प्राचीन नही है, तथापि उसने प्राचीनतर शब्द 'अक्बार्' की तुलना मे व्यापक क्षेत्र पर अपना अधिकार स्थापित कर लिया है। इसी प्रकार, 'माप्टर' की [—प्ट्—] प्राय अधिक क्षेत्र में प्रचलित है, जब कि उसके [—ह्ट्ट्—], [—हट्—], [-ट्ट्-] तथा [—ट्] परिवर्तों का व्यवहार सीमित क्षेत्रो में ही होता है।

कुछ अर्द्धस्वर (+स्वरो) के उच्चारण में ध्यान देने योग्य परिवर्तन मिलते हैं। उदाहरण के लिए, 'एक (मानचित्रानुक्रम 15) शब्द की [ए—] बरौंधा-क्षेत्र में [या—] तथा अकल-क्षेत्र में [य—] के रूप मे उच्चारित होती है। इसी प्रकार, मध्य भारतीय आर्यभाषा के ए ध्वनियुक्त अनेक शब्दो के आधार पर कहा जा सकता है कि प्राचीन बघेलखडी म इसकी प्रवृत्ति अर्द्धव्यजन होने की थी। यही बात [ओ] के सम्बन्ध में भी लागू होती है। [ए] तथा [ओ] दोनों ही ध्वनियाँ अपने ह्रस्व रूपों के साथ तालव्य व द्वयोष्ठ्य अर्द्धव्यजन मे परिवर्तित हो जाती रही होंगी, किन्तु आज हिन्दी के प्रभाव से अर्द्धस्वरो (या अर्द्धव्यजनो) की तुलना में स्वरो के व्यवहार की अधिक प्रतिष्ठा है तथा अर्द्धस्वर-युक्त ऐसे शब्दों के प्रयोग करने वाले लोग अर्द्धसभ्य या गँवार समझे जाते हैं। 75 वर्ष पूर्व Grierson ने बघेलखडी की एक विशिष्ट प्रवृत्ति का सकेत दिया था, जिसके अनुसार अवधी (या सस्कृत) के [व] युक्त शब्दो का उच्चारण बघेलखडी म [व] के रूप में किया जाता था। किन्तु आज हिन्दी के प्रभाव से बघेलखडी मे [व] युक्त शब्द बहुतायत से मिलने लगे हैं।

रूपप्रक्रिया में इसी प्रकार कभी स्थान सूचक प्रत्यय क रूप में गोडी के (—गुगा) (इग्गा 7 यग्गा 7 यड्गा 7 यड्घा = यहाँ) का प्रसार समूचे बघेल-

खंड मे हो गया था, किन्तु अब उसे भी प्रतिष्ठाहीन रूप माना जाना है और धीरे-धीरे उसका स्थान हिन्दी का (—हाँ) प्रत्यय ले रहा है।

शब्दरूपो के अन्तर्गत 'नाभि' के लिए 'ढ्वड्री' शब्द यद्यपि आज भी बहुप्रचलित है, किन्तु 'गलीज्,' व 'लकुटन्+टप्पो,' तथा 'जन्गायो' के स्थान पर 'कोहड़ा' शब्द का शीघ्रता के साथ प्रसार हो रहा है।

अर्थतत्त्व भी हिन्दी के प्रभाव से नही बच पाया। मानचित्रानुक्रम 309, 319, आदि में इस प्रकार के प्रभाव को सरलता से खोजा जा सकता है।

इस प्रकार हिन्दी के प्रभाव से बघेलखडी मे अत्याधिक मात्रा मे नए तत्त्व आ रहे है तथा उनकी बढती हुई प्रतिष्ठा के कारण प्राचीन रूप समाप्त हो रहे है।

26

प्रत्येक शब्द का अपना निजी इतिहास होता है

26.1. सोलहवें अध्याय में यह चर्चा की गई है कि शब्द-भूगोल के प्रारम्भिक विद्वान् भाषा या बोली के किसी भी प्रकार के विभाजन के घोर विरोधी थे तथा वे भाषा की अखडता (अविच्छिन्न धारा) के प्रबल समर्थक थे। बोलियो के अन्वेषण के प्रारम्भ से ही उन्होने यह अनुभव किया था कि एक स्थान से दूसरे स्थान में समभाषाश भिन्न होते हैं। परिणामस्वरूप 'ध्वनिपरिवर्तन की नियमितता' का नव्यवैयाकरणीय नियम उन्हें अनुपयुक्त प्रतीत हुआ।

26.2. नव्यवैयाकरणो के द्वारा बनाए गए ध्वनिपरिवर्तनों के नियमो के अनुसार आद्य जर्मनीय [क्] हमें उच्च जर्मन में [ख्] के रूप में मिलनी चाहिए, क्योंकि एक ही परिवेश में आने पर ध्वनियो को बिना किसी अपवाद के एक रूप में परिवर्तित हो जाना चाहिए था। किन्तु Wenker की प्रश्नावली के आधार पर एकत्र की गई सामग्री का जब अध्ययन किया गया, तो अनेक भिन्न समभाषाश पाए गए। उदाहरणार्थ 'करना' व 'मैं' के भिन्न भिन्न समभाषाश उपलब्ध हुए। यद्यपि इन दोनो शब्दों (मेकेन, इक) के लिए समभाषाश—रेखाएँ यथार्थत: जर्मन भाषा के पूर्वी विस्तार से राइन तक एक हैं, किन्तु वहाँ से ये अलग-अलग अपना विस्तार दिखाते है। जब शब्द-भूगोल में इस प्रकार की समस्याएँ आईं, तो शब्द-भूगोलवेत्ता पूर्व-प्रचलित नव्यवैयाकरणो के मत के प्रति सन्दिग्ध हो गए।[1] उसके विरोध में उन्होने यह नारा बुलंद किया—*'प्रत्येक शब्द का अपना निजी इतिहास होता है।"*

26.3. इस प्रकार की विचारधारा के प्रमुख प्रवर्तक नव्यभाषाविज्ञानी H. Schuchardt माने जाते है, क्योकि नव्यवैयाकरणो के प्रति उनका भयंकर अभ्याघात प्रसिद्ध है। Schuchardt दो मौलिक परिकल्पनाओ के जन्मदाता

के रूप में प्रसिद्ध है, जिनमें से एक भाषा का प्रारूप-विषयक लहर सिद्धान्त है तथा दूसरा प्रस्तुत कथन कि 'प्रत्येक शब्द का अपनी निजी इतिहास होता है।'

उपर्युक्त उक्ति को भ्रमवश Jules Gillieron की उक्ति माना जाता है। किन्तु यह ध्यातव्य है कि Gillieron Schucharat के शिष्य थे, तथा उनकी चिन्तनधारा अपने गुरु के ही अनुरूप थी। Schuchardt के प्रति Gillieron की श्रद्धा का द्योतक अनेक मार्गदर्शक लेखों का वह संग्रह है,[2] जो उन्होंने 1912 ई० में Schuchardt को समर्पित किया था। अतएव इस मत को Shuchardt की मौलिक उद्भावना मानना चाहिए,

यहाँ इस उक्ति की समीक्षा yakov Malkiel के Each word has a history of its own (Glossa (1967) I:137-49) नामक लेख के आधार पर की गई है।

26.3.1. प्रारम्भिक रूप में 'प्रत्येक शब्द के इतिहास' और 'नियमित ध्वनि-परिवर्तन' के मध्य कोई विशेष असंगति नहीं प्रतीत होती, क्योंकि ध्वनि-नियमों के समर्थक अतिकठोर 'नव्यवैयाकरण' भी यह मानकर चलते हैं कि सामान्य ध्वनिवर्तन के अतिरिक्त अन्य परिवर्तन भी घटित हो सकते हैं तथा इसके लिए यदा कदा उन्होंने अपवाद भी प्रस्तुत किया है। वे यह भी स्वीकार करते हैं कि बोलियों में निरन्तर नवप्रवर्तन व आदान की क्रिया से बहुविध नए तत्त्व किसी भाषा के अंग बन सकते हैं। इस प्रकार के अन्तर क्षेत्रीय होने के साथ-साथ सामाजिक भी है।

इतना होते हुए भी कुछ नव्यवैयाकरणों ने नियमों की रचना व उनकी कठोरता के चक्कर में 'निरापवादता' का राग अलाप कर वास्तविकता को भुला दिया। उनके कथनी और करनी में इस प्रकार अन्तर आ गया। उन्होंने शब्दों की व्युत्पत्तियाँ तो दी, किन्तु यह भुला बैठे कि शब्द सामाजिक व्यवहार से सम्बद्ध है। और किसी शब्द की यथार्थ व्युत्पत्ति उस समय तक नहीं की जा सकती, जब तक व्युत्पत्तिशास्त्री को अन्य विषयों का ज्ञान न हो।

शब्द वस्तु-आन्दोलन के संचालक Schuchardt ने नव्यवैयाकरणों के मत का विरोध किया तथा उनके नियमों की अतिकठोरता का उपहास करते हुए उन्होंने यह उद्घोषणा की कि प्रत्येक शब्द का अपना निजी इतिहास होता है। उनके इस विरोध के कारण को हम बघेलखंडी के एक उदाहरण से समझ सकते हैं। उदाहरणार्थ, बघेलखंडी में 'कंडे के ढेर' के लिए 'बटरौड़ा' शब्द मिलता है। यदि किसी व्युत्पत्तिशास्त्री से इस शब्द की व्युत्पत्ति के लिए कहा जाए, तो वह

जो कुछ व्युत्पत्ति देगा, वह प्रायः भ्रान्त होगी, क्योंकि क्षेत्र के सर्वेक्षण व विविध विषयों के ज्ञान के अभाव में उसे 'वदिहा + उपरोड़ा' के सम्मिश्रण का ज्ञान न हो पाएगा। इस प्रकार व्युत्पत्तिशास्त्रियों द्वारा दी गई अनेक व्युत्पत्तियाँ प्रायः भ्रामक व अव्यावहारिक समझ कर Schuchardt ने उसका विरोध किया, तो स्वाभाविक है। उपर्युक्त व्याख्या के आधार पर Schuchardt के कथन को कुछ संशोधन के साथ इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है—'प्रत्येक शब्द का अपना निजी इतिहास होता तो है, किन्तु उसे केवल भाषिक समपार्श्व में ही नहीं देखा जा सकता। उसे समझने के लिए भाषिकेतर कारणों का का ज्ञान होना भी आवश्यक है।'

केवल ध्वनि प्रक्रियात्मक भिन्नता के आधार पर किसी विशिष्ट क्षेत्र में शब्दों की भिन्नता उस समय और भी अधिक दुरूह हो जाती है, जब समान ध्वनि-परिवर्तन में असमान भौगोलिक व्याप्ति होती है। सामान्य ध्वनिपरिवर्तन परिभाषा की दृष्टि से समय की एक विशिष्ट अवधि तथा निश्चित क्षेत्र में ही सीमित होता है, किन्तु Gillieron की मानचित्रावली के मानचित्रों से में जब परम्परागत अधिक भिन्नता दिखलाई पड़ी, तो उनके समर्थक नव्यभाषाविज्ञानी तथा शब्द-भूगोलवेत्ता नव्यवैयाकरणों के सिद्धान्त की प्रामाणिकता के प्रति सन्दिग्ध हो उठे।

26.3.2. इस प्रसङ्ग में Bloomfield की अद्वितीय पुस्तक 'Language' के अठारहवें (तुलनात्मक पद्धति) तथा उन्नीसवें (बोली-भूगोल) अध्यायों की सूक्ष्म परीक्षा उपयोगी होगी। यह सुविदित है कि उन्होंने अनेक अवसरों पर नव्य वैयाकरणों के कार्य का समर्थन किया है, किन्तु विद्वानों को इसकी जानकारी बहुत कम है कि वे अनेक वर्षों तक प्राचीन नियमों को ध्वस्त करने वाली भाषा-भूगोलवेत्ताओं की खोजों पर भी समान रूप से मुग्ध थे। यह ध्यानव्य है कि Language की द्वितीय भूमिका को लिखने के काल में भी वे उस समय प्रचलित दोनों विचारधाराओं का मेल कराने में असमर्थ रहे हैं। इस कारण Yokov Malkiel का यह विचार है कि उनके ग्रन्थ Language की पूर्णता के सम्बन्ध में जितनी उद्घोषणाएँ की जाती हैं, उनमें सत्य का अंश कम है।

Bloomfield के सम्बन्ध में इस तथ्य पर कदाचित् ही लोगों का ध्यान जाता है कि अपने विद्यार्थी-जीवन में वे शब्दवस्तु-हेतु के व्यावहारिक तथा कलात्मक ढंग से प्रतिनिधि थे।[२] एक शताब्दी या इसके कुछ बाद उन्होंने G. G. Kloeke का डच-फ्लेमिश राज्य पर आधारित स्थानीय शब्द 'माउस' तथा 'हाउस' के स्तरीय ध्वनिय-युक्त लघु-प्रबन्ध को अधिक ध्यान से पढ़ा था तथा प्रबन्ध के अभि-प्राय को यथातथ्य स्वीकार कर लिया था। उन्होंने उस पुस्तिका की समीक्षा

सहानुभूतिपूर्वक अधिक विस्तार के साथ की थी।[3] इसके पश्चात् भी उन्होंने Gillieron के अनुसंधानो में अत्यधिक रुचि ली थी तथा उनकी पद्धति व प्राप्त परिणामो के वे प्रशसक थे। इस प्रकार Language नामक ग्रन्थ के अन्तर्गत 'बोली भूगोल' का अध्याय उनके वर्षों के परिपक्व और गम्भीर चिन्तन का फल है।

इस पृष्ठिभूमि में यह आश्चर्यजनक प्रतीत होता है कि 'प्रत्येक शब्द का अपना निजी इतिहास होता है' विचार की स्पष्ट व्याख्या करते समय Bloomfield प्रत्यक्ष असगति की इन दो कोटियो के मध्य कोई विभाजक रेखा नही खींच पाए—

(क) (विभिन्न मानचित्रो में प्रदर्शित) *समभाषास-रेखाओ से* निर्मित बोली-सीमा बताने म असमर्थता।

(ख) समान क्षेत्र मे प्रचलित शब्दो में ध्वनिनियम की निरपवादता।

प्रथम अनियमितता से बोलियो के अस्तित्व पर सन्देह किया जाता है तथा द्वितीय अनियमितता ध्वनिनियम की मौलिक कल्पना को ही ध्वस्त कर देती है।

ध्वनिपरिवर्तन की नियमितता के विपरीत एक व्यापक क्षेत्र से Kloeke ने [मूस्] तथा [हूस्] के जिन उदाहरणों को प्रस्तुत किया था, उनकी व्याख्या Bloomfield ने अत्यन्त विदग्धता के साथ की थी तथा यह तर्क दिया था कि 'हाउस्' जैसा शब्द 'माउस्' जैसे शब्द की अपेक्षा अवाङ्मुख है। इस सन्दर्भ में उन्होंने Gillieron की ही लाक्षणिक शब्दावली का प्रयोग किया था। Malkiel *तो मानते है कि Bloomfield अपने ऐसे कार्यों से Gillieron* के कृपापात्र बनना चाहते थे। इतना ही नही, वे 'आयु-क्षेत्रानुमान' जैसी विवादास्पद व अस्पष्ट धारणा से खेल रहे थे। अन्त में वे सकट की स्थिति में भाषावैज्ञानिक क्षेत्र से हटकर 'अवशिष्ट रूपो' की चर्चा के साथ अपना विवेचन समाप्त कर देते हैं। उन्होंने कही यह चर्चा नही की कि / हूस् / तथा / मूस् / आदि किस सीमा तक ध्वनिप्रक्रियात्मक विश्लेषण को जटिल बना देते है या नव्यवैयाकरणों के सिद्धान्त म बाधा उपस्थित करते है। इसके पश्चात् अकस्मात् उक्ति म लौट कर उसका इस प्रकार सशोधित स्वरूप प्रस्तुत करते है—

Each word has its own history

यहाँ पर अपने विषय का प्रतिपादन करने के लिए उन्होंने स्वतन्त्र उदाहरण Jaberg मे ही लिया है तथा उससे आगे कुछ नही कह पाए, जिससे पाठक केवल अव्यवस्थित वितरणों को ही देख पाता है। इसके पश्चात् वे अभावग्रस्त

क्षेत्रो के परिचय व स्थाननामो के सकेत के साथ अपनी सन्तुलन दृष्टि को प्रस्तुत करने के लिए उसे तरग के सिद्धान्त से जोड़ देते है। इस प्रकार बोली भूगोल के सम्बन्ध में उनकी अभिव्यक्ति निराशाजनक है।

26.3.3. 'प्रत्येक शब्द का अपना निजी इतिहास होता है' को एक उपदेश वाक्य, उक्ति, या सुभाषित की श्रेणी में रखा जा सकता है। अपनी सम्पूर्ण सार-वत्ता रखते हुए भी एक वैज्ञानिक नियम नही कहा जा सकता।

उपर्युक्त कथन में अधोलिखित बातें अन्तर्निहित है—

(क) प्रत्येक, जो कि ध्वनिनियम के अन्तर्गत प्रयुक्त शब्द समुच्चय का विरोधी है। इसके मूल में यह भावना निहित है कि अनेक शब्दो को नियमितता की बात कौन करे, प्रत्येक शब्द का अपना विशिष्ट विकास है।

(ख) शब्द, जो ध्वनि, रूप, शब्दरूप, व अर्थ का उपलक्षक माना जा सकता है। प्रत्येक शब्दरूप के समान प्रत्येक ध्वनि, रूप, व अर्थ की भिन्न जीवन धारा पर सकेत है। यह ध्यातव्य है कि Gillieron शब्द को भाषा की अन्तिम इकाई मानते है।

(ग) अपना, जो दूसरो से सम्बद्ध नही होता।

(घ) निजी, अर्थात् स्वकीय विकसन। यह स्वतन्त्र-अर्थद्योतक है।

(ङ) इतिहास, भिन्न भिन्न रूप मे परिभाषेय।

(च) होता है, एक शाश्वत् सत्य की ओर सकेत, जैसा कि नव्यवैयाकरणो ने किया था।

इस कथन में जहाँ तक शब्दो की स्वतन्त्रता का प्रश्न है—उनके जीवन-चरित की बात है, वह सस्कृति या समाजसापेक्ष्य है और यह बात वक्ताओ के जीवन चक्र पर निर्भर करती है कि वे ध्वनिपरिवर्तन के नियमो म कितना बचते है। सामान्यतया इस आधार पर हम यह भी तो कह सकते है कि समाज के प्रत्येक प्राणी का अपना निजी इतिहास होता है, किन्तु इसका यह तात्पर्य कदापि नही हो सकता कि समाज के प्राणी किसी समान नियम का पालन नही करते। उदा हरणार्थ, कुछ ऐस ही व्यक्ति होगे, जो सामाजिक नियमो से परिचालित न हों। इसी प्रकार, बघेलखडो क्षेत्र में [श्] का उच्चारण [स्] में होता है, किन्तु कुछ ऐसे मातृभाषी भी हैं जो [श्] का भी प्रयोग करते है। कहा जा सकता है *कि प्रत्येक शब्द, प्रत्येक वस्तु, प्रत्येक सामाजिक रीति का* अपना इतिहास होता है, किन्तु उसमें अपवाद भी मिलते है। अतएव प्रत्येक शब्द का निजी इतिहास होता है' उद्घोषणा उतनी ही अपूर्ण है जितनी कि 'ध्वनिपरिवर्तन बिना किसी अपवाद के होता है' का सिद्धान्त।

प्रत्येक शब्द के पृथक् अध्ययन के समर्थन का तात्पर्य है कि समर्थकों की रुचि भाषा के संस्थानिक (सामाजिक) कार्यों पर बिलकुल ही नहीं है। कोई ऐसा भाषिक अध्ययन जिसमें प्रत्येक शब्द की अलग-अलग ध्वनियों का इतिहास प्रस्तुत किया जाए, वे एक प्रकार से अनगढ ही माना जाएगा, क्योंकि इस पद्धति पर आधारित अध्ययन सूचियों का सग्रहमात्र होगा। ऐसी स्थिति में इस युक्ति मे केवल आशिक सत्य मानते हुए Malkiel ने इसे इस प्रकार प्रस्तुत किया है— 'अनेक (कुछ या अत्यल्प) शब्द विचित्र इतिवृत्त वाले प्रतीत होते है।' इस प्रकार की विचित्रता या तो आकस्मिक हो सकती है या कुछ वक्ताओ की पुनर्विरचन की प्रवृत्ति में देखी जा सकती है।

उपर्युक्त मत के समर्थन में भ्रामक व्युत्पत्ति, समनामता, आदि को प्रस्तुत किया जा सकता है।

26.3.4. Gilliéron द्वारा प्रचारित 'प्रत्येक शब्द के निजी इतिहास' की मान्यता का Ernst Gamillscheg व S Kuhn ने 1928 ई० से ही विरोध करना प्रारम्भ कर दिया था। ये बोलीविज्ञानी थे तथा भाषा की अखडता पर इनका विश्वास था। ये भाषा को विविध अवयवो में विभाजित करने के पक्षपाती नही थे।

टिप्पण और सन्दर्भ

1. W. P. Lehmann, Historical Linguistics,
2. Yakov Malkiel, 'An early formulations of the linguistic wave theory,' Romance Philology (1955-6) 31.
3. Bloomfield, ' Review of kloeke,' Language (1928) 4 : 248 88

27

शब्दप्रक्रियात्मक विकास

27.1. भाषा के सिद्धान्त में शब्द-भूगोलवेत्ताओ का सर्वाधिक महत्वपूर्ण योगदान शब्दप्रक्रियात्मक विकास के मूलभूत नियमो की व्याख्या है। इस कार्य का प्रमुख श्रेय Gillieron को ही है, जिन्होने शब्दावली मे नवप्रवर्तन को जन्म देने वाले अधोलिखित कारणो को उपस्थित किया है—

(क) समनाम शब्दो का संघर्ष
(ख) शब्द की बेडौल रचना
(ग) सम्मिश्रण व मिश्रण
(घ) गौण अर्थकीय भेद, अश्लीलता, व स्थानापन्नता।

इनमे से अन्तिम दो को Gillieron ने अपेक्षाकृत कम विशद किया है। सरचनात्मक दृष्टि से शब्द-प्रक्रियात्मक मानचित्रावली के विश्लेषण मे उपर्युक्त बातो पर ही विचार किया जाना चाहिए। अगले अध्यायो में ध्वनिप्रक्रियात्मक तथा रूपप्रक्रियात्मक मानचित्रावलियो की सामग्री के विश्लेषण की विविध पद्धतियाँ सुझाई गई हैं।

27.2. समनाम शब्दो का संघर्ष

भाषाविज्ञानी यह स्वीकार करते है कि शब्दो के विकास (परिवर्तन) के कारणो में समनामता का महत्वपूर्ण स्थान है। जब ऐसा प्रभाव घटित होता है, तो समनामता के संघर्ष के फलस्वरूप एक शब्द या तो लुप्त हो जाता है या लुप्त होने की स्थिति में होता है।

समनामता की व्याख्या करना सरल है—एक ही ध्वनिमीय आकृति के यदि दो दो से अधिक शब्द है, किन्तु उनका अर्थ भिन्न है, तो समनामता होती है। उदाहरणस्वरूप यहाँ बघेलखड के कुछ समनामशब्द प्रस्तुत है। कोष्ठक मे दी

ई संख्या 'बघेलखंड का शब्दमानचित्रावलीय सर्वेक्षण' की संख्या के अनुसार शब्दानुक्रम की वाचक है। अया (244,248), आइन् (231,233), आवा (233,243), आवे (237,244), आय् (216,237), इ (168,170, 182), इहै (169,180), उ (173,183), उहै (174,179,183,185), एय् (169,172), एहिच् (169,172), ओई (174,179), ओय् (176, 179), ओला (74,181), ओही (176,169), क (204,207), कडला (273,274), कड् (104,110), कासे (193,194), काहू (191,194), कि (188,204), केका (191,194), केके (191,194), कोन् (188, 190), गदेला (23,104), गल्ता (83,70), गुल्ला (273,274), तँय् (159,164), तहाँ (161,165), तित्ता (10,125), तोअ् (163,167), तोय् (161, 166), तोला (161,166), दिस् (225,250), फून् (53, 106), मध् (56,58), में (154, 204), इत्यादि समनाम शब्द हैं। इनमें से एक का प्रयोग दूसरे की अपेक्षा व्यापक क्षेत्र में होता है। क्षेत्रकार्य से यह ज्ञात होता है कि जब किसी एक क्षेत्र में समनामता होती है तो एक अर्थ वाला शब्द रहता है, शेष लुप्त हो जाते है। उदाहरणार्थ, त्यौंथर-क्षेत्र में 'गदेला' शब्द लड़के का वाचक है, जब कि पार्श्ववर्ती क्षेत्र में वह 'बड़ी गदेली' या 'गद्दे' का वाचक है। 'गद्देली' या 'गद्दे' के लिए त्यौंथर-क्षेत्र में नए शब्दों का विकास हो गया है।

समनामता जो जन्म देने वाले तीन कारणों पर विचार किया जाता है—

(क) ध्वनिकीय परिणति—इस प्रकार की समनामता के मूल में यह है कि व्युत्पत्ति की दृष्टि से दो शब्द भिन्न-भिन्न स्वरूप वाले रहे होंगे, किन्तु कालान्तर में उनमें से किसी एक या दोनों में इस प्रकार का ध्वनिकीय अपक्षय हुआ कि दोनो आकृति की दृष्टि से एक ही गए। बघेलखंड में 'मध्' शब्द इसी प्रकार का है, जिसकी व्युत्पत्ति संस्कृत के 'मधु' व 'मद' से की गई है (मानचित्रानुक्रम 335)।

(ख) अर्थकीय परिणति—एक ही शब्द के दो रूप या अर्थ भी परस्पर भिन्न हो सकते है, यहा बघेलखंड में 'गुल्ला' तथा 'फून्'।

(ग) विदेशी प्रभाव—जब कोई आदन्त शब्द किसी भाषा में भलीभाँति घुल-मिल जाता है, तो वह नई ध्वनिअवस्था के अनुसार ढल कर पहले से विद्यमान शब्द की आकृति का हो जाता है। बघेलखंड में एम० एल० ए० 'इमली' बना तथा 'सिस्टर' 'सिविटन', फलस्वरूप पहले से विद्यमान इमली (वृक्ष) व सिविटन (मादा शृगाल) से इसका टकराव हुआ। इसी प्रकार, साया तथा छाया (=पेटी-

कोट) का संघर्ष छाया (∠छाया) से हुआ व प्रथम के स्थान पर मायर्, पेटीकोट्, *या लाँगा शब्द प्रयुक्त होने लगे।*

उपर्युक्त विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि प्रसग की भिन्नता से भिन्न भिन्न अर्थों के बोधक दो समनाम शब्द जब एक ही प्रसग में प्रयुक्त होने लगते हैं, तब उनमें से कोई एक नए अर्थ को ग्रहण कर लेता है और समनामिक स्थिति समाप्त हो जाती है। बघेलखण्ड में 'तोर्' शब्द दो अर्थों में प्रयुक्त होता है (क) तेरा (भरहुती प्राकृत-तुपक) तथा (ख) आप्रवृत्त का रस (∠तोय)। 'तोर् निकर्षे' जैसे वाक्यों में 'तोर्' शब्द का अर्थ स्पष्ट नहीं हो पाता रहा होगा, अतएव कुछ क्षेत्रों में 'तोर्' शब्द केवल 'तेरा' अर्थ में प्रयुक्त होने लगा तथा कुछ क्षेत्रों में वह 'रस' (जल) का वाचक बन गया। इसी प्रकार का एक रुचिकर उदाहरण 'मोर' शब्द का है, जो 'मेरा' व 'मयूर' का वाचक है। जिस क्षेत्र में दोनो एक हो गए, वहाँ 'मयूर' के 'मोर' के स्थान पर मजूर' का प्रयोग हुआ, *किन्तु अब उसे भी आदत्त शब्द 'मजदूर' (∠ मजूर) से संघर्ष करना पड़* रहा है।

समनामता की उलझन को समाप्त करने में सन्दर्भ का महत्वपूर्ण योग होता है। इसके अतिरिक्त लिङ्गानुशासन, शब्द-समुच्चय, क्रमबद्धता, समास, वर्तनी, आदि से भी समनामिक संघर्ष की दुरूहता को समझा जा सकता है।

समनामता के ही समान अल्पदेशीय समनामता पर अभी विद्वानो का ध्यान नहीं गया। अल्पदेशीय समनामता दो रीतियो से भाषा के विकास में योग देती है—

(क) इसका प्रभाव समनामता के समान हो सकता है, जिसमे एक शब्द लुप्त हो जाए।

(ख) लोप की प्रक्रिया के न होने पर यह शब्द की ध्वनिमीय आकृति को निश्चित कर सकती है।

इस प्रकार, अल्पदेशीय समनामता दो या दो से अधिक शब्द है, जिनकी समान ध्वनिमीय आकृति होती है तथा जिनका अर्थ प्राय भिन्न होता है।

सम्प्रति शब्दप्रक्रियात्मक इतिहास के अन्तर्गत किसी शब्द की आकृति में विनाश करने वाले या वक्ताओ की भाषिक अनुभूतियो को असह्य समानता *उत्पन्न करने वाले ध्वनिकीय अपक्षय विकास के महत्वपूर्ण कारण माने जाते है।*

27.3 शब्द की बेडौल रचना

शब्द की ध्वनिक सरचना समय की अवधि में बदलती रहती है—कोई शब्द,

जो मूल रूप से अपनी क्रिया के अनुसार था, वही अति लघु या अति दीर्घ बन जाता है अथवा कुछ ध्वनि-तत्व प्राप्त कर लेता है तथा आशातीत ढग से भिन्न संसर्गों में विकसित होता है। ऐसे उदाहरणो में सदैव नवीन या सुविधाजनक शब्द स्थानापन्न करते हैं।

बघेलखड के दक्षिणी क्षेत्र में इस प्रकार के शब्दो के विकास की गति तीव्र है (बघेलखड़ का शब्दमानचित्रावलीय सर्वेक्षण, चतुर्थ अधिकरण द्रष्टव्य)।

27.1 4. सम्मिश्रण

शब्द-भूगोल के अध्ययन से जिस अन्य घटना का मूल्यांकन किया जा सकता है, वह है सम्मिश्र शब्दो का मिलना। सम्मिश्रण दो शब्दो का एकीभाव है।

सम्मिश्रण की रचना प्रक्रिया को अधोलिखित रूपो में प्रस्तुत कर सकते है—

(क) अधिकतर सम्मिश्रणो में एक शब्द के आद्यश व दूसरे शब्द के अतिमांश का समेकन होता है, यथा कण्डील् व लाल्टेन् से लण्डील का बनना।

(ख) कभी-कभी दूसरा शब्द अपरिवर्तित (यथारूप) रह कर प्रथम शब्द के आद्यश का सयोजन करता है, यथा कुरस् तथा पट्ट से कुनपट्ट, ग्वाँहूँ और चना से ग्वचना, भलउआ तथा बण्डी से भवण्डी, ग्रादि।

(ग) कदाचित ऐसा भी देखा गया है कि प्रथम शब्द अपरिवर्तित हो तथा दूसरे शब्द का अन्तिमाश उसमे मिल जाए, टार्चेट्, जो टार्च तथा लईट् से बना।

(घ) एक स्थिति वह भी है, जब प्रथम शब्द का आद्यक्षर द्वितीय शब्द के आद्यक्षर से मिले (उपर्युक्त उदाहरणों से भिन्न) तथा प्रथम शब्द के प्रथमाक्षरोपान्त ध्वनि का लोप हो जाए, यथा टीन् व कलट्टर् से टीका बना।

उपर्युक्त उदाहरण दो शब्दों के सयोजन के हैं। इनके अतिरिक्त तीन शब्दो का सम्मिश्रण भी मिल सकता है, जिसे मैंने 'मिश्रण' कहा है, उदाहरणार्थ, ग्वजई, जिसमें ग्वाहूँ + जबा + बुर्री का मिश्रण है (मानचित्रानुक्रम 266)। वैसे, ऐसे उदाहरण अपेक्षाकृत कम मिलते है।

सम्मिश्रण के फलस्वरूप रचित नए शब्द अपने मूलवर्ती शब्दों का अर्थ ज्यो का त्यो बनाए रखते हैं। कुछ सम्मिश्रण 'तात्कालिक शब्द' होते है, उनके चिर-जीवन की कामना नहीं की जा सकती, उदाहरणार्थ, बघेलखड के अन्तर्गत कप्टेन, मेबल, तथा लण्डीन, आदि। कुछ ऐसे भी सम्मिश्रण होते हैं, जिनके बारे में कहा जा सकता है कि वे प्राचीनकाल से वहाँ की आदर्श शब्दावली में खप चुके हैं, यथा अरकुका, गनरवा,ग्वजई, नोंनरवट् लोन्छर्, आदि।

उपर्युक्त विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि सम्मिश्रण का परिणाम सदैव 'एक-मेवतत्व' होता है, जिसे हिन्दी में 'एकिम' व अँग्रेजी मे moneme कहा जा सकता है।

बघेलखण्ड में सम्मिश्र शब्द विशेषरूप से संक्रमण-क्षेत्र में मिलते हैं, क्योंकि जैसे-जैसे जनसंख्या का प्रसार उत्तर की ओर हुआ, वैसे-वैसे दक्षिण की सीमाएँ अधिक धूमिल होती गई है व सम्मिश्रण की सम्भावनाएँ बढ गई है।

सम्मिश्रण एक प्रकार की शब्द-रचना तो है, किन्तु अन्य शब्द-रचनाप्रकारो की तुलना में इसका आधार मूलत. भिन्न होता है। इसे समझने के लिये यहाँ बघेलखण्ड के सम्मिश्र शब्दो की एक संक्षिप्त सूची प्रस्तुत है। कोष्ठक में स्वतन्त्र शब्दों के साथ सम्मिश्र शब्दो का व्यवहार करने वाले समुदायो की संख्या दी गई है। कोष्ठक के बाहर श० शब्दानुक्रम व चि० मानचित्रानुक्रम के वाचक हैं। इनकी सुस्पष्ट व्याख्या बघेलखण्ड का शब्दमानचित्रावलीय सर्वेक्षण, व बघेलखण्ड की शब्दमानचित्रावली नामक मेरे अप्रकाशित प्रबन्धो में है।

1. अरक्का (13,17,18; अथान् + रक्का) श० 57, चि० 259
2. एँड्घा (15,16; बघेली-एँहा + गोंडी-इग्गा) श० 126, चि० 190
3. कग्गी ((163,164, बघेली-कहाँ + गोंडी-बग्गी) श० 128, चि० 192, 195
4. कण्टेन् ((1, कण्डील् + लाल्टेन्) श० 84, चि० 274
5. कर्छर् ((1, कड् (∠कटु) + छर् (∠क्षार) श० 104, चि० 291, 331
6. कसाइत् ((118-127; कजात् + साइत्) श० 200, चि० 303
7. खिन्ची (137; खिलिआ + बिरन्ची) श० 97
8. गन्रवा (141,144,150,152,153, ग्वाजा + कन्खा) श० 67
9. गराहा (54,55, गन्ला + राहा) श० 79, चि० 273.
10 गुवच्ना (119,122; ग्वाहूँ + चना) श० 66, चि० 266.
11. गुवजई (118,120,123,127, ग्वाहूँ + जवा + वुयर्री) श० 66, चि० 266.
12. झवण्डी (48,49, भलउआ + बण्डी) श० 36, चि० 245.
13. टार्चेट् (50, टाच् + लऍट्) श० 99, चि० 284.
14. टीपा (184,186-200; टीन् + पीपा)
15. फिन् (24-27, 89 96; फिर् + पुन्) श० 202, चि० 304
16. बट्रौडा (55, बटिहा + उपरौंडा) श० 94, चि० 280

17. बरेठा (161; बटिहा + रेठा) श० 94, चि० 280.
18. भठउरा (199, भट्ठा + उपरउरा) श० 94, चि० 280.
19. मेबुल् (13, मेज् + टेबुल्) श० 100
20. नोन्खर् (3-7, 9, 10, 24, 25, 59, 68, 86, 88, 95,- 97, 100, 131, 134, 137, 138, 140, नोन् (∠ लवण) + खर (∠ क्षार) श० 104, चि० 291.
21. लण्डील् (34, लाल्टेन + कण्डील्) श० 84, चि० 274.
22. लस्री (59,60,63, लजुरी + रस्री) श० 93, चि० 279.
23. लाट्री (12,13,47,48,51-53, लाइट् + बाट्री) श० 99, चि० 284
24. छायर् (97-100, छाया (∠साया) + अस्तर् (∠वस्त्र) श० 33.

इन सम्मिश्र शब्दो की विस्तृत विवेचना 'बघेलखण्ड के शब्द-भूगोल' में प्रस्तुत है। यहाँ इसके विवेचन के लिए संक्षिप्त रूपरेखा का संकेत है, जो शब्द-भूगोल पर कार्य करने वाले परवर्ती अन्वेषकों के लिए मार्गदर्शन कर सकती है।

1. सम्मिश्र शब्दरूपों की समभाषांश-रेखाएँ व उनके संघात
2. संघातों का प्रकारविज्ञान
3. सम्मिश्र शब्दो (दो में से एक) के संयोजन की प्रक्रिया
   - 3.1. तत्सम + तत्सम
   - 3.2. तत्सम + तद्भव
   - 3.3. तद्भव + तद्भव
   - 3.4. तद्भव + देशी
   - 3.5. देशी + देशी
   - 3.6. देशी + विदेशी
   - 3.7. विदेशी + विदेशी
   - 3.8. विदेशी + संस्कृत
   - 3.9. विदेशी + तद्भव
   - 3.10. देशी + तत्सम
4. नवप्रवर्तन और सम्मिश्र शब्द
   - 4.1. बघेलखण्डी + भोजपुरी
   - 4.2. बघेलखण्डी + अवधी
   - 4.3. बघेलखण्डी + बुन्देली
   - 4.4. बघेलखण्डी + मराठी
   - 4.5. बघेलखण्डी + छत्तीसगढ़ी

पर्वत के दक्षिण में गोड़ो का साम्राज्य रहा होगा तया वहाँ के कुछ क्षेत्रो को इतिहासकार आज भी 'गोडवाना' नाम से जानते है। तदनुसार कहा जा सकता है कि इस क्षेत्र के गोड़ प्राचीन काल म गोडी बोलते रहे होगे (बघेलखण्ड के मेकल-क्षेत्र के कुछ गाँवो में आज भी गोडी का व्यवहार इस अनुमान को पुष्ट करता है) व कालान्तर में वे अपनी जातीय बोली भूल गये व उन्होंने बघेलखण्डी को स्वीकार कर लिया। ध्वनि, रूप, व शब्दप्रक्रियात्मक मानचित्रो में इस प्रकार से गोंडी के प्रभाव को देखा जा सकता है।

अधस्तलता के सिद्धान्त की प्रामाणिकता पर आज अनेक भाषाविज्ञानी सन्देह करते हैं[1], जिससे प्रतीत होता है कि अधस्तलता के सिद्धान्त को विद्वानो के समक्ष सही ढङ्ग से प्रस्तुत नही किया गया। बघेलखण्ड के अन्तर्गत इस सिद्धान्त की प्रामाणिकता को समझने के लिए मानचित्रावली में प्रभूत सामग्री है। यह अनुमान लगाना उचित है कि जब बघेलखण्डी बोली को गोड़ो के समूचे वर्ग ने सीखना प्रारम्भ किया होगा, तो इस वर्ग के सदस्य प्रारम्भ में इस नई बोली को कुछ भिन्न उच्चारण के साथ बोलते रहे होंगे व अत्यधिक मात्रा में अपक्षय के बावजूद उनकी कुछ ध्वनिकीय प्रवृत्तियाँ आज भी वैसी ही बनी हुई है। ध्वनिकीय व्यवस्था के अतिरिक्त उन्होंने रूपप्रक्रिया व वाक्यविन्यास को भी प्रभावित किया होगा। आज भी गोड़ो के अनेक प्रत्यय व विभक्तियाँ बघेलखण्डी म विद्यमान हैं।

टिप्पण व सन्दर्भ

1 Ernst Pulgram, Prehistory of Italian dialects, Language (1949) 25 241 52

षष्ठ अधिकरण

भाषिक विश्लेषण

29

प्राक्संरचनात्मक शब्द-भूगोल

29.1. बोलियो की भिन्नता बनाम अखंडता

बोलियो के मध्य (विशेषकर ध्वनिप्रक्रियात्मक स्तर पर) भिन्नताओ के वर्णन की समस्या पर 1950 ई० के आस-पास भाषाविज्ञानियो का अधिक ध्यान गया था तथा इसके पक्ष को लेकर उस समय बहुत अधिक व्यग्रता भी देखी गई थी। दुविधा का गूढ विषय था—'संरचना की दृष्टि से बोलियाँ अनिवार्यतः परस्पर तुलनीय नही है, क्योंकि किसी भाषा में वे अप्रत्यक्ष रूप से परस्पर मिल जाती है।'

शब्द-भूगोलवेत्ताओ का मत था कि विषयनिष्ठता के अभाव में बोलियो का वर्गीकरण ऐच्छिक है। बोली-मानचित्रो की भेदक रेखाएँ किसी भी सीमा तक परस्पर व्याप्त नही रहती, क्योकि वे एकाकी भाषिक तथ्य को प्रस्तुत करती हैं, जिनका अपना विलग इतिहास होता है। इस प्रकार कोई भी वर्गीकरण एक कृत्रिम रचना ही कहा जायेगा। विभिन्न बोलियो की मान्यता को एक परम्परा के के रूप मे (अयथार्थ) ही समझना चाहिये, क्योकि एकमात्र सत्य भाषिक अखंडता है।[1]

Gaston Paris द्वारा 1880 ई० में उपस्थापित यह व्यावहारिक दृष्टि 1950 ई० तक शब्द-भूगोल में प्रचलित रही, जैसा कि Martin Joos के इस कथन से भी अभिव्यक्त होता है—'भाषाविज्ञान से बाहर बोलियाँ किसी एक या दूसरी दिशा में अपसारित होती हैं।[2]'

इस प्रकार की विचारधारा के कारण ध्वनिकीय दृष्टि से बोली-अध्ययन विलग-सा हो गया, जिससे Gillieron की परम्परा पर लोगो का ध्यान अलग-अलग शब्दो की खोज पर चला गया। बोलियो को निश्चित करके वर्गबद्ध करने

की प्रमुख परम्परावद्ध पद्धतियाँ अधोलिखित है, जिनका प्रयोग 1950 ई० के पश्चात् आज भी अधिकांश बोली-अध्ययनों में होता है—

(क) ऐतिहासिक शब्द-भूगोल या ध्वनियों की समनुरूपता को प्राप्त करने की पद्धति—यह पद्धति भाषिक साक्ष्यों को ऐतिहासिक व भौगोलिक प्रमाणों पर अनिरंजित या गुरुतर बनाने का कार्य करती आ रही है।

(ख) वितरणात्मक शब्द-भूगोल—यह पद्धति ध्वनिमीय व्यवस्थाओं के आधार पर बोलियों के भौगोलिक क्षेत्र में वितरण का व्यापार कार्य करती है।

इस प्रकार की पद्धतियों की परम्परा केवल दर्शाती रही है कि समग्र ध्वनिमीय विश्लेषण लोगों को सम्भव प्रतीत नहीं हुआ। इसकी असम्भवता का एक प्रमुख कारण यह भी था कि विद्वानों के मन में बोलियों की अखंडता की धारणा ज्यों की त्यों बनी हुई थी। संरचनात्मक भाषाविज्ञान इस प्रकार की अखंडता के परिमाण को बना कर उस विचित्र ढंग ('स्वाश्रित ध्वनिम' के माध्यम) से प्रस्तुत कर रहा था।[3]

इस प्रकार के परिमाण को बताने की पद्धति अमरीकी वर्णनात्मक भाषा-विज्ञानियों (Neo Bloomfieldian) की एक प्रमुख विशेषता है तथा इस प्रकार की तुलनीय (द्वैध) पद्धति के कारण ही बोलियाँ आपस में बहुत कम परीक्षणीय लगती है Robert D. King के अनुसार Sausurean तथा Bloomfieldian भाषाविज्ञानियों के लिए बोलियाँ स्वाभाविक रूप से किसी भी पद्धति के अन्तर्गत न आने वाली लगती थीं, क्योंकि दोनों के ही अनुवर्तियों का यह विचार था कि संरचनात्मक वर्णन की विचित्र इकाइयों (यथा, ध्वनिम व रूपिम) की व्याख्या एवं व्यक्ति-बोली की व्यवस्था की अन्य इकाइयों से की जा सकती है।[4]

संरचनावादी इन विद्वानों ने अखंडता (=अविच्छिन्नता) की समस्या को स्वाश्रित ध्वनियों के माध्यम से सुलझाना चाहा था, जिसके अन्तर्गत प्रत्येक दृष्टि से समान वागभिरचना की तुलना का नियम था। (दो व्यक्तियों की बोलियों में समतुल्य ध्वनियों की खोज की) यह एक ऐसी शर्त है, जो दो व्यक्तियों की बोली में कदापि नहीं पूरी हो सकती, क्योंकि दो व्यक्ति बोलियों में मिलने वाली सभी ध्वनियों की तुलना सम्भव नहीं है। उदाहरणार्थ, मेरी व्यक्ति बोली में। ऍ। है, जिसका व्यतिरेक। ए।, । ऐ।, आदि से है, किन्तु अन्य बघेलखडी-मातृभाषी का स्वाश्रित। ऍ। इसी प्रकार अन्य इकाइयों से व्यतिरेक प्रदर्शित करते हुए भी किस प्रकार तुलनीय हो सकता है ? किस प्रकार यह स्वीकार करना न्यायसंगत होगा कि दूसरा वक्ता और मैं अपनी-अपनी बोली में समान। ऍ। रखते हैं ?

विशुद्ध भाषाविज्ञान इसका प्रत्युत्तर नही दे सकता। क्योंकि स्वाश्रित ध्वनिम 'एँ' इसलिए निश्चित नहीं होता कि यह दूसरे व्यक्ति के। एँ। के तुल्य है, अपितु इसकी परख केवल उन इकाइयो से होगी, जो मेरी व्यक्ति बोली में मौजूद हैं। चूँकि मेरी व्यक्तिबोली भिन्न है, अतएव अन्य के पास तुलनीय। एँ। नहीं मिल सकता। यह स्थिति उस समय और भी अधिक स्पष्ट हो जाती है, जब हम यह मान लेते है कि मेरी स्वाश्रित ध्वनिमीय सूची मे। अँ। नहीं है, जब कि दूसरा वक्ता उसे बोलता है। इस रूप में मेरा। एँ। उसके। एँ। से स्पष्ट भेदक है, क्योंकि मेरे पास उसके व्यतिरेक में। अँ। नही है तथा एक ही ध्वनिम 'एँ' की दो बोलियो में तुलना किए जाने का कोई अर्थ ही नही निकलता।

ऐसी स्थिति में हम बोलियो की भिन्नता और समानता की बात कैसे कर सकते है ? और यदि करते हैं तो Saussure की इस मूलभूत विचारधारा का उल्लंघन होगा कि संरचनात्मक (emic) इकाइयाँ एक ही व्यक्तिबोली के अन्तर्गत परिभाषेय हैं।[9]

इस रूप में दो बोलियों या दो अभिव्यक्तियों की तुलना असम्भव हो जाती है तथा Saussure की मान्यता को शिथिल कर देने पर ही संरचनात्मक भाषा-विज्ञान की पद्धतियो का प्रयोग बोलियो पर हो सकता है।

संरचनात्मक पद्धतियो पर कुछ टिप्पणी के पूर्व यहाँ यह आवश्यक है कि हम पारम्परिक पद्धति[1] के प्रयोग व पारम्परिक तथा तुलनात्मक पद्धतियो के मध्य मूलभूत अन्तरो को समझ लें।

पारम्परिक पद्धति के अन्तर्गत ऐतिहासिक तथा वितरणात्मक शब्द-भूगोल को प्रस्तुत किया जाता है। ऐतिहासिक शब्द-भूगोल के अन्तर्गत हमारा लक्ष्य सर्वेक्षित क्षेत्र की विभाषा के ध्वनि, रूप, शब्द, व अर्थ की पुनर्रचना होता है। पुनर्रचित अभिलक्षणों की तुलना उस क्षेत्र की प्राचीन उपलब्ध सामग्री से की जाती है तथा विविध प्रकार के ऐतिहासिक निष्कर्ष प्रस्तुत किये जाते हैं। प्राचीन उपलब्ध सामग्री के अन्तर्गत प्रकाशित व अप्रकाशित दोनो ही प्रकार की सामग्री आती है। प्राचीन सामग्री के सकलन मे यथासम्भव उसकी रचना के वास्तविक स्थान की जानकारी भी आवश्यक मानी जाती है, जिससे सर्वेक्षित सामग्री की स्थान के अनुसार सहसम्बद्धता सम्भव होती है। यहाँ बघेलखंड के उपबोली क्षेत्रो से सम्बद्ध सक्षिप्त ऐतिहासिक सन्दर्भ दिये जा रहे है।

29.2. बघेलखंड के उपबोली-क्षेत्रो के विकास मे क्रियाशील विविध तत्त्व

ध्वनिप्रक्रियात्मक भेद, रूपप्रक्रियात्मक परिवर्तन, शब्द रूपो के वितरण, व विविध अर्थगत कोटियो के विकास के फलस्वरूप बघेलखंड की बोली स्पष्ट रूप

से 15 क्षेत्रीय रूपो मे विकसित हो गई है। इन विविध उपबोली-क्षेत्रो के विकास मे विविध तत्व क्रियाशील रहे है। इनमें प्रमुख विचारणीय कारणो में से एक है—अर्द्धमागधी प्राकृत का विकास।

अर्द्धमागधी प्राकृत के विकास के समय से ही बघेलखंड में तीन क्षेत्रीय बोलियाँ थी (प्राप्त अभिलेखो के साक्ष्य पर)। इनमें भरहुत व क्योटी की बोलियाँ उत्तर-पूर्वी बघेलखंड मे थी तथा सिलहरा की बोली दक्षिण-पश्चिमी बघेलखंड मे (1.3 6. द्रष्टव्य)। इससे प्रतीत होता है कि उस समय बघेलखड अधोलिखित तीन उपबोली-क्षेत्रो में विभाजित रहा होगा।

(क) विंध्यप्रस्थ क्षेत्र—जिसकी बोली के उदाहरण भरहुत के अभिलेख में मिलते हे। सप्रति यह क्षेत्र। 4 अनुक्रम वाले उपबोली-क्षेत्रो में विभक्त है।

(ख) रेवाप्रस्थ व तरिहार-क्षेत्र—जिसके उदाहरण क्योटी कुंड के अभिलेख में मिलते हे। आज इसके अतर्गत 5-8 अनुक्रम वाले उपबोली क्षेत्र आते है।

(ग) दक्षिण पश्चिमी क्षेत्र—जिसकी बोली के नमूने सिलहरा-अभिलेख में मिलते हैं तथा आज जिसके अंतर्गत 9-15 अनुक्रम वाले उपबोली-क्षेत्र आते है।

मानचित्रावली के मानचित्रो की परीक्षा करने पर भी यह धारणा पुष्ट होती है कि अर्द्धमागधी प्राकृत-युग मे बघेलखंड के अंतर्गत तीन उपबोली-क्षेत्र थे। मानचित्रावली के 28, 47, 126, 245, 330, 343 (विन्ध्यप्रस्थ), 262- 340 (रेवाप्रस्थ व तरिहार), 23, 161 (दक्षिणी-पश्चिमी क्षेत्र) क्रमांकित मानचित्र विविध क्षेत्रो की प्राचीनता को अभिलक्षित करते है।

यह विचार उपयुक्त नही है कि अर्द्धमागधी-क्षेत्र के लोग एक ही प्रकार की बोली का व्यवहार करते रहे होगे। ऐतिहासिक तथ्यो से यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि बघेलखड का सबध बुंदेलखड, उत्तरकोसल, दक्षिण कोसल, मगध, व गोंडवाना आदि क्षेत्रो से था, जहाँ क्रमश. बुंदेलखडी, अवधी, छत्तीसगढी, भोजपुरी, व गोंडी, आदि बोलियो का व्यवहार होता रहा होगा। कालांतर मे जब ये लोग निरंतर सपर्क में आये होगे, तो दैनन्दिन शब्दो में (जो उनकी बोलियो में पृथक्-पृथक् रहे होंगे) समझौता हुआ होगा। ऐसी स्थिति मे 'नाभि' के स्थान पर गोंडी शब्द 'दूवड्री' का मिलना आश्चर्यजनक नही है। इस प्रकार उत्तर से अपेक्षाकृत अधिक मात्रा में शब्द दक्षिण में गए है। (मानचित्रावली के माध्यम से इन्हें सुस्पष्टतया समझा जा सकता है।) इतना होते हुए भी अनेकानेक स्थानो के समझौतो में परिमाण की दृष्टि से अन्तर रहा होगा, क्योकि बघेलखड की विविध उपबोलियो के वक्ताओं का किसी स्थान में समान अनुपात नही रहा

होगा। यदि एक ही जैसा अनुपात होता, तो भी दोनों स्थानों में एक जैसा समझौता नहीं हो सकता था। इतिहास के आरम्भ में नागोद क्षेत्र सिंगरौली-क्षेत्र, बाघेगढ क्षेत्र, मेकल-क्षेत्र आदि में अनेकानेक स्थानीय संस्कृतियाँ थीं (प्रथम खण्ड, भाग-२ द्रष्टव्य) जिनमें स्थानीय सामाजिक विशेषताओं के अनुसार अलग-अलग भेद भी रहे होंगे। यही कारण है कि इन क्षेत्रों में आज क्रमश: बुन्देलखंडी, भोजपुरी, गोंड़ी व बुंदेलखंडी, तथा छत्तीसगढ़ी व गोंगी का प्रभाव अन्य क्षेत्रों की तुलना में अधिक है।

सोलहवीं शताब्दी के पश्चात् अनेक परिवर्तन ऐसे घटित हुए, जिनमें रीवा का राजधानी बनना, सिंगरौली व मेकल-क्षेत्रों का रीवा राज्य के अंतर्गत समाविष्ट होना, व अन्त में चौदह देशी राज्यों का विलय होना, आदि है। बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में अंग्रेजों के प्रभाव से राजपथ बनने लगे व ग्रामों का नगरीकरण होने लगा। धीरे-धीरे औद्योगिक केन्द्र खुले, जिससे ग्रामीण जनता नगरों की ओर जाने लगी। रेलपथों व राजपथों के कारण सामान्य जनता की गतिशीलता में वृद्धि हुई, जिससे छोटी-छोटी सामान्य बोलियाँ समाप्त होने लगी होंगी। नए रूपों ने पुराने रूपों का स्थान ग्रहण किया। वे पुराने रूप आज अवशिष्ट रूप में प्राप्त होते हैं।

29.3. बघेलखंडी के पुरुषवाचक सर्वनामों का विवरणात्मक भूगोल

बघेली के पुरुषवाची सर्वनामों का यहाँ प्रारम्भिक सर्वेक्षण के बोलीगत विभिन्नताओं के आधार पर विवेचन किया गया है। तदर्थ एक सप्ताह के अनवरत कार्य-काल में बघेली-क्षेत्र के 24 स्थानों को चुना गया। जिलों के अनुसार इनके नाम इस प्रकार हैं।

सतना जिला—अमरपाटन, बीरदत्त, देउरी, पोंड़ीकला, बकिया, चकयारा, असरार (बड़ा), असरार (मझला), असरार (छोटका), मेहर, धतूरा, अमदरा, भुरेही, रामपुरा।

रीवा जिला—डडुवा, रायपुर, सगरा, ब्यनउआ, लालगाँव (बड़का), लालगाँव (छोटका), निगुरा.

शहडोल जिला—शहडोल एवं मझोली।

सीधी जिला—सीधी

प्रश्नावली के सहारे जिन सूचकों का 'इन्टरव्यू' लिया गया है, वे प्राय उस स्थान के मूल निवासी हैं एवं अनेक आयु तथा सामाजिक वर्गों के हैं। सामान्यतया सूचकों का एक वर्ग ऐसा है, जो पूर्णतः बाहरी प्रभावों से अछूता है एवं

उसने रेल या मोटर की यात्रा भी नही की। इस प्रकार का सूचक प्राय अधिकतम आयु-सीमा का अछूत वर्ग का है। अमरपाटन तथा असरार (मझला) के सूचक चमार है, तो असरार (बडा) एव चवयारा के कुम्हार और धतूरा का बसोर। ये सभी अशिक्षित है एव50 वर्ष की अवस्था से अधिक है।

दूसरे प्रकार के सूचको की सामाजिक प्रतिष्ठा पहले की अपेक्षा अधिक अच्छी है। इनमें पेशेवाली जातियों को लिया गया है, जिनमें नाई, गोडिया, कोल, गोड़ (बघेली मातृभाषी), लोहार, बागमान, बारी तथा बनिया है। इनमें देउरी, महर, अमदरा, आलमपुरा, रायपुर, सगरा के सूचक बिलकुल अशिक्षित है तथा उनकी अवस्था 40 से ऊपर है। मध्यप्रदेश के बाहर इन्होने कही भी यात्रा नही की। इसी वर्ग में शहडोल का सूचक, जिसकी अवस्था 45 वर्ष है, चौथी उत्तीर्ण है तथा उसने व्यापार के सम्बन्ध मे अधिकाधिक यात्रा की है। इसी वर्ग का लालगाव (बड़का) का सूचक 26 वर्ष का है तथा एम० ए० तक की शिक्षा प्राप्त की है एव शिक्षक है।

तीसरी कोटि के सूचको की सामाजिक प्रतिष्ठा उन्नतम है। दस में से लालगांव (छोटका) का सूचक क्षत्रिय है तथा शेष ब्राह्मण। इनमें अल्पतम अवस्था शहडोल के एक सूचक की 18 वर्ष है, तो अधिकतम पोड़ीकला के सूचक की 55 वर्ष। पोडीकला, बकिया और व्यनउआ के सूचको को चौथा तक शिक्षा मिली है। मझौली एव सीधी के सूचक नौवी पास है तथा झुकेही एव असरार के सूचक दसवी। ड्ढवा के सूचक को इन्टरमीडिएड तक की शिक्षा मिली है, तो निगुरा के सूचक को बी० ए० तक। ये सभी सूचक वेतन-भोगी है।

2 1. सर्वनामो का प्रतिलेखन यहाँ ध्वनिकीय लिपि में किया गया है।

2.2.1. पुरुषवाचक सर्वनाम।

2 2.1 1. उत्तमपुरुष—बघेलखड के अधिकांश क्षेत्र (रीवा, सीधी तथा पूर्वी-सतना जिलो) मे उत्तमपुरुष एकवाचक में 'हम्' रूप मिलता है तथा बहुवचन बनाने के लिए इस मूल रूप में 'पन्च्' के अविकारी (पन्च्) और विकारी (पन्चन, पन्चे) रूप जुडते है, किन्तु दक्षिण-बघेलखड के शहडोल जिले के सोहागपुर आदि क्षेत्रों में 'हम्' के स्थान पर 'मे' या उच्चारणगत भेद 'मय्' एव 'म' का प्रयोग दोनो ही वचनो मे होता है। बहुवचन बनाने के लिए पृथक परसर्ग या प्रत्यय नही जुड़ते। उत्तर-पश्चिम बघेलखड 'संक्रान्ति-क्षेत्र' है, जिसमे एकवचन में 'मे' तथा बहुवचन में 'हम्' दोनो ही रूप प्राप्त होते है। यहाँ 'मे' तथा हम्' की प्रकृति, अविकारी, विकारी, बलवाची एव कारकीय परसर्गों या प्रत्ययो का पृथक् विवेचन प्रस्तुत है।

प्रकृति	अविकारी	विकारी	बलवाची	कारकीय परसर्ग और प्रत्यय
म	-ऐ-अय्-अ	-ओ-ओह्,-ओ-ए	-हिन्-ही-हूँ	ही का खा, से,-र,-र + परसर्ग

(क) बलवाची-इतर अधिकारी रूप म् प्रकृति में-ऐ-अय्-अ जोड़कर बनाए जाते है। उदा०

मै मय् म

(ख) बलवाची इतर विकारी के लिए प्रकृति में विकारी का-जो कारकीय-परसग ही का खा, से तथा प्रत्यय-र् के पहले आता है। उदा०

मोही मोका मोखा (कर्मवाची)

मोसे (करणवाची)

मोर् (सम्बन्धवाची)

विकारी का-ओह् सरूप-का के पहले प्रयुक्त होता है। उदाहरण

मोह्का (कर्मवाची)

—ओ…ए सरूप तब आता है, जब-र् ये अतिरिक्त कोई अन्य परसर्ग लाने, खितिर, से आदि भी उपस्थित हो। उदा०

मोर लाने (सम्बन्धकर्मसम्प्रदानवाची)

मोरे खितिर् (सम्बन्धकर्मसम्प्रदानवाची)

मोरे से (सम्बन्धकरणवाची)

(ग) बलवाची अविकारी के लिए प्रकृति म अधिकारी का केवल-अ सरूप तथा बलवाचिता के लिए-हिन्-ही-हूँ जुडते हैं। उदा०

महिन् मही महू

(घ) बलवचो विकारी के लिए प्रकृति ने विकारी का-ओ सरूप तथा बल-वाचिता क लिए-हिन्-हूँ जुड़ते है। उदा०

मोहिन् मोहूँ

प्रकृति	अविकारी	विकारी	बलवाची	कारकीय परसर्ग प्रत्यय
हम्	शून्य	शून्य,-आ, शून्य …ए	-ई-इन्-ही -हिन्-नो-ऊँ-ऐ	-ई-ही का खा, से, -र्,-इ-परसर्ग

(क) बलवाची-इतरअधिकारी के लिए हम् प्रकृति में अविकारी का शून्य-सरूप जुड़ता है। उदा० हम्

(ख) बलवाची-इतर विकारी का शून्य संरूप कारकीय परसर्ग-ई-ही का खा, से के पूर्व आता है। उदा०

हमी हम्ही हम्का हम्खा (कर्मवाची)

हम्से (करणवाची)

विकारी का-आ संरूप-र् के पूर्व आता है। उदा०

हमार (समबन्धवाची)

तथा शून्य···ए संरूप तब आता है, जब-र् के अतिरिक्त बाद मे कोई अन्य परसर्ग खितिर्, लो आदि भी प्रयुक्त हों ; उदाहरण

हम्रे खितिर् (सम्बन्धकर्मसम्प्रदानवाची)

हम्रे लो (सम्बन्धवाची)

(ग) बलवाची अधिकारी के लिए अविकारी का शून्य सरूप तथा बलवाचिता के लिए-ई इन् ही-हिन्-नी-ऊँ जुडते है ; उदा०

हमी हमिन् हम्ही हम्हिन् हम्नी हमूँ हमे

(घ) बलवाची विकारी के सभी रूप स्वरूप में बलवाची अधिकारी के ही समान हैं। उनमें विकारी का शून्य संरूप जुड़ता है।

2.2.1.2. मध्यमपुरुष—बघेली के पश्चिमी क्षेत्र (रघुराजनगर तथा मैहर तहसीलो) मे प्रकृति तू मे अविकारीरूप-उडकर एकवचन को संकेतित करता है तथा बहुवचन में अविकारी प्रत्यय-उम् जुडता है, तो मध्यवर्ती भाग (हुजूर एवं सिरमौर आदि तहसीलो) मे-उँ अधिकारी दोनो वचनो को द्योतित करता है। दक्षिणी क्षेत्र (सोहागपुर, पुष्पराजगढ आदि तहसीलो) के एकवचन के लिए अधिकारी रूप-ऐ तथा बहुवचन के लिए अधिकारी रूप-ऐ तथा बहुवचन के लिए-ऐं है। जबकि पश्चिमोत्तर क्षेत्र (त्योंथर, अमरपाटन एव नागोद आदि) मे एकवचन के लिए-एँ-अँय्-अँ तथा बहुवचन के लिए-उम् अधिकारी रूप जुडते है। इनका अन्य प्रत्ययो के साथ विस्तृत और सामूहिक विवरण इस प्रकार है।

प्रकृति	अविकारी	विकारी	बलवाची	कारकीय परसर्ग और प्रत्यय
तू	-उ-उँ-उम-ऐ -एँ-अँय-अँ	-उम्-उम्ह्-उम्हा -ँहा-वा-ँह	-हिन्-हूँ-ही	ई का खा नी मे -र्,-र् + परसर्ग

(क) बलवाची-इतर अधिकारी तू प्रकृति में अविकारी के-उ-उँ-उम्-ऐ-ऐँ-ऐंय -अँ जोडकर बनाए जाते है , उदाहरण

तु ∽ तुँ ∽ तुम् ∽ तै ∽ तैं ∽ तैंय् ∽ तँ

(ख) बलवाची-इतर विकारी के लिए प्रकृति में विकारी का-उम् कारकीय परसर्ग का खा तथा से के पहले आता है, उदा०

तुम्का तुम्खा (कर्मवाची)

तुम्से (करणवाची)

विकारी का- उम्ह् सरूप कारकीय प्रत्यय- ई के पहले आता है, उदा०

तुम्ही (कर्मवाची)

विकारी के-उम्हा-उँहा संरूप-र् प्रत्यय के पूर्व आते हैं, उदा०

तुम्हार् तुँहार् (सम्बन्धवाची)

विकारी का-वा सरूप कारकीय परसर्गो का खा तथा प्रत्यय-र् के पहले आता है, उदा०

त्वाका त्वाखा (कर्मवाची)

त्वार् (सम्बन्धवाची)

विकारी का वेंह संरूप का खा के पहले जुडता है, उदा०

त्वेंह का त्वेंहखा (कर्मवाची)

विकारी का वेंह सरूप-ई प्रत्यय के पूर्व मिलता है, उदा०

त्वेंहई (कर्मवाची)

विकारी का-वेंहा सरूप र-अ प्रत्यय के पहले जुडता है , उदा०

त्वेंहार् त्वेंहाअ (सम्बन्धवाची)

विकारी का-ओ सरूप कारकीय परसर्ग का खा तथा से एव प्रत्यय-र्-अ के पहले जुडता है , उदा०

तोका तोखा (कर्मवाची)

तोसे (करणवाची)

तोर् तोअ (सम्बन्धवाची)

विकारी का-ओह् ओहँ सरप प्रत्यय ई के पूर्व जुडता है , उदा०

तोही तोंही (कर्मवाची)

विकारी का-ओहँ सरूप कारकीय परसर्ग का खा नी के पहले जुडता है , उदा०

तोहँ का तोहँखा तोहँनी (कर्मवाची)

विकारी के-ओ·· ए ओहँ ए ओहँ ए-उँह् ए-उह् एउम्ह्···ए-उम्···

वँह्···ए सरूप तब आते हैं जब-र् के अतिरिक्त कोई अन्य परसर्ग लाने, खितिर् आदि भी उपस्थित हो, उदा०

तोरे तोह्रे तोंह्रे तुंह्रे तुह्रे तुम्हरे तुम्रे तवंह रे
लाने खितिर (सम्बन्धकर्मसम्प्रदान वाची)

(ग) बलवाची अधिकारी के लिए प्रकृति में अविकारी के-उ-उँ-उम्-अँ सरूप रहते हैं तथा बलवाची के लिए-हिन् हूँ जुड़ता है, उदा०

तुहिन् तुँहिन् तुमहिन् तँहिन्
तुही तुँही तुमही तँही
तुहूँ तुँहूँ तुमहूँ तँहूँ

(घ) बलवची विचारी के लिए प्रकृति में विकारी के ओ-ओं सरूप तथा बलवाची के लिए-हिन् हूँ जुड़ते हैं, उदा०

तोहिन् तोहूँ
तोंहिन् तोंहूँ

2.2.2. संकेतवाचक सर्वनाम

2.2.2.1. अन्यपुरुष निकटवर्ती—निकटतावाची संकेतवाचक सर्वनाम के लिए सम्पूर्ण बघेलखण्ड में एकवचन तथा बहुवचन को अभिव्यक्त करने को स्वतंत्र व्यवस्था मिलती है। एकवचन वाले शब्दों में बलवाची इतर अविकारी, बलवाची अविकारी तथा बलवाची विचारी का प्रकृत्यश पूर्वोत्तर भाग (रीवा तथा सीधी जिलो) में इ है एव शेप क्षेत्र (सतना एव शहडोल जिलों) में इस अपवाद के साथ य् है कि सतना एव शहडोल में भी बलवाची विकारी के लिए इ ही प्राप्त होता है। जब प्रकृति से बलवाची इतर विकारी का सयोजन होता है तब इ प्रकृति ए प्रकृति में परिवर्तित हो जाती है किन्तु य्-प्रकृति पूर्ववत् अपरिवर्तित रहती है। बहुवचन की दृष्टि से भी सम्पूर्ण बघेलखड को दो भागो में विभक्त किया जा सकता है। पूर्वोत्तर के वक्ता बलवाची इतर अविकारी-युक्त ई-प्रकृति का प्रयोग करते हैं और दक्षिण पश्चिम के एँ का। बलवाची-इतर अविकारी-के प्रकृत्यश में ईं-क्षेत्र के वक्ता अनुनासिकता को खो बैठते है, जबकि एँ-क्षेत्र के बघेली-भाषी उसे बनाए रखते है। बहुवचन के बलवाची रूपो की दृष्टि से बघेली-भाषियों में एकरूपता मिलती है, क्योंकि बलवाची अविकारी रूपो में भी प्रकृति सर्वत्र समानरूप से एँ रहती है तथा बलवाची विकारी में सर्वत्र समानरूप से इ। इनका विवेचन इस प्रकार होगा :—

एकवचन

प्रकृति	अविकारी	विकारी	बलवाची	कारकी परसर्ग व प्रत्यय
इ ए, य्	शून्य-अ	शून्य-अ शून्य...ए	-हौ हव् है हय् हिन् हू	-ही का खा, से कर् खर्, क् ख् + परसर्ग

(क) बलवाची इतर अविकारी रूप इ-प्रकृति मे शून्य संरूप जोड़कर बनाया जाता है; उदा०

इ

तथा य्-प्रकृति मे अविकारी का-अ संरूप जोडकर बनाया जाता है; उदा०

य

(ख) बलवाची इतर विकारी के लिए प्रकृति के ए-रूप में विकरी का शून्य सरूप कारकीय परसर्गों-ही का खा, से, कर् खर् के पहले प्रयुक्त होता है; उदा०

एही एका एखा (कर्मवाची)

एसे (करणवाची)

एकर् एखर (सम्बन्धवाची)

तथा य्-प्रकृति मे विकारी का-आँ सरूप कारकीय परसर्गों का खा, कर् खर् के पहले जुड़ता है; उदा०

याका याखा (कर्मवाची)

याकर् याखर् (सम्बन्धवाची)

प्रकृति के ए-रूप के पश्चात् शून्य···ए तब आता है, जब सम्बन्धकारकीय प्रत्यय-क् ख् के अतिरिक्त कोई अन्य परसर्ग लाने, खितिर् आदि भी आ रहे हों, उदा०

इहौ इहव् इहै इहय् इहिन् इहू

तथा य्-प्रकृति में अविकारी का-अ सरूप एव बलवाचिता के लिए-हौं-हव् है-हय्-हिन्-हू प्रयुक्त होते हैं, उदा०

यहौ यहव् यहै यहय् यहिन् यहू

(ग) बलवाची विकारी के रूप स्वरूप में बलवाची अविकारी के इ-प्रकृति युक्त रूपों जैसे बनते हैं, उदा०

इहौंका (कर्मवाची)

इहिन से (करणवाची)

बहुवचन

प्रकृति	अविकारी	विकारी	बलवाची	कारकीय परसर्ग व प्रत्यय
इँ इ, एँ	शून्य	शून्य न्, न्···ए	-इन् ई-ऊ हिन्-हूँ	ही का खा, से, कर् खर् क् ख् परसर्ग

(क) बलवाची-इतर अविकारी रूप इँ तथा एँ प्रकृति में शून्य सरूप जोड़कर बनाए जाते है, उदा०

इँ, एँ

(ख) बलवाची—इतर विकारी के लिए प्रकृति के इ रूप में विकारी का—न् सरूप कारकीय परसर्गों—ही का खा, से, कर् खर् के पहले आता है, उदा०

इन्ही इन्का इन्खा (कर्मवाची)

इन्से (सम्बन्धवाची)

इन्कर् इनख्र् (सम्बन्धवाची)

तथा प्रकृति के एँ रूप म विकारी का शून्य सरूप कर् खर् के पहले प्रयुक्त होता है, उदा०

एँक्र एँख्र (सम्बन्धवाची)

प्रकृति के इ रूप के पश्चात् विकारी का न् ··ए सरूप तब आता है, जब क् ख् के अतिरिक्त कोई अन्य परसर्ग लाने खितिर आदि भी उपस्थित हो, उदा०

इन्के इन्खे लाने, खितिर (सम्बन्ध, कर्म, सम्प्रदानवाची)

(ग) बलवाची अविकारी के लिए प्रकृति के एँ सरूप मे अविकारी का शून्य सरूप तथा बलवाची के लिए—इन्—ई—ऊ जुडते है, उदा०

एँइन् एँई एँऊ

(घ) बलवाची विकारी के लिए इ प्रकृति—रूप में विकारी का—न् सरूप तथा बलवाची के लिए—हिन् हूँ प्रयुक्त होता है, उदा०

इन्हिन् इन्हूँ

2.2.2.2. अन्य पुरुष—दूरवर्ती—दूरतावाची सर्वनाम के एकवचन की प्रकृति उत्तरी बघेलखण्ड मे उ, उत्तर-पश्चिम (सिरमौर तहसील) में ओ, तथा शेष भाग म व् है। उ में अविकारी का शून्य सरूप, ओ म,—य् तथा व् मे—अ जुडता है। विकारी रूप तथा कारकीय परसर्गों व प्रत्ययो के जुडने पर प्रकृति ओ अथवा व् हो जाती है। बहुवचन के लिए अविकारी में सभी क्षेत्रो म समान रूप से उँ प्रकृति मिलती है तथा उस पश्चिमी क्षेत्र में अविकारी का—अ सरूप,

दक्षिणी क्षेत्र में—इ—य् सरूप, और शेष भाग में शून्य संरूप जुड़ता है। बहु-वचन के बलवाची रूपों में प्रकृति अमरपाटन तहसील में उ और शेष में ओ मिलती है, जबकि प्रत्ययों व परसर्गों के जुडने पर सर्वत्र समानरूप से प्रकृति का उ रूप ही प्रयुक्त होता है।

एकवचन

प्रकृति	अविकारी	विकारी	बलवाची	कारकीय परसर्ग व प्रत्यय
उ ओ व्	शून्य न्य् आ	शून्य–अ, शून्य…ए	–है–हय्–हौ हव् –हिन्–ही–हूँ	–ई का खा, से –क् ख् कर् खर्

(क) बलवाची इतर अविकारी रूप स प्रकृति में अविकारी का शून्य संरूप, ओं प्रकृति में—सरूप तथा व् प्रकृति में—अ सरूप जोककर बनाया जाता है। उदा०

उ ओय् व

(ख) बलवाची-इतर विकारी के लिए व् प्रकृति मे विकारी का—आ सरूप कारकीय परसर्गों का खा, कर् खर् के पहले आता है, उदा०

वाका वाखा (कर्मवाची)

वाकर् ओखर् (सम्बन्धवाची)

ओ प्रकृति में विकारी का शून्य सरूप कारकीन परसर्गों ही का सा, से कर् खर् केपहले प्रयुक्त होता है। उदा०

ओही ओका ओखा (कर्मवाची)

ओसे (करणवाची)

ओकर् (सम्बन्धवाची)

तथा प्रकृति के रूप के पश्चात् शून्य ए सरूप तब आता है। जब सबंध-वाची क् ख् अतिरिक्त कोई अन्य परसर्ग लाने, खितिर् आदि भी आ रहे हो। उदा०

ओके ओखे लाने, खितिर् (सम्बन्ध, कर्म, सम्प्रदानवाची)

(ग) बलवाची अविकारी के लिए उ प्रकृति में अविकारी का केवल शून्य सरूप तथा बलवाची के लिए-है हय् हो-हव्-हिन् हो-हूँ जुड़ते है।

उदा०

उहे उहय् उहौ उहव् उहिन् उही उहूँ

तथा व् प्रकृति में अविकारी का—अ सरूप तथा बलवाचिता के लिए—है हय्

हीं- इन्-हिन—ही हूँ जुड़ते है । उदा०

वहें वहय् वही वहन् वहूँ

(घ) बलवाची विकारी के लिए ओ प्रकृति में विकारी का शून्य संरूप तथा बलवाचिता के लिए हिन-हूँ परसर्गों और प्रत्ययों के पूर्व जुड़ते है । उदा०

ओहिन् ओहूँ काही

बहुवचन

प्रकृति	अविकारी	विकारी	बलवाची	कारकीय परसर्ग व प्रत्यय
उँ उ, ओ	शून्य-इ य-अ	शून्य-न, -न् ए,	-हिन् इन -ई-य् हूँ	-ही का सा, से, कर् मर् -क्-न् + परसर्ग

(क) बलवाची-इतर अविकारी रूप प्रकृति उँ में शून्य इ-य-अ संरूप जोड़कर बनाया जाता है । उदा०

उँ उँइ उँय

(ख) बलवाची इतर विकारी के लिए उ प्रकृति में विकारी का-न् संरूप कारकीय परसर्गों-ही का सा, म, कर् मर् के पूर्व आता है , उदा०

उन्ही उन्का उन्सा (कर्मवाची)

उन्मे (करणवाची)

उन्कर उन्मर (सम्बन्धवाची)

उ प्रकृति के पश्चात् न् ' ए संरूप तब आते है, जब-क्-स् के अतिरिक्त कोई अन्य परसर्ग लाने, लिनिर् आदि भी आ रहे हो, उदा०

उन्रे उनके लाने लिनिर् (सम्बन्ध, कर्मसम्प्रदानवाची)

(ग) बलवाची अविकारी के लिए उ प्रकृति में अविकारी का शून्य संरूप तथा बलवाचिता के लिए केवल हिन् प्रत्यय जुड़ता है । उदा०

उहिन्

तथा ओ प्रकृति में अविकारी का शून्य संरूप तथा बलवाचिता के लिए इन्-ई-य् जुड़ते है । उदा०

ओइन् ओई ओय्

(घ) बलवाची विकारी के लिए उ प्रकृति म विकारी का न् संरूप तथा बलवाचिता के लिए-हिन-हूँ जुड़ते हैं , उदा०

उन्हिन् उन्हूँ

2.2 3. सम्बन्धवाची सर्वनाम—सम्बन्धवाची सर्वनाम के रूपों में अपेक्षाकृत कम भिन्नताएँ प्राप्त होती हैं। एकवचन मे सभी स्थलो की प्रकृति ज् है तथा पूर्वी व पश्चिमी क्षेत्र में अविकारी का-जो जुड़ना है एवं दक्षिणोत्तर क्षेत्र में-अउन्। बलवाची तथा अन्य कारकीय परसर्गों व प्रत्ययो के पहिले पूर्वोत्तर बघेली-भाषी विकारी का-या संरूप तथा पश्चिमी-दक्षिणी-ए-एह् जोडते हैं। एकवचन की ही भाँति बहुवचन के शब्दो की प्रकृति ज् है।

एकवचन

प्रकृति	अविकारी	विकारी	बलवाची	कारकीय परसर्ग व प्रत्यय
ज्	-ओ-अउन्	-ए-या,-ए ''ए	-ऐ-इन्-हिन्-ई	-ही का खा, से-कर्
		-आ ' ए		खर्-क् ख् + परसर्ग

(क) बलवाची-इतर अविकारी रूप ज् प्रकृति में-ओ-अउन् जोड कर बनाए जाते है।
उदा०

जो जउन्

(ख) बलवाची इतर विकारी के लिए प्रकृति में विकारी का-ए संरूप कारकीय परसर्गों-ही का-खा, से, कर् खर् के पहले आता है। उदा०
जही जेका जेखा (कर्मवाची)
जेसे (करणवाची)
जेकर् जेखर् (सम्बन्धीवाची)

तथा

विकारी-का-या संरूप का खा, व कर् खर परसर्गों के पूर्व जुड़ता है। उदा०
ज्याका ज्याखा (कर्मवाची)
ज्याकर् ज्याखर् (सम्बन्धवाची)
विकारी का-ए ' ए-आ ' ए संरूप तब आता है, जब-न्-म् के कोई अन्य

परसर्ग लाने, खितिर् आदि भी विद्यमान हो ; उदा०
जेके जेखे जाके जाखे जाने, खितिर् (सम्बन्धकर्मसम्प्रदानवाची)

(ग) वलवाची अधिकारी के लिए प्रकृति मे अविकारी का केवल-अउन् संरूप तथा बलवाचिता के लिए-इन् जुड़ते है ,
उदा०

जउने जउनिन्

(घ) वलवाची विकारी के लिए प्रकृति में विकारी का-ए संरूप तथा बलवाचिता के लिए-ईं-हिन् जुड़ते हैं , उदा०

जेई जेहिन्

24.4. पारस्परिक शब्द-भूगोल तथा संरचनात्मक शब्द-भूगोल

पारस्परिक शब्द-भूगोल तथा संरचनात्मक शब्द-भूगोल के मध्य अन्तर अधिक जटिल और तकनीकी हैं। यहाँ उनको संक्षेप में प्रस्तुत किया जा रहा है।

(क) पारस्परिक शब्द भूगोल में जिस प्रकार के मानचित्र बनाए जाते है, उनकी संरचना शब्द-भूगोल के मानचित्रो से बिल्कुल समानता नही होती।

(ख) यदि पारस्परिक शब्द-भूगोल की प्रमुख समस्या भिन्नताओ को सूत्रबद्ध करने की है, तो सरचनात्मक शब्द-भूगोल के सम्मुख विभिन्न स्थानीय व्यवस्थाओ के मध्य अखंडता व समानता की परिभाषा की, तथा उन्हें उच्चकोटि में वर्गबद्ध करने की समस्या है।

(ग) पारम्परिक शब्द-भूगोल प्रमुखतया ऐतिहासिक व एकान्तिक है। इसने प्राचीनतर ऐतिहासिक स्तर के कुछ तत्त्वो को चुनकर उनकी व्युत्पत्तिमूलक पुनरुत्पत्तियों को क्षेत्रीय वितरण के रूप में मानचित्रबद्ध किया था। Trubetzkoy के भावानुवाद के रूप मे पारम्परिक शब्द-भूगोल के प्रश्न ताराचिह्नो से भरे हुए है।

(घ) परम्परावादी अन्वेषक समान भाषिक तत्त्वो से सम्बद्धता पर ही निर्भर करता है, उदाहरणार्थ अधस्तन रेखाचित्र में $अ_1$, $अ_2$, तथा $अ_3$

$$अ_1 \longleftrightarrow अ_2 \longleftrightarrow अ_3$$

जबकि संरचनावादी विद्वान् भिन्न-भिन्न बोलियो की परस्पर सम्बद्धता के अतिरिक्त अनेक तत्त्वों के मध्य सम्बद्धता को भी जोड लेता है। इसका रेखाकन इस प्रकार किया जा सकता है—
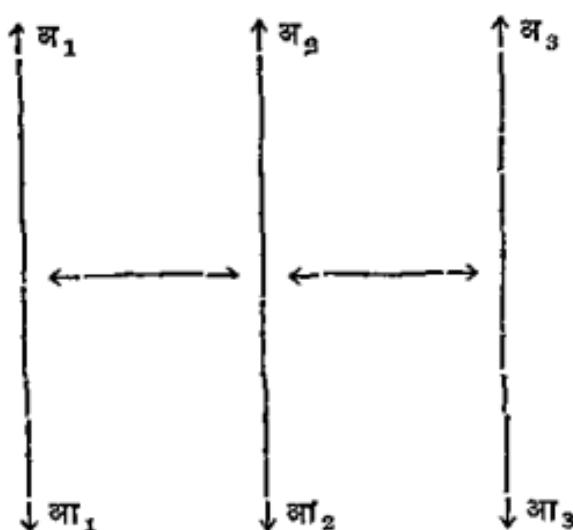
(ङ) पारम्परिक शब्द भूगोल ध्वनिप्रक्रिया की दृष्टि से केवल यह जानना चाहता है कि अन्वेषण के विविध स्थानों में किसी शब्द की किसी ध्वनि का उच्चारण किस प्रकार होता है। निस्सन्देह यह एक उपयोगी प्रश्न है तथा इसने मानवीय भाषा को भौगोलिक आयामों में विशद अन्तर्दृष्टि दी है। सरचनात्मक शब्द भूगोल भी यही जानना चाहता है, किन्तु वह इसके बाद एक दूसरा विस्फोटक प्रश्न करता है कि अन्वेषण किए गए विविध स्थानों की सम्पूर्ण व्यवस्था में अमुक ध्वनि का क्या स्थान है ?

टिप्पण और सदर्भ

1 Edward Stankiewicz, 'On discreteness and Continuity in structural dialectology' Word (1957) 13 44

2 Martin Joos 'Drscription of language design,' Journal of the Accustical society of America, 22 702–Dialectss shoved outside the linguistics in one directlon or another'

3 Paul M Postal, Aspects of Phonological theory, New york Harper and Row, 1968, Chapter I

4 Robert D King Historical Linguistics and Generative grammar, London, 1969, p 30

5 Ibid

6 पारम्परिक शब्द भूगोल से मेरा तात्पर्य ऐतिहासिक तथा वितरणात्मक शब्द-भूगोल से है।

30

संरचनात्मक शब्द-भूगोल

30 1. विगत अध्याय म प्रस्तुत पारम्परिक शब्द भूगोल तथा सरचनात्मक शब्द भूगोल की अ तरता से यह बोध होता है कि सरचना की खोज में शब्द भूगोलवेत्ता को इन तीन समस्याओं का सामना करना पड़ता है —

(क) सम्बद्धता की परिभाषा।

(ख) बोली-परिवर्तन म परिगणनीय सामग्री के प्रकार का निणय।

(ग) एकभाषिक प्रतिमान का चयन, जो सामग्री की सन्तोषप्रद व्याख्या कर सके तथा अ ततोगत्वा जो सम्बद्धता को बताने व नापने का कार्य कर सके।[1]

सरचनात्मकता और शब्द भूगोल के मध्य सम्बद्धता भाषाविज्ञानियो में चिर काल तक विवादास्पद रही है। एक अतिवादी दृष्टिकोण के अनुसार चूंकि एक व्यवस्था के तत्वो की व्याख्या दूसरी व्यवस्था के तत्वो को बताने में ही हो सकती है, अतएव पूर्ण व्यवस्था की बात असमान होगी। यह विचार सरचनात्मक शब्द भूगोल को अवैध घोषित करता है।

दूसरा प्रचलित विचार यह है कि कवल ध्वनिप्रक्रियात्मक स्तर पर ही नही, अपितु अ य स्तरो पर भी बोली भिन्नताओ को साभिप्राय बताया जा सकता है। इस प्रकार इस सम्ब ध म 1954 ई० के विवाद के पश्चात् बोलियो व सरचना त्मकता के मध्य मतवैषम्य को समाप्त करने के लिए 1961 ई० तक जो प्रयास हुए है और जो पद्धतिया व प्रतिमान सुझाए गए है वे प्राक्प्रजनक व्याकरण की पद्धतियाँ व प्रतिमान हैं। उनको अधोलिखित तीन प्रमुख वर्गों में निबद्ध किया जा सकता है—

(क) सर्वसमावेशी अभिरचना की पद्धति

(ख) भाषिका तर-व्यवस्था

(ग) ध्वनिम की शब्द समुच्चय म स्थिति का प्रतिमान

30.2. सर्वसमावेशी अभिरचना की पद्धति

Alan R. Thomas ने सर्वसमावेशी अभिरचना को 'सूची वितरण प्रतिमान' कहा है।[2] कुछ समय तक बोलियों के अध्ययन में इस पद्धति या प्रतिमान का बोल बाला था। Hockett ने अंग्रेज़ी की बोलियों के बलाघातित अक्षरों के अध्ययन में इसी पद्धति का प्रयोग किया है।[3]

इसकी रचना स्वाश्रित ध्वनिम के न्यूनतम समुच्चय से हुई थी, जिनको एक साथ परिगणित करने से किसी भाषा क्षेत्र के किसी भी वक्ता में मिलने वाले व्यतिरेकों का विवरण मिलता है। ऐसी स्थिति में प्रत्येक बोली व फलितार्थं प्रत्येक व्यक्ति बोली सर्वसमावेशी अभिरचना के उच्चतम समुच्चयों में से कुछ समुच्चयों को चुनेगी।

Edward Stankiewicz ने अखण्डता के निर्णय के लिए इसे एक पैमाना माना है। उनके अनुसार—"आंशिक रूप से भिन्न ध्वनिमीय सूचियों के साथ स्थानीय वक्ताओं के मध्य समानता खोजने का यह एक पैमाना है। × × × अविभाज्य (मूलभूत) अवयवों का प्रयोग है। इसके आगे व्यापक भाषा-क्षेत्र की बोलियों के ध्वनियों के समान क्रोड की तुलना करके हम यह ध्यान देते है कि उनमें कुछ ऐसे निश्चित ध्वनिम है, जो अन्य क्षेत्रों में विद्यमान नहीं है। × × × इस प्रकार हम यह निष्कर्ष निकाल सकते है कि वे क्षेत्र जिनमे समान भेदक तत्त्व विद्यमान है, उनकी संयोजक सम्भावनाएँ बिल्कुल भिन्न भी हो सकती है। बोलीगत समानता की दूसरी कसौटी ध्वनिमीय व्यवस्थाओं के सहअस्तित्व के विवेचन में इसी प्रकार व्यापक ढाँचे को स्वीकार कर लेने के पश्चात् अखण्डता को खण्डित कर सकते है और तब कठोर ध्वनिमीय कसौटी के अनुसार हम भिन्नता ही पाते है।'[4]

संरचनात्मकता तथा शब्द-भूगोल (=बोलीविज्ञान) को मिलाने वाली इस पद्धति के अनेक दुष्ट परिणाम भी होते है। Moulton का विचार है कि इस प्रकार के विवरणों की एक कमी यह रही है कि उत्पत्ति की दृष्टि से असम्बद्ध भाषाओं के बारे में मिलने वाले इसी प्रकार के विवरणों से उनका भेद नहीं किया जा सकता। वे बोलियों में मिलने वाली सहायक संरचनात्मक भिन्नता को ही समाप्त कर देते है, जो कि बोलीविज्ञान (=शब्द-भूगोल) को भाषिक प्रारूपविज्ञान से पृथक करता है।[5]

Sol Saporta सर्व-समावेशी अभिरचना की प्रकृति को अस्पष्ट व अव्यावहारिक मानते है[6] उनकी इस धारणा को स्वीकार करते हुए Robert D. King ने इसे सैद्धान्तिक दृष्टि से भी अनुपयोगी घोषित किया है। उन्हीं के शब्दों

में—'इस पद्धति मे सैद्धान्तिक विरोध भी स्पष्ट है। 'प्रत्येक बोली का विश्लेषण अपनी व्यवस्था के अनुसार होना चाहिए'—सरचनावादी विद्वानो की इस मूल नीति का उल्लघन करने के पश्चात् इसका कोई अर्थ नही है कि यह सिद्ध किया जाए कि आपकी सर्वसमावेशी अभिरचना मे कुछ ऐसे भी ध्वनिम हैं, जिनका आप प्रयोग नही करते।''[7]

उदाहरणार्थ, ए० एम० घाटगे[8] ने अपने ग्रन्थ Historical Linguistics and Indo-Aryas मे यह स्वीकार किया है कि 'समान क्रोड' की दृष्टि से हिन्दी में 39 ध्वनिम है तथा र० च० महरोत्रा[9] 'सर्वसमावेशी अभिरचना' की दृष्टि से उनकी सख्या 70 मानते हैं। उपर्युक्त दोनो ही अध्ययनो के परिणामो में 31 ध्वनिमो का अन्तर विचारणीय है। इसके अतिरिक्त महरोत्रा जी का कथन है कि उनके 'अध्ययन की हिन्दी उत्तर प्रदश, मध्यप्रदेश, राजस्थान, दिल्ली, हिमाचल प्रदेश, पूर्वी एव दक्षिणी पजाब, बिहार और भारत के लगभग सभी नगरों में प्रचलित है।'[1] अप्रामाणिक और अविश्वासनीय है। क्षेत्र की इस व्यापकता के आधार पर वे चाहते, तो हिन्दी की ध्वनिमो की कुछ सख्या और भी बढा सकते थे।

इसका क्या तात्पर्य है कि चूँकि कुछ लोगो की हिन्दी मे क़्, ख़्, ग़् आदि ध्वनिम हैं, तो मेरी (कोसल क्षेत्र की) बोली मे उसकी अविद्यमानता पर मुझे भी उसे स्वीकार करने को कहा जाए। ऐसी स्थिति में यह ज्ञान ध्वनिम की विचार धारा का विरोधी प्रतीत होता है।

व्यावहारिक दृष्टि से भी 'सर्वसमावेशी अभिरचना' की विचारधारा से हम जिन निष्कर्षों तक पहुँचते हैं, वे भी भाषा व उसकी सरचना के प्रति हमारे ज्ञान की विपरीत धारा में ही हैं।

(कभी कभी तो लिप्यकन की भिन्नता से एक ही सध्यक्षर भिन्न भिन्न रीतियो से उच्चरित होने का भ्रम पैदा कर सकता है)।

30.3. भाषिकान्तर-व्यवस्था

शब्द-भूगोल तथा सरचनात्मक भाषाविज्ञान के मध्य सघर्ष को समाप्त करने के लिए Uriel Weinreich ने एक भिन्न उपगम अपने Is structural dialectology possible ? (Word, 1954) लेख मे प्रस्तुत किया था, जिसे भाषिकान्तर-व्यवस्था की पद्धति कहा जाता है।

भाषिकान्तर-व्यवस्था सर्वसमावेशी विचारधारा के ही समान है तथा कुछ अर्थों म उसी का सामान्यीकरण है। इसलिए Sol Saporta ने दोनो को सम नार्थक मान लिया है।[11] किन्तु दोनो में मूलभूत अन्तर यह है कि इसम बोलीगत

भिन्नता के ध्वनिमीय समनुरूपो पर ही ध्यान दिया जाता है। प्रथम पद्धति के समान यह इस दृष्टि की पोषक नही है कि बोलियाँ अमूर्त तत्त्वो के समुच्चय से कुछ चुनती है।

इसके माध्यम से हम दो बोलियो की समानता व असमानता को इकाई-बद्ध करके बोलियो की तुलना करते है। इस समानता या असमानता का वर्णन ध्वनि की तथा ध्वनिमी की दुरूहता से बच कर भी किया जा सकता है।[12] इसके अतिरिक्त इह परस्पर स्वतन्त्र भी माना जा सकता है।[13]

भाषिकान्तर व्यवस्था पर समय-समय पर अनेक आक्षेप किए गए है। पहली बात यह है कि यह विचार Saussur की उक्ति से दूर नही जा पाता। उससे मुक्ति के लिए Weinreich ने कहीं ऐसा सकेत भी नही दिया है। इस व्यवस्था से सम्बद्ध प्रमुख प्रश्न यह है कि क्या हम दो बोलियो की सजातीय इकाइयो पर विचार करते है या नही ? यदि हम सजातीय इकाइयो की उपेक्षा कर देते है तो भाषिकान्तर व्यवस्था में रखी जाने वाली समान ध्वनिम-सूची स सम्बद्ध दो बोलियो की अस्पष्टता बनी ही रहेगी। यह आवश्यक नही है कि जिन बोलियो म समान ध्वनि मिलती हो, वे परस्पर सम्बद्ध भी हो। उदाहरणार्थ, मुरिया और हलबी में प्राय समान ध्वनि व्यवस्था है, किन्तु दोनो पारिवारिक दृष्टि से भिन्न भिन्न बोलियाँ है। इसके अतिरिक्त ऐसा भी सम्भव है कि जो बोलियाँ अत्यधिक निकट व परस्पर बोधगम्य हो, उनकी ध्वनिम सूची में बहुत कम समानता हो। बस्तर की अबूझमाड़िया तथा मुरिया इसी प्रकार की बोलियाँ (प्रस्तुत लेखक की पुस्तक A Comparative grammar of Gondi dialects, द्रष्टव्य)। William G Moulton ने The short vowel systems of Northern Switzerland (Word (1960) 16 176 7) लेख के माध्यम से यह दिखाया है कि स्विस जर्मन बोलियों में, जो परस्पर पचास मील से अधिक दूरी पर नही हैं तथा अत्यधिक बोधगम्य है, तीन स अधिक आन्तर ध्वनिम समान नही हैं (प्रत्येक बोली में अलग-अलग ग्यारह ध्वनिम है) तथा उन तीन में भी केवल एक पूरी तरह समान है।

30.4. ध्वनिम की शब्द-समुच्चय मे स्थिति

बोलियो के मध्य उप सरचनात्मक भिन्नताओ की व्याख्या के लिए *Kurath* व McDavid के द्वारा जो विचार प्रस्तुत किया गया था,[14] उसे 'ध्वनिम की शब्द समुच्चय में स्थिति' का सिद्धान्त कहा जा सकता है। Moulton ने Weinreich के सिद्धान्त अस्वीकृति व्यक्त करते हुए इसी को स्वीकार किया था।[15] परिणामस्वरूप Moulton ने बोलियो के मध्य मिलने वाली समानताओ

का विवरण इसी के माध्यम से प्रस्तुत किया है। इसी प्रकार की समानताओ को उन्होने ऐतिहासिक दृष्टि से भी देखा है, अर्थात् 'सूचीवितरण-प्रतिमान' से जिन लक्षणो का ज्ञान नही हो पाता था, उनको वे ऐतिहासिक दृष्टि मे अवगत कर लेते थे। इस प्रकार Moulton इतिहास के सहारे 'सूची वितरण प्रतिमान' के कुटिल मार्ग से अपने को बचा कर चलते है।

इतना होते हुए भी ऐतिहासिक व्याख्यान की सुस्पष्ट पद्धति को स्वीकार कर लेने के कारण उनके कार्य में स्वेच्छाचारिता आ गई है[1], क्योकि पुनर्रचित रूपों के सम्बन्ध में उन्होने किसी कसौटी का निर्धारण नही किया, जिससे भिन्न भिन्न बोलियो को एकीभूत समुच्चय के रूप म प्रस्तुत किया जा सके। Moulton जिस शब्द समुच्चय की पुनर्रचना करते है, वे अपरिहार्य रूप से सम्मिश्र समुच्चय हैं तथा उसमें समय के आधार को सार्थक बनाने का कोई प्रयास नही है।

इस प्रकार Moulton ने जिस प्रकार के तुलनात्मक वितरण को सुझाया है, वह एकमात्र ऐतिहासिक स्वरूप के कारण सीमित है। इसके अतिरिक्त उन्होने आनुवशिक सम्बद्धता के पास में सकालिक सम्बद्धता की व्याख्या को भी अस्वीकार कर दिया है। सकालिक सन्दर्भो की उपेक्षा के कारण Moulton का सिद्धान्त पूरी तरह ग्राह्य नही हो सकता।

30.5. प्राक्प्रजनक व्याकरण की असफलता

इस विवेचन के फलस्वरूप कहा जा सकता है कि उपयुक्त पद्धतियाँ या प्रतिमान सरचनात्मक दृष्टि से बोलियो की विभिन्नता का सुस्पष्ट व सुसगत विवरण दे सकने में सफल नही रहे। हमारी वास्तविक समस्या का हल खोजने मे असमर्थ रहे हैं।

हमारी वास्तविक समस्या यह है कि एकल भाषिक पद्धति से हम बोलियो के आवश्यक तत्त्वों का विश्लेषण किस प्रकार कर सकते है ? उपर्युक्त पद्धतियो की अनुपयुक्तता स यह भी ध्वनित होता है कि समस्या का समाधान कोई सरल कार्य नही है।

टिप्पण और सन्दर्भ

1 Alan R Thomas, 'Generative phonology and dialectology,' Trans Phil Soc, 1957, p 179
2 Ibid
3 C F Hockett, 'American English stressed syllables,' A course in modern Linguistics, Ch 40, pp 339 49

4 Edward Stankiewicz, 'On discreteness and continuity in structural dialectology' Word (1957) 13 44
5 W G Moulton, 'The short vowel systems of the Northern Switzerland, A study in structural dialectology,' WORD (1960) 16
6 Sol Saporta,' Ordered rules, dialect differences, and historical processes,' Language (1965) 41 218
7 Robert D king, Historical Linguistics and generative grammar, London, 1969, p 30
8 A M Ghatage, Historical Linguistics and Indo Aryan Languages, pp 140 1
9 रमेशचन्द्र महरात्रा हिन्दी ध्वनिकी और ध्वनिमी, दिल्ली, पृ० 1
10 तत्रैव, पृ० 8
11 Sol Saporta, Ibid
12 E Pulgram, 'Structural comparisions, dia systems and dialectology' Linguistics (1964) 4
13 F R Palmer, 'Comparative statement in Ethiopean,' Trans Phil, Soc, 1958
14 Hans Kurath and Raven I McDavid, The pronunciation of English in the Atlantic States, Ann Arbor, 1967, p 7
15 W G Moulton, Ibid.
16 Alan R Thomas, Ibid, p 180

भाषिकान्तर व्यवस्था के अन्तर्गत दो व्यवस्थाओ का रैखिक प्रदर्शन होता है, जिससे प्रमुख समानताएँ व असमानताएँ प्रत्यक्ष हो सकें। कुछ लोग भाषिकान्तर व्यवस्था के स्थान पर अतिरिक्त व्यवस्था (Super system) की चर्चा भी कर सकते है तथा आंशिक समानता के आधार पर किसी भी व्यवस्था की रचना की जा सकती है। वैसे भाषिकान्तर व्यवस्था की वास्तविकता का बोध द्विभाषियो को ही अधिक होता है व भाषा-सम्पर्क के अन्तर्गत इसका अनेकत्र उल्लेख किया है।

का विवरण इसी के माध्यम से प्रस्तुत किया है। इसी प्रकार की समानताओं को उन्होने ऐतिहासिक दृष्टि से भी देखा है, अर्थात् 'सूचीविवरण प्रतिमान' से जिन लक्षणो का ज्ञान नही हो पाता था, उनको वे ऐतिहासिक दृष्टि से अवगत कर लेते थे। इस प्रकार Moulton इतिहास के सहारे 'सूची विवरण प्रतिमान' के कुटिल मार्ग से अपने को बचा कर चलते हैं।

इतना होते हुए भी ऐतिहासिक व्याख्यान की सुस्पष्ट पद्धति को स्वीकार कर लेने के कारण उनके कार्य मे स्वेच्छाचारिता आ गई है[1], क्योकि पुनर्रचित रूपो के सम्बन्ध में उन्होने किसी कसौटी का निर्धारण नही किया, जिससे भिन्न भिन्न बोलियो को एकीभूत समुच्चय के रूप में प्रस्तुत किया जा सके। Moulton जिस शब्द समुच्चय की पुनर्रचना करते हैं, वे अपरिहार्य रूप से सम्मिश्र समुच्चय है तथा उसमें समय के आधार को सार्थक बनाने का कोई प्रयास नही है।

इस प्रकार Moulton ने जिस प्रकार के तुलनात्मक विवरण को सुझाया है, वह एकमात्र ऐतिहासिक स्वरूप के कारण सीमित है। इसके अतिरिक्त उन्होने आनुवंशिक सम्बद्धता के पास में सकालिक सम्बद्धता की व्याख्या को भी अस्वीकार कर दिया है। सकालिक सन्दर्भो की उपेक्षा के कारण Moulton का सिद्धान्त पूरी तरह ग्राह्य नही हो सकता।

30.5. प्राक्प्रजनक व्याकरण की असफलता

इस विवेचन के फलस्वरूप कहा जा सकता है कि उपयुक्त पद्धतियां या प्रतिमान सरचनात्मक दृष्टि से बोलियो की विभिन्नता का सुस्पष्ट व सुसगत विवरण दे सकने में सफल नही रहे। हमारी वास्तविक समस्या का हल खोजने में असमर्थ रहे है।

हमारी वास्तविक समस्या यह है कि एकल भाषिक पद्धति से हम बोलियो के आवश्यक तत्वो का विश्लेषण किस प्रकार कर सकते है? उपयुक्त पद्धतियो की अनुपयुक्तता से यह भी ध्वनित होता है कि समस्या का समाधान कोई सरल कार्य नही है।

टिप्पणी और सन्दर्भ

1 Alan R Thomas, 'Generative phonology and dialectology,' Trans Phil Soc, 1957, p 179

2 Ibid

3 C F Hockett, ['American English stressed syllables,' A course in modern Linguistics Ch 40, pp 339 49

4 Edward Stankiewicz, 'On discreteness and continuity in structural dialectology' Word (1957) 13 44
5 W G Moulton, 'The short vowel systems of the Northern Switzerland, A study in structural dialectology,' WORD (1960) 16
6 Sol Saporta,' Ordered rules, dialect differences, and historical processes,' Language (1965) 41 218
7 Robert D king, Historical Linguistics and generative grammar, London, 1969, p 30
8 A M Ghatage, Historical Linguistics and Indo Aryan Languages, pp 140 1
9 रमेशचन्द्र महरात्रा हिन्दी ध्वनिकी और ध्वनिमी, दिल्ली, पृ० 1
10 तत्रैव, पृ० 8
11 Sol Saporta, Ibid
12 E Pulgram, 'Structural comparisions, dia systems and dialectology' Linguistics (1964) 4
13 F R Palmer, 'Comparative statement in Ethiopean,' Trans Phil, Soc, 1958
14 Hans Kurath and Raven I McDavid, The pronunciation of English in the Atlantic States, Ann Arbor, 1967, p 7
15 W G Moulton, Ibid.
16 Alan R Thomas, Ibid, p 180

भाषिकान्तर व्यवस्था के अन्तर्गत दो व्यवस्थाओं का रैखिक प्रदर्शन होता है, जिससे प्रमुख समानताएँ व असमानताएँ प्रत्यक्ष हो सकें। कुछ लोग भाषिकान्तर व्यवस्था के स्थान पर अतिरिक्त व्यवस्था (Super system) की चर्चा भी कर सकते हैं तथा आंशिक समानता के आधार पर किसी भी व्यवस्था की रचना की जा सकती है। वैसे भाषिकान्तर व्यवस्था की वास्तविकता का बोध द्विभाषियों को ही अधिक होता है व भाषा-सम्पर्क के अन्तर्गत इसका अनेकशः उल्लेख किया है।

31

प्रजनक शब्द-भूगोल

31.1. अब इस अध्याय में इस बात की परीक्षा उपयोगी होगी कि क्या व्याकरणिक सिद्धा त बोलियो की भिन्नता के विश्लेषण म हमारी सहायता कर सकते हैं ? यहाँ यह उल्लेखनीय है कि Sol Saporta जैसे विद्वानों ने विगत दशक से समस्या का एकमात्र समाधान प्रजनक व्याकरण से ही माना है।[1] सामान्य रूप से किसी व्याकरण के ध्वनिप्रक्रियात्मक घटक में हमारा प्रश्न प्रमुख दो बातो पर आधारित होता है—

(क) व्यवस्थापरक ध्वनियो के अ तर्गत कौन से समुच्चय है ?

(ख) किसी भाषा की ध्वनिप्रक्रिया के अ तगत परीक्षणीय तत्वों के सम्बन्ध में सर्वाधिक सामा य विवरण व लाघव को प्रस्तुत करने वाले कौन से नियमो के समुच्चय है ?

और हम यह जानते है कि इन नियमो की उपलब्धि का सर्वाधिक प्रत्यक्ष रूपध्वनिप्रक्रियात्मक परिवर्तन की प्राप्ति का है। यहाँ कुछ विद्वानो के समय समय पर प्रकाशित लेखो के माध्यम से बोलियो की भिन्नता के विश्लेषण म प्रजनक व्याकरण की दृष्टि को सक्षेप मे प्रस्तुत किया गया है—

(अ) Halle तथा Keyser की पद्धति—क्रमबद्ध नियमो के समुच्चय की विधि (आधारीय व्याकरण)

(आ) O Niel तथा Klima की पद्धति—नियमों के समुच्चय का तुलनात्मक कथन।

(इ) Sidney Lamb की पद्धति।

31.2. Halle तथा Keyser की पद्धति

सर्वप्रथम 1962 ई० में Morriss Halle ने Phonology in gene

rative grammar (word 1962. 18 . 54-72) नामक लेख के माध्यम से शब्द-भूगोलवेत्ताओ का ध्यान प्रजनक व्याकरण की ओर आकृष्ट किया था। उन्होंने इस बात को सोदाहरण व्याख्या की है कि तुलनात्मक विवरण को क्रमबद्ध नियमो के समुच्चय (कम से-कम आंशिक रूप) में प्रस्तुत कर देने से भाषा-विज्ञानी को बोलियो के व्याकरणों के मध्य मिलने वाली सम्बद्धता को समझने के लिए एक अद्वितीय अन्तर्दृष्टि मिलती है। उनके इस विचार को संक्षेप में इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है—

अन्वेषण की जाने वाली बोलियों या भाषा की भिन्नताओ को समझने के लिए आवश्यक प्रजनक नियमो अर्थात् वक्ताओ से व्याकरणो की परीक्षा कर लेनी चाहिए, जिससे वक्ताओ का भाषिक व्यवहार समझ में आ जाए। इस स्थिति में भिन्न-भिन्न बोलियो वाले वक्ताओ के व्याकरण अधोलिखित रूप से भिन्न होंगे—

(क) या तो व्याकरण में भिन्न भिन्न नियम होंगे,

(ख) या व्याकरण के भिन्न भिन्न क्रम म समान नियम होगे।

Halle ने यह सकेत देते हुए अपने तर्क की व्याख्या की है कि अमरीकी अंग्रेजी तथा पिग लैटिन के रूपो का तुलना से यथेष्ट विस्तार वाले भेद मिल सकते हैं। पिगलैटिन में मध्य प्रत्यय होगे, जब कि अंग्रेजी में परप्रत्यय मिलेंगे। पिग लैटिन मे कोई भावार्थक सज्ञा या कोई अन्त्य व्यजन नही है, अपितु अत्यधिक जटिल मध्य व्यजनगुच्छ है। इसके अतिरिक्त नियमो के समुच्चय की तुलना से यह पता चलेगा कि वक्ताओ की यथार्थ सम्बद्धता में किस बात की स्वीकृति है। उदाहरणार्थ, पिग लैटिन मे अंग्रेजी के ही समान नियम है। केवल एक अधिक नियम मिलता है, जो आदि व्यजनो का शब्द में परिवर्तन व क्रमेण स्वरकेन्द्रक / एय् / के योग का है।

इस प्रकार Halle के अनुसार कहा जा सकता है कि एक सम्बद्ध बोली का समुचित वर्णन योग-योग से रूपान्तरित किया जा सकता है या आपेक्षिक दृष्टि से उसके नियमों की अल्पसंख्या का नियम-संस्कार करके रूपान्तरित किया जा सकता है।

Halle की उपर्युक्त विचारधारा का समर्थन Samuel Jay Keyser के अटलाण्टिक स्टेट्स की चार बोलियो की भिन्नता के प्रदर्शन में मिलता है।[2] उन्होंने कहा है कि चार बोलियो की उस सामग्री को एक अध स्य अर्थात् आधारीय

व्याकरण व दो नियमो के प्रयोग से प्रस्तुत किया जा सकता है।

Halle तथा Keyser ने इस सम्बन्ध मे दो बातो पर बल दिया है—

(क) आधारीय व्याकरण के नियमो की तुलना केवल प्रारम्भिक सामग्री से ही स्फुट हो सकती है, तथा

(ख) *इस प्रकार की तुलनाओ में नियमो की क्रमता का विचार प्राय.* दुस्साध्य होता है।

इसका समर्थन Sol Saporta ने स्पेनिश-बोलियों के माध्यम से सोदाहरण किया है।[3] उनका विचार है कि अधस्थ (आधारीय व्याकरण के) रूपो व नियमो का चुनाव इस इच्छा से प्रेरित होता है, जिससे सारल्येन अधिकाधिक तथ्यो का विवरण दे दिया जाए, किन्तु इसके साथ यह भी खोज लेना अच्छा होगा कि प्रजनक व्याकरण में नियम अपने ऐतिहासिक प्रतिरूप को भी बताते हैं या उनके अनुरूप होते हैं।[4] उनका यह तर्क है कि जिस प्रकार पिग लैटिन में अतिरिक्त नियमो की सहायता ली गई है, उसी प्रकार ऐतिहासिक प्रत्युत्तरों को भी खोजा जा सकता है। इस प्रकार Soporta यह मानते है कि सम्बद्ध बोलियो के लिए वांछित नियमों के प्रकार के माध्यम से कुछ ऐतिहासिक तत्त्वो का परिचय मिलता है, भले ही वे बोलियाँ स्थान और समय की दृष्टि से भिन्न हो।[5]

31.3. O'Niel तथा Klima की पद्धति

बोलियो की भिन्नता के प्रजनक विवरण की एक अन्य दृष्टि O'Niel[6] तथा Klima[7] की है। यद्यपि Klima व्याकरण के वाक्य-प्रजनक अंश से ही सम्बद्ध हैं, तथापि वे सिद्धान्त, जिन पर उनके सुझाव आधारित हैं, ध्वनिप्रक्रिया के लिए भी प्रासंगिक हैं।

O'Niel तथा Klima का एक मात्र सम्बन्ध उन स्थितियो से है, जहाँ एक बोली की विशिष्टता को बताने वाला व्याकरण (=नियमों का समुच्चय) तुलनात्मक कथन के रूप में भी कार्य कर सकता है। इस विश्लेषण में किसी एक बोली-क्षेत्र के व्याकरण को विवरण का केन्द्रक माना जा सकता है, जिसमें आवश्यकतानुसार इतर बोली-क्षेत्रों (यथा बघेलखण्ड के शेष चौदह उपबोली-क्षेत्रो) के रूपो की व्याख्या के लिए सीमान्त विस्तार भी जोड दिए जाते हैं। अधिक स्पष्ट रीति से कहा जा सकता है कि 'विवरण के केन्द्र' के अन्त्य प्रतीक कुछ उदाहरणो में आधारीय प्रतीको का कार्य कर सकते हैं, जिनके आधार पर शेष बोली-क्षेत्रों

के अन्त्य प्रतीकों को बताने के लिए अतिरिक्त नियम जोड़े जा सकते हैं।

O'Niel तथा Klima की पद्धति की अधिक स्पष्ट व्याख्या Alan R. Thomas ने वेल्श बोलियों पर आधारित अपने एक लेख[8] के माध्यम से की है। इस लेख से वे 'एक ऐसा ढाँचा सुझाना चाहते थे, जिसके अन्तर्गत तुलनात्मक वितरण बोलियों के मध्य सकालिक सम्बद्धता की व्याख्या कर सकें, व ऐतिहासिक प्रतिवर्तों की भिन्नता की व्याख्या विशुद्ध रूप से सहवर्ती रूपों का कारण प्रस्तुत कर सके।'[9]

31.4. Sidney Lamb की पद्धति

Sidney Lamb ने 1966 ई० मे Prolegomena to a theory of phonology (Language. 42 : 536 73) नामक लेख में M. Halle से मिलती जुलती पद्धति प्रस्तुत की थी। प्रजनक ध्वनिप्रक्रिया की अत्याधुनिक पद्धति होने के कारण वह महत्वपूर्ण है तथा उसी के आधार पर यहा बघेलखन्डी बोलियों के एक प्रजनक नियम की व्याख्या की जा रही है।

बघेलखंड के पन्द्रह उपबोली-क्षेत्रों में सिंगरौली-क्षेत्र को केन्द्र मान कर एक यह नियम बनाया जा सकता है कि शेष चौदह उपबोली क्षेत्रों के शब्द के प्रथम अक्षर में यदि कोई अनुनासिक या नासिक्य ध्वनि होती है, तो उसका यहाँ लोप या समीकरण हो जाता है तथा द्वितीय अक्षर के आरम्भ की सघोष स्पर्श व्यजन ध्वनि वर्त्स्य नासिक्य मे बदल जाती है—

सूत्र

[+सघोप] → [+ वर्त्स्य नासिक्य] / नासिक्य या अनुनासिकता

(क) (नासिक + स्व० + सघोप स्पर्श → नासिक्य + स्व० + वर्त्स्य नासिक्य)

उदाहरणार्थ

मदार् → मनार्
निदाई → निनाई

(ख) (स्व० + अनुनासिकता + सघोप स्पर्श → स्व० + ϕ + वर्त्स्य नासिक्य)

एँगुर् → एनुर्
सेंदुर् → सेनुर्
चाँदी → चानी

को समझा जा सके। स्वाश्रित ध्वनिमी की परिभाषा के अनुसार एक का परिवर्तन स वनिक है तथा अन्य में रूपध्वनिमीय।

यदि हम अपने व्याकरण में व्यवस्यक ध्वनिमीय स्तरों के मध्य एक स्वाश्रित ध्वनिमीय स्तर मान लें, तब पन्द्रह उपबोलियो के व्याकरण रूपध्वनिमीय व सध्वनिक स्तर पर अन्तर दिखलाएँगे। हमने यह देखा है कि प्रजनक व्याकरण में यह भेद मात्र एक नियम के योग से दिखाया जा सकता है, जो व्यवस्यक ध्वनिमीय व व्यवस्यक ध्वनिकीय के मध्य व्यवधान उपस्थित करने वाले किसी प्रतिरूप के स्तर को प्रस्तुत नही करता। विशेषरूप से यह उदाहरण बताता है कि सार्थक बोली तुलना बोलियो की ध्वनिमीय सूचियो की तुलना के माध्यम से नही होती, क्योंकि ध्वनिमीय सूचियाँ, चाहे वे स्वतन्त्र हो या व्यवस्थापरक, सदैव समान होती हैं। उनमे जा कुछ भी भिन्नताएँ होती है, वे ध्वनिमो के श्रुतिग्राह्य नियमो के कारण है।

31.5. श्रृंखलानुकर्षापकर्ष-विश्लेषण

प्रजनक व्याकरण से सम्बद्ध एक नवीन प्रकल्पना R D King के द्वारा 1969 में प्रस्तुत की गई है, जिसे उन्होंने Push Chains and drag Chains (Glossa, 1969) के नाम से पुकारा है। Robert D King के इस विश्लेषण को प्रस्तुत लेखक ने गोंड़ी बोलियो की पारस्परिक भिन्नता के विश्लेषण में प्रयुक्त किया है। उत्तम तथा मध्यम पुरुष के सर्वनामो के भौगोलिक वितरण को प्रस्तुत करने वाले Pushing and dragging Chains of personal pronouns of Gondi dialects of Madhya pradesh नामक लेख का प्रकाशन Psycho lingua (1971) के द्वितीय अक में हुआ है। यहाँ आधारीय वृत्तचित्र प्रस्तुत है, जिसके विश्लेषण के लिए उपर्युक्त लेख देखा जा सकता है—

अकेले इसी आधार पर पन्द्रह उपबोलियो के मध्य भेद का इस मान्यता के साथ वर्णन किया जा सकता है कि सिंगरौली क्षेत्र की उपबोली में एक ऐसे नियम की विद्यमानता है, जो इतर चौदह उपबोलियों के व्याकरण म अविद्यमान है। तदनुसार ध्वनिमीय व्यवस्थाओ के इस उपविभाग की भाषिकान्तर-व्यवस्था इस प्रकार होगी—

॥ इ ~ ए ~ द ॥

किन्तु यथार्थतया यह कोई ऐसा सकेत नही है, जिसस बोलियो की भिन्नता

गोडी बोलियों के उत्तम तथा माध्यम पुरुष सर्वनामो का आधारीय वृत्तचित्र
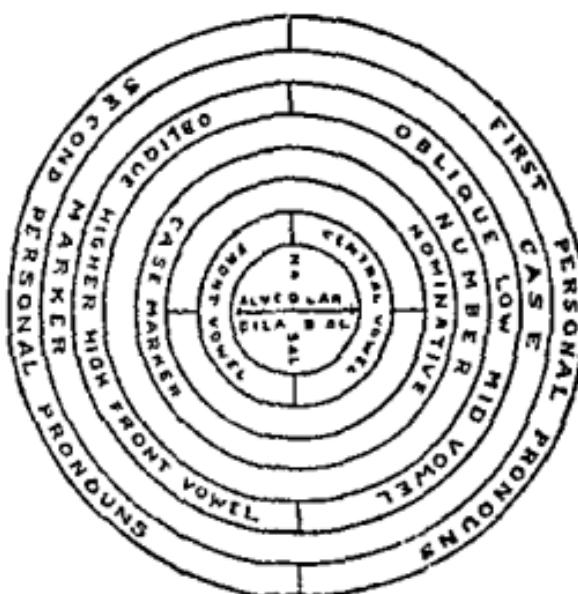
31.6. बोलियो को भिन्नता मे प्रजनक व्याकरण की उपयोगिता

उपर्युक्त विवेचन से यह शिक्षा ली जा सकती है कि बोलियो की भिन्नता में किसी भी प्रकार की अन्तर्दृष्टि को प्राप्त करने के लिए हमें अपना ध्यान भाषाओ के व्याकरणो की ओर केन्द्रित करना पडेगा, उनके स्वर या व्यजन-व्यवस्था म ही अपने को सीमित नही करना चाहिए या रूपिमो की सूची से ही सन्तुष्ट नही हो जाना चाहिए। तदनुसार कहा जा सकता है कि बोलियो की भिन्नता का अध्ययन है।

ऐसी स्थिति म सत्रह वर्ष पूर्व Weinreich द्वारा प्रस्तुत समस्या 'क्या सरचनात्मक बोलीविज्ञान सम्भव है" का समाधान सर्वसमावेशी अभिरचना की पद्धति, भाषिकान्तर-व्यवस्था, या ध्वनिम का शब्द समुच्चय म स्थिति के प्रतिमान मे पूर्णरूप से नही हो पाता। उसका यथार्थ हल प्रजनक व्याकरण ही उपस्थित कर सकता है।

इस रूप म कहा जा सकता है कि सरचनात्मक शब्द भूगोल की तुलना में प्रजनक-शब्द-भूगोल अधिक व्यावहारिक है और बोलियो की सरचना एकमात्र प्रजनक व्याकरण से ही व्याख्येय है।

31.7. प्रजनक शब्द-भूगोल की अनुप्रायोगिता

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि शब्द भूगोल की प्रजनक दृष्टि अब हमें पारम्परिक शब्द भूगोल के व्यक्तिनिष्ठ व ऐच्छिक विचारधारा से मुक्त करती है। समभाषांशों, या समभाषांश रेखाओं या उनके सघानों को चुनने की अपेक्षा अब हम अधिक वस्तुनिष्ठ दृष्टि अपना सकते हैं।

प्राकप्रजनक या प्रजनक शब्द भूगोल पर अभी तक प्राप्त दर्जनों स्फुट लेखों के माध्यम से यद्यपि संरचना की विविध पद्धतियों को खोजने का प्रयास किया है, किन्तु अभी तक सम्पूर्ण ध्वनिप्रक्रियात्मक व्यवस्था को मानचित्र में अंकित करने वाला कोई कार्य दृष्टिगोचर नहीं हुआ है। शब्द भूगोलवेत्ता अभी तक ऐसी कोई रेखीय युक्ति नहीं निकाल पाए है, जो दो व्यवस्थाओं के मध्य क्रमिक संक्रमण को बता सकें।

इसके अतिरिक्त यदि वे ऐसी कोई युक्ति निकाल भी लेते हैं, तो अपने कार्य में उस समय तक सफल नहीं हो सकते, जब तक अपनी संकलन-पद्धति को विशुद्ध रूप से 'संरचनात्मक भाषा सर्वेक्षण' के रूप में नहीं ढालते।

31.8. संरचनात्मक भाषासर्वेक्षण की आवश्यकता

आज शब्द भूगोल पर जो सामग्री उपलब्ध है उसमें अधिकांश का नियोजन उस समय हुआ था, जब ध्वनिमीय सिद्धान्तों का पूर्णरूपेण नियोजन नहीं हो पाया था। अतएव प्रश्नावलियों के माध्यम से जुटाई गई सामग्री सम्प्रति ध्वनिमीय विश्लेषण के लिए अपर्याप्त व अनगढ़ है।

भौगोलिक अध्ययन में संरचनात्मक दृष्टि से प्रामाणिक सामग्री को जुटाने की पहल सर्वप्रथम John J Gumperz[1] ने की थी किन्तु उसके पश्चात् जो सर्वेक्षण-कार्य सम्पन्न हुए हैं, उनमें Gumperz के परामर्श पर कोई ध्यान नहीं दिया गया और परम्परागत सामग्री में ही संरचनात्मकता को खोजने का असफल प्रयास किया गया है।

Gumperz का यह मत मानने योग्य है कि यदि संरचनात्मक शब्द भूगोल (बोली विज्ञान) को सही मानों में प्रस्तुत करना चाहते हैं, तो उस पर सामग्री संचय के पश्चात् नहीं, अपितु पूर्व से ही ध्यान देना उचित होगा। तदनुसार *संरचनात्मक भाषासर्वेक्षण व शब्द भूगोल* की पूर्व अनिवार्यताएँ Gumperz के अनुसार अधोलिखित है—

(क) जिस क्षेत्र की बोलियों की संरचनात्मक सामग्री जुटानी है, उस क्षेत्र की बोलियों की प्रमुख ध्वनिमीय और ध्वनिकीय विशेषताओं का पूर्व ज्ञान होना

चाहिये। इस प्रकार किसी क्षेत्र के चुने हुए स्थानों में ध्वनिप्रक्रियात्मक अध्ययनों की एक प्रारम्भिक कड़ी आवश्यक है, जिसमें एकल बोली के निमित्त प्रयुक्त सूचक-पद्धतियों का प्रयोग किया जाए तथा प्राप्त बोली-भिन्नताओं को वर्गबद्ध कर लिया जाए।

(ख) प्रश्नावली के माध्यम से एक भौगोलिक सर्वेक्षण यह निर्णय करने के लिए किया जाए कि प्रारम्भिक सर्वेक्षण से प्राप्त अभिलक्षणों का कहाँ तक विस्तार है। प्रारम्भिक सर्वेक्षण से प्राप्त सामग्री की युक्तियुक्त विवेचना के बाद उसे व्यापक सर्वेक्षण के लिए ढाला जा सकता है और व्यापक सर्वेक्षण करने पर ही अभिलक्षणों के अधिकाधिक विस्तार की जानकारी मिलती है।

31.9. बघेलखंड के शब्द मानचित्रावलीय सर्वेक्षण की संरचनात्मक दृष्टि

यहाँ यह सकेत देना अप्रासंगिक न होगा कि 'बघेलखड के शब्द-भूगोल' में Gumperz द्वारा प्रस्तुत दृष्टिविधान को स्वीकार किया गया है। किसी शब्द-भूगोल या बोलीभूगोल अथवा भाषाभूगोल में इस रीति से यह प्रथम प्रयास है।

सर्वप्रथम बघेलखडी की ध्वनियो का सामान्य परिचय प्राप्त किया गया था, जो इस लेखक के Contrastive Distribution of Bagheli phonemes (Raipur, 1969) नामक पुस्तक में निबद्ध हैं। तदुपरान्त प्रारम्भिक सर्वेक्षण की सामग्री के आधार पर बोलियो की क्षेत्रीय वर्गबद्धता पर विचार किया गया था, जो 'बघेली के पुरुषवाचक सर्वनाम' (भाषिकी के दस लेख, रायपुर, 1969) में देखने को मिल सकता है। इस प्रकार के संक्षिप्त परिचय के उपरान्त ही प्रश्नावली को व्यापक सर्वेक्षण के अनुरूप ढाला गया था।

टिप्पण और संदर्भ

1 Sol Saporta, Ordered rules, dialect differences and historical processes', Language (1965) 41 218,

2 Samuel Keyser, 'Review of Hanskurath and Mc David—The Pronunciation of English in Atlantic States,' Language (19(3) 39 303—16.

3 Ibid

4 ऐतिहासिक व्याकरण में जिस प्रकार 'पुनर्रचना' का महत्व होता है, उसी प्रकार प्रजनक व्याकरण में 'अधस्थ रूपों' की भी महत्ता होती है। इनमें

मिलने वाला भेद कालसापेक्ष है ।

5 Sol Saporta, Ibid

6. O' Niel, 'The dialects of Modern Faroese a prelimi nary report,' Orbis (1963) xx 2

7 Klima, 'Relatedness between grammatical systems,' Language (1964) 410

8 Alan R Thomas, 'Generative phonolgy and dialec tology,' Transactions of philological Society (1967)

9 I bid, pp 180—1

10 John J Gumperz, 'phonological differences in three Hindi dialects' Language (1958) 34 312

सप्तम अधिकरण

अतिभाषिक विश्लेषण
या
समभाषांश-रेखाओं का विवेचन

32. सांख्यिकीय शब्द-भूगोल
33. प्ररूपीय शब्द-भूगोल
34. संस्थानात्मक शब्द-भूगोल

32

सांख्यिकीय शब्द-भूगोल

32.1 शब्द भूगोल की सामग्री का साख्यिकीय विधान[1]

कुछ लोगो के लिए 'साख्यिकी' शब्द का उल्लेख क्षण भर के लिए अवसादमूलक है, व कुछ लोग शब्द भूगोल मे इसके प्रयोग को सुन कर स्तम्भित रह जाते है, तथा कुछ का तो कथन है कि आधुनिक सभ्यता की अनेक व्याधियो मे साख्यिकी महामारी क समान सर्वाधिक उत्पीड़क है, तथापि यह भी स्वीकरणीय है कि शब्द भौगोलिक अध्ययन के लिए सग्रहीत सामग्री सख्यामूलक ही होती है, इसलिए यह जानना आवश्यक है कि इन साख्यिक सूचनाओ को किस प्रक्रम में प्रस्तुत करना है, जिससे उनम निहित भाषिक अभिलक्षणो का सुस्पष्ट ज्ञान हो सके।

सर्वप्रथम यह आवश्यक होता है कि सामग्री को सक्षेप में प्रस्तुत किया जाए, जिससे प्रमुख बातो का तत्क्षण ज्ञान हो सके। सामग्री की सहृति के पश्चात् विविध भाषिक अभिलक्षणो की क्षेत्रानुसार तुलना की जाती है और तुलना से प्राप्त निष्कर्षो की सार्थकता पर विचार किया जाता है।

इस प्रकार मूलभूत सामग्री को साख्यिकीय दृष्टि से अधस्तन तीन विधियो से प्रस्तुत किया जाता है—

(क) सक्षिप्तता

(ख) तुलना

(ग) सार्थकता

सामग्री क प्रस्तुतीकरण में इन तीनो ही स्थितियो में प्रयोग म आने वाली साख्यिकीय तकनीको में सामग्री की प्रकृति के अनुसार भेद भी हो सकता है। इस प्रकार की सामग्री के समुच्चय में प्राय दो प्रकार के अको का प्रयोग किया

जाता है, जिन्हे साख्यिकी की भाषा में चर (Variables) कहा जाता है—

(अ) खण्डित परिवर्त्य

(आ) अखण्डित परिवर्त्य

इन दोनो के मध्य भेद अत्यन्त महत्वपूर्ण है, क्योंकि दोनो के ही प्रस्तुनीकरण की तकनीकें भिन्न भिन्न है।

32.1.1. संक्षिप्तता

अधोलिखित पद्धतियो से सामग्री को सक्षिप्त किया जा सकता है—

(क) कुछ सुपरिभाषित मूल्यो में सामग्री का वर्गबन्धन।

(ख) *सामग्री समुच्चय की अप्राचलित मूल्य जो औसत स्थिति का* ज्ञापक है।

(ग) वितरण को समझने के लिए अ-विशिष्ट अभिलक्षणो के विचलन की माप।

(घ) समग्राकृति के बोध के लिए विचित्र मूल्य तथा विचलन का उपयोग।

वर्गबद्धता की तकनीकें

मान लीजिए आपसे कहा जाता है कि किसी परीक्षा में छात्रों के एक वर्ग ने जो अक प्राप्त किए है, उन पर आप टिप्पणी कीजिए, तो आप यही कहेंगे कि कुछ को 70% या उससे अधिक, कुछ को 60% तथा 69% के बीच अक लिले मिले हैं, आदि। इस प्रकार आप प्राचीन सामग्री को कुछ महत्वपूर्ण मूल्यो (70% या 60%) के निकट वर्गबद्ध कर रहे होगे।

किसी सामग्री-समुच्चय में इस पद्धति का उपयोग किया जाता है। सर्वप्रथम सार्थक वर्ग (यथा 60%—69%) निश्चित कर लिए जाते हैं और तत्पश्चात् वर्गान्तर्गत अवलोकनो की गणना की जाती है। चूँकि मूलभूत सामग्री अब वर्ग-रूप में प्रस्तुत है, अतएव इसे खण्डित परिवर्त्य कहा जाएगा।

प्रत्येक वर्ग में स्पष्टतया उच्चतम व निम्नतम सीमाएँ भी होगी। वर्ग की *निम्न सीमा को निम्न वर्ग-सीमा के नाम स जाना जाएगा तथा अधिकतम सीमा* उच्चतम वर्ग-सीमा के नाम से अभिहित होगी। इस प्रकार 60—69% के वर्ग में निम्नतम सीमा 60% व उच्चतम सीमा 69% होगी। कुछ उदाहरणों में *ऐसा भी सम्भव है कि हमें कोई ऐसा वर्ग न मिल पाए, जिसके एक छोर में कोई* निश्चित सीमा हो। उदाहरण के लिए, 40% से नीचे या 70% से ऊपर, आदि। ये वर्ग दोनो ही सीमाओ में प्रतिबद्ध नहीं रहते, अतएव इन्हें मुक्तवर्ग कहा जाता है।

इसमें प्रमुख समस्या उचित व सार्थक वर्ग को निश्चित करने की है। यदि सर्वप्रथम सामग्री-समुच्चय के सर्वसमावेशी वितरण पर हम विचार करें, तो सामान्य अवलोकन से ही हम यह देखने में समर्थ हो सकेंगे कि क्या सामग्री में स्वाभाविक वर्गबद्धता मिल रही है ? इसकी जानकारी Scatter diagram के अंकन से सरलतया ही जाती है। ग्राफ मे किसी आकृति (figure) की घटना के समय की सख्या को लिख लिया जाता है, जिससे ग्राफ यह दिखाता है कि अपने परास में अंक (निम्नतम मूल्य से उच्चतम मूल्य मे) किस प्रकार वितरित है। सामग्रीसमुच्चय के प्रत्येक अंक को अंकित किया जाता है और तब यदि सामग्री मे कोई स्पष्ट वर्गबद्धता रहती है, तो उन्हे आदर्श वर्ग-सीमाओं (Ideal Class limits) के नाम से जाना जाता है। किसी बडे वर्ग मे खडित हो सकने वाले वर्ग की स्थापना त्रुटिपूर्ण होगी, क्योंकि तब वितरण की अनिवार्य बात ही समाप्त हो जाएगी। उदाहरण के लिए, हमारी सामग्री में एक स्वाभाविक वर्ग 50%—59% के मध्य है और इसे 50—54% व 55—59% में खण्डित करना अर्थहीन व अविचारपूर्ण होगा।

इन आदर्श वर्गों में पुनर्मेल करना भी आवश्यक है, क्योंकि जो वर्ग निश्चित किए जाते है, उन्हे नियमित आकार का होना चाहिए, चाहे वे गणितीय श्रेणी (1—2 · 3—4 · 5 6 · 7—8) में हों या ज्यामितिक श्रेणी (2—4 5—8 9—16) में मिलते हो। स्पष्ट है कि प्रकृत वर्गबद्धता इस अर्थ मे नियमित नही भी हो सकती और तब तक एक समझौता आवश्यक है।

इस प्रकार विविध वर्गों की उपयुक्त श्रेणियों को सुझाने के पश्चात् एक बात सदैव ध्यान में रखनी चाहिए कि हमें बहुत अधिक वर्गों को स्थापित नहीं करना चाहिए, क्योंकि ऐसा करने से सामग्री की प्रमुख बातें छूट सकती है और सार की की अपेक्षा विस्तार बना रह सकता है।

वर्ग-भेद की यथार्थ संख्या आशिक रूप मे वितरणो के अवलोकन की सख्या व सामग्री के परास पर निर्भर करती है। सामान्य पथप्रदर्शन के रूप मे पते की बात यह है कि वर्गों की सख्या व सामग्री-समुच्चय में अवलोकनो की सख्या के घाताक से पाँच गुने मे अधिक नही होनी चाहिए। इस प्रक्रम को स्वीकार कर लेने पर हम अपने को अधिक वर्गों को स्वीकार करने की प्रवृत्ति से बचा लेते हैं। इस प्रकार यदि हमने 100 अवलोकन किए है, तब वर्गों की अधिकतम संख्या इस प्रकार होगी।

$$5 \times \log = 5 \times 2 \cdot 0000 = 10$$

वर्गों की स्थापना के पश्चात् प्रत्येक वर्ग में मिलने वाले अवलोकनों की

संख्या को भी सारिणीबद्ध कर लिया जाता है। उदाहरण के लिए, अधोलिखित सारिणी देखिए—

आवृत्ति-सारिणी

वर्ग	इकाइयाँ	वर्ग-आवृत्ति
<39	34 35 37	3
40—49	48 45 48 45 48 42	6
50—59	50 56 56 57 59 50 58 53 58 52 52 54 58 56 59 54 58 52 54 58 58 50 50 55 56 54 52 58 59 54 56 50 56 58	34
60—69	66 62 61 64 60 61 68 69 62 61 61 65 63 61 63 68 61 61 65	19
>70	70 70 72 75 77	5

इस प्रकार की आवृत्ति-सारिणी को आवृत्ति वितरण भी कहते हैं, क्योंकि यह प्रत्येक वर्ग के अन्तर्गत विविध घटनाओं की आवृत्ति (वर्ग-आवृत्ति) को बताती है। इस आवृत्ति-सारिणी को विविध रेखाचित्रों व प्रतिशत-वितरण की सारणी में विकसित किया जा सकता है।

विचित्र रूपों का मापन

'टिपिकल' रूपों के माध्यम से हम (I) या तो अत्यधिक प्रचलित मूल्यों को चुनते है या (II) सामग्री समुच्चय के विचित्र अंक को बताने के लिए **औसत** मूल्य की कल्पना करते है।

अत्यधिक प्रचलित मूल्य का तकनीकी नाम बहुलक है। तदनुसार सामग्री-समुच्चय में हम सर्वाधिक प्रचलित अभिलक्षण को खोजते है।

यदि सामग्री-समुच्चय को हमने आवृत्ति-वितरण में प्रस्तुत कर दिया है, तो खण्डित रूप में प्राप्त होती है। तब हम सामग्री-समुच्चय के निश्चयमानिक मूल्य (निश्चयात्मक मूल्य) को प्राप्त कर सकते है। उदाहरणार्थ, विगत सारिणी के अनुसार निश्चयात्मक वर्ग-मूल्य 50—59% है।

'औसत शब्द से हम भली-भाँति परिचित हैं, जिससे प्रतिशत का सम्बोध होता है। सामान्य औसत को ही हम माध्य के नाम से पुकारते हैं, जो सामग्री-समुच्चय का होता है। औसत की गणना की एक अन्य विधि भी है, जिसे माध्यिका कहा जाता है।

पिछले सन्दर्भ में माध्य की चर्चा की गई है। माध्य निकालना यद्यपि सरल कार्य है, किन्तु उसके सांख्यिकीय प्रयोगों का ज्ञान आवश्यक है, क्योंकि इसमें संकेतों का अधिक महत्व है, जिनको समझ लेने से विश्लेषण में सरलता होगी। वे संकेत इस प्रकार है—

(क) सांख्यिकी में बहुप्रचलित आकृति (figure) के लिए संकेत-चिन्ह $\times$ है।

(ख) ग्रीक के परम्परागत अक्षर सिगमा Σ से 'योग' को बताया जाता है।

(ग) किसी सामग्री-समुच्चय में अङ्कों की संख्या का बोध n से कराया जाता है।

इन संकेत-चिन्हों को स्थापित करने के पश्चात् हम माध्य की अधस्तन परिभाषा का पुनर्लेखन कर सकते हैं—'सामग्री समुच्चय में प्रत्येक अङ्क का योग तथा उस समुच्चय में उपलब्ध अङ्क से उसका भाग ही मध्य है।'

संकेतो में शब्दो को स्थानापन्न करते हुए कहा जा सकता है कि—

सामग्री-समुच्चय में सभी अङ्कों का योग $= \Sigma \times$ तथा

भागाक $= \div$ व

उस समुच्चय के अङ्को की संख्या $= n$

$$\text{अतएव mean} = \frac{\Sigma x}{n}$$

अब उदाहरण के लिए हम बघेलखंड की अर्थप्रक्रियात्मक सामग्री के अभिलक्षणों के x का आकलन करें। तदनुसार

$$\Sigma x = 1155$$

$$n = 46$$

$$x = \frac{\Sigma x}{n} = \frac{1155}{46} = 25\%$$

दूसरे प्रकार का औसत जिसकी चर्चा हमने पहले की है, वह माध्यिका है। यदि हम सामग्री समुचय को इस प्रकार प्रस्तुत करें कि अधिकतम मूल्य सूची के शीर्ष भाग में हो व शेष अङ्क उस श्रेणी में न्यूनतम मूल्य के क्रम में हों, तो

वह अङ्क जो सूची के मध्य भाग में पड़ता है, उसे सामग्री समुच्चय का माध्यिका कहा जाता है।

विचलन की माप

यह सही है कि विशेष औसत के नाम से सामग्री की व्याख्या की जाए, किन्तु तब भी एक समस्या बनी रहती है, क्योंकि उसे इस मूल्य के आधार पर नही बताया जा सकता। उदाहरण के लिए, अर्थक्रियात्मक सामग्री के औसत (माध्य) को 25% तो कहा जा सकता है, किन्तु ऐसे भी अनेक अभिलक्षण हैं, जहाँ कुल संख्या इससे भिन्न है। कुछ का औसत अधिक हो सकता है तथा कुछ का कम। तब हम औसत के इस विचलन को कैसे नापें।

मापन की सम्भवत एक पद्धति अधिकतम व न्यूनतम भिन्नता की व्याख्या हो सकती है और परास को न्यूनतम से अधिकतम माना जा सकता है। किन्तु इससे यह पता नही चलता कि औसत के समीप कितने अन्य तत्त्व है? ऐसी स्थिति में इस बात की आवश्यकता है कि हम अभिलक्षणो के विचलनो को नापने वाले विचलन मूल्यों को प्राप्त करने की किसी पद्धति का ज्ञान कर लें।

औसत को बताने के लिए गणितीय माध्य तथा माध्यिका दो प्रकार की पद्धतियो की हमने चर्चा की है। अतएव विचलन मूल्यो का निर्धारण भी इन्ही के आधार पर सम्भव है।

औसत को बताने के लिए गणितीय mean तथा माध्यिका नामक दो प्रकार की पद्धतियो की हमने चर्चा की है। अतएव विचलन–मूल्यो का निर्धारण भी इन्ही के आधार पर सम्भव है।

माध्य mean के आधार पर विचलन निकालना—सामग्री के पूर्ण समुच्चय में mean से विचलन की मात्रा को आकलन करने का एक सरल तरीका यह पता लगाने का है कि प्रत्येक एकल अभिलक्षण माध्य से कितना विचलित (परिवर्तित) होता है और फिर इन परिवर्तनो को जोड़ दिया जाता है। ये एकल परिवर्तन मूल संख्या के साथ सारणीबद्ध किए जा सकते हैं तथा उनके नीचे परिवर्तन का कुल योग दिया जा सकता है ' माध्य तथा प्रत्येक मूल्य के मध्य मिलने वाला अन्तर या तो धनात्मक होगा या ऋणात्मक। किन्तु हमारा लक्ष्य समूची सामग्री के विचलन से होने के कारण हम एकल परिवर्तनों के धनात्मक या ऋणात्मक पक्ष की उपेक्षा कर सकते है। अतएव पूर्ण विचलन का अर्थ है सामग्री के प्रत्येक अक के मध्य मिलने वाले भेदो का योग। इस प्रकार हम गणित के

$$\Sigma (X - \bar{X})$$

नियमों से जानते हैं कि $+ \times + = +$ होता है, तो $- \times - = +$ ही होना

है। अतएव यदि हम प्रत्येक अंक का गुणा करते जाएँ (अर्थात् उसका वर्ग मूल निकालते जाएँ), तो हमें सदैव धनात्मक अंक मिलेंगे; यथा

$$-6 \times -6 = +36 : +6 \times +6 = +36$$

इस प्रकार अपनी सामग्री के समुच्चय में विचलन को मानक बनाने के लिए हम एकल विचलन का वर्ग निकाल लेते है।

इन सबका योग ही पूर्ण विचलन का योग होगा— $\Sigma (X - X)^2$ अब यदि हम कुल योग में सामग्री—समुच्चय के अवलोकन की संख्या (n) की का भाग दे दें, तो फिर हम mean से माध्य मानक विचलन की गणना कर सकते हैं। अतएव

$$\text{प्रसरण} = \frac{\Sigma (X - X)^2}{n}$$

परिवर्त्य की गणना करते समय यह आवश्यक है कि सर्वप्रथम प्रति एकल विचलन को सारणीबद्ध कर लिया जाए व तभी उनका योग किया जाए व उप-युंक्त सूत्र से उन्हे नया मूल्य दिया जाए।

प्राय हमें माध्य वर्ग विचलन की आवश्यकता नही होती, अपितु हमें माध्य विचलन की ही आवश्यकता होती है। इस प्रकार यदि हम वर्गीकृत विचलन का वर्गमूल निकाल लें, तो हम मानक विचलन को प्राप्त कर सकते हैं। इस मानक विचलन का प्रदर्शन ग्रीक के हस्त अक्षर सिगमा σ से किया जाता है तथा कभी-कभी उस का बोध S से भी कराया जाता है। अतएव

$$\sigma = \sqrt{\frac{(X - X)^2}{n}}$$

माध्यिका से विचलन—ह्रासोन्मुख उत्तराधार क्रम से सामग्री-समुच्चय के मध्य बिन्दु में हमने माध्यिका की कल्पना की थी। अब यदि हम सूची को पुन: दो और खण्डो में विभक्त कर दें, तो हमें अनुभव होगा कि उसके चार समान भाग हो गए है व प्रत्येक भाग में 25% अंक है। इन नई रेखाओं चतुर्थक कहा जाता है, क्योंकि वे सूची को चार भागो में विभाजित कर देती है। सर्वोपरि स्थित रेखा अध्वीय चतुर्थक कही जाती है व निम्नस्थ रेखा निम्नस्थ चतुर्थक के नाम से जानी जाती है। स्पष्ट है कि इन दोनो रेखाओं के मध्य में 50% अभिलक्षण विद्यमान है। इस प्रकार उच्चतम व निम्नतम चतुर्थक के मूल्यो के अन्तर को आन्तर चतुर्थक परास (IQR) कहा जाता है।

उपर्युक्त विश्लेषण से यह स्पष्ट हो गया होगा कि अप्राचलि (Typical) तथा विचलन के माप किसी भी सामग्री-समुच्चय की पूर्ण व्यवस्था के लिए

आवश्यक होते हैं। इसी के आधार पर परिवर्तन हीतता—सूचनाक के लिए अधस्तन सूत्र का प्रयोन होता है—

परिवर्तनहीनता सूचनाक IQR × 100%

इस सूचाक को माध्य परिवर्तन—गुणाक कहते है तथा इसकी अभिव्यक्ति V अक्षर से की जाती है—

$$V = \frac{\text{मानक विलचन}}{\text{माध्य}} \times 100\% = \frac{Q}{\times} = 100\%$$

32.1.2. सामान्य जीवन में हम तुलना करने के आदी होते है। बोलचाल की भाषा मे भी तुलनाएँ होती हैं तथा शब्द भौगोलिक अध्ययनों मे इस प्रकार की तुलनाओं का अधिक अवसर रहता है।

इस प्रकार के अध्ययन में प्राय तीन प्रकार की तुलनाएँ की जाती है। सर्व प्रथम कुछ ऐसी तुलनाएँ होती है, जो विशुध रूप से वर्णनात्मक कही जा सकती है। शब्द भूगोलवेत्ता अब तक प्राय इसी प्रकार की तुलनाएँ करते आ रहे है।

दूसरी प्रकार को तुलना मे पूर्व वर्णित कुछ विशेषताओ की अनुमानपरक व्याख्या की जाती है। उदाहरण के लिए,यनि हम किसो भूखण्ड के बोला भेदो का अध्ययन कर रहे है, तो हमें यह व्याख्या करनी पडेगी कि किसी क्षेत्र के भाषिक अभिलक्षणो मे जो भिन्नता आई है, उसके क्या कारण हैं ? यह अध्ययन कुछ दुरूह प्रकृति का अवश्य है, क्योकि हमे उन सारे कारणो की परीक्षा करनी पड़ेगी, जिनमे भेदकता उत्पन्न हुई है। इस प्रकार के उदाहरणो में हम अधोलिखित बातों पर ध्यान दे सकते है—

(क) I Q (आन्तर चतुर्थक)
(ख) भौगोलिक विस्तार
(ग) सस्थानिक पृष्ठभूमि

इन तीनो कारणो में से प्रत्येक कारण को आश्रित चर के रूप में कल्पित किया जा सकता है, क्योकि किसी एक स्थान पर बोली भेद के मूल में अन्य कारण भी होते हैं।

इसके पश्चात् हमें इस बात की परीक्षा करनी पडेगी कि बोली भेद में ये आश्रित चर किस प्रकार सम्बद्ध रहे हैं तथा इस बात की परीक्षा प्रत्येक बोलीक्षेत्र के अभिलक्षणों के पराश्रित परिवर्त्य के साथ rating मे की जा सकती है।

इन तुलनाओ को कर लेने के पश्चात् हम यह सकेत करने म समर्थ हो सकते

है कि परिवर्त्य किस प्रकार परस्पर सम्बद्ध है और तब अनुमान के आधार पर विविध कारणो में अत्यन्त महत्वपूर्ण कारण को खोजा जा सकता है।

तीसरी प्रकार की तुलना प्रकृत्या व्याख्यामूलक है, जिसमे सर्वेक्षण से प्राप्त व ऐतिहासिक सामग्री की तुलना की जाती है।

इन तीनो ही प्रकार की तुलनाओं मे सहसम्बद्धता की अनेक पद्धतियो का प्रयोग होता है। इनमें सामग्री-समुच्चय का सहचर (Co voriance) व खडित या अखडित सामग्री के लिए सहसम्बन्ध-गुणाक का आकलन महत्वपूर्ण है। सामजिक विज्ञान की पुस्तकों से इस पर प्रामाणिक सामग्री जुटाई जा सकती है।

32.1.3. अब तक हमने देखा है कि तुलनाएँ या तो वर्णनात्मक हो सकती हैं या व्याख्यात्मक तथा यह भी स्पष्ट किया है कि इन तुलनाओ को सही ढँग से प्रस्तुत करने के लिए कौन सी पद्धति अपनाई जा सकती है।

चूँकि हमारे द्वारा की जाने वाली तुलनाएँ सारवत्ता को बताने वाली पद्धतियाँ भी अलग अलग हो सकती है।

इनमे विशुद्ध वर्णनात्मक तुलनाओ की परीक्षा भेदकता के मानक त्रुटि-आकलन से की जा सकती है तथा व्याख्यापरक तुलनाओ को विविध परीक्षणो के माध्यम से विश्वसनीय बनाया जाता है।

इस प्रकार सार्थकता की परीक्षा के लिए माध्य मानक त्रुटि, भिन्नता की मानक त्रुटि, व परीक्षण निकालना आवश्यक होता है।

32.2. समभापाश-रेखाओ के विश्लेषण की साख्यिकीय विधियाँ

32.2.1. समभाषाश-रेखाओ के नमूनो की व्याख्या एक सांख्यिकीय विधि है, क्योंकि किसी क्षेत्र के किसी भाग में फैले हुए मापिक तत्त्वो के मध्य आंशिक मेल ही हो सकता है। 23 वें अध्याय के अन्तर्गत यह उल्लेख है कि समभापाश-रेखाओ की एक महत्वपूर्ण सख्या के वितरण मे यथार्थ समानता व अनेक समभापाश-रेखाओ की समान दिगामिता (एक ही पथ का अनुसरण) की घटना को सघात' कहते है। इन समभापाश रेखाओं के सघातो से शब्द-भूगोल में 'सहसम्बन्ध-विधि' का आविष्कार हुआ है।

सम्प्रति शब्द-भूगोलवेत्ता सर्वेक्षित स्थानो की विशेषताओ की सूची को लेकर परिणामो को मिलाने के पश्चात् स्थानो को सहसम्बद्धता से जोडते हैं तथा इस प्रकार की जोडने वाली रेखा को 'समक्रम' या 'समवर्ग'कहते हैं। Lehmann का विचार है कि समवर्ग न केवल समभापाश-रेखाओं के प्रतिनिधि होते हैं, अपितु वे जनजीवन में प्रतिनिधित्व का भी सकेत कर देते हैं। तदनुसार समवर्ग सस्कृति

के क्षेत्र को परिमित या अंकित कर सकता है, जिससे बोली-क्षेत्र के नाम से सम्बोधित भाषा का समान प्रभाव देखने को मिलता है।[1]

समभाषांश-रेखाओं के संघात तथा अतिभाषिक (संस्थानात्मक) तत्त्वों का सह-सम्बन्ध बोली-क्षेत्र को निर्धारित करने में सहायक होता है। इस सहसम्बन्ध की परीक्षा इतर तत्त्वों के माध्यम से भी की जा सकती है।

किसी भाषा-समुदाय के क्षेत्र में समभाषांश-रेखाओं की परस्पर समावृत्ति यह दिखाती है कि आवागमन के भाषिक तथा प्राकृतिक अवरोध कभी पूरे नहीं होते। इस प्रकार की बाधाओं के फलस्वरूप समभाषांश-रेखाओं के क्षेत्र में प्रसार (विकास) की गति अवरुद्ध-सी हो जाती है।

उपर्युक्त तथ्य को ध्यान में रखते हुए यह आवश्यक है कि किसी भी सम-भाषांश-रेखा की व्याख्या तर्कसंगत कसौटियों की विस्तृत पृष्ठभूमि में ही होनी चाहिए। *समभाषांश-रेखाओं का एक संघात उसी प्रकार की प्रवृत्ति वाली अन्य* समभाषांश-रेखाओं की घटना का भी पूर्वानुमान करा सकता है। किन्तु अधि-काधिक सांख्यिकीय सम्भावनाओं वाले नमूनों के होते हुए भी पूर्ण विभाजकता की उपलब्धि प्राय सम्भव नहीं है। इसके दो कारण प्रतीत होते हैं—

(क) समभाषांश-रेखाओं के एक संघात की सम्भाव्य भिन्नता

(ख) समभाषांश-रेखाओं के द्वारा द्योतित तत्त्वों के चयन के निमित्त सुदृढ़ तकनीक का अभाव।

किन्हीं समभाषांश रेखाओं द्वारा अंकित सीमाएं चिरकाल तक बनी रह सकती है तथा उसी संघात में गिने जाने वाली सीमाएँ अल्पकालिक ही सकती हैं। अब तक मानचित्रावलियों में जो मानचित्र बनाए गए है, वे संघात की सम्भाव्य आन्तरिक संरचना का कोई संकेत नहीं देते और न ही वे भविष्य की दिशासूचक प्रवृत्तियों को बता सकते है, क्योंकि कुछ संघात प्रसार की दिशा में होते है तथा कुछ में तिरोहित होने का भाव होता है। यह एक संयोग ही है कि वे अन्वेषक को मिल जाते है।

यह एक दुर्भाग्य का विषय कहा जाएगा कि मानचित्रों के आधार पर खींची गई रेखा को प्राय पूर्ण विभाजक के रूप में स्वीकार कर लिया जाता है, जब कि यह अनुभव-सिद्ध है कि किसी भाषा समुदाय में अनुक्रमिक परिवर्तन ही घटित होते है। यह भी ध्यान रखना चाहिए कि क्षेत्रान्वेषक भाषा-समुदाय की बोलियों के कुछ नमूनों का ही संग्रह करता है। इस आधार पर अन्वेषक के द्वारा मानचित्र में विविध स्थानों पर खींची गई रेखाओं को केवल सम्भावनापरक ही मानना

चाहिए। व्यापक सामग्री और क्षेत्र से ही उसकी उपयुक्तता की परीक्षा हो सकती है।

तथापि विविध स्थानो के मध्य भौगोलिक वर्णन के लिए समानता की आपेक्षिक मात्रा को बताने के निमित्त समभापाश रेखाओ की विचारधारा एक उपयोगी निदान सिद्ध हुई है। सांख्यिकीय वैधता की तकनीकों के विकास के साथ अब उसकी उपयोगिता और भी बढ़ गई है।

समभापाश—रेखाओ के विविध परिणामो (संधान, सीमा, क्षेत्र) का विश्लेपण करने के लिए आज प्रमुखतया सर्वोलिखित विधियो का प्रयोग होता है—

(क) समभापाश—रेखाओ की तुलना और सहसम्बन्ध विधियाँ
(ख) भाषिक भिन्नता और मापन प्रतिमान

32.3. समभापाश-रेखाओं की तुलना और सहसम्बन्ध-विधियाँ

सर्वप्रथम Alva L Davis व Raven I McDavid ने एक लेख[2] में वागभिरचना के साथ ऐतिहासिक व सांस्कृतिक जटिलताओ का सहसम्बन्ध बताना चाहा था, किन्तु उसमें उन्होने किसी प्रकार की सांख्यिकीय दृष्टि नही दी, जिससे व्याख्या में सुस्पष्टता और मितव्ययिता और भी अधिक आ सकती थी। इसके अतिरिक्त Davis तथा McDavid ने वागभिरचना को गुणात्मक दृष्टि से देखा था, जब कि आज परिमाणात्मक दृष्टि पर लोगो की अधिक आस्था है। ऐसे क्षेत्र जहा समनुरूपता की उच्चतम मात्रा मिलती हो, वहा वागभिरचना को सांख्यिकी की सहायता के बिना गुणात्मक ढग से प्रस्तुत किया जा सकता है, किन्तु परिमाण की दृष्टि से बिखरी हुई सामग्री के लिए सांख्यिकीय पद्धतियाँ आवश्यक मानी जाती हैं।

David W. Reed तथा John L. Spicer ने अपने लेख[3] में दस सूचकों की अनुक्रियाओ के मध्य क्रमबद्धता व सम्बधता की समस्या के लिए सहसम्बन्ध की सांख्यिकीय पद्धतियों का प्रयोग किया था।

इसी प्रकार सहसम्बन्ध की विविध सांख्यिकीय पद्धतियों का प्रयोग अन्वेपकों ने अपनी सुविधा के अनुसार किया है। सांख्यिकीय पद्धतियो के लिए H. E. Garrett[4] तथा G. Herden[5] की पुस्तकें पठनीय है।

32.4. भाषिक भिन्नता और मापन-प्रतिमान

भाषिक वितरणों के विस्तृत क्षेत्र के लिए बनाए गए किसी भी मानचित्र को

परीक्षा से एक ओर अधिक भिन्नता वाले कुछ क्षेत्रों का दर्शन होता है तथा दूसरी ओर आपेक्षिक दृष्टि के समान क्षेत्र दृष्टिगोचर होते हैं। इनके अतिरिक्त कुछ ऐसे भी तत्त्व होते है, जो इन चरम सीमाओं के मध्य मिलते हैं। आज इनकी भिन्नता को बताने वाले अनेक परिमाणात्मक मापों का विकास हो गया है, जिससे अधिक वस्तुनिष्ठता के साथ विविध भौगोलिक क्षेत्रों की तुलना व प्रसंगवश भाषिक भिन्नता की न्यूनाधिक मात्रा को राजनैतिक, ऐतिहासिक. व अन्य अति-भाषिक कारणो से जोड़ने का प्रयास किया जाता है।

इस प्रकार की भिन्नता के मापने के लिए समय समय पर जो पद्धतियाँ सुझाई गई हैं, उनमें से कुछ का यहा नामोल्लेख मात्र है तथा उन पर विस्तृत चर्चा मनोविज्ञान के ग्रन्थों में मिलती है—

(क) एकभाषी-भारनिरपेक्षविधि

(ख) विदलीत व्यक्तित्व-विधि

(ग) याहच्छिक वक्ता-विधि

(घ) याहच्छिक वक्ता-श्रोताविधि

32.5. कारकीय विश्लेषण की पद्धति

बोलियों के मध्य समानता व असमानता की खोज के लिए मैंने एक भिन्न पद्धति का आश्रय लिया है,[6] जिसे सांख्यिकी में खण्डीय विश्लेषण कहा जाता है। उदाहरण के लिए, अवधी, बघेलखंडी, और छत्तीसगढ़ी की खण्ड-रूपिमों को लें। इसके विश्लेषण में तीनों ही बोलियों के पुरुषवाचक सर्वनामों (21) परसर्गों (12), क्रियार्थक संज्ञाओं (२), 'होना' क्रिया के विविध कालिक रूपों (65) की प्रतिचयनात्मक ढंग से सौ इकाइयाँ ली गई थीं तथा 'मीना' व 'मीडियन' बताने के लिए उनकी पृथक्-पृथक् तुलनात्मक सारणियाँ प्रस्तुत की गई थीं। कारक-सारणी से यह संकेत मिलता है कि रूपिमीय दृष्टि से अवधि, बघेलखंडी, तथा छत्तीसगढ़ी के 22 खण्ड परस्पर मिलते है। तदनुसार तीनों बोलियो में केवल 8% समानता है। इसके अतिरिक्त अवधी तथा बघेलखंडी में कुल समानता 12%, अवधी और छत्तीसगढ़ी में 3%, तथा बघेलखंडी और छत्तीसगढ़ी में 10% है। इन तीनो बोलियो ने अपने निजी रूपों का भी विकास या संचय किया है। जिसमें बघेलखंडी ने 32%, अवधी ने 19%, तथा छत्तीसगढ़ी ने 16% रूपों का विकास किया है। इसके अतिरिक्त अवधी और बघेलखंडी 20%, अवधी और छत्तीसगढ़ी 11%, तथा बघेलखंडी और छत्तीसगढ़ी 18%

सुबोधगम्य है। अधस्तन वृत्तचित्र से इनके पारस्परिक सम्बन्धों को दिखलाया गया है।
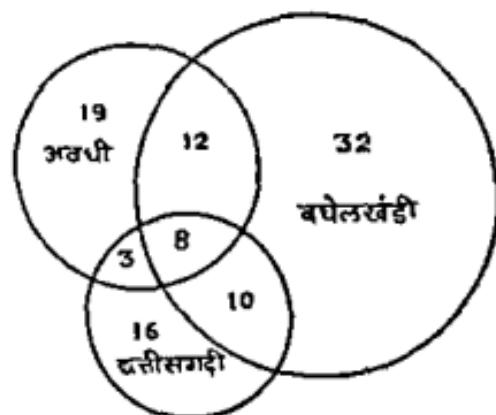
टिप्पण और सन्दर्भ

1. W. P. Lehmann, Historical Linguistics.
2. Alva L. Davis and Raven I McDavid, 'Northwestern Ohio : A transition area,' Language (1950) 26 : 264-73.
3. David W. Reed and John L. Spicer, 'Correlation methods of comparing idiolects in a transition area,' Languge (1952) 28 : 348-60.

4 H E Garret, Statistics in psychology and Education, Indian edition

5 G Herden, The advanced theory of language as choice Newyork 1966

6 Hira lal Shukla, A word geography of Baghelkhand, Vol I, Part II

33

प्ररूपीय शब्द-भूगोल

समभापाश रेखाओ के सघातो की सरचना के प्रति लोगों की इस समय अधिक रुचि है। यद्यपि अनेक बोलीविज्ञानी सघात को ही बोली-क्षेत्रो के पृथकाव का एक स्वत सिद्ध प्रमाण मानते है, किन्तु कुछ लोगो का तर्क है कि रूपो के ऐच्छिक चुनाव के आधार पर सघात को वैध नही कहा जा सकता।

वस्तुत समभापाश-रेखाओ के प्रतिनिधिस्वरूप नमूने के चयन जैसे कठिन कार्य के समाधान मे अब तक कोई प्रगति नही हुई है, चाहे वह प्राक्सरचनावादी शब्द भूगोल हो या सरचनावादी शब्द-भूगोल, तथापि Gillieron के पूर्व पुरातन पद्धति के भौगोलिक अध्ययनो में जो भयकर गतिरोध था, वह आधुनिक पद्धति की व्यापक सामग्री क चयन के साथ कुछ कम है। ऐसी स्थिति में समभापाश-रेखाओ के वर्गीकरण या मूल्याकन के लिए अधोलिखित विद्वानो द्वारा सुझाई गई पद्धतियो का महत्त्व विपयशोधक प्रतिनिधि नमूनो के प्रतिचयन की उपयुक्तता में है—

(क) Doroszewski की पद्धति
(ख) Pavle Ivic की पद्धति
(ग) William Lobav की पद्धति

Doroszewski की पद्धति

सर्वेक्षण के अन्तर्गत सम्मिलित किए गए क्षेत्र व प्रभावित जनसख्या के मापन तथा साख्यिकीय गणना की सम्भावना पर विविध पद्धतियाँ आधारित हैं, उनमें Doroszewski व उनकी पोलिश अध्ययन-शाखा ने परिमाणात्मक समभापाश रेखाओ के अध्ययन की एक पद्धति पर कार्य किया है। ये समभापाश रेखाएँ भाषिक घटना की आवृत्ति को बताते हैं, जो उसी भाषा-समुदाय में भिन्नता के

विषय होते हैं J T Wright के अनुसार पोलिश अध्ययन-शाखा सममापांश रेखाओ के वर्गीकरण में अधोलिखित तीन कसौटियों पर बल देती है।[1]

(अ) सघनता
(आ) दिशा
(इ) प्रभाव-सीमा
इनकी व्याख्या अग्रिम पद्धति में प्रस्तुत है।

Pavle Ivic की पद्धति

पोलिश अध्ययन शाखा से प्रभावित Pavle Ivic ने Structure and typology of dialect differences (Proceedings of the 9th International Congress of Linguistics, ed Horace G Lunt, The Hague, 1964, pp 115 29) नामक लेख भाषाविज्ञान के अतर्राष्ट्रीय महासभा के तत्वावधान में अगस्त 1972 में आयोजित नवम अधि-वेशन (कैम्ब्रिज) के विद्वज्जनो के समक्ष प्रस्तुत किया था। किसी भाषिक क्षेत्र में भिन्नताओ के अध्ययन के लिए सममापांश रेखाओ की प्रभूत प्रतिनिधिस्वरूप सख्या पर बल देते हुए उन्होने यह सकेत दिया था कि सभी भाषिक अभिलक्षण परिमाणात्मक होने के साथ नापे भी जा सकते हैं। उन्होने सममापांश रेखाओ के वर्गीकरण के लिए इन छह कसौटियो को सुझाया था—

(अ) विभेदक सघनता
(आ) सममापांश रेखाओ का अनुरेखीय वितरण
(इ) दिशा के अनुसार सममापांश रेखाओ का वितरण
(ई) क्षेत्रो के आकार का सांख्यिकीय सर्वेक्षण
(उ) सममापांश रेखाओ की बनावट
(ऊ) क्षेत्रो के मध्य सम्बद्धता विषयक निर्णायक स्थल

यहाँ उनका लेख भावानुवाद समीक्षा के साथ प्रस्तुत है। यह उल्लेखनीय है कि Pavle Ivic के पूर्व सममापांश रेखाओ की वर्गबद्धता के निमित्त केवल प्रथम, तृतीय व अंतिम कसौटियो पर ही विचार किया जा रहा है। Ivic ने पहली बार आकृति पर भी उतना ही बल दिया है।

विभेदक सघनता

मानचित्र में खीची गई निश्चित दीर्घता की सरल रेखा को काटने वाली सममापांश रेखाओं की गणना से 'विभेदक सघनता' का निर्णय किया जा सकता है। अर्थात् मानचित्र में आए हुए विविध स्थानो के मध्य खीची गई एक रेखा पर

जब प्रति इकाई दीर्घता के अनुसार सख्या का परीक्षण कर लिया जाता है तब प्रतिमील समभापाश रेखा सूचकाक के साख्यिकीय महत्व का ज्ञान उसी क्षेत्र में खीची गई अत्यधिक सख्यावाली रेखाओ के परिभाषा के अनुपात के साथ प्राप्त किया जा सकता है। इस प्रकार के माप नियमत. एक भाषा-क्षेत्र के विविध भागो में अनेक परिणाम प्रस्तुत करते हैं। अधिक स्पष्टता के लिए आगे यह भी सम्भव है कि भाषिक क्षेत्र को पुनः गणना के लिए समान चतुष्कोणो मे विभाजित किया जाए,[2] यथा प्रति समभापाश रेखा के अनुसार निवासियों के सूचकाको की भी गणना कर ली जाए। इस प्रकार उस रेखा पर सममापाश रेखाओ के प्रसार या समाहार के आधार पर एक निष्पक्ष सूत्र दिया जा सकता है।

समभापांश रेखाओं का अनुरेखीय वितरण

Pavle Ivic ने समभापांश रेखाओ के अनुरेखीय वितरण को दो चरम-सीमा के मध्य अवस्थित माना है—

(क) समभापाश रेखाओ के मध्य समान दूरी के साथ वितरण।

(ख) सम्पूर्ण समभापाश रेखाओ का एक संहात में समाहार।

यद्यपि ऐसे आदर्श उदाहरण कभी उपलब्ध नही होते तथापि प्रश्नो के वास्तविक हल कभी एक या कभी दूसरे के निकट रहा करते हैं।

इस प्रकार मानचित्र में एक सरल रेखा खीची जा सकती है वह उस रेखा को काटने वाली विविध समभापाश रेखाओ के बीच के स्थानो की आनुपातिक दूरी भी निकाली जा सकती है तथा आदर्शरूप में समतल वितरण मे उनके काटने की सम्भावना के स्थानो की आनुपातिक दूरी का आकलन कर समभापाश रेखाओ के अनुरेखीय वितरण को निश्चित किया जा सकता है, यथा

इस प्रकार भिन्न भिन्न दिशाओ मे खीची गई सरल रेखाओ की प्रतिनिधि सख्या के साथ गिने गए सूचकाको के अनुपात के द्वारा समूचे बोली-क्षेत्र के लिए *अनुरेखीय समभापाश रेखा के वितरण के सूचकाक को प्राप्त किया जा सकता* है। यह सूचकाक इस प्रश्न का उत्तर देने में सहायक होगा कि जिस क्षेत्र का सर्वेक्षण किया गया है, क्या वहाँ क्षेत्रीय बोलियाँ विद्यमान हैं ? जहाँ कही क्षेत्रीय बोलियाँ विद्यमान हैं, वहाँ उनकी सीमाओं की सुस्पष्टता व आतरिक एकता को बताने वाले सूचकाकों की गणना करनी सम्भव है।

दिशा के अनुसार समभाषांश रेखाओं का वितरण

समभाषांश रेखाओं की भिन्नता की आपेक्षिक सघनता

Ivic ने दिशा के अनुसार समभाषांश रेखाओं के वितरण को मानचित्रों में खींची जाने वाली सरल रेखाओं को काटने वाली समभाषांश रेखाओं से मिलाया है और उनकी गणना की है। इस अनुरेखीय क्रम से यह खोजा जा सकता है कि एक बोली-क्षेत्र में उत्तर-दक्षिण दिशा में भिन्नता का घनत्व वही है, जो पूर्व-पश्चिम-रेखा के घनत्व में नापा गया था तथा दूसरे बोली-क्षेत्रों में दोनों ही सूचकांक भिन्न हैं। (देखिए Ivic का रेखाचित्र 6 तथा 7)।

क्षेत्रों के आकार का सांख्यिकीय सर्वेक्षण

विशेष लक्षणों वाले क्षेत्रों के आकार का सांख्यिकीय सर्वेक्षण करके अनेक उपवर्गों को प्राप्त किया जा सकता है तथा उस सांख्यिकीय सर्वेक्षण के आधार पर आनुपातिक मूल्य व मानक विचलन के सूचकांकों का भी निर्णय किया जा सकता है।

समभाषांश रेखाओं की बनावट

मानचित्रों में समभाषांश रेखाओं की बनावट प्रायः पूर्ण सरल रेखा से लेकर अव्यवस्थित रेखा के रूप में मिलती है। इस प्रकार की रेखाओं की वक्रता को नापा जा सकता है तथा सांख्यिकी के प्रयोग से वक्रता की मात्रा के अनुसार समभाषांश रेखाओं को सारणीबद्ध किया जा सकता है एवं आनुपातिक वक्रता तथा प्रसार के सूचकांकों को भी प्राप्त किया जा सकता है। चूंकि समभाषांश रेखाओं की बनावट क्षेत्र से सहसम्बद्ध होती है, अतएव हम विकल्प रूप से क्षेत्रों की बनावट का भी अध्ययन कर सकते हैं।

क्षेत्रों के मध्य सबद्धता विषयक निर्णायक स्थल

J T Wright ने इसे एक शब्द म आयतन कहा है।[3] इसके अंतर्गत उन्होंने उन सभी विषयों को परिगणित किया है, जिनसे समभाषांश रेखाएँ व्यतिरेक उत्पन्न करती हैं। ये विषय दूसरे रूपों के द्वारा प्रस्तुत की गई समभाषांश रेखाओं को या तो परस्पर विभक्त करते हैं या मिलाते हैं। इनसे किसी क्षेत्र में समभाषांश-रेखाओं को पार करने वाले संचार के विविध मार्गों (यथा, हाईवे, रेलरोड) की संख्या भी बताई जाती है। असंख्य लोग अपने दैनन्दिन जीवन में

ऐसी समभापाश रेखाओ को पार करते हैं, तदनुसार ये समभापाश रेखाएँ अन्वे-षण की अगली सम्भावनाओं को जन्म देती रहती है।

Pavle Ivic के मत की समीक्षा

Ivic ने क्षेत्रो की विशेषताओ को बनाने वाली जिस प्रकार की सूचनाओ की सिफारिश की है, वह केवल द्विविध मानचित्रो मे भरी जा सकती है, जब कि आज हमारे पास जो कार्य है, उनके लिए त्रिविध मानचित्रो अर्थात् दैत्याकार मानचित्रो की आवश्यकता है। ऐसी स्थिति में शब्दभूगोल में जब तक रेखा चित्राकन का विकास नही होता, Ivic की पद्धति का सीमित प्रयोग है।

William Labov की पद्धति

यह पद्धति भापा की सीमाओ की सचार रेखा के आधार पर व्याख्या करती है। इसका महत्व इस मान्यता पर निर्भर करता है कि समान भापा सीमा को प्रदर्शित करने वाले अनेक इतर भाषिक तत्व (यथा, पहाड, नदियाँ, राजनीतिक सीमाएँ, आदि) भापा को सीधे प्रभावित नही करते, वे केवल वक्ताओ के आवागमन को ही प्रभावित कर सकते है।

Labov के अनुसार हम किस समभापाश रेखा की गति इस बात से आक सकते है कि वह सचार-रेखा के समानातर चलती है या बिलकुल सीधी जाती है। तदनुसार प्रति इकाई की दीर्घता के अनुसार हम सचार की प्रमुख रेखाओ की गणना कर सकते हैं, जो किसी भापा सीमा को प्रतिदिन पार करती हैं।

जहाँ पर समभापाश रेखाओ की सख्या का अनुपात उस क्षेत्र की किसी काल्पनिक रेखा से भी कम रहता है, उसे Labov अल्प शक्तिक समभापाश रेखा के रूप में वर्गबद्ध करते हैं। इसके अतिरिक्त ऐसी समभापाश रेखाएँ, जिनकी सचार रखा को प्रतिदिन पार किया जाता है, उन्हें वे 'उच्च शक्तिक समभापाश रेखा' कहते हैं।

1.1.11.4. यंत्रोत्पादित सहसंबंधो की सम्भावना

विद्युत से सामग्री को उपयोगी बनाने वाले उपकरण की उपलब्धि से आधुनिक शब्दभूगोल वेत्ता के लिए यह सम्भव है कि वे ढेर सारी सामग्री की गणना स्वचालित साधनों से करें। मानव की अपेक्षा मशीन वैसा काम सुव्यस्थित ढङ्ग से कर सकती है।

अतएव सम्प्रति धीरे धीरे शब्द भूगोल उस स्थिति में पहुँच रहा है, जिनमें

मानचित्रावली ही एक उपोत्पत्ति न होगी, अपितु सहसम्बन्ध भी एक उपोत्पत्ति होगा। Ashekenaric Jewry की Language and Culture Atlas में इस प्रकार के प्रयोग विकासावस्था में हैं।[4]

टिप्पण और सन्दर्भ

1. J. T. Wright, 'Language Varieties', Encyclopaedia of Linguistics, Information, and Confrol (eds A R Meetham and R A Hudson), Oxford, 1969, pp 243 51

2 उदाहरणार्थ, प्रति हज़ार वर्गमील में समभाषांश रेखाओं को देखने के लिए ऐसा किया जा सकता है। यदि भिन्नताओं के सूचकांकों की तुलना क्षेत्र के अनुपात में जनसंख्या के अनुपात से की जाए, तो बोलीगत भिन्नता के इन दो कारणों पर अधिक प्रकाश डाला जा सकता है।

3 J T. Wright, Ibid, p 248

4 Milka Ivic Trends in Linguistics, The Hague, para 147

34

संस्थानात्मक शब्द-भूगोल

34.1. शब्द भूगोलसम्बन्धी अध्ययनों ने बोलीविज्ञान को सम्पर्क भाषा तथा व्यक्तिबोली जैसी शब्दावली प्रदान कर के भाषिकेतर तथ्यों को प्रस्तुत किया है। सम्पर्क में आने वाली बोलियों के अध्ययन में व्यवहार तथा यातायात की प्रक्रिया आदि के आधार पर मनोभाषिकी (अध्याय 13, द्रष्टव्य) आदि विविध शाखाओं का विकास हुआ है तथा तात्विक भाषिकी ने व्यक्तिबोलियों के सम्बन्ध में नई दृष्टि दी है।

अमरीकी बोलीविज्ञानी यथा Kurath, McDavid, व Labov, आदि ने अन्वेषण के एक नए मार्ग को प्रशस्त किया है, जिसमें उन्होंने भूगोल की अपेक्षा सामाजिक स्तर में मिलने वाले विभेदों पर अधिक ध्यान दिया है।

बोली एकता व उसके मापन के रूप में जिन बोधगम्यता परीक्षणों का आविष्कार हुआ है, वे मातृभाषियों की बोधगम्यता सामर्थ्य को अधिकांशत कूट-विवचन के प्रशिक्षण पर निर्भर करते हैं तथा शब्द प्रक्रियात्मक समानता तक ही सीमित है। इनमें भाषिक व्यवस्थाओं के मध्य संरचनात्मक समानताओं की खोज का प्रयास नहीं होता, तथापि बोली अध्ययन की दृष्टि से प्रेरित ये परीक्षण अपनी सीमित उपयोगिता आज भी बनाए हुए है।

बोलियों के मध्य समानताओं और असमानताओं की प्राप्ति के लिए कुछ भाषाविज्ञानियों का मातृभाषी प्रतिमान यद्यपि भ्रमास्पद है, तथापि उससे भाषाओं के सम्बन्ध में मिलने वाली अतिरंजित दृष्टि का बोध हो जाता है।

Weinreich जैसे भाषाविज्ञानी तो इस मत के है कि यदि बोली अध्ययनों में भाषिकेतर निष्कर्षों का उपयोग नहीं होता, तो वे अपूर्ण ही नहीं, असम्भव है। उन्हीं के अनुसार—'भाषा-क्षेत्र की विचारधारा ने व्यावहारिक दृष्टि से अब इस बात को समाप्त कर दिया है कि अनेकानेक भौगोलिक कार्यों में एकमात्र

बोली ही विशेष रुचि का विषय है।'[1] परस्पर बोधगम्यता का परीक्षण, समाजभाषिकी, तथा सांख्यिकीय सहसम्बन्ध की पद्धतियाँ हमें विभिन्न भाषाओं की रचना के प्रति निरन्तर अन्तर्प्रेरणा प्रदान करती हैं।

यद्यपि संस्थानिक (अतिभाषिक) कसौटियो कसौटियो का प्रयोग भाषिक कसौटियों की तुलना में अधिक व्याख्यापूर्ण नही कहा जा सकता, तथापि बोलियो के अध्ययन में सर्वथा नवीन ये अतिभाषिक विश्लेषण भाषाविज्ञान की व्यापक दृष्टि के वाचक हैं।

34.2. संस्कृति के प्रति लोगो की रुचि के कारण भाषा के सम्बन्ध में नई विचारधाराओ का जन्म हुआ है तथा सम्प्रति यह स्वीकार किया जाता है कि मानवमन को समझने के लिए अब तक प्रयुक्त सभी साधनो में शब्द-भूगोल सर्वोत्तम उपकरण है, जिसे विस्मृत कर नृतत्त्वशास्त्र, समाजशास्त्र, मनोविज्ञान, राजनीतिशास्त्र, आदि विषयों की कोई उपयोगिता नही है। समाजविज्ञानो में भाषाविज्ञान ही एक ऐसा विज्ञान है, जिसने सर्वाधिक प्रगति की है तथा सही मानो में 'विज्ञान' पद का अधिकारी भी यही है।

दो दशक पूर्व Marcel Mauss ने लिखा था—'Sociology would Certainly be much more advanced if it had proceeded everywhere by imitating liguistics.' यही मत नृतत्वशास्त्र व मनोविज्ञान के सम्बन्ध मे भी व्यक्त किया जा सकता है। इन विषयो के मध्य मिलने वाले सादृश्य के कारण इनका पारस्परिक सहयोग अनिवार्यरूप से प्रस्तुत किया जाना चाहिए। इस प्रकार

(क) शब्द-भूगोलवेत्ता तथा समाजशास्त्री व नृतत्व शास्त्री दोनों ही समुदाय की शब्दावली को जुटाने का प्रयास करते है। शब्दो का अर्थ वक्ताओ के सांस्कृतिक वातावरण पर निर्भर करता है, अतएव भाषाविज्ञानी शब्दो का सही अर्थ तभी प्राप्त कर सकता है, जब वह संस्कृति के अतिभाषिक तत्त्वो का संकेत दे। संस्कृतिगत कुछ जटिलताओ को समझने के लिए उसे जाति विज्ञानी की शरण मे जाना पडता है। इस प्रकार शब्दावली का सावधानी के साथ संग्रह का कार्य शब्द-भूगोलवेत्ता व जातिविज्ञानी के सहयोग से ही हो सकता है।

(ख) किसी भाषा के शब्द उस संस्कृति के दर्पण होते है और दर्पण में पडने वाली परतो को स्वच्छ करने में जितनी ही अधिक सावधानी बरती जाएगी, प्रतिबिम्ब उतने ही होंगे।

(ग) शब्द-भूगोलवेत्ता समाजशास्त्रियो के समान शब्दो की बहुविध व्युत्पत्तियाँ प्रस्तुत करता है, जिससे वह रिश्ते-नाते की शब्दावली की सम्बद्धता को बता

सकें। सामान्यतया व्युत्पत्ति के कार्य में समाजशास्त्री की अपेक्षा शब्द-भूगोलवेत्ता अधिक वैज्ञानिक निष्कर्ष दे सकता है। इस अर्थ में समाजशास्त्री भाषाविज्ञान का मुखापेक्षी होता है।

(घ) समाजशास्त्री भी भाषाविज्ञानी को प्रचलित व अप्रचलित व्यवहारों का ज्ञान प्राप्त कराता है, जिसमे वह विविध प्रथाओ व विधि-निषेधों की जानकारी प्राप्त कर भाषा की व्यावहारिक व्याख्या करने में समर्थ होता है। समाजशास्त्री की सहायता के बिना भाषाविज्ञान उनसे अवगत न हो पाता। इस प्रकार आज भाषाविज्ञानी की रुचि भाषा (la langue) में ही न होकर अतिभाषा (la Parole) में भी है।

(ङ) भाषाविज्ञान शब्दावली देकर समाजशास्त्रियो की सहायता 'लुप्तप्राय पारिवारिक सम्बन्धो' की खोज में करता है। छत्तीसगढी में प्रयुक्त 'डेढ सास,' 'डेढ ससुर' 'डेढ साला' आदि शब्द कोसली की अन्य बोलियों में प्रयुक्त नही होते। इस आधार पर इस बोली के वक्ताओ मे प्रचलित एक नए प्रकार के पारिवारिक सम्बन्ध का ज्ञान होता है।

(च) किसी भाषा के भौगोलिक अध्ययन में समाजशास्त्री के समान भाषाविज्ञानी भी सूचक, समुदाय, व सामग्री, आदि के सम्बन्ध में विस्तृत जानकारी प्राप्त करता है।

उपर्युक्त तुलनाओ से यह निष्कर्ष निकलता है कि इन मार्गों पर समझौता होते हुए भी भाषाविज्ञानी व समाजशास्त्री के अलग-अलग पथ है। सच तो यह है कि वे दोनो अवकाश के क्षणो में थोड़ा रुक कर एक-दूसरे के परिणामो का आदान-प्रदान कर लेते हैं, किन्तु उनके समन्वय का प्रयास नही करते।

आवश्यकता है कि भाषाविज्ञानी ही भारत मे समाजभाषिकी, जातिभाषिकी, नृतत्वभाषिकी, तत्त्वभाषिकी, व मनोभाषिकी नामक शाखाओ के सम्वर्धन का कार्य करें, क्योकि इस कार्य के लिए भाषाविज्ञानी समाजशास्त्र व मनोविज्ञान का प्रचुर ज्ञान सहज ही प्राप्त कर सकता है, जब कि समाजशास्त्री या मनोविज्ञानी को भाषिक तकनीको के अवधारण में अत्यधिक कठिनाई हो सकती है।

अब ऐसा समय नही रहा कि भाषाविज्ञानी व इतर समाजविज्ञानी यदा-कदा अपनी समस्याओ पर विचार कर लिया करें, अपितु समय आ गया है कि इन शाखाओ की स्थापना पृथक् विषयो के रूप में हो। अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान की प्रगति से ही भारत में भाषाविज्ञान की प्रगति सम्भव है।

34.3. यहाँ उपर्युक्त शाखाओ का विस्तृत विवरण अनभिप्रेत है, क्योकि लेखक की 'सस्थानात्मक भाषाविज्ञान' पुस्तक में उनकी विस्तृत विवेचना है तथा

लेखक द्वारा सम्पादित Psycholingua नामक शोधपत्रिका में एतद्विषयक लेखों का ही प्रकाशन होना है। यहाँ समाजशास्त्र के परिप्रेक्ष्य में उच्चारणगत क्षेत्रीय अन्तरों को प्रस्तुत किया गया है।

34 4. उच्चरणगत क्षेत्रीय और सामाजिक भिन्नता

शब्द-भूगोल भाषिकी की एक व्यावहारिक विधा है, अतएव मानचित्रावली के रूप में उपलब्ध उसके महोत्पादन की व्याख्या एकमात्र भाषिक व भौगोलिक कसौटियों पर नहीं की जाती, अपितु इतिहास, समाजशास्त्र, आदि की दृष्टि से उसके परिणामों की विवेचना की जाती है। यहाँ उच्चारणगत क्षेत्रीय और सामाजिक भिन्नता पर विचार किया गया है।

बघेलखड की बघेलखडी की भिन्नताओं की जब हम तुलना करते हैं तो प्रतीत होता है कि समभाषांशों की समवेत भिन्नताएँ व व्याकरणिक भिन्नताएँ क्षेत्रीय विभिन्नताओं की वाचक हैं, जब कि उच्चारण की भिन्नताएँ सामाजिक भेद प्रभेद को बताती हैं।

Hans Kurath व Ravon I Mc David ने इससे भिन्न मत व्यक्त किया था। Raven I Mc Devid के अनुसार "अमरीकी अंग्रेजी की विभिन्नताओं की जब हम तुलना करते है तो हम प्राय ऐसा अनुमान कर लेते है कि व्याकरण की भिन्नताएँ सामाजिक विभिन्ताओं को प्रतिबिंबित करती है तथा उच्चारण क्षेत्रीय भिन्नताओं को लक्षित करता है (Some Social differences in pronunciaton, Language Learning 1952-53)।" बघेलखंड क्षेत्रीय और सामाजिक भिन्नताओं पर उपर्युक्त मत लागू नहीं होता, जैसा कि इस खड के भाग 1 में सुस्पष्ट किया गया है।

Hans Kurath ने उच्चारण की तीन भिन्नताओं पर बल दिया है—

(क) अलग-अलग ध्वनिमों के उच्चारण में भिन्नता

(ख) अलग अलग ध्वनिमों की धटना में भिन्नता, तथा

(ग) ध्वनिमों की सूची में भिन्नता।

बघेलखड मे उच्चारणगत क्षेत्रीय और सामाजिक भिन्नताओं को इस प्रकार संक्षिप्त किया जा सकता है—

(1) बघेलखड म उच्चारणगत कुछ अतर क्षेत्रीय कहे जा सकते है। सिंगरौली क्षेत्र म [ऱ्] का [न्] में परिवर्तन विशुद्ध क्षेत्रीय है। अन्य क्षेत्रों में या तो ऐसा उच्चारण नहीं मिलता है या यदि मिलता है तो अत्यल्प।

(2) कुछ उच्चारण यहाँ के सभी स्थानों में प्रतिष्ठा को खो चुके है। 'पूस्'

स्थान पर 'पूस्' का ही अधिक प्रयोग होता है। उसी प्रकार 'असुडा' की तुलना में 'असाढ़' अधिक प्रतिष्ठित है।

(3) कुछ उच्चारण प्रतिष्ठा तो नही रखते, किंतु कहीं-कहीं सुनने में आते है। उदाहरण के लिए, 'कहाँ' के लिए 'कङ्घा' का प्रयोग सतना-अमरपाटन क्षेत्र में होता तो है, किंतु उच्चवर्ग के लोग उस प्रयोग को अशिष्ट मानते है।

(4) कुछ उच्चारण प्रतिष्ठा तो नही रखते, किंतु कहीं-कहीं सुनने में आते हैं। यथा, 'एक्' के लिए बरौंधा क्षेत्र में 'याक्' तथा मेकल-क्षेत्र में 'यक्'।

(5) कुछ उच्चारण एक स्थान पर प्रतिष्ठा को खो बैठते हैं, किन्तु दूसरे दूसरे स्थान में स्वीकार्य होते है। उदाहरणार्थ, 'माँचा' शब्दरूप का प्रयोग उत्तर बघेलखड म नही होता, क्योंकि वहाँ इसका व्यवहार अशिक्षित गोड करते हैं, किंतु दक्षिण बघेलखड में यह प्रचलित है।

(6) कुछ शब्दो के लिए एक क्षेत्र में कोई एक उच्चारण प्रतिष्ठा रख सकता है, तो दूसरे क्षेत्र में शब्द का दूसरा उच्चारण प्रतिष्ठामूलक बन सकता है। उदाहरण के लिए, सतना-अमरपाटन क्षेत्र में 'कुमार,' के लिए 'कुँआर् की प्रतिष्ठा है तो नागौद-क्षेत्र में 'क्वाँर्' की। ऐसे क्षेत्र जहाँ दोनो ही प्रकार के उच्चारण मिलते हैं, वे विविध सामाजिक संपर्कों से संबद्ध होते है।

(7) कभी-कभी किसी एक क्षेत्र में कोई उच्चार सामाजिक प्रतिष्ठा रख सकता है, किन्तु अन्य क्षेत्रो मे स्वीकृतिपरक उच्चारणो मे से एक हो सकता है। उदाहरणार्थ, सतना अमरपाटन क्षेत्र में 'टेंसुमा' के साथ 'चसुमा' उच्चारण भी प्रचलित है।

(8) कुछ उच्चारण सीमित क्षेत्र में ही प्रतिष्ठा रखते है, जहाँ वे मिलते है। 'खरिहान्' का 'खनिहार' उच्चारण केवल ब्योहारी क्षेत्र में ही प्रतिष्ठित है। अन्य स्थानो में ऐसा प्रयोग नही मिलता।

(9) कुछ उच्चारण चूँकि नगर की नई पीढी तथा सुशिक्षित लोगो के द्वारा किए जाते हैं, अतएव सदैव प्रतिष्ठामूलक होते है। 'माप्टर्' के लिए 'महट्टर्' एक क्षेत्र में प्रतिष्ठा रखता है, जब कि अन्यत्र 'माप्टर्' का ही प्रयोग होता है।

(10) कभी-कभी किसी शब्द के उच्चारण में अनेक संबद्ध सास्कृतिक, इतिहासिक, राजनैतिक तथ्यो का जाल सा मिलता है। मेकल-क्षेत्र के अनेक उच्चारण इस तथ्य को उद्घाटित करते है।

(11) कुछ उच्चारण किसी वस्तु के प्रति लोगो की अज्ञानता के वाचक हैं। 'यमले' (एम० एल० ए०) के लिए 'इमली' या 'एले' उच्चारण इसी प्रकार के है।

उच्चारण में क्षेत्रीय और सामाजिक भिन्नता की उपर्युक्त सीमित चर्चा से यह संकेत मिलता है कि यह समस्या बहुत जटिल है तथा इसको सुलझाने के लिए यहाँ की सामाजिक रचना, व्यापारिक केंद्रों, शिक्षा-व्यवस्था, व जातिप्रथा, आदि की पूर्ण जानकारी आवश्यक है। प्रथम खंड के द्वितीय भाग व द्वितीय खंड में इस प्रकार की सामग्री का विश्लेषण है।

उल्लिखित उच्चारणगत भिन्नताएँ या तो सामाजिक घटक से इतरेतर संबद्ध हैं या फिर इनका संबंध भौगोलिक क्षेत्र से है। सामाजिक भिन्नताओं के मूल में अनेक कारण निहित है। इनमें प्रथम कारण अवस्थागत है। यहाँ कुछ ऐसे भी उच्चारण है जो कि लुप्त होने की दिशा में है तथा कुछ ऐसे भी नवप्रवर्तन हैं, जो स्वीकार्य होने की स्थिति में हैं। भाषाविकास का यह परिणाम भाषिक प्रवृत्तियों के किसी भी क्षण परिवर्तन उपस्थित कर देता है।

बोली भिन्नता का सर्वाधिक सामाजिक कारण शिक्षा है। बघेलखंड की अधिकतम हरिजन व आदिवासी जनता अशिक्षित है, अतएव नवप्रवर्तनों को यथातथ्य ग्रहण करने की क्षमता उसमें अपेक्षाकृत कम है। इसके अतिरिक्त जाति, यातायात, आर्थिक, आदि कारणों से बघेलखंड में जातीय बोलियाँ प्रचलित हैं।

टिप्पण और सन्दर्भ

1 U Weinreich Languages in Contact, Introduction

अष्टम अधिकरण

शब्द-भूगोल की व्यावहारिकता

शब्द-भूगोल भाषाविज्ञान को विविध विषयो से सम्बद्ध कर समाज व राष्ट्र की अनेक समस्याओ के निराकरण के लिए महत्त्वपूर्ण दृष्टि प्रदान करता है। अतएव हम शब्द भूगोल के प्रत्येक नूतन व मौलिक कार्य का स्वागत करते है।

इसने भाषाविज्ञान को संकुचित सीमा से हटा कर उस स्थान पर खड़ा कर दिया है, जहाँ बहुविषयी मार्ग परस्पर मिल कर समाजविज्ञानी के लिए नई दिशा का बोध कराते हैं यहाँ शब्द-भूगोल की व्यावहारिकता पर कुछ स्फुट विचार प्रस्तुत है—

(1) भारोपीय भाषाओ की स्थिति को स्पष्ट करने में शब्द-भूगोल ने हमारी बहुत सहायता की है, तथा समभाषाश रेखाओ के आधार पर विविध भारोपीय भाषाओ के सम्बन्ध मे वैज्ञानिक दृष्टि का विकास हुआ है।

(2) भाषा के सम्बन्ध में जो विस्तृत विवेचन ऐतिहासिक व वर्णनात्मक भाषाविज्ञान से छूट गया है, उसे शब्द-भूगोल पूरा करता है।

(3) मानचित्रावली प्रचलित बोली रूपो व प्राचीन इतिहास की सूचना के लिए महत्त्वपूर्ण स्रोत है।

(4) मानचित्रावली की सामग्री ऐतिहासिक समस्याओ के निदान के लिए उपयोगी है।

(5) शब्द-भूगोल पूर्ववर्ती सास्कृतिक सम्बन्धो को समझने में हमारी सहायता करता है। शब्दो के वितरण के आधार पर हम विभिन्न प्रकार की मान्यताओ को स्थापित करने में समर्थ होते है।

(6) बस्ती-बसने के इतिहास के अध्ययन में शब्द मानचित्रावली सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण जानकारी देती है।

(7) शब्द-भूगोल पर आधारित सममापाश रेखाएँ हमारी जनसंख्या के प्रयोगो के एक अत्यधिक अनिवार्य अंश पर प्रकाश डालती है।

(8) शब्द-मानचित्रावली के माध्यम से विद्यार्थी या सामान्य जन पहली बार अपने कुटुम्ब, पडोसी, सामाजिक नेता, तथा इतर क्षेत्रो के वक्तताओं को सीधे समझने में समर्थ हो सकेंगे। इससे लोगों में पारस्परिक समझ का विकास होगा।

(9) विभिन्न भाषाओं की बोलियों पर किए गए इस प्रकार के अध्ययन से बोली-समुदायो के सम्बन्ध में भाषाविज्ञानियो का अच्छा ज्ञान हो सकेगा और उनके भाषिक विवरण भी व्यावहारिक होंगे। तब उन्हें बोलियो के नमूनों को प्रस्तुत करने में Grierson की शरण नही लेनी पड़ेगी।

(10) लोग यह समझ सकेंगे कि भाषा विविध प्रवृत्तियो की एक व्यवस्था है, जो भाषिकेतर बातों पर अधिक निर्भर करती है। इस प्रकार की जागरूकता व वस्तुनिष्ठता से भाषाओ के सम्बन्ध में उनके विचार प्रभावोत्पादक बन सकेंगे।

(11) क्षेत्रीय प्रयोगो के सम्बन्ध में प्राप्त सूचनाओ को जब हम देखते हैं, तो ऐसा अनुभव होता है कि सम्भवत सर्वाधिक आवश्यक एव अकेला तथ्य यही है कि क्षेत्रीय बोलियो का हमारे सामने एक चित्र उपस्थित हो जाता है। अब तक लोगो की ऐसी एव भ्रान्त धारणा थी कि बघेलखडी अवधी की बोली है। मैंने बघेलखड-क्षेत्र की जिस सामग्री को प्रस्तुत किया है, उससे यह निश्चित होता है कि बघेलखंडी कोसली की बोलियो का मूलाधार रही होगी।

(12) अपने क्षेत्र की बोली की प्रामाणिकता को समझ कर हम दूसरे क्षेत्रों की बोलियों को प्रामाणिक मानने के लिए उद्यत होते हैं। वह समय बीत गया, जब हिन्दी के व्याकरण भ्रातिपूर्ण कथनो को गम्भीरता से लेते थे।

(13) शब्द-भूगोल का एक अन्य योगदान यह है कि आज हम भाषा के विविध रूपों के प्रति सावधान हो गए हैं और भाषा का बहु-आयामी विश्लेषण प्रस्तुत करने लगे है।

(14) वक्ताओ की बोलियो को समझने व उनके उच्चारण को सीखने में मानचित्रावली हमारी सहायता करती है, जिससे मूलनिवासियो–जैसा उच्चारण कर हम उनके प्रीतिभाजन बन सकते हैं।

(15) मानचित्रावली की सामग्री को धीरे-धीरे हिन्दी (या सम्बन्ध भाषा) के भावी उच्चारण-कोशो में सम्मिलित किया जा सकता है।

(16) मानचित्रावलीय सर्वेक्षण कहावत, मुहावरा, व रोजमर्रा को विषय बना कर किया जा सकता है। इसके आधार पर यह कल्पना सहज ही की जा सकती है कि समान भाववाली उक्तियाँ के विविध शब्द-समय (रोजमर्रा, आदि) भारतीय संस्कृति के मूलतत्त्वों की अभिव्यंजक हैं और भेदक विचार वाली लोकोक्तियाँ या मुहावरे क्षेत्रीय संस्कृतियों के वाचक हैं। इसके आधार पर हमें भारतीय संस्कृति के एकात्मक व अनेकात्मक स्वरूप का दर्शन होगा।

(17) पाठ्यग्रन्थ, अभ्यासपुस्तिकाएँ, व बालोपयोगी सामग्री को तैयार वाले लोगों के लिए मानचित्रावली की सूचना सहायक हो सकती है। इसमें कोई तुक नहीं है कि यदि कोसली मातृभाषी 'पैर' के स्थान पर 'गोड़' शब्द का प्रयोग करता है, तो उसे 'पैर' बोलना ही सिखाया जाए। हिन्दी का विकास क्षेत्रीय बोलियों के सम्वर्धन में है, न कि पश्चिमी हिन्दी को इतर मातृभाषियों पर बलात् थोपने में। व्यावहारिकता की दृष्टि से हम यह जानते हैं कि भाषा का आदर्शीकरण कदापि सम्भव नहीं है, तथापि यथार्थ से आँख बन्द कर हम हिन्दी के शुद्धीकरण व आदर्शीकरण के पीछे पड़े हैं व शासन की अधिकांश योजनाओं को लेकर अथवा उल्लू सीधा करना चाहते हैं। मैं नहीं समझता कि कोई व्यक्ति भारत के लिए किसी एक समुच्चय को लागू कर सकेगा। वह चाहे भाषाविज्ञान-विषयक हो किसी अन्य विषय से सम्बद्ध हो। बढ़ते हुए आदर्शीकरण के प्रभाव से कुछ क्षेत्रीय शब्द व व्याकरणिकक्ष भले ही हो जाएँ-किन्तु उच्चारणगत क्षेत्रीय भिन्नता को कोई समाप्त नहीं कर सकता।

(18) मेरा विश्वास है कि भारत की प्रचलित भाषाओं की यदि क्षेत्रीय मानचित्रावलियाँ तैयार कर ली जाएँ, तो पाठशालाओं व महाविद्यालयों में हिन्दी-शिक्षण के प्रति एक व्यापक व यथार्थपूर्ण दृष्टिकोण बनेगा, तथा क्षेत्रानुसार तुलनाएँ व मानकों के आधार पर हिन्दी का त्वरित विकास हो सकेगा।

(19) प्रजातंत्रीय व्यवस्था में सामान्य बातों पर जनता की आवाज सुनी जाती है, किन्तु भाषा के आदर्शीकरण के सम्बन्ध में कुछ गिने-चुने विद्वानों के विचारों का ही स्वागत किया जाता है। मानचित्रावलियाँ लोकमत को प्रस्तुत करती हैं, अतएव उनके बन जाने से लोगों की भाषाविषयक निरंकुशता में कमी आएगी।

(20) इस प्रकार बोलियों की ध्वनिप्रक्रिया का विकास, विशेष अभिलक्षण के वितरण में परिवर्तन, अवशिष्ट क्षेत्र की विद्यमानता, सांस्कृतिक दृष्टि से

पृथक् क्षेत्र का सीमांकन, सास्कृतिक तत्त्वों का विकास, आदि के समझने के लिए शब्द भूगोल सहायक है।

हम यह स्वीकार करते है कि शब्द-मानचित्रावलियो में जो कुछ इकट्ठा किया जा रहा है या भविष्य में एकत्र किया जाएगा, वह उपयोगी सामग्री है -

अग्रिम दो अध्यायो में 'बघेलखड के शब्द भूगोल' के लक्ष्य व उपयोगिता पर विचार है।

35. शब्द भूगोल का लक्ष्य

36. शब्द भूगोल—अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान

35

शब्द-भूगोल का लक्ष्य

'बघेलखड के शब्द भूगोल' को प्रस्तुत कर मुझे विशेष सन्तोष है, क्योकि यह कार्य उस समय सम्पादित हुआ है, जब कि इस क्षेत्र के अन्य विद्वान् भी इसी प्रकार के अध्ययन मे सलग्न है, जिससे अन्ततोगत्वा भारत की समस्त बोलियो की मानचित्रावलियाँ बन सकेंगी। इसके अतिरिक्त यह मध्य प्रदेश के अन्तर्गत देश की सास्कृतिक विरासत व परम्पराओं के प्रति गहन रुचि का विषय होगा, तथा अन्य अध्ययनो से भी इसका निकट का सम्बन्ध होगा, जिनमें नृतत्व शास्त्र, कोशकला, लोकसाहित्य, व भौतिक सस्कृति प्रमुख हैं, जिन पर आज रविशकर विश्वविद्यालय एव अन्य विश्वविद्यालयो में शोधकार्य चल रहे है। इस प्रकार शब्द-भूगोल का कार्य यह कार्य प्रत्यक्ष या परोक्षरूप से ज्ञान के विस्तृत क्षेत्र से सम्बद्ध है।

यह भी सम्भव है कि मेरे कार्य के परिणामो को प्रकाश में आने में मुद्रण की असुविधा के कारण अनेक वर्ष व्यतीत हो जाएँ, अतएव प्रस्तुत ग्रथ में उनका यथास्थल सकेत कर दिया गया है, क्योंकि चार खण्डो में प्रकाश्य उस सामग्री का प्रकाशन मुझे कठिन कार्य प्रतीत हो रहा है, कही वेंकर के कार्य के समान मेरे भी कार्य की 'गति' न हो।

पिछले प्रकरणो में शब्दभूगोल के सामान्य सिद्धात व इतिहास को प्रस्तुत करते समय यह दृष्टि रही है कि पूर्ववर्ती कार्यों की कमियो को समझ कर प्रस्तुत प्रबध म उनसे बचा जाए तथा शब्द भूगोल की व्यापक पृष्ठभूमि में बघेलखड का अध्ययन किया जाए। इस प्रकार बघेलखड को प्रयोग क्षेत्र बना कर उस पर शब्द भूगोल के सिद्धांतों को घटित करना इस प्रबध का प्रमुख उद्देश्य रहा है।

इस कार्य के आरंभ से लेकर इति तक मुझे बहुविध भाषिक व भाषेतर समस्याओ का सामना करना पड़ा है। समस्याओ से बच कर मार्ग निकालने की

अपेक्षा पूर्वाग्रहों से बच कर वैज्ञानिक ढग से उनसे निपटने का यथाशक्ति प्रयास किया गया है और इसीलिए प्रबध का आकार बहुत बढ़ गया है, जिसकी प्रारभ में मैंने कभी कल्पना भी न की थी।

भाषिक व भाषिकेतर तत्त्वो में प्रगाढ़ सबध रहता है तथा यह ध्यातव्य है है कि बघेलखड की उपबोलियाँ भौगोलिक भिन्नता से ही भेदक नही है, अपितु इसलिए भी भेदक है कि प्रत्येक उपबोली, वर्ग किसी विशिष्ट सस्कृति का प्रतिनिधित्व करता है। सामान्य रीति से इस प्रकार की समस्याओ का निराकरण इतिहासकार तथा समाजशास्त्रियो व नृतत्त्वशास्त्रियों के द्वारा किया जाता है, किंतु बघेलखड का न तो अभी कोई पृथक इतिहास लिखा गया है और न ही वहाँ की सस्कृति पर कोई ग्रथ सामने आया है। ऐसी स्थिति में बघेलखड के इतिहास व सस्कृति को इस प्रबध में पहली बार प्रस्तुत किया गया है, जिससे उस भाषिकेतर पृष्ठभूमि पर ध्यान दिया जा सके, जिस पर प्रबध की सपूर्ण सामग्री आधारित है।

प्रबध में बघेलखड की भाषिक रूपरेखा को पूर्ण अनुसधान के साथ प्रस्तुत करने का लक्ष्य रहा है 'बघेलखड की बोलियो में बघेलखंडी को ही अध्ययन का विषय क्यो बनाया गया है ? 'रिवाई, रीमापारी, बघेली व बघेलखडी, आदि नामो में से बघेलखडी को ही क्यो स्वीकार किया गया है ?'—आदि प्रश्नो के उत्तर को वैज्ञानिक ढग से स्पष्ट कर दिया गया है।

इसी प्रकार बघेलखडी के क्षेत्र विस्तार व भाषिक सीमा को लिखते समय परपरागत विवरणो को यथावत् नही स्वीकार किया गया है, अपितु बघेलखड क्षेत्र या Grierson द्वारा स्वीकृत बघेलखडी क्षेत्र और उसकी सीमा से सलग्न मिर्जापुर, इलाहाबाद, बांदा, फतेहपुर, हमीरपुर, पन्ना,जबलपुर, बालाघाट, छिंदवाडा, मडला, भडारा बिलासपुर, व सरगुजा जिलो के अनेक गाँवो का क्षेत्रान्वेषण करके बघेलखडी के क्षेत्र व उसकी सीमाओ को वास्तविक रूप में निश्चित करने का प्रयास रहा है। इस अध्ययन से Grierson द्वारा निर्धारित क्षेत्र व सीमाओ का सकोच व विस्तार भी हुआ है।

उन्नीसवी शताब्दी के विद्वान् William Carrey (1812 ई०) तथा S H Kellogg (1875 ई०) ने बघेलखडी को अवधी से पृथक एक स्वतत्र बोली के रूप मे निरूपित किया था तथा Grierson ने अपने 'भाषा सर्वेक्षण' में बघेलखडी को अवधी से पृथक् एक स्वतत्र बोली का स्थान इसलिए दिया था कि वे अन्य अग्रेजो की भाँति उस समय के गुलाम देश (बघेलखड) की जनता की भावना का सम्मान करना चाहते थे। अन्यथा वे इसे अवधी के अतर्गत वर्ग

बद्ध करने के पक्ष में थे। बाबूराम सक्सेना ने अपने प्रतिष्ठित शोधकार्य Evolution of Awadhi के माध्यम से बघेलखंडी को अवधी का एक रूप घोषित किया था और तब से लेकर आज तक हिन्दी के अधिकतर जाने-माने भाषाविज्ञानी इसे वैसा ही स्वीकार करते आ रहे हैं। जनगणना प्रतिवेदन की 'भाषा-सारणी' में भी अब बघेलखंडी अवधी के अंतर्गत परिगणित की जाने लगी है।

किंतु बघेलखंडी के संबंध में बघेलखंड की जनभावना आज भी वही है, जो Grierson के काल में थी। विद्वानों के विचार और जनभावना के मध्य इस विरोध को समझने के लिए Evolution of Awadhi के प्रत्येक उदाहरण की आधुनिक बघेलखंडी के नमूने से तुलना की गई है तथा उसे अधिक वैज्ञानिक बनाने के लिए साख्यिकीय विधियो का सहारा लिया गया है। विद्वज्जन अनुभव करेंगे कि बघेलखंडी के विश्लेषण में कभी न्याय नही हुआ तथा जनभावना की विजय यथोचित है।

बघेलखंडी के उद्भव और विकास की परम्परा को सामान्य प्रचलित रीति, यथा अवधी से संस्कृत में, न दिखाकर बघेलखंड से प्राप्त शिलालेखो व ताम्रपत्र लेखो के आधार पर दर्शाया गया है। बघेलखंडी लोक-साहित्य कोसली की बोलियों पर कार्यरत किसी भी विद्वान् ने इसके पूर्व शिलालेखीय या ताम्रपत्रीय प्रमाणो की चर्चा नही की थी। इससे यह भी सिद्ध होगा कि उपलब्ध ऐतिहासिक साक्ष्यो की दृष्टि से बघेलखंडी अवधी व छत्तीसगढी से भी प्राचीनतर है तथा यह भी ज्ञात होगा कि कोसली की जननी अर्द्ध मागधी प्राकृत का क्षेत्र प्राचीन बघेलखंड था, अवध या छत्तीसगढ़ नहीं।

बघेलखंडी के अध्ययन की सामग्री को लेकर विद्वानो में जो उपेक्षाभाव रहा है, उसे भी दूर करने का लक्ष्य रहा है।

विविध प्रमाणों से बघेलखंडी की महत्ता सिद्ध होते हुए भी विद्वानो ने (विशेष कर अवधी-मातृभाषी विद्वानों ने) क्षेत्र-कार्य व ठोस प्रमाणों के बिना उसे अवधी के अंतर्गत सम्मिलित करके बघेलखंडी के अध्ययन को एक प्रकार से प्रोत्साहित ही किया है। इस प्रबन्ध के माध्यम से मैं विद्वानो का ध्यान इस उपेक्षित, किंतु महत्वपूर्ण, जनभाषा के प्रति आकर्षित करना चाहता हूँ।

जैसा कि स्पष्ट है, प्रस्तुत प्रबन्ध का प्रमुख लक्ष्य बघेलखंडी के विविध क्षेत्रीय रूपों का संग्रह, संपादन, व विश्लेषण करके उन्हे शब्द-भूगोल के सिद्धांतो के आधार पर सममापास रेखाओ के द्वारा उपबोलियो में वर्गबद्ध करना है। मैं यह अनुभव करता हूँ कि मेरा यह कार्य आगामी शोधार्थियो के लिए न तो पूरी

तरह से संतोषप्रद सिद्ध होगा और न ही इससे उनकी सारी आवश्यकताओं की पूर्ति होगी, क्योंकि इस वैज्ञानिक युग में भी अर्थाभाव के कारण मैं विविध यंत्रों के प्रयोग की सुविधाओं को नहीं जुटा पाया, तथापि ध्वनिकीय लिप्यंकन में प्रशिक्षित होने के नाते मैंने यहाँ बहुत-सी तथ्यपूर्ण सामग्री देने का प्रयास किया भविष्य में लोग मेरी विश्लेषण-पद्धति से भले ही सन्तुष्ट न हों, पर मेरे द्वारा रिकार्ड की गई सामग्री को प्राप्त कर उन्हें सन्तोष तो होगा। हमारी पीढ़ी को तो यह भी सौभाग्य नहीं मिला।

36

शब्द-भूगोल की उपयोगिता

'बघेलखंड का शब्द भूगोल' की उपयोगिता केवल उपाधि की उपलब्धि तक ही नहीं है, अपितु इससे मध्यप्रदेश शासन, केंद्र शासन, समाजशास्त्री, विद्यार्थी, सामान्यजनता, व भाषाविज्ञानी, आदि भी लाभान्वित हो सकते हैं।

इस प्रबन्ध के लिए बघेलखंड की हरिजन व आदिवासी जनसंख्या की मातृभाषा के प्रतिनिधिस्वरूप नमूनों के संग्रह के मूल में एक लक्ष्य यह भी रहा है कि यहाँ की पिछड़ी हुई जातियों की शिक्षाहेतु विविध क्षेत्रीय उप बोलियों की सूची तैयार हो सके। मध्यप्रदेश शासन का आदिवासी विभाग विशेषरूप से इसका उपयोग कर सकता है। यहाँ की गोंड़ जातियों को गोंड़ी भाषी समझ कर उस विभाग ने यहाँ 'गोंड़ीप्रवेशिका' जैसी बालबोध पुस्तिका को पाठ्यक्रम में लगाया है, वह उसे निकालकर 'बघेलखंडी प्रवेशिका' जैसी पुस्तिकाएँ निर्धारित कर सकता है, क्योंकि इस अध्ययन से अब यह सिद्ध हो चुका है कि यहाँ की गोंड़ जातियाँ गोंडी को भूल चुकी हैं और सर्वथा बघेलखंडी के ही विविध रूपों का प्रयोग करती हैं।

भारत शासन का जनगणना विभाग भी इस अध्ययन से अपनी पुरानी मान्यताओं में परिवर्तन कर सकता है। उदाहरणार्थ, अब उसे बघेलखंडी को अवधी से पृथक् वर्गबद्ध कर पूर्व जनगणना प्रतिवेदनों की भाँति वैज्ञानिक दृष्टि अपनानी चाहिए। इसके अलावा जनगणना प्रतिवेदनों में बोलियों के नामकरण के लिए 'मातृभाषो' पर विश्वास करने की जो पद्धति अपनाई जाती है, प्रस्तुत अध्ययन से उसकी भ्रमात्मकता सिद्ध होती है। यह बात न केवल एक 'परीक्षण' से प्रमाणित हुई है, अपितु जनगणना प्रतिवेदनों में जिन क्षेत्रों में बघेलखंडी भाषियों की अविद्यमानता की चर्चा है, उन क्षेत्रों में उनकी अधिकाधिक उपलब्धि से भी सिद्ध होती है।

इसके अतिरिक्त जनगणना-प्रतिवेदनों में बघेलखड की गोड़ी, कोली, और बैगानी को अन्य भाषाओ व बोलियो के साथ वर्गबद्ध करने की जो परम्परा मिलती है, प्रस्तुत अध्ययन में एतज्जातीय सूचकों की प्रधानता के कारण यह स्पष्ट हो जाएगा कि ये जातियाँ एकमात्र बघेलखडी मातृभाषी हैं। सग्राहक इस आधार पर अपनी परम्परावादी विचारधारा को छोडकर वस्तुवादी दृष्टि अपना सकते हैं।

इस अध्ययन से सामान्यतया यह धारणा बनाई जा सकती है कि किसी व्यक्ति के स्वकीय या परकीय भाषिक व्यवहारो के मूल्याकन में सामाजिक तथा सास्कृतिक प्रवृत्तियाँ अतिरजन प्रस्तुत करती हैं। बघेलखड के कृषक द्वारा खडी बोली को अग्रेजी मानना व अपनी बोली को हिन्दी स्वीकार करना यहाँ के लोगो की अपनी बोली के प्रति भ्रामक दृष्टि ही कही जाएगी, जिससे जनगणना-प्रतिवेदन भी मुक्त नही हैं।

बघेलखडी के भौगोलिक व सामाजिक विश्लेषण के परिणामो से समाजशास्त्री व नृतत्वशास्त्री भी लाभान्वित हो सकते हैं। समभाषाश रेखाओ के माध्यम से जहाँ वे विविध सस्कृतियो से परिचय प्राप्त कर सकते हैं, वही समभाषाशो के प्रयोग से सस्कृतियो मे उनका प्रवेश भी सुकर हो सकता है।

बघेलखड के शब्द-भूगोल से पहली बार वहाँ के विद्यार्थी व सामान्य जन अपनी बोली की विविधता से परिचित होगे। वे अपने कुटुब, पड़ोसी, व हरिजनो तथा आदिवासियो की बातो को सीधे समझने में समर्थ हो सकेंगे। इसी प्रकार इस क्षेत्र की हरिजन व आदिवासी जातियो के विविध पक्षो पर कार्य करने वाले लोगों के लिए शब्द-मानचित्रावली की सूचना सहायक सिद्ध हो सकती है। वे इसके आधार पर अपने को क्षेत्रीय परिस्थितियो में ढाल कर यहाँ के निवासियो का अधिकाधिक सहयोग प्राप्त कर सकते है।

शब्द-भूगोल पर रुचि रखने वाले भारतीय भाषाविज्ञानियो के लिए भी यह कार्य उपादेय बन सकता है। अब तक बोली भूगोल (शब्द भूगोल) का अध्यापन करते हुए प्राय भाषिकी के प्राध्यापक या तो विदेशी मानचित्रावलियो से उदाहरण (यथा केंद्रीय क्षेत्र, सक्रमण-क्षेत्र के) देते रहे हैं या उन्हें प्रकल्पित ढङ्ग से अपने छात्रो को समझाते रहे हैं। अब वे चाहें, तो इस प्रबन्ध के स्वदेशी उदाहरणो को प्रस्तुत कर छात्रो में इस विषय के प्रति अधिक रुचि जाग्रत कर सकते है शब्द-भूगोल पर शोधरत अन्य व्यक्ति भी इस अध्ययन से शब्दभूगोल की यथार्थ प्रकृति से परिचित हो सकते हैं।

शब्दभूगोल के समग्र स्वरूप को प्रस्तुत करने वाला अभी तक कोई भी ग्रथ अग्रेजी या हिन्दी में नही निकला। इस दृष्टि से एतद्विषयक अधिकाधिक तथ्यो

को एक ही स्थान (1. 1. द्रष्टव्य) पर समीक्षात्मक ढङ्ग से प्रस्तुत करने वाला यह प्रथम प्रबन्ध है।

इस समय बघेलखंडी की उपबोलियो के लोप के कारणभूत शक्तिशाली प्रभावों की शनै शनै. वृद्धि हो रही है। रेडियो, चलचित्र, प्रेस, साक्षरता-अभियान, पचवर्षीय योजनाएँ, व बढते हुए औद्योगीकरण से समुदाय गतिशील बन रहे है। ग्रामीण लोग नागर जनता की सास्कृतिक परम्पराओं को अपना रहे है, फिर भी बोली के विविध पक्षो में जो परिवर्तन मिल रहे हैं, वे उसकी जटिलता के ही वाचक कहे जाएँगे। इससे समनाम शब्दो का संघर्ष तथा शब्दो की बेडौल रचना पर सावधानी के साथ विचार करने की प्रेरणा मिलती है। इसके अतिरिक्त मानचित्रावली के माध्यम से इस बात को समझने में भी सहायता मिलती है कि बघेलखंड में नवप्रवर्तन किन बाहरी जिलो से हो रहे हैं।

मानचित्रावली के माध्यम से अब कोई भी बघेलखंडी की विविध उपबोलियो के प्रति सजग हो सकता है। रूपो की विभिन्नता व सम्पन्नता के कारण बघेलखंडी बोली के सम्बन्ध में लोगो के विचार और भी अधिक व्यापक और उदार बन सकते हैं।

परिशिष्ट

1. शब्द-भूगोल से सम्बद्ध प्रबन्ध और निबन्ध
2. तकनीकी शब्द-समुच्चय
3. बघेलखंड के उपबोली-क्षेत्र
4. प्रश्नावली
5. सर्वेक्षित स्थानों की सूची
6. मानचित्रावलीय सामग्री
7. कतिपय मानचित्र

भाग १

ग्रन्थ सूची

परिशिष्ट—1

शब्द-भूगोल से सम्बद्ध प्रबन्ध और निबन्ध

Adams, G B

'An Introduction to the study of ulster dialects,' Proceedings of the Royat Irish Academy, 52, section c, No 1, 1948

Alexander, Henry

'Linguistic geography' Queen's Quarterly (1940) 47 : 38 47

Allen, Harold B

'The linguistic Atlases Our new resources,' The English Journal (1956) 45 118 94

'The primary dialect areas of the Upper Midwest, Readings in Applied English Linguistics, pp 231—41

Readings in Applied English Linguistics, Appleton Century Crofts, 1958 2nd edition 1964

'On accepting participle drank' Introductory Readings in Linguistics (eds Anderson and Stageberg) Newyork, 1962

'Aspects of linguistic geography of the upper midwest,' Studies Languages and Liguistics, The English Language Institute of Michigan 1964,

'Pejorative terms for midwest farmers,' A Linguistic Reader (ed Graham wilson) Newyork, 1967

Anderson, Elin L

We Americans Cambridge, 1937

Anderson, wallace L, and stateberg Normanc

Introductory Readings of Language, Holt, Rinehart, Chicago, 1962

Alwood, E Bagby

'A study of geographical variation,' Studies in English, Texas, 1950

'Grease and Greasy a study of geograpical Variation,' studies in English, A Survey of Verb Forms in Easteun United States, Ann Arbor University of Michigan press, 1953

'Some Eastern Virginia pronunciation Features' English Studies, Uni, Virginia, 1957

The Regional Vocabulary of Texas, Austin Uni Texas Press, 1962

Avis, Walter S

'The New England short 'O', Language (1961) 37 544—58

The mid back Vowels in the English of the Eastern United states regional and social differences, Uni Michigan, diss, 1955

Barker, G C

'Social Functions of Language in Mexico—American Community,' Acta America (1947) 3 185

Basilius Harold

'Neo Hamboldtian Ethnolinguistics word (1962) 8 95 105

Baugh, Albert C

Two Middle English lexical notes,' Language (1951) 37 t 539 43

Beals Alan R and John T Hitchock

Field guide to India, Washington, 1960

Becker Donald A

'Generative phonology and dialect studies an invesigation of thre German dialects', unpublished doctoral dissertation, uni Texas 1967

Bergsland, Knut and Hans Vogt

'On the Validity of glottochronology,' Current Anthropology (962) 3 115 58

Bittle, William E

'Language and Culture areas a note on method,' Philosophy of Science (1953) 10 247 56

Bloch, Bernard

'Interviewing for the linguistic Atlases,' American speech (1933) 10 3 9

'Studies in Colloquial Japanese IV, Language (1950) 26 86 125

Bloomfield Leonard

why a linguistic society,' Language (1925) 1 1 5 Language (chapter IXX dialect geography), New york, Henry Holt 1933

'Secondary and tertiary responses to language, (Language (1944) 20 45 55

Bolinger, Dwight

'Linguistic geography,' Aspects of Language, New york, 1968, pp 141-50

Bonfante, Guiliano

'On reconstruction and linguistic method,' word 1 83 9, 132-161

'The Neolinguistic position' Language (1947) 23 344 75

Bonfante, Guiliano and T S beok

'Linguistics and age-area hypothesis,' American Anthropologist (1941) 46, 38?—?6

Bottiglioni, Gino

'Linguisticgeography achievements, methods and Orientation,' word (1954) 10 1 375 87

Bright, William O

Social dialects and language history,' Current Anthropology (1960) 1 1 424—25

'Lauguage, Social stratification, and Cognitive Orientation,' Explorations in Sociolinguistics, Hague 1966 pp 185 90

Bright, william and A K Ramanujan

'Sociolinguistic Variation and language Change,' Proc Ninth Int Cong Ling, Hague Mouton 1964, pp 1107—13

Brynt, Margaret M

'Real and like,' Introductory Linguistics and Language, Newyork, 1962.

Cameron, Gledhill
'Some words stop at Marietta, Ohio,' collier's, June 25, 1954
Capell, A
'Language and Social distinctions in Aboriginal Australia,' Mankind (1962) Vol 5, No 12.
Studies in Sociolinguistics The Hague Moutou, 1966
Cardens Daniel N
The geographical distribution of the assibilated r, rr in Spanish America,' Orbis (1958) 7 : 407—14
Cass dy, Fredric G
'Some New England words in Wisconsin,' Language (1941) 17 324—39
Methods for collecting dialect, Gainesville, 1953 American regionalism and harmless drug, pub Am Dial Asso (1997) 82 . 3—34
Catford J C
'The linguistic survey of Scotland,' Orbis (1957) Louvain, 6 (6)
'Vowel systems of Scot dialects,' Trans Phil Soc, London (1957) pp 107—17
Chao yuen Ren
Language and symbolic Systems, cambridge uni Press, 1968
Chardola, A
'Some linguistic influences of English on Hindi', Anthropological linguistics (1963) Vol 5 No 2
Chatterji, Suniti Kumar
'Mutual borrowing in Indo—Aryan' Bulletin of the Deccan college Research Journal (1960) 20 : 1—14
Chertien, C Douglas
'Word distribution in Southeastern *Popua*' *language* (1956) 31: 88—108
Chomsky, N and M Halle
'Some controversial questions in *phonological theory,*' Journal of linguistics (1965) 1 97—138

Cochram, William G.
Sampling Techaniques, John Wiley and Sons; Inc. 1953.
Conklin, Harold c.
'Linguistic play in it's Cultural Context, Language (1959) 35 : 631-36.
Corroll, John B.
Report of the interdisciplinary seminar on Psychology and Linguistics, Cornell Uni 1953.
Cohn, Bernard S.
India as a racial, linguistic and Cultural area, Chicago, uni. Chicag pscoss, 1957.
Currie, Harver c.
'A projection of sociolinguistics,' Southern Speech Journal (1952) 18 : 28-37.
Darnell, Regna
'A real linguistic studies in North America : a historical perspective,' International Journal of American Linguistics (1971) 3. 7. I pp 20-28
Davis, Alva L.
A Word geography of great lake region, dissertation, uni. Michigan Ann : Arbor, 1948.
Davis, Alva L. and Raven I. Mc David
'Northeastern Ohio : a transition area,' language (1950) 26 : 265-73.
Dave, T. N.
'Linguistic survey of border lines of Gujarat,' Jousna of Ganganath Jha Research Institute, 1942-8.
De Camp, David
The Pronunciation of Fnglish in San Francisco, uni. California, 1959.
'Social and geographical factors in Jamaican dialects,' Proc. of the Conf. on Creole language studies, London, 1961, pp. 61-84.
'Review of Stanley M. Sapon's a pictorial guide' Language (35) 394-404.
Delgado
'The geography of languages,' Readings in Cultural

geography, Chicago, 1962, pp 75-93

Desai, M L

Our Language Problem, Ahmedabad, 1934

Diebold, A Richard

'Incipient bilingualism,' Language, (1967) 37-112.

Dieth, Eugen

'Linguistic geography in New England 'English Studies (1948) 29 65-8

Dominion, Leon

'Linguistic Atlas in Europe,' American Geographical society bulletin (1915) 47 4o7 39.

The frontiers of language and nationality in Europ , New york, 1917

Doroszewski, w

'Structural linguistics and dialect geography,' Proc of VIII Int Cong Ling, Oslo, 1957, pp 540 64

Drake, James A.

The effect of urbanization on regular vocabulary, American speech (1961) 36 17 33

Dyen, Isidore

'Why phonetic change is regular,' Language (1963) 39 631-37

Ellason, Norman E

'Review of phonological Atlas of the northern region by Eduard Kolb,' Language (1968) 44 355 7

Emeneau, Murray B

'Language and non linguistic pattern' Language (1950) 26 199 209

Dravidian kinship terms,' Language (1953) 29 330-53

India as Linguistic Area' Language (1956) 32 3 16

Entwisle, Doris R.

'Developmental sociolinuistics,' The American Journal of sociology (1968) 74 37-49

Fairbanks Gordon G,

'Language split' Glossa (1969) 49 66

Ferguson Charles A

'Diglossia' Word (1959) 15 324-40

'erguson, Charles A. and John J. Gumperz.
Linguistic diversity in South Asia,' Baltimore, 1960.
'ischer, John L.
'Social influences in the choice of a linguistic variant,' Word (1958) 14 : 47-56.
Fishman, Joshua A
Readings in sociology of language, The Hague, Mouton, 1968
Fodor, Jerry A. and Jerrold J. Katz (ed)
The structure of language : Readings in the philosophy of language, Englewood clifts, N, J : Prentice Hall, 1964
Francescato, Fiuseppe
'Dialect borders and linguistic systems,' Proc. 9th Int. Cong Ling; 1964, pp. 109-14.
Francis, W. Nelson'
The structure of American English, Newyork, The Ronald Press, 1958.
Frauchiger, F
'The Speech comunity,' Studies in lingu istics (1954) 3 : 1-6.
Frores (ed)
Advances in Psycholinguistics, Padova, 1969.
Fudge. E.
'The nature of phonological primes', Journal of Linguistics (1967) 3 : 1-36.
Gage, W.
Contrastive studies in Linguistics, Washington, D. C. 1961.
Garvin, Paul L
'The standard Language Problem, Anthropological Lingulstics (1959) 1. (3) 25.
'A descriptive technique for the trestment of meaning' Language (1958) 34 : 1-32.
On linguistic Method, The Hague : Mouton, 1964,

Gleason, H A
An Introduction to Descriptive Linguistics, Newyork 1959
Gray, Louis H
Foundations of Language, Newyork, The Macmillan Co, 1939
Greenberg, Joseph H.
'The measutement of linguistics diversity', Language (1956) 32 109 15
'h before semivowels in Eastern united states,' Language (1957) 32 109
Anthropolog cal linguistics An
Introduction, Newyork, Random House, 1968
Gregor, W
The dialect of Banffshise', Trans Phil Soc, London, 1866
Grimshaw, Allen D
'Directions for Research in Sociolinguistics, The Hague, 1366, pp 191 204
Grierson, Sir George Abraham
Linguistic Survy of India 11vls, Calcttta, 1903 1928
Grootaess, William A
'Origin and development of subjective boundaries of dialects' Orbis (1959) 8 : 355-84
'New methods to interpret linguistic maps' Proc 9th Int Congi Ling (ed H G Lunt) The Hague Mouton, 1964, p 259
'Some methodolog cal findings in linguistic geography' Orbis (1959) 8 2
Gumperz, J J
North Indian village dialect the use of phonemic date in dialectology, Indian Linguistics (1955) 16 : 283-95
'Language problems in rural devolopment of North India' Jour Asni Soc (1957) 16 : 251 259
'Dialect differeces and social stratification in a North India village,' American Anthrologist (1958) 60 668 82

'Phonological differences in three Hindi dialects', Language (1958) 34 : 212-24.
'Speech variation and the study of Indian civilization,' American Anthropologist (1961) 63 : 976 88.
'Types of linguistic communities,' Anthropological linguistics (1962) 4 : 28-40

Hall, Robert A,
'Review of speach and Sachatlas Italiens und der sudschweiz by Jaberg and Jud,' language (1812) 18 : 282-7.
'Latin —ks— in Italian and its dialects,' language (1912) 18 : 116-24.
'The papal states in Italian linguistic History,' language (1943) 19 : 125-40.
'Bartoli's Neolinguistica,' language (1946) 22 : 273-83.
'The linguistic position of Franco—provencal,' language (1919) 25 : 1-14.
'Review of La dialectologic by sever pop,' language (1952) 28 : 119-22.
Linguistics and yocr language, Newyork, Doubledey and Co. 1960.
Introductory linguistics, philadelphia, chilton books, 1964.

Halle, Moris.
'. honology in generative grammar,' Word (1962) 18 : 54-74.

Hankey, Clyde T.
A colorado word geography, pub Amer. Dial society (1960) 34 : 24.

Haugen, Einer.
Bilingualism in Americas, pub. Amer. Dial. Soc, No 26, Albana uni; 1956.
Healey, wllen
Handling unsophistibated linguistic Informants, linguistic circle of canbera pub; 1964.

Heise, David R.
'Speeh variations in a Piecmont Cummunity,' Explora-

tions in SociolinSuistics (ed S lieberson) The Hague : Mouton, 1966, pp 99 111

Hertzler, joyce O

Toward a Sociology of language,' Social Forces (1953) 32 109-19

'Social uniformation and languages,' Exploration in Sociolinguistics, pp. 170 84

Herzog, Marvin I

Etymology versus geography a study in yiddish circle of New York, 1964

Hill Trevor

'Institutional linguistics' Orbis (1958) 7 (2) 441-55

Hocart, A M

'The psychological interpretation of language' British Journal of Psychology (1117) 5 267 80

Hockett, C F

A Course in Modern linguistics, New York, 1958

Hoijer, Harry (ed)

Language in culture, Chicago 1954

Hoengswald, Henry, M

Bilingualism, presumable bilingualism, and diachrony,' Anthropological linguistics (1962) 4 (1) 1-5

Hormann, Hans

Psycholinguistics an introduction to research and theory, New York, 1971

Householder, F W

'On some rec nt claims in phonological theory,' Journal of linguistics (1965) 1 13 34

Hughes, Russel M

The gesture language of Hindu Dance, New York, Columbia uni, 1941

Hultzen, Lee S

'System status of obscured vowels in English,' Language [1961] 37 565 69

Hymes Dek

Directions in ethnolinguistic theory,' American Anthropologist [1964] 66 6 56

Ives, Sumner.

'Pronunciation of can't in the Eastern states,' American speech, Oct. 1953.

'Use of Field-materials in determination of dialect groupings', Quarterly Journal of speech [Dec. 1955], Newyork.

Ivic, Milka.

Trends in linguistics [Trans. Muriel Happel The Hague : Mouton, 1965.

Ivic, Pavle

'on struture of dialectal differentiation,' Word [1962] 18 : 33-53.

'Structure and typology of dialectal differentiation,' 12th Int. Cong. Ling. [ed. H. G. Lunt], Cambridge, Mass, 1964, pp. 115-29.

Jakobson, Roman.

Selected Writings : Phonological studies, The Hague : Mouton, 1962.

Kahane, Henry R.

'Designations of the cheek in Italian dialects,' language [1941] 17 : 212–22.

Kelkar, A. R.

'Marathi English,' Word [1957], Vol, 13, No. 2.

Keller, Rudolf E.

Germen Dialects, Manchester Uni. Press, 1961.

Kenyon, John S.

'Cultural levels and functional Varieties of English', College English, oct. 1948.

Keyser, Samuel J.

'Review of Kurath and Mc David', Language (1961) 39 : 303-16,

King, Robert D.

Historical Linguistics and Generative grammar. Prentice Hall International, Inc; London, 1969.

'Push Chains and drag Chains', Glossa (1969) 3 2 21

Klima, E S

'Relatedness between grammatical systems', Language (1964) 40 1 20

Krober, A L

'Some relations of linguistics and ehtnology', Language (1941) 17 - 287 Anthropology, Newyork, 1948

Kurath, Hans

Handbook of the Linguistic Geography of New Eng land, Providence, R I Brown Uni, 1939

'Dialect areas, settlement areas, and Culture areas in the United states', The Curtural Approach to History (ed Caroline F Ware,), New york, 1940

A Word geography of the Eastern United States Uni Michigan, 1949

'Area linguistics and the teacher of English' Language (1960), No 2,

'Phonemics and Phonics in Historical Phonology, American Speech (1961) 36 93-100

'Linguistic Atlas Findiugs', Introductory Readings in Linguistics (ed. Andersn and Stageberg) New york, 1962

'The loss of long consonants and the rise of Voiced fricatives in Middle English', Language, 32 435 45

'Interrelation between regional and social dialects', Jroc 9th Int Cong Ling, The Hague, 1964, pp 135 44

'Review of Sprachatlas der deutschen Schweiz, Band II', Language (1968) 44 135 6

Kurath Hans and Bernard Blóch

Linguistic Atlas of New England, 3vls, Providence,

R, I; 1938-42.

Kurath, Hans, and R. I. Mc.David
The Pronunciation of English in the Atlantic states, Uni. Michigan Press, 1961.

Labov, William
'Phonological Correlates of Social stratification', American Anlhropologist (1964) 164-76.
'The Social motivation of a Sound Change' Word (1963) 19 : 273-309.

Lado, Robert
Linguistics Across Cultures, Ann : Arbor, 1957

Lamb, Sidney
'On alternation, transformation realization and stratification. Monograph series of Languages and Linguistics, Georgetown, 1964, pp. 105 22.
'Prolegomena to a theory of Phonology', Language (1964) 42 : 536-73.

Lenneberg, Eric H. and John M. Roberts
The language of experience : a Case study, Bloomington, 1956.

Lehmann, Winfred P.
Historical Linguistics, Newyork, 1963.

Lounsbury, F. G.
'Dialet geography', Anjhropology Today (ed. Krober) London, 1965, pp. 413-14.

Lyons, John
An Introduction to theoretical linguistics, Cambridge University Press, 1968.

Lieberson. Stanley
'An extension of Greenberg's measures of linguistic diversity' Language (1964) 50 : 526-31.

Malkiel, yakow

Dialectology and Linguistic geography, California, 1966

'Each word has a history of it's own' Glossa (1967) 1 (2)

Malmstrom, Jean

Dialects U S A, Newyork, 1963

Marckwardt, Albert H,

'Linguistic geography and Freshman English', College English (Jan 1952)

Principal and subsidary dialece areas in North Contral states,' *Pub Amer Dial Soc.* (1957) 27 3 15

'Regionalism and social variatiou,' American English (1958)

Martinent, A

Elements of general linguistics, London, 1964.

Mather, J Y

Aspects of linguistic geography of Scotland, New york, 1969

Mc David, Raven I

'Some principles for American dialecd study', Studies in Linguistiys (1942) 1 2

'Phonemic and Semantic bifurfaction two examples', Studies in Lsnguislics (1944) 2 88 90

'Dialect geography and Social Science broblems', Social Forces (1946 7) 25 168 72

/r/ and /y/ in the South , Studies in Linguistics (1947) 7 18 20

'The influence of French on Southern American English , Studies in Linguishes (1948) 6 39—41

'Post Vocalic /–r/ in South Carolina a social analysis', American Speech (1948) 23 194

'Dialect differences and inter-group tensions', Studies in Linguistics (1951) 2 : 27-33.

'The pronunciation of 'Catch', College English, May 1953.

'Gught 't and Had 'nt ought' College Engllsh, May 1953.

'Some Social differences in pronunciation', Language Learning (1953) 4 : 102—16.

'Review of E. Bagby Atwood's A Survey of verb Forms in Eastern United states', International Journal of American Linguistics (1954) 20 : 74-8.

'American Social dialects', College English, (1964) 10-16.

'Sense and nonsense about American dialects', Pab. of the Modern Language Association (1966) 81 (2) 7-17.

Mc David R. I, and V, G. Mc David

'h before semi Vowels in the Easteern United states', Language (1952) 28 : 41-62.

Mc David, Virginia A.

Regional and Social differences in the grammar of American English, Uni. Minnesota, 1956.

Mc Intosh, Augus

Introduction to a survey of Scottish dialects, Edinburg : Thomas Nelson and Sons, 1952.

'The study of Scott dialects in relation to other Subjects', Orblis (1954) Louvain, 3 : 1.

Menner, Robert J.

'Review of Linguistic Atlas of New England by Kurath', Language (1942) 18 : 45-51.

'An American Word geography', American Speech (1950) 25 : 122-6.

Miller- George A

'The Psycholinguistics', A Linguistic Reader, New york, 1967, pp 327 41

Moulton, William G

'Review of R Schlapfer, Der Mundart des Kantos Baselland', Language (1956) 32 751-60

'The short vowel systems of Northern Switzerland' a study in structural dialectology' Word (1960) 16 155 82

'The diolect geography of hast, hat in Swiss German', Languagh (1961) 497 508

'Dialect geography and the Concept of phonological space' Word (1962) 18 23 32

Contribution of dialectology to phonological theory', Tenth Int Cong Ling., Bucharest, 1967

'Structural dialectology' Language (1968) 44 451-66

Principles of dialectology, Princeton, 1971

Olga, Si Akmanova

Exact methods in Linguristic Researches, California, 1968

Olmsted, David L

Ethnolinguistics so far, Newyork, 1963

O' Niel, W A,

'The dialects of Modern Farose a preliminary survey report', Orbis (1963) 12 393 97

OPler, M E

'Words Without meanings or Culture without words', Word (1949) 5 42

Orr, Carolyn and Robert E Longcare

'Proto quechumaran', Language (1968) 44 528 55

Orr, J.

'The problem of presentation of linguistic material Collected geographi Cally', Actes du Viena Congress, Paris, 1949.

Orton, Harold

Survey of English dialects, Leeds, 1962.

Orton, Harold, rnd Nathalia

A word geography of England, Seminar Press, Londen 1972.

Osgood, Charles E; and T A. Sebeok

Psycholinguistics, a survey of thcory and Research Problems, Bloomington, 1654.

Palmer, L. R.

'Comparative statement and Ethiopian semitic', Trans. Phil. Soc., (1958)

An Introduction to Modern Linguistics, London, 1936.

Per, Mario

Glossary of Linguistic Terminology, Colum- bia Uni. Press, New york and London, 1966.

Pickford, Glenna Ruth

'American linguistic geography : a Sociological apprai-sal', Word (1956) 12 : 211-33.

Pike, K. L.

'Toward a theory of Chonge and Bilingualism', Studies in Linguistics (1960) 15 : 1-7.

Pittmann, Dean

Practical Linguistics : A Textbook and Field Manual for missionary Linguistics, Cleve land : ohio, 1948.

Potter, Edward E.

The dialect of northwestern Ohio : a study of transi-tion area, Unpubl. diss; Uni, Michigan, 1955.

Potter, Simeon

Modern Linguistics, London, Andre Deutsch, 1957

Prasad, Viswanath

Linguistic survey of the Southern subdivision of Manbhum and Dalbhum, Patna, 19ɔ4

Pronko, N H

'Language and Psycholinguistics', Psychological Bulletin (1946) 43 189 239

Pulgram E

'Prehistory and Italian dialects,', Language (1949) 25 241 52

'Structural Gomparisions, diasystems and dialectology' Linguistics (1964) 4 66 82

Rauch, Irmengard and Charles T Scott

Approaches in Linguistic Melhodology, London, Uni', Wisconsin, 1967

Roy, Niharranjan (d)

Language and Society in India, Simla, 1969

Reed, Carroll E

The Pennsy lvania German dialects spoken in the Countries of Lehigh and Berks Phonology and Morphology, Washington, 1949

The prnunciation of English in the State of Washington , American , Speech (1954) 1 186 9

'The pronunciation of English in the Pacific North west , Language (1961) 37 559 64

Review of Reg onal Vocabulary of Texas by E Bagby Atwood', Language, Vol 40, No 2

Reed, W David

Eqstern dialect words in California Pub Amer Dial Soc (1954) 21

Reed, W. David and John L. Spicer
'Correlation methods in Comparing idiolects in a Transition area', Language (1952) 28 : 348-59.

Royburn, William O.
Problems and procedures in Ethno linguistic survey, New york, 1956.

Ringgard, K.
'The phonemes of a dialectal area perceived by phoneticians and speaker them selves', Fifth Int. Cong of Phonetic Science, Munster, 1964, pp 495-501

Roedder, E C.
'Linguistic geography', Germanic Review (1926) 1 : 281-308.

Vogt, Hans
'Language Contacts' Word (1954) 365-74.

Ware, James R,
'Review of La geographic linguistique en Chine by William A Grootaers,' Language (1949) 25 · 80-83.

Weinreich, Uriel
Languages in Contact, New york, 1953
'Is a structural dialectology possible ?' Word (1954) 10 : 388-400
'Functional aspect of Indian bilingualism,' Word (1957) 13 203-33.
'Multilingual dialectology and New yiddish *Atlas*,' Anthropological Linguistics (1962) 4 (1) . 6 22

Weiss, A. P.
'Linguistics and Psychology' Language (1925) 1 : 52-7.

Robins, R. H.

General Linguistics . An Introductory Survey, London, 1964.

A short History of Linguistics, London, 1967

Samarin, William J.

Field Linguistics, Holt Renehart and Winston New york, 1966

Sapon, S. M,

'A methodology for the study of Socio Economic Difrerentials in Linguistic phenomena,' Studies in Linguistics (1953) 11 57 68

A pictorial linguistic interview manual, Ohio State University, 1957 (155 multiple pictures)

Saporta, Sol

Psgcholinguistics a book of Readings', New york, 1961

'Ordered Rules, dialect differences and historical processes,' Language (1965) 41 218 24

Saporta, Soe and M Contreras

A phonological grammar of spanish, Washington, 1962

Sebcok, Thomas A. (ed)

Current Trends in Linguistics, Vol (1963), II (1967) III (1966), IV (1968), V (1669), VI (1969), VII (1969), VIII (1969), IX (1970), The Hague Mouton

Sengupta, Sankar (ed)

A guide to field study, Calcatta, 196?

Shrier, Martha

'Case systems in German dialects', Language (1965) 41 420 38,

Shukla, HiraLal

Contrastive distribution of Bagheli Phonemes, Raipur, 1969,

A Word geography of Baghelkhand. (4 Volumes) doctoral diss; Ravishankah University, 1971.

Word Atlas of Baghelkhand (400 maps) doctoral diss. Rqvishankar University, 1971.

'Pushing and dragging Chains of Personat pronouns in Gondi dialects of Madhya Pradesh.' Psycho-Lingua (1971) I :

A Comparative grammar of Gondi dialocets of Madhya Pradesh (inpress).

Shuy, Roger W.

The Northern midland dialect boundary in Illinois, Pub. Amer. dial. Soc; 1962, No. 38.

Silva, Fuenzalida. Ismael

'Ethnolinguistics and the study of Culsure', American Anthropologist (1949) 446 56

Sledd, James

'Review of Trager and Smith 1951 and of Fries 1952, Language (1955) 31 : 312-45.

Smith, Henry Lee

'Review of A Word geography of the Eastern United states', Studies in Linguistios *(1951) 9 : 7-12,*

An Outline of metalinguistic Analysis, Washington, 1952.

Stankiewicz, Edward

'On discreteness and Continuity in Structural dialectology', Word (1957) 13 : 14.

The Phonemic patterns of the Polish dialects, The Hague, 1958.

Steible, Daniel

Concise Handbook of Linguistics, Peter Owen, Londen, 1967.

Stockwell, R P

'Structural dialectology a proposal', American Speech (1959) 34 258 68

Sturtevant, E H

An Introduction to the Linguistic Science, New Haven,, 1947

Swadesh, Morris

Salish Phonologic geography', Language (1952) 28 233 48

Thomas, Alan R

'Generative phonology in dialectology', Trans Phil Soc (1967) pp, 179 203

Thomas C K.

'Pronllnciation in Up state Newyork', American Speech (1935) 10

Trager, George L

'The typology of paralanguage', American Linguistics (1961) 3 17 21

Trager George L and Smith Lee

'Outline of English structure', Studies in Linguistics (1951)

Trubetzkoy, N S

Principles of Phonology, Ch on Phonology and Lingui stic geography, pp 298 304

Tucker, R Whitney

'Linguistic substrata in Pennsyevania and elsewhere', Language (1934) 10 1 5

Varma, Siddheswar

'A peep into the travels of Words spoken in the

Languages of India' Trans of the Linguistic Circie of Delhi (1955) 13 16
'My languuge hunt in the Himalayas', Transactions of the Linguistic Circle of Delhi (1656)

Vasilin, Emanuel
Towards a generative phonology of Daco Rumanian dialects', Journal of Linguistics (1966) 2 79 98

Vendryes, Joseph
Language (Trans by Paul Radin), London, 1925

Voegelin, C. F
'Influenee of area in American Linguistics', Word (1) 55
'Phonemicizing for Dialact study' Language (1956) 100 155

Voegelin, C p and Zellig S Harris
'Methods for determiniug intelligibility among dialects of natlral language', Proc Philosophical Society (1951) 95 322 29

Wetmore, Thomas H
'Tee low Central and low back vowels in the English of the E stern United States, Pub Amer Dial Soc No 32 1959

Wexler, Paul
Diglossia, language standardization and Puricsm' Lingua (1971) 27 330 54

William, A Sta ewart
'Sociolinguistic factors in the history of American Negro dialects', The Florida Reporter, Spring, 1967

Wilkinson, H R
Maps and politics A revlew of the Ethnographic Cartography of Macedonia, Liverpool, 1951,

Wilson, Sir J
Lowland Scotch as spoken in the Strathearm district of Perthshire oxtord, 1915.

Wise, C M
'The dialect Atlas of Louisina, a report of progress', Studies in Linguistics, Vol 3, pp 37-42

Wright, J T
'Language Varieties, languane and dialect', Encyclopaedia of Linguistics (ed A R. Meetham), Oxford, 1969, pp, 243 51

Whorf, Benjamin
Language, Thought and Reality, Cambridge, Mass, 1949

दुबे, लता (श्रीमती)
बुन्देली-क्षेत्र की बुन्देली के ध्वनिगत विभेदो का मानचित्रावली का अध्ययन, पी एच० डी० का अप्रकाशित शोधप्रबन्ध, सागर विश्व विद्यालय, 1967

ब्लूमफील्ड, लिओनार्ड
भाषा (अनूदित विश्वनाथ प्रसाद), पटना, 1968

मिश्र, भगवानदीन
बाँदा जिले का बोली भूगोल, पी एच० डी० का अप्रकाशित शोधप्रबन्ध लखनऊ विश्वविद्यालय, 1966

शुक्ल, हीरालाल
'बघेली के पुरुषवाचक सर्वनाम,' भाषिकी के दस लेख, रायपुर, 1969
'बस्तर की वनवासी बोलियां, बस्तर के वनवासी गीतो में गांधी, रायपुर, 1970
बस्तर की बोलियाँ (रमेशचन्द्र महरोत्रा के साथ मुद्रणस्थ)
भारतीय लोकोक्ति-कोश (रामनिहाल शर्मा के साथ—मुद्रणस्थ)
हलबी विभाषा और साहित्य (लाला जगदलपुरी के साथ—मुद्रणस्थ)

परिशिष्ट—२

तकनीकी शब्द-समुच्चय—हिन्दी-अंग्रेज़ी

तकनीकी शब्द-समुच्चय

प्रबन्ध के अन्तर्गत अधिकाश में यद्यपि शिक्षामन्त्रालय, भारत सरकार, द्वारा प्रकाशित मानविकी शब्दावली-V, भाषाविज्ञान के ही तकनीकी शब्दो का व्यवहार किया गया है, किंतु उपर्युक्त 'शब्दावली' के कुछ शब्दो को लेखक अभी तक पचा नही पाया, अतएव उनके स्थान पर भिन्न शब्द मिलेंगे। प्रबन्ध में कुछ ऐसे पारिभाषिक शब्दो का भी उपयोग हुआ है, जो मानविकी-शब्दावली' में सम्मिलित नही हैं। यहाँ केवल ऐसे शब्दों का सग्रह है, जो 'मानविकी-शब्दावली' में नही हैं तथा प्रबन्ध म यथास्थल जिनके अग्रेजी रूप नही दिये गये हैं।

अल्पशक्ति सममाषारा low energy isogloss
अर्थप्रक्रिया semasiology
अर्थप्रक्रियात्मक भूगोल semantic geography
अतिभाषिक extra-linguistic
अतिभाषिकी extra-linguistics
आधार मानचित्र base map
आधारीय प्रतीक basal symbol
आधारीय व्याकरण basal grammar
आपेक्षिक आवृत्ति relative frequency
उच्चशक्ति सममाषारा high energy isogloss
एकभाषी भारनिरपेक्ष-विधि monolingual nonweighted method
कूट-स्विचन code-switching
क्रमबद्ध नियम ordered rules
क्षेत्र-भाषिकी area linguistics
क्षेत्रीय भाषिकी areal linguistics
तत्त्व-भाषिकी metalinguistics
तानात्मक भूगोल tonal geography

त्रिविम three dimensional
ध्वनि phone
ध्वनिक phonic
ध्वनिकी phonetics
ध्वनिप्रक्रिया phonology
ध्वनिप्रक्रियात्मक भूगोल phonological geography
ध्वनिम phoneme
ध्वनिमी phonemics
दुहरे समभाषांश double isoglosses
नव्यभाषिकी neolinguistics
नियमसंस्कार reordering
निर्णयात्मक प्रतिदर्श judgement sample
निष्क्रिय क्षेत्र sedentary area
नृतत्त्व भाषिकी anthropolinguistics
परिधीय क्षेत्र peripheral area
परिवर्त्य क्षेत्र graded area
परीक्षा-शब्द test-words
पारगामी समभाषांश crossing isoglosses
पार्श्विक क्षेत्र lateral area
प्रतिचयन sampling
प्रतिचयन विशेषज्ञ sampling experts
प्रतिदर्श सर्वेक्षण sample survey
प्रतिष्ठा-क्षेत्र prestige area
प्रतिमान norm
प्रेष प्रश्नावली postal questionnaire
बोधगम्यता-परीक्षण intellegibility test
बोली-क्षेत्रकी diatopy
बोली समाजशास्त्र dialect sociology
भाषिकांतर ध्वनि diaphone
भाषिकांतर ध्वनिम diaphoneme
भाषिकांतर रूप diamorph
भाषिकांतर रूपिम diamorpheme

भाषिकांतर व्यवस्था diasystem
भू-भाषिकी geolinguistics
भौगोलिक भाषिकी geographical linguistics
मनोभाषिकी psycholinguistics
मातृभाषी-प्रतिमान native speaker-model
मिश्र प्रश्नावली portmanteau questionnire
यादृच्छिक वक्ता-विधि randon speaker-method
यादृच्छिक वक्ता-श्रोता विधि random speaker-hearer method
रैखिक सीमा linear boundary
वाक्यमी syntax
वाक्यमीय भूगोल syntactical geography
व्यवस्थक ध्वनिम systematic phoneme
विदलित व्यक्तित्व-विध split-personality method
सजातीय cognate
संघात bundles
समक्रम isograde
समताप isotherm
समध्वनि isophone
समध्वनिक रेखा isophonic line
समध्वनिम isophoneme
समध्वनिम रेखा isophonemic line
समनामता homonymy
समनामिक संघर्ष homonymic clashes
सममार isobar
समभाषाश isogloss
समभाषाश-रेखा isoglottic line
समभाषाश-रेखाओं के संघात bundles of isoglottic lines
समरूप isomorph
समरूपिम isomorpheme
समरूपिम-रेखा isomorphoemic line
समरूपध्वनिम isomorphophoneme
समरूपध्वनिम-रेखा isomorphophonemic line

समवर्ग isopleth
समशब्द isolex
समशाब्दिक रेखा isolexic line
समाज बोली sociolect
समाज भाषिकी sociolinguistics
समार्थ isosemanteme
समार्थक रेखा isosemantic line
सर्वसमावेशी अभिरचना की पद्धति method of over all pattern
सहसम्बन्ध विधि correlation method
सहसम्बन्ध की सांख्यिकीय विधियाँ statistical methods of co-relation
सूची inventory
स्थाननाम toponyms
स्थानवृत्त casehistory
स्वाश्रित ध्वनिम autonomous phoneme
शब्दप्रक्रियात्मक भूगोल lexical geography
शब्द भूगोल word geogra, hy

परिशिष्ट—३

बघेलखंड के उपबोली-क्षेत्र

बघेलखंड के उपबोली-क्षेत्र

अध्ययन की सीमा

बघेलखंड की मानचित्रावली के प्रत्येक मानचित्र की आत्मकथा को यदि विविध संदर्भों में लिखा जाए, तो बघेलखंड के उपबोली-क्षेत्रों से संबंधित सुपरिष्कृत व प्रामाणिक सिद्धातो की स्थापना की जा सकती है, किंतु प्रस्तुत प्रबन्ध में यह अभिप्रेत नही है। यहां बघेलखड के उपबोली-क्षेत्रो व उनकी भाषिक विशेषताओ को सक्षेप में प्रस्तुत करने का लक्ष्य यह है कि बघेलखंड की बोली के विकास की अनेक समस्याओ पर अनुसंधान करने के लिए लोग प्रेरित हो सकें, हिन्दी-भाषी क्षेत्रो के विद्वान् इन समस्याओ पर विचार करें, तथा पार्श्ववर्ती जिलो की बोलियो पर कार्य करने वाले इसके प्रभाव को हृदयङ्गम कर सकें। यहां व्यक्त बहुत कुछ विचार प्रयोगात्मक या परीक्षामूलक भी हो सकते हैं तथा भविष्य में मानचित्रावली के एकल मानचित्रो के विश्लेषण से उनका परिष्कार भी सभव है।

चूंकि बघेलखडेतर क्षेत्रो की बोलियो पर अभी तक कोई प्रामाणिक मानचित्रावली नही बनी है, अतएव यहां की उपबोली-क्षेत्रो की तुलना हिन्दी की इतर बोलियों के साथ मानचित्रीय विधि से नहीं की जा सकती। तथापि बघेलखडी-क्षेत्र के सम्बन्ध में अब सुस्पष्ट धारणाएं बनाई जा सकती हैं।

बोली-क्षेत्र और सममभाषांश-सीमा

कोई भी सममभाषांश जिसका बघेलखड-व्यापी प्रयोग नही है, उसका अपना भौगोलिक प्रसार है, सामाजिक परिवेश है, क्रमबद्ध इतिहास है। इसी प्रकार कुछ सममभाषांश-रेखाओ की परस्पर मिलन की भी प्रवृत्ति है और ये ही कम या अधिक सघानो में एकीभूत होकर विविध उपबोली-सीमाओ को बनाने का कार्य करती है।

कैमोर पर्वत और सोन नदी बघेलखड की बोली-सीमा को बनाने में अवरोधक का कार्य करती है, जिससे समूचा बघेलखड उत्तर-पूर्वी और दक्षिण-

पश्चिमी दो प्रमुख बोली क्षेत्रो में विभाजित हो जाता है। यह सीमा पूर्व में ब्योहारी तहसील के सरसी नामक गाँव (समुदाय क्रमांक 143) से प्रारम्भ होती है, जहां पर सोन और छोटी महानदी का सगम है तथा पश्चिम में यह मऊगज तहसील के बरौंहा (समुदाय क्रमांक80) नामक स्थान में समाप्त हो जाती है। समभाषाश रेखाओ के सघात बघेलखड के अतर्गत पूर्व से पश्चिम में क्रमश सरसो से लेकर बरौहा तक कैमोर पर्वतमाला के साथ-साथ ही चलते है। पूर्व में ये सघात बघेलखड की सीमा (बाधोगढ तहसील) से सट कर दक्षिणोमुख हो जाते है तथा दूरपश्चिम में ये नमदा नदी के द्वारा मर्यादित होते है। इसी प्रकार पश्चिम में ये उत्तरोमुख होकर गगा नदी से प्रतिबद्ध हो जाते है (मानचित्रानुक्रम 357 द्रष्टव्य)। *बघेलखड के अतर्गत उत्तर पूर्वी बघेलखड में सतना व* रीवा जिले का सम्पूण क्षेत्र आ जाता है तथा दक्षिण-पश्चिम बघेलखड के अतर्गत सीधी व शहडोल जिले का सम्पूर्ण क्षेत्र समाविष्ट है।

इस महत्वपूर्ण कैमोर रेखा (अब इसका यही नाम उपयुक्त है) से उत्तर व दक्षिण के क्षेत्रो के लिए तीन-तीन समरेखाओ के सघात आगे बढते है। उत्तर के क्षेत्र एक प्रकार से राजनीतिक सीमाओ से अधिक प्रतिबद्ध हैं तथा दक्षिण के क्षेत्रो में राजनैतिक व प्राकृतिक दोनो ही सीमाएँ क्रियाशील रहती है।

उत्तर पूर्वी क्षेत्र

उत्तर पूर्वी क्षेत्र को 8 भागो में इस प्रकार विभाजित किया सकता है—

1 बरौंधा-क्षेत्र
2, सतना अमरपाटन क्षेत्र या टमस और सोन का मध्य भाग
3 नागौद-क्षेत्र या टमस और अमरान का मध्य भाग
4 मैहर क्षेत्र या टमस और छोटी महानदी का मध्य भाग
5 त्योंधर-क्षेत्र या तरिहार
6 सिरमौर-क्षेत्र
7 मऊगजक्षेत्र
8 रीवा-क्षेत्र

1 बरौंधा-क्षेत्र के अतगत वह सपूर्ण भूमि आ जाती है जो प्राचीन काल में बरौधा राज्य व चौबे जागीरो के अनगत थी (1 2 3 21 द्रष्टव्य)। बघेलखड के इन क्षेत्रो से पैसुनी नदी इसे पृथक करती है। बघेलखड के बाहर बाँदा जिले का सपूर्ण क्षेत्र इसी के अतगत आ जाता है, क्योंकि दोनो ही क्षेत्रों की बोली मिलती जुलती है। इस क्षेत्र के उत्तर में यमुना नदी, पूर्व मे पैसुनी नदी,

दक्षिण मे माण्डेर पर्वतमालाएँ, व पश्चिम में बाँदा जिले की राजनैतिक सीमा लगी हुई हैं। इस क्षेत्र के प्रमुख गाँव चित्रकूट व बरौंधा है।

2. बरौंधा-क्षेत्र से संलग्न सतना-अमरपाटन क्षेत्र के अंतर्गत संप्रति रघुराजनगर तहसील का दक्षिणी भाग व संपूर्ण अमरपाटन तहसील परिगणित है। प्राकृतिक दृष्टि से इसे टमस और सोन नदी का मध्य भाग कहा जा सकता है। यह उल्लेखनीय है कि स्वतंत्रता पूर्व अमरपाटन व सतना दोनो मिल कर एक तहसील बनाते थे, जिसे रघुराजनगर तहसील कहा जाता था। अतएव यहाँ प्राचीन राजनैतिक सीमा आज भी क्रियाशील प्रतीत होती है। इस क्षेत्र को पृथक् से घेरने वाले समभाषांश-रेखाओ के संघातो का अभाव है, अतएव इसे ऋणात्मक क्षेत्र (मानचित्रानुक्रम 360) कहा गया है। तथापि इस क्षेत्र को पार्श्ववर्ती बरौंधा, नागौद, मैहर, बाधोगढ, ब्योहारी, रीवा व सिरमौर-क्षेत्र के संघात चारों ओर से घेरे हुए हैं, अतएव इसकी स्वतंत्र स्थिति स्वीकार की जानी चाहिए। इस क्षेत्र में प्राप्त समभाषांश-रेखाओ के ऋणात्मक संघात (छितरी हुई रेखाओ) से यह संकेत मिलता है कि यहाँ भाषिक आदान अधिक मात्रा मे हुआ है और आज भी हो रहा है। इस आदान की प्रक्रिया का संकेत इस क्षेत्र की प्राचीन ऐतिहासिक सामग्री के आधार पर ही किया जा सकता है। यहाँ यह ध्यातव्य है कि समभाषांश-रेखाओ के धनात्मक संघात अधिक महत्व के ऐतिहासिक संदर्भो को प्रस्तुत करते है, जबकि ऋणात्मक या छितराए हुए संघात इस क्षेत्र की आदानशीलता को बताते है। स्मरणीय है कि उत्तर बघेलखड मे एकमात्र सतना ही ऐसा स्थान है जो प्राचीन काल से प्रमुख व्यापारिक नगर रहा है तथा यहाँ का रेलवे स्टेशन समूचे क्षेत्र के निर्यात व आयात का एकमात्र साधन था। अंग्रेजी शासन काल मे पोलिटिकल एजेंट भी सतना में ही रहा करते थे।

3. सतना-अमरपाटन क्षेत्र के पूर्व में समभाषांश-रेखाओ के संघात कुछ गोलाई के साथ टमस और अमरान से संलग्न पूर्व से पश्चिमी की ओर व्याप्त है। यह नागौद क्षेत्र है, जिसकी स्वतंत्रता-पूर्व तक एक पृथक् राज्य के रूप में स्थिति थी। इस क्षेत्र के संघात बघेलखंड से बाहर पन्ना की मांडेर पर्वतमालाओ तक व्याप्त है। इस क्षेत्र का प्रमुख प्रतिष्ठा केन्द्र नागौद है।

4. नागौद-क्षेत्र के दक्षिण मे चलने वाली समभाषांश-रेखाएँ संघातिक रूप मे मैहर क्षेत्र को घेर लेती हैं। उत्तर में ये संघात टमस नदी तक व्याप्त है तथा दक्षिण मे ये छोटी महानदी के साथ-साथ चलते है। मैहर स्वातंत्र्योदय-पूर्व एक देशी राज्य था। इसकी बोली जबलपुर क्षेत्र की बोली से मिलती-जुलती है, यही कारण है कि बघेलखंड से बाहर समभाषांश-रेखाओ के समुदाय दक्षिण मे नर्मदा

नदी व पश्चिम में हिरण नदी के द्वारा मर्यादित है तथा उत्तर में भाडेर पर्वत मालाएँ इस क्षेत्र की बोली की नागोद क्षेत्र की बोली की समानता में एक अवरोधक का कार्य करती है। बघेलखंड क्षेत्र के अतर्गत मैहर, व उसके बाहर कटनी तथा जबलपुर यहाँ के प्रमुख प्रतिष्ठा केन्द्र है।

5 त्योंधर-क्षेत्र उत्तर-पूर्व बघेलखंड का एक सुस्पष्ट उपबोली क्षेत्र है। क्योंकि समध्वनित रेखाओं के सघात, समरूपरेखाओं के सघात, समशब्दरेखाओं के सघात व समार्थ रेखाओं के सघात से यह भलीभाँति घिरा हुआ है। प्रथम खंड के द्वितीय भाग (1 2 2.1.1) में इसे प्राकृतिक दृष्टि से भी एक पृथक् क्षेत्र माना गया है। इस क्षेत्र म समभापाश रेखाओ का फैलाव पश्चिम से पूर्व की ओर है तथा बघेलखड के बाहर इसके अन्तर्गत इलाहाबाद जिले की मजा तहसील का क्षेत्र भी आ जाता है। बघेलखड के अतर्गत विंध्य पर्वतमालाएँ इस क्षेत्र के अवरोधक के रूप मे है तथा बघेलखड से बाहर उत्तर म यमुना नदी इसकी सीमा बनाती है (मानचित्रानुक्रम 357 व 36० द्रष्टव्य)। उत्तर प्रदेश के जसरा, मेजा, शकरगढ, मऊ, तथा मानिकपुर समुदायो की बोली बघेलखड के इस त्योंधर या तरिहार-क्षेत्र की बोली स मिलती-जुलती है। प्रथम खड के तृतीय भाग (1 3 5 द्रष्टव्य) में सकेत दिया गया है कि William Carey तथा S H Kellogg ने इसी क्षेत्र मे बघेलखडी की सामग्री सकलित की थी। त्योंधर इस क्षेत्र का प्रमुख प्रतिष्ठा केन्द्र है।

6 त्योंधर-क्षेत्र के दक्षिण मे सिरमौर क्षेत्र है। इस क्षेत्र के उत्तर म टमस नदी, अधिक पूर्व म गोरवाँ नदी, तथा पश्चिम म बीहर नदियाँ है। टमस नदी में पुल बन जाने के कारण यहाँ की कुछ समभापाश रेखाएँ बादा जिले के टिकरिया नामक स्थान तक व्याप्त है। सिरमौर क्षेत्र का प्रमुख गाँव सिरमौर है।

7. सिरमौर क्षेत्र से सलग्न रीवा क्षेत्र के पूर्व म तथा त्योंधर-क्षेत्र के दक्षिण म समभापाश रेखाओ के सघात कैमोर पर्वत की तलहटी से होकर मिर्जापुर जिले म विध्य की उपत्यका तक फैले हुए है। मिरजापुर में बेलन व गगा नदियाँ इन्हे आगे बढने से रोकती है। यह क्षेत्र मऊगज के नाम से जाना जाता है (मानचित्रानुक्रम 357 तथा 365 द्रष्टव्य)। हनुमना तथा मऊगज यहाँ के दो प्रमुख प्रतिष्ठा स्थल है।

8. सिरमौर क्षेत्र से सलग्न रीवा-क्षेत्र की समभापाश-रेखाएँ पूर्व म बीहर व दक्षिण म कैमोर पर्वत के साथ-साथ चलती है। रीवा बघेलखड एक प्रमुख प्रतिष्ठा केन्द्र है। अधिकाश नवप्रवर्तनो का प्रसार इसी नगर स होता है।

दक्षिण पश्चिमी क्षेत्र

उत्तर-पूर्वी बघेलखंड की तुलना में इस क्षेत्र की प्रमुख विशेषता यह है कि प्राचीन राजनैतिक सीमाओं के अतिरिक्त उन्नत पर्वत व गंभीर सरिताएँ यहाँ की उपबोली-क्षेत्रों को पृथक् करने का काम करती है। समभापाश-रेखाओं की दृष्टि से इस क्षेत्र की दूसरी विशेषता यह है कि प्रत्येक क्षेत्र की समभापाश-रेखाएँ बघेलखंड से बाहर भी व्याप्त है, जब कि उत्तर-पूर्व बघेलखंड से बाहर भी व्याप्त है, जब कि उत्तर पूर्व बघेलखंड में सतना-अमरपाटन तथा रीवा दो ऐसे क्षेत्र है, जिनकी समभापाश-रेखाओं का जाल बघेलखंड से बाहर नहीं फैलता।

बघेलखंड के दक्षिण पश्चिम क्षेत्र को 7 भागों में विभाजित किया गया है (मानचित्रानुक्रम 356 द्रष्टव्य)। वे इस प्रकार हैं—

9. सीधी-क्षेत्र
10. देवसर-क्षेत्र
11. सिंगरौली क्षेत्र
12. ब्योहारी क्षेत्र
13. बाँधोगढ-क्षेत्र
14. सोहागपुर-क्षेत्र
15. मेकल-क्षेत्र

9. सीधी-क्षेत्र की समभापाश रेखाओं के उत्तर में सोन नदी व कैमोर पर्वत, पूर्व में गोपद नदी, दक्षिण में नेउर नदी (बघेलखंड की सीमा से बाहर सरगुजा जिला) व पश्चिम में पनास नदियाँ प्रतिबद्ध करती है (1.2.2.2.1.1. द्रष्टव्य)। इस क्षेत्र का प्रमुख नगर सीधी है।

10. देवसर-क्षेत्र की समभापाश रेखाएँ पूर्वोत्तरोन्मुख होकर उत्तर में सोन व पश्चिम में गोपद नदियों के तट तक विस्तृत हैं। पूर्व में बघेलखंड के अंतर्गत बलिया नदी तक पहुँचते-पहुँचते ये उसके आगे बेलन नदी तक निकल जाती हैं। इस प्रकार इस क्षेत्र के अन्तर्गत बघेलखंड के बाहर मिरजापुर का सोनपार क्षेत्र भी आ जाता है (357 व 368 मानचित्र द्रष्टव्य)।

11. सिंगरौली-क्षेत्र को मानचित्रानुक्रम 375 में एक अवशिष्ट क्षेत्र के रूप में प्रदर्शित किया गया है। रेंड (रिहंद) नदी व मोहन वन के साथ-साथ इस क्षेत्र की समभापाश-रेखाओं का घिराव मिलता है। बघेलखंड से बाहर मिरजापुर जिले से संलग्न क्षेत्र में भी इन रेखाओं का पूर्व में प्रसार है। मिरजापुर के खंड-क्षेत्र व सिंगरौली की बोली में एकरूपता मिलती है (मानचित्रानुक्रम 357

द्रष्टव्य)। सिंगरौली प्राचीन काल में मैंगरो का एक प्रमुख राज्य था (1.2.3. द्रष्टव्य)। यहाँ का प्रमुख प्रतिष्ठा-स्थल सिंगरौली है।

12. सीधी-क्षेत्र या गोपद-बनास क्षेत्र से संलग्न ब्योहारी क्षेत्र है, जिसे सोन व बनास का मध्यवर्ती भाग कहा गया है (1.2.2.2 2.1. द्रष्टव्य)। इस क्षेत्र की समभपाश रेखाओ को सोन नदी व कैमोर पर्वत उत्तर की ओर बढने से रोकते है तथा पूर्व में बनास नदी, दक्षिण में कुनुक नदी, व पश्चिम में सोन नदी के द्वारा प्रतिबधित है (मानचित्रक्रमाक 111 द्रष्टव्य)। बघेलखंड के बाहर सरगुजा जिले की नेउर तहसील तक यहाँ की समभापाश-रेखाएँ गतिशील है। ब्योहारी इसका प्रमुख गाँव है।

13. सोन-बनास क्षेत्र के पश्चिम में बाँधोगढ क्षेत्र है। यहाँ पटपरा से लेकर अमरपुर तक और जोहिला व सोन नदी के किनारे-किनारे सघातो का जमघट-सा हो जाता है। दक्षिण में घोड़छुट नदी व उत्तर-पश्चिम मे छोटी महानदी बघेलखंड के अन्तर्गत इसका सीमाकन है। (1.2.2.2.2.2. द्रष्टव्य)। इसे छोटी महानदी व जोहिला का मध्यवर्ती क्षेत्र भी कहा जाता है। यहाँ यह ध्यान देने योग्य है कि बघेलखंड से बाहर इस क्षेत्र की कुछ समभापाश-रेखाएँ जबलपुर जिले की ओर मुड जाती है तथा कुछ का प्रसार मंडला जिले की ओर होता है (मानचित्रानुक्रम 357 व 371 द्रष्टव्य)। बाधोगढ क्षेत्र का उत्तरी भाग 375 वें मानचित्र में अवशिष्ट क्षेत्र के रूप मे दिखाया गया है। पनपथा का बीहड़ वन इन दोनो क्षेत्रो की कुछ रेखाओ को आगे बढ़ने से रोकता है तथापि राजमार्गो के कारण अब उनमें अपेक्षाकृत कम अवरोध है।

14. बाधोगढ क्षेत्र की ही कुछ समभापाश-रेखाएँ धेगरहाटोला के पास से उत्तर में सोन व कुनुक नदियो के साथ-साथ विचरण कर व दक्षिण में जोहला नदी के तट से होकर एक सुस्पष्ट क्षेत्र छोड जाती है, जिसे सोहागपुर क्षेत्र कहा जाता है। सरगुजा जिले की मनेन्द्रगढ तहसील तक इन रेखाओ का प्रसार मिलता है और सुदूरपूर्व में रिहन्द नदी इन्हे आगे बढने से रोकती है (मानचित्रानुक्रम 357 व 372 द्रष्टव्य)।

15. सोहागपुर-क्षेत्र के दक्षिण मे मेकल-क्षेत्र है। इस क्षेत्र में समभापाश-रेखाएँ जोहिला और नर्मदा नदियो के तट से होकर गुजरती है। बहिर्वर्ती क्षेत्र मे पूर्व की ओर बिलासपुर जिले की हसदो, शिवनाथ, व मनियारी नदियाँ इसकी सीमाएँ बनाती हैं तथा पश्चिम की ओर ये बन्जार नदी के पास से होकर आगे निकल जाती हैं। इस प्रकार मेकल-क्षेत्र के अंतर्गत भौगोलिक दृष्टि से संपूर्ण मेकल-प्रस्थ सम्मिलित है (मानचित्रानुक्रम 357तथा 373 द्रष्टव्य)।

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट है कि बघेलखंड के अन्तर्गत विविध प्राकृतिक व राजनैतिक सीमाएँ उपक्षेत्री-सीमाओ के अंकन का कार्य करती है। बघेलखंड के अन्तर्गत इस प्रकार की बोली-सीमाओ की चर्चा 1911 ई० Captain C. E Luard तथा 1940 ई० में रघुवर प्रसाद ने की थी 1.3.7.3.1. तथा 1.3.7.3 2. द्रष्टव्य)। इससे निश्चित मत व्यक्त किया जा सकता है कि बघेलखंड में विविध उपबोली-क्षेत्रो की सीमाईं पिछने 60 वर्षों से स्थिर-सी प्रतीत होती है। बोली-सीमाओ की स्थिरता का प्रमुख कारण प्राकृतिक विभाजनो व राजनैतिक सीमाओ का तालमेल है। अर्थात् बघेलखंड के अधिकतर क्षेत्रों का राजनैतिक विभाजन प्राकृतिक विभाजन के अनुरूप है। इसके साथ ही यह भी उल्लेखनीय है कि यद्यपि विविध 15 उपबोली-क्षेत्रो मे सतना-अमरपाटन क्षेत्र को छोड़ कर सभी क्षेत्रो की समभाषाश-रेखाओ में घनीभूत होने की प्रवृत्ति है, किन्तु कैमोर-रेखाएँ शनै शनै. विरल होती जा रही हैं तथा उत्तर से दक्षिण व दक्षिण से उत्तर की ओर भी समभाषाश-रेखाएँ गतिशील है। इस गतिमत्ता का कारण दोनो क्षेत्रो के मध्य स्वतंत्रता के पश्चात् सड़क यातायात का अत्यधिक विकास ही माना जाएगा (मानचित्रानुक्रम 357 तथा 373 द्रष्टव्य)।

प्रमुख बोली-क्षेत्रो की भाषिक विशिष्टता

बघेलखंड के अन्तर्गत दो प्रमुख क्षेत्र हैं—उत्तर-पूर्वी बघेलखंड तथा दक्षिण-पश्चिमी बघेलखड इन दोनों क्षेत्रों को विभक्त करने वाली रेखा को मैंने कैमोर-रेखा कहा है। यह कैमोर रेखा कोई स्वतंत्र सामूहिक समभाषाश'रेखाओं का संघात (समध्वनिरेखा + समरूपरेखा + समशब्दरेखा + समार्थरेखा) नही है, बल्कि पार्श्ववर्ती उपक्षेत्रो के समभाषाश-रेखाओ के संघात इसके उत्तर व दक्षिण में इस प्रकार घनीभूत हो जाते हैं कि पेगड़ियो के जोड़ के समान उनके आधार पर दो ठोस क्षेत्र बन जाते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि प्राचीन काल में इन दो क्षेत्रों को विभक्त करने वाली अनेक समभाषाश-रेखाएँ रही होंगी, जिनके अव-शेष के रूप में आज मानचित्रानुक्रम 23, तथा 130 व 161, आदि में सम-ध्वनिरेखा और समरूपरेखाएँ विद्यमान है, जो पश्चिम से पूर्व की ओर एक छोर से दूसरे छोर तक फैली हुई हैं।

उपबोली-क्षेत्रों की संक्षिप्त भाषिक रूपरेखा

बघेलखंड के प्रमुख दो क्षेत्रो की संक्षिप्त परिचयात्मक व्याख्या के पश्चात् अब यहाँ दोनो के अन्तर्गत मिलने वाले उपबोली-क्षेत्रो की स्थानीय भाषिक विशेषताओ को संक्षेप मे प्रस्तुत किया जा रहा है।

उत्तर-पूर्वी क्षेत्र

1. वरौंधा-क्षेत्र

वरौंधा-क्षेत्र में बघेलखंड के अन्य उपबोली-क्षेत्रों में उच्चरित केन्द्रीय मध्य स्वर के अतिरिक्त शेष मध्य स्वर प्रायः स्वर-श्रुति मे परिवर्तित हो जाते हैं। इस प्रकार अग्र मध्य स्वर तालव्य अर्द्ध स्वर (य्) में, व पश्च मध्य स्वर द्वयोष्ठ्य कोमल तालव्य अर्द्ध स्वर (व्) में बदल जाते है। 'जेठ्' के लिए 'ज्याठ्' (मानचित्रानुक्रम 5) तथा 'एक्' के लिए 'याक्' (मानचित्रानुक्रम 4) इसी प्रकार के उदाहरण है। इस क्षेत्र की दूसरी प्रमुख विशेषता [र्] को [ड्] मे परिवर्तित करने की है, यथा, 'रेहआ' के स्थान पर 'डेरुआ' (मानचित्रानुक्रम 263)। यह ध्यातव्य है कि [ड्] को [ड़्] के रूप मे उच्चारित करने की प्रवृत्ति भले ही अन्य उपबोली-क्षेत्रों में मिल जाए, किन्तु उसका आरम्भिक स्थिति में प्रयोग सर्वथा इसी क्षेत्र की विशेषता है। इस क्षेत्र की उच्चारण सम्बन्धी अन्य विशेषताएँ इस प्रकार है—

(क) 'पाँच' शब्द की अनुनासिकता का लोप (मानचित्रानुक्रम 17)

(ख) 'चसमा' की [च्] का [ट्] में परिवर्तन (मानचित्रानुक्रम 24)।

(ग) 'अजोइधा' की [—ज्—] का [—ग्—] में परिवर्तन (मानचित्रानुक्रम 26)।

(घ) 'दुइ' के [—उइ—] का [—इय्—] मे परिवर्तन (मानचित्रानुक्रम 45)।

वरौंधा-क्षेत्र में रूपप्रक्रियात्मक दृष्टि से उपलब्ध स्थानीय भाषिकातर रूप इस प्रकार है—

क्रिया रचना की दृष्टि से यहाँ की कालार्थ व पुरुष विभक्तियाँ पार्श्ववर्ती क्षेत्रो से पृथक् है। भविष्य निश्चयार्थ विभक्तियो में (पुल्लिंग उत्तम पुरुष) समुदाय क्रमांक 1 मे [—इव्—] का व्यवहार होता है (मानचित्रानुक्रम 242) यथा 'अइबे' "(हम) आएँगे"। पुरुष विभक्तियों की दृष्टि से उत्तम पुरुष (भविष्य निश्चयार्थ) की विभक्तियों मे [—ऊँ] (मानचित्रानुक्रम 77), (भविष्य विनयार्थ) मध्यम पुरुष बहुवचन की विभक्तियो मे [—औ] (मानचित्रानुक्रम 81) आदि का संकेत किया जा सकता है। इनके कुछ उदाहरण इस प्रकार है—

[—ऊँ]	देहूँ	"(हमी) देंगे"।
[—औ]	दयाहौ	"(तुम) देना"।
[—अँ]	गें	"(वे चले) गए"।

पूर्वकालिक कृदतीय रूप में 'केन्हो' (मानचित्रानुक्रम 133), (उत्तमपुरुष सर्वनाम) के अविकारी सरूप [—ऍं] (मानचित्रानुक्रम 155), मध्यम पुरुष सर्वनाम) एकवचन का अविकारी रूप [—अय्] (मानचित्रानुक्रम 157), (उत्तम पुरुष सर्वनाम) का विकारी सरूप [—वा] (मानचित्रानुक्रम 166), मध्यम पुरुष (कर्मकारकीय) का विकारी बहुवचन [—ओहँ—] (मानचित्रानुक्रम 168), प्रश्नवाची (स्थानसूचक) सर्वनाम (—सार्वनामिक क्रियाविशेषण) के प्रकृति रूप [कय्] (मानचित्रानुक्रम 192), कर्मकारकीय परसर्ग 'कि' (मानचित्रानुक्रम 205), तथा 'देउत' (देवना) सज्ञा की मूलरूप-साधक प्रकृति 'देवन्' (मानचित्रानुक्रम) 150) इस क्षेत्र की निजी विशिष्टताएँ हैं।

शब्दप्रक्रियात्मक दृष्टि से भी कुछ भेदक शब्द रूपों की चर्चा की जा सकती है। 'अथान्' (अचार) के लिए चिर्का' (मानचित्रानुक्रम 259) ,'बेर्रा' (गेहूँ तथा चने का मिश्रण) के लिए 'गेहूँ + चनी' तथा घोपा (खेतों में बनाया गया आवास-मण्डप) के लिए 'छतुरा' (मानचित्रानुक्रम 272) यहाँ के स्थानीय शब्द है।

अर्थात्मकता की दृष्टि से भी यहाँ कुछ-न-कुछ परिवर्तन मिलता है। उदाहरण के लिए, बघेलखड के भिन्न भिन्न क्षेत्रों में 'छेरी' तथा 'बकरी' का प्रयोग पर्याय के रूप में होता है, किन्तु यहाँ भिन्नार्थक है। 'छेरी' को आकार में छोटी तथा 'बकरी' को आकार में बडी माना जाता है (मानचित्रानुक्रम 251)। 'कडू' शब्द यहाँ तिक्तता वाचक है, जब कि बघेलखड में उसका अर्थ या तो लवणता-बोधक है या कडवा अर्थ देने वाला (मानचित्रानुक्रम 339)।

2. सतना-अमरपाटन क्षेत्र

इस क्षेत्र की स्थानीय उच्चारण-सम्बन्धी विशेषताओं को अग्रिम सारिणी में सक्षिप्त रूप से प्रस्तुत किया गया है।

सकेत शब्द	बहुप्रयुक्त उच्चारण	स्थानीय उच्चारण	मानचित्रानुक्रम
खिउला	[—इउ—]	[—एउ—]	39
कुँवार्	[—उँआ—]	[—उमा—]	46
अगहन्	[—गह—]	[—घ—]	49
गुलगुल्	[—ग्ग—]	[—लल्—]	50
भाप्टर्	[—प्ट—]	[—ह्ट्ट—]	51
साहो	[सा—]	[ध—]	46
बइसाख्	[अइ—]	[—ऐ—]	19

रूपप्रक्रियात्मक दृष्टि से यहाँ क्रिया रचना, सर्वनाम व सार्वनामिक क्रिया-विशेषण के रूपों में भेदकता विद्यमान है। दानार्थक धातु का भाविकातर रूप 'दीन्ह्' (मानचित्रानुक्रम 61), सहायक क्रिया की भूत निश्चयार्थ धातु का भाविकातर रूप 'रहें + हें' (मानचित्रानुक्रम 86), उत्तम पुरुष (एकवचन तथा बहुवचन) की विभक्ति '-य्' मानचित्रानुक्रम 107) भूतकालिक कृदंती विभक्ति [—य्—] (मानचित्रानुक्रम 119), मध्यम पुरुष (सर्वनाम का विकारी बहुवचन [—उँह्—] (मानचित्रानुक्रम 168) भेदक रूप ही कहे जायेंगे।

शब्द-स्तर पर 'रस्' (इक्षु) के लिए 'पूर्वांड़ा (मानचित्रानुक्रम 264), 'डोरी' (महुए का फल) के लिए 'गुर्लईंदा' (मानचित्रानुक्रम 270), व 'घोपा' के लिए 'पूर्वांगा' (मानचित्रानुक्रम 272) यहाँ के स्थानीय प्रयोग हैं।

3. नागौद-क्षेत्र

नागौद-क्षेत्र की उपबोली अनेक दृष्टियों से बघेलखंड की उपबोलियों से भेदक बन रही है, क्योंकि इसमें पार्श्ववर्ती बुंदेली-क्षेत्र के समभाषांश भी निरन्तर आदान की प्रक्रिया में मिलते हैं। ध्वनिप्रक्रियात्मक आधार पर यहाँ की एक प्रवृत्ति विशेष रुचिकर है और वह है ओष्ठ्यरंजन। इसका उदाहरण [—व्] के [—ह्व्] में परिवर्तन होने का है (मानचित्रानुक्रम 27)।

संकेत शब्द	बहुप्रचलित उच्चारण	स्थानीय उच्चारण	मानचित्रानुक्रम
चिरई	[—ई]	[—ईआ]	2
छ	[—अ]	[—अए]	11
चस्मा	[—स्—]	[—छ्—]	33
चइत्	[—अइ—]	[—अएँ—]	41
सँउँहे	[—अँउँ—]	[—आम्हू—]	44
दुइ	[—उइ]	[—ओं]	45
अगहन्	[गह]	[—गाह—]	49

रूपप्रक्रियात्मक विशेषताओं में भविष्य निश्चयार्थ (पुल्लिंग उत्तम पुरुष) विभक्ति [—यद्] (यथा अयबय् 'हम आएँगे', मानचित्रानुक्रम 72), (सहायक क्रिया के वर्तमान निश्चयार्थ में प्रयुक्त) अन्य पुरुष बहुवचन की विभक्ति [—मय्] (यथा 'हमय्' 'है', मानचित्रानुक्रम 116), वर्तमान कालिक कृदंती रूप [—वत्—] (यथा आवत् 'आता', [मानचित्रानुक्रम 129), पूर्वकालिक कृदंती

रूप [—कय] (मानचित्रानुक्रम 156), अन्य पुरुष अनिश्चयवाचक प्रश्नसूचक अविकारी एकवचन का रूप [—व] (मानचित्रानुक्रम 162), व कारकीय परसर्ग 'सँ' का प्रयोग (मानचित्रानुक्रम 212), प्रमुख हैं।

शब्द-प्रक्रियात्मक दृष्टि से 'खीसा' (जेब) के लिए 'गल्ला' (मानचित्रानुक्रम 246), 'सीगट् (शृगाल) के लिए 'लुयडई' (मानचित्रानुक्रम 250), 'खरिहान' के लिए 'मण्डा', व 'खउँड़ा' (मानचित्रानुक्रम 273), तथा 'बटिहा' के लिए 'आबाह्' (मानचित्रानुक्रम 280) स्थानीय तत्व हैं।

4. मेहर-क्षेत्र

इस क्षेत्र में 'छ' शब्द की [—अ] का उच्चारण [—ऍअ्] रूप में मिलता है तथा 'रामन्' शब्द की [—म्—] यहाँ [—व्—] हो जाती है।

व्याकरणिक रूपों में भविष्य सम्भावनार्थ के रूप में [—इ—] (मानचित्रानुक्रम 67), व उत्तम पुरुष की विभक्तियों में [—भ्] का प्रयोग (मानचित्रानुक्रम 76) विशेष उल्लेखनीय है। (उत्तम पुरुष के) अधिकारी सरूप [—अइ—] व कर्मकारकीय प्रत्यय [—हा] का व्यवहार कुछ इसी प्रकार की स्थानीय प्रवृत्तियाँ हैं।

शब्द स्तर पर 'खीर्' के स्थान पर 'चसुमई' (मानचित्रानुक्रम 261), 'रेउवा' के स्थान पर 'फत्कुली' (मानचित्रानुक्रम 293), 'खरिहान्' के स्थान पर 'गराहा' (गल्ला + राहा का सम्मिश्रण, मानचित्रानुक्रम 273), व 'बटिहा' के स्थान पर 'बट्रोडा' बटिहा + उपरोड़ा, (मानचित्रानुक्रम 280) यहाँ की *स्थानीय विशेषताएँ हैं।*

5. स्यौंयर-क्षेत्र

स्यौंयर-क्षेत्र की उच्चारण-सम्बन्धी प्रमुख विशेषता शब्दांत में [—इ] का प्रयोग है। मानचित्रावली के 19वें मानचित्र में 'तीन्', 'चार्' व 'सात्' का उच्चारण सब क्षेत्र में क्रमश 'तीनि', 'चारि' व 'साति' है। उच्चारणगत अन्य प्रवृत्तियों को सारिणी में दर्शाया गया है।

संकेत-शब्द	बहुप्रचलित उच्चारण	स्थानीय उच्चारण	मानचित्रानुक्रम
सँउँहे	[—ए]	[—ø—]	7
छ	[—अ]	[—अइ]	12
परोँ, परोँ	[—ओँ]	[—उँ]	15

सम्भार	[—म—]	[—ब—]	28
नऊ	[—अउ]	[—ओँअ]	43
दुइ	[—उइ]	[—उ]	45
त्रेता	[त्र—]	[तिअ्—]	47
माप्टर्	[—प्ट्—]	[—ट्ट्—]	52
बिरसवत्	[बि—]	[बृरि—]	54

रूपप्रक्रियात्मक मानचित्रों में (भविष्य सम्भावनार्थ) मध्यम पुरुष एकवचन की विभक्ति [—ऐ] (मानचित्रानुक्रम 79), (भूतनिश्चयार्थ) अन्य पुरुष एकवचन आदरार्थी विभक्ति [—नि[, सहायक क्रिया की भूतनिश्चयार्थ धातु [रह्+त्], सहायक क्रिया की वर्तमान निश्चयार्थ धातु [आ], उत्तम पुरुष (एकवचन तथा बहुवचन) की विभक्ति [—ऐँ], वर्तमान निश्चयार्थ) अन्य पुरुष एकवचन की विभक्ति [—य्], [मध्यम पुरुष एकवचन के) अविकारी सरूप [—अँ] (मानचित्रानुक्रम 157], मध्यम पुरुष (कर्मकारकीय) विकारी बहुवचन [—आँह्—] (मानचित्रानुक्रम 168) इस क्षेत्र की प्रमुख विशेषताएँ है।

शब्दप्रक्रियात्मक विशेषताओ मे 'मदिरा' (मानचित्रानुक्रम 260), 'रसिआवा' (खीर, मानचित्रानुक्रम 261), 'कोवा' (महुए का फल, मानचित्रानुक्रम 270), आदि शब्द प्रमुख रूप से इसी क्षेत्र में मिलते है तथा इनकी यात्रा सीमित है।

अर्थप्रक्रियात्मक दृष्टि से अकेले 'गदेला' शब्द समूचे त्योंथर को इतर क्षेत्रों से पृथक् कर देता है (मानचित्रानुक्रम 333)। यहाँ 'गदेला', 'लड़का' का वाचक है, जब कि शेष बघेलखंड में यह 'गद्दा' या 'बड़ी गदेली' के अर्थ मे प्रयुक्त होता है।

6. सिरमौर-क्षेत्र

सिरमौर-क्षेत्र अधोलिखित ध्वनिकीय प्रवृत्तियो के कारण पृथक् अभिलक्षित होता है।

संकेत शब्द	बहुप्रचलित उच्चारण	स्थानीय उच्चारण	मानचित्रानुक्रम
सम्भार्	[—अ]	[—ओ—]	
छ	[—अ]	[—अइ]	11
रामन्	[—न	[इ्]	30

गुन्गुल्	[—ल्]	[—द्]	31
अउर्	[अउ]	[अऊ—]	42
त्रेठा	[त्र्—]	[त्ँ—]	47

रूपप्रमियात्मक दृष्टि से क्रिया-रूपसिद्धि में यहाँ विशिष्टता मिलती है। (वर्तमान निश्चयार्थ में प्रयुक्त) मध्यम पुरुष एकवचन की विभक्ति [—ए], मानचित्रानुक्रम 108), (वर्तमान आज्ञार्थक में प्रयुक्त) मध्यम पुरुष बहुवचन की विभक्ति [—उ], (वर्तमान निश्चयार्थ में प्रयुक्त) अन्य पुरुष बहुवचन की विभक्ति [—मा], व वर्तमान कालिक कृदतीय रूप [—इथ्—] (मानचित्रानुक्रम 129) इसी प्रकार के है।

शब्दप्रक्रियात्मक भिन्नता की दृष्टि है 'गूलर्' (मेंढक) के लिए 'कट्रा' (मानचित्रानुक्रम २५२), 'डोरी' (महुए का फल) के लिए 'पोकूना' (मानचित्रानुक्रम २७०), तथा 'वटिहा' के लिए 'ठीहा' (मानचित्रानुक्रम २८०) उल्लेखनीय है।

7. मऊगंज-क्षेत्र

इस क्षेत्र को एक पूर्ण क्षेत्र म अभिलक्षित करने वाली व इतर क्षेत्रों से इसका पृथकत्व बताने वाली अभिव्यक्तियों में [-इ] का आगम (चाहे' के स्थान पर 'चहि', मानचित्रानुक्रम 19), वर्त्स्य पार्श्विक + कोमलतालव्य ध्वनियों का समीकरण ('गुल्गुल्' का 'गुग्गुल्' मानचित्रानुकम 31), अग्र, स्वर-श्रुति का अग्र (उच्चतर मध्य अगोलित दीर्घ) स्वर म परिवर्तन ('य की [य्] का [ए-], मानचित्रानुक्रम 37), अघोप सघर्पी का सघोप काकल्य सघर्पी (-पट्-∠-हट्, मानचित्रानुक्रम 51), में स्थापन, आदि प्रमुख विशेषताएँ है।

रूपप्रक्रियात्कक आधार पर यहाँ क्रिया विभक्तियों तथा सज्ञा विभक्तियों म स्थानीय तत्व उपलब्ध होते हैं। भविष्य सदेहार्थ (अन्य पुरुष एकवचन) विभक्ति [-इह-] (मानचित्रानुक्रम 103), (भविष्य विनयार्थ) मध्यम पुरुप बहुवचन विभक्ति में [-ऍं]' तथा सज्ञा के दीर्घतर रूप [-अउन्] मानचित्रानुक्रम 139) असमान तत्व है।

शब्दप्रक्रिया के अंतर्गत यह असमानता 'गूलर्' (मेंढक) के लिए 'मेघा', व 'पोपा' के लिए प्रयुक्त 'छाता' शब्दों में मिलती है।

8. रीवा-क्षेत्र

ध्वनिप्रक्रिया की दृष्टि से रीवा-क्षेत्र की प्रमुख विशेषता 'अग्हन्' की आदि

[अ-] के [एँ-] में परिवर्तित होने की है (मानचित्रानुक्रम 8) [-अँउँ] में अनुनासिकता के नासिक्य [-अमु-] में बदल जाने की है (मानचित्रानुक्रम 44)।

रूपप्रक्रिया के अतर्गत क्रिया की विभक्तियो में उत्तम (एकवचन तथा बहुवचन) की विभक्ति [यन्] (मानचित्रानुक्रम '07), मध्यम पुरुष (एकवचन) की विभक्ति [-यन्] (मानचित्रानुक्रम 107), मध्यम पुरुष (एकवचन) की विभक्ति [-आ], एव वर्तमान कालिक कृदतो रूप [-त्], तथा सज्ञा विभक्तियो के अतर्गत 'राच्छन्' के मूलरूप के स्थान पर 'राकछत्' (मानचित्रानुक्रम 138), सज्ञा के दीर्घतर रूप [-एव्] (मानचित्रानुक्रम 139) महत्वाधायक हैं।

दक्षिण-पश्चिमी क्षेत्र

9. सीधी-क्षेत्र

सीधी क्षेत्र में सोन नदी की तलहटी में अग्र तालव्य अर्द्ध-स्वर [य्] का उच्चारण अग्र निम्नतर उच्च अगोलित पश्चीकृत शिथिल ह्रस्व स्वर [इ] में होता है (मानचित्रानुक्रम 37) तथा [इउ-] स्वरक्रम के विपर्यय [उइ-] की प्रवृत्ति मिलती है। बघेलखड के अतर्गत इस समुदाय की विशिष्टता 'एँह्' के लिए ? अ (विस्मयबोधक) के प्रयोग में है (शब्दानुक्रम 118)। इस प्रकार के काकल्य स्पर्श का उच्चारण केवल यही सुनने को मिलता है।

रूपप्रक्रिया की दृष्टि से इस क्षेत्र की अधोलिखित प्रवृत्तियाँ उल्लेखनीय हैं।

क्रिया-विभक्तियाँ

(क) सातत्यबोधक सहायक क्रिया की 'लाग्' धातु का प्रयोग (मानचित्रानुक्रम 100)।

(ख) उत्तम पुरुष (एकवचन तथा बहुवचन) की [मय] विभक्ति (मानचित्रानुक्रम 107)।

(ग) (भविष्य सभावनार्थ) मध्यम पुरुष एकवचन की [-या] विभक्ति (मानचित्रानुक्रम 79)।

(घ) (भूत निश्चयार्थ) अन्य पुरुष बहुवचन की [ए] विभक्ति (मानचित्रानुक्रम 84)।

(ङ) पूर्व कालिक कृदतीय रूप [-कै] (मानचित्रानुक्रम 133)।

सज्ञा-विभक्तियाँ

(च) 'सैठ्' की मूलरूपसाधक प्रकृति के रूप में 'सह्' (मानचित्रानुक्रम 133)।

(ख) 'राक्छस्' की मूलरूपसाधक प्रकृति के रूप में 'रेंक्छस्' (मानचित्रानुक्रम 138) ।

(ग) स्त्रीलिंग संज्ञा के दीर्घ रूप [-इआ-] का प्रयोग (मानचित्रानुक्रम 141) ।

सर्वनाम-विभक्तियाँ

(क) अन्य पुरुष निश्चययाचक निकटस्थ एकवचन की प्रकृति 'इ' (मानचित्रानुक्रम 149) ।

(ख) (मध्यम पुरुष) का अधिकारी एकवचन सरूप [-ए] (मानचित्रानुक्रम 156) ।

(ग) (मध्यम पुरुष) अधिकारी बहुवचन का सरूप [-ए] (मानचित्रानुक्रम 157) ।

(घ) अन्य पुरुष अनिश्चयवाचक प्रश्नसूचक अविकारी एकवचन का संरूप [-उ] (मानचित्रानुक्रम 162) ।

कारकीय प्रत्यय

कर्मकारकीय प्रत्युय [-हां] का प्रयोग एकमात्र इसी क्षेत्र मे होता है (मानचित्रानुक्रम 203) ।

'पेंघा' (मेंढक, मानचित्रानुक्रम 252) तथा 'कुंदिरा' (घोंघा,,मानचित्रानुक्रम 272) यहाँ के विशिष्ट शब्द-रूप है ।

10. देवसर क्षेत्र

देवसर-क्षेत्र की ध्वनिगत विशेषाओ में वर्त्स्य-पार्श्विक का वर्त्स्य लुंठित मे परिवर्तन (मानचित्रानुक्रम 31) व अग्र निम्नतर-उच्च अगोलित पश्चीकृत शिथिल स्वर का तालव्य अग्र स्वर श्रुति ग्रहण करना है ।

रूपप्रक्रियात्मक विशेषताओ के अंतर्गत दर्शनार्थक धातु का 'देक्' रूप (मानचित्रानुक्रम 66), सहायक क्रिया की भूत निश्चयार्थ धातु 'रॅह्' (मानचित्रानुक्रम 88), सहायक क्रिया की वर्तमान निश्चयाथक धातु 'ब्' (मानचित्रानुक्रम 93), मूलक्रिया की भूत निश्चयार्थ (अन्य पुरुष एकवचन) विभक्ति [-अल्-] (मानचित्रानुक्रम 71), जो भूतकालिक कृदती विभक्ति के रूप में प्रयुक्त (मानचित्रानुक्रम 121) होती है, (भूत निश्चयार्थ) अन्य पुरुष बहुवच की विभक्तियो में [-यू] तथा [-ना] (मानचित्रानुक्रम 84), उत्तम पुरुष (एकवचन तथा बहुवचन) की की विभक्ति [-ईं] (मानचित्रानुक्रम 107), (भविष्य सदेहार्थ में प्रयुक्त) मध्यम

पुरुष बहुवचन की विभक्ति [-या] (मानचित्रानुक्रम 110), (वर्तमान निश्चयार्थ में प्रयुक्त) अन्य पुरुष बहुवचन की विभक्ति [-आ] मानचित्रानुक्रम 116), आदि क्रियारूपसिद्धिमूलक विशेषताएँ है।

इसी प्रकार सज्ञा-रूपसिद्धि में 'सेठ्' (मानचित्रानुक्रम 134), सर्वनाम-रूपसिद्धि के अन्तर्गत (उत्तम पुरुष) का अविकारी रूप [उ] (मानचित्रानुक्रम 155), व (मध्यम पुरुष एकवचन का) अविकारी रूप [-अहँ] (मानचित्रानुक्रम 156) क्षेत्र की बहुप्रचलित विशेषताएं हैं।

'खीर्' के लिए 'वरवीर' (मानचित्रानुक्रम 261), 'वेंर्र' के लिए 'ग्वचना' 'गोह् + ग्वजई', तथा 'ग्वजई (मानचित्रानुक्रम 266), व 'कुवँहुडा' के लिए 'विलहुती' शब्दगत विशिष्टताएँ है।

11.सिगरौली-क्षेत्र

अब तक विवेचित उपबोली क्षेत्रो की तुलना मे सिंगरौली क्षेत्र बघेलखड का सर्वाधिक सुस्पष्ट व अलग-थलग उपबोली क्षेत्र माना जा सकता है। इस की समभाषाश रेखाओ के सघात आज भी इतने अधिक स्थिर है कि बाहरी प्रभावो स यह अछूता सा है। इसीलिए इसे अवशिष्ट क्षेत्र घोषित किया गया है।

ध्वनिप्रक्रियात्मक दृष्टि स इस क्षेत्र की प्रमुख दो प्रवृत्तियो का सकेत किया जा सकता है। प्रथम प्रवृत्ति के अनुसार इतर क्षेत्रो में व्यवहृत व्यजनात शब्दो की प्रवृत्ति यहाँ स्वरात होने की है। तदनुसार पार्श्ववर्ती क्षेत्रो म उच्चरित व्यजनान्त शब्दो के में यहाँ के लोग प्राय अनाभरिक केंद्रीय स्वर [अ] का व्यवहार करते है। द्वितीय प्रवृत्ति के अनुसार अन्य उपबोली क्षेत्रो के 'मदार', 'एंगुर्,' व सेंदुर' आदि शब्द यहाँ पहुँच कर क्रमश 'मनार्' (मानचित्रानुकम 267), 'एनुर' (शब्दानुक्रम 277), व 'सेनुर्' (शब्दानुक्रम 277) आदि हो जाते है। आदि शब्द से यहाँ 'बाँदर्', 'चाँदी', 'जोंधरी' शब्दो की ओर सकेत है जो क्रमश 'बानर्', 'चानी', (जोनरी' रूप में मिलते है। इस आधार पर यह नियम बनाया जा सकता है कि शब्द के प्रथम अक्षर में यदि कोई अनुनासिक या नासिक्य ध्वनि होती है, तो उसका यहाँ लोप या समीकरण हो जाता है तथा द्वितीय अक्षर के आरम्भ की सघोष स्पर्श व्यजन ध्वनि वर्त्स्य नासिक्य में बदल जाती है। इसस सबध अधस्तन सूत्र है—

सघोष स्पर्श→वर्त्स्य नासिक्य/नासिक्य या अनुनासिकता

(क) नासिक्य + स्व० + सघोष स्पर्श→नासिक्य + स्व० + वर्त्स्य नासिक्य, उदाहरणार्थ

मदार्→मनार्

निदाई→निनाई

(ख) स्व० + अनुनासिकता + सघोष स्पर्श→स्व० + ∅ + वर्त्स्य नासिक्य, उदाहरणार्थ

एँगुर→एनुर्

सेंदुर्→सेनुर

चाँदी→चानी

इस क्षेत्र की अन्य ध्वनिकीय विशेषताएँ सारणी में प्रस्तुत है .—

सवेत शब्द	बहुप्रचलित उच्चारण	स्थानीय उच्चारण	मानचित्रानुक्रम
एक्	[ए—]	[एँ—]	4
छ्	[—अ]	[—अव्]	11
भादँव्	[—अँव्]	[—ओँ]	16
चाह्	[—ϕ]	[—एँ]	18
गुलगुल्	[—ल्]	[—ज्]	31
छिउला	[—इउ—]	[—इहु—]	39
अइतवार्	[अइ—]	[ऐ—]	40
चइत्	[—अइ—]	[—या—]	41
नउ	[—अउ]	[—उ]	43
दुइ	[—उइ]	[—उइ]	45
कुँआर्	[—उँआ]	[—वा—]	46
अगहन्	[—गह्—]	[—गह्—]	49

रूपप्रक्रियात्मक भेदक तत्वों को यहाँ विविध रूपसिद्धियों के अनुक्रम म प्रस्तुत किया जा रहा है।

क्रिया-रूपसिद्धि

(क) दानार्थक धातु के भूतकालिक कृदंतीय मूलरूप के लिए 'देहूँ' (मानचित्रानुक्रम 61)

(ख) भूत निश्चयार्थ (उत्तम पुरुष पुल्लिंग) विभक्ति [—इल्—] (मानचित्रानुक्रम 70)

(ग) भूत निश्चयार्थ अन्य पुरुष बहुवचन की विभक्ति [—ने—[(मानचित्रानुक्रम 84)

(घ) सहायक क्रिया की वर्तमान निश्चयार्थक धातु 'ल्' (मानचित्रानुक्रम 93)

(ङ) सहायक क्रिया की वर्तमान निश्चयार्थक धातु 'व्' (मानचित्रानुक्रम 95)

(च) (वर्तमान निश्चयार्थ) पुल्लिंग विभक्ति [—एँ—] तथा [—ई—] (मानचित्रानुक्रम 105)

(छ) (भूत संकेतार्थ) अन्य पुरुष बहुवच की विभक्ति [—ऐं—] (मानचित्रानुक्रम 115)

(ज) (वर्तमान निश्चयार्थ में प्रयुक्त) अन्य पुरुष बहुवचन की विभक्ति [—आने] (मानचित्रानुक्रम 116)

(झ) (मध्यम पुरुष में प्रयुक्त) भूतकालिक कृदंत विभक्ति [—यन्—] (मानचित्रानुक्रम 120)

(ञ) प्रथम प्रेरणार्थक रूप [—आ] (मानचित्रानुक्रम 117) तथा द्वितीय प्रेरणार्थक रूप[—वाव] (मानचित्रानुक्रम 118)

सर्वनाम-रूपसिद्धि

मध्यम पुरुष (कर्म कारकीय) विकारी बहुवचन [—वह्—] (मानचित्रानुक्रम (168)

परसर्ग

कर्म कारकीय परसर्ग 'पै' (मानचित्रानुक्रम 208)

शब्द प्रक्रियात्मक स्तर पर 'गूलर्' के लिए 'वेंगा' (मानचित्रानुक्रम 252), 'कवेंहड़ा' के लिए 'भुअरा' (मानचित्रानुक्रम 269), 'घोपा' के लिए 'भद्दरी' (मानचित्रानुक्रम 272), 'नरदा' के लिए 'पनरा व 'पनारा' (मानचित्रानुक्रम 278), 'दोयूहर्' के लिए 'जाडर्' (शब्दानुक्रम 261), 'ओंठ' के लिए 'लेबुर्' (शब्दानुक्रम 49) प्रयोगों में स्थानीय विशिष्टता विद्यमान है।

अर्थप्रक्रियात्मकता के अनुसार भी भेदकता सुस्पष्ट है। 'धोतिआ' (धोती यहाँ पुरुषों का अधोवस्त्र है, जब कि बघेलखंड के व्यापक क्षेत्र में इसका तात्पर्य 'स्त्रियों के अधोवस्त्र' (मानचित्रानुक्रम 318) से है। इसी प्रकार आज से सातवें दिन की गणना 'धरो' शब्द से यहाँ के माडा नामक में की जाती है, जब कि बघेलखंड में सात दिन की गणना की परंपरा नहीं है (शब्दानुक्रम 288)।

12. व्योहारी-क्षेत्र

बघेलखंड के व्यापक भाग में प्रयुक्त 'खरिहान' शब्द इस उपबोली क्षेत्र तक पहुँचते पहुचते व्यंजन विपर्यास को प्राप्त कर 'रवनिहार' बन जाता है। इस

विशेषता के अतिरिक्त अन्य ध्वनिसंबंधी विशेषताएँ अधोलिखित हैं।

संकेत-शब्द	बहुप्रचलित उच्चारण	स्थानीय उच्चारण	मानचित्र
चस्मा	[—अ—]	[—ए—]	10
चस्मा	[—च्—]	[—ट्—]	24
सँउँहे	[—अँउँ—]	[—अम्—]	44
दुइ	[—उइ—]	[—वइ—]	45
गुलगुल्	[—लग्—]	[—ज्ज्—]	50

इस क्षेत्र को रूपप्रक्रियात्मकता की दृष्टि से पृथक् करने वाले तत्त्वों मे भूत निश्चयार्थ (अन्य पुरुष एकवचन) विभक्ति [—एँ—] (मानचित्रानुक्रम 71), (उत्तम पुरुष का) अविकारी सरूप [—अँय्—] (मानचित्रानुक्रम 155), आदि हैं।

'गूलर्' को 'वेंग्चा', 'घोपा', को 'मैरा', तथा 'कलट्टर्' (कनष्टर) को 'टीका' (मानचित्रानुक्रम 275), 'बटिहा' को 'कण्डहा' (मानचित्रानुक्रम 280), 'प्रात: काल' को 'भमरभोला' (शब्दानुक्रम 261), व 'ओठ्' को 'लेंबुरा' (शब्दानुक्रम 49) शब्दप्रक्रियात्मक रूप में स्थानापन्न है।

बांदीगढ़-क्षेत्र की ध्वनियो में इस प्रकार की स्थानापन्नता मिलती है।

संकेत-शब्द	बहुप्रचलित उच्चारण	स्थानीय उच्चारण	मानचित्रानुक्र
सनीचर्	[—ई—]	[—इ—]	1
विरस्पत्	[—इ—]	[—य—]	3
जेठ्	[—ए—]	[—आ—]	5
सनीचर्	[—घ्—]	[—च्च्—]	1
माघ्	[—घ्—]	[—ग्—]	27
रामन्	[—म—]	[—य्—]	29
चिरई	[—र्—]	[—ङ्—]	32
अघोर्	[—र्—]	[—न्—]	शब्दानुकम 277
चस्मा	[—स्—]	[—घ्—]	5
पूस्	[—स्—]	[—श्—]	134
छिउला	[—इउ—]	[—उ—]	39

इस क्षेत्र का उत्तरी भाग अवशिष्ट क्षेत्र के रूप मे प्रदर्शित किया गया है,

अतएव यहाँ अवशिष्ट रूपों को भी खोजा जा सकता है। रूपात्मकता की दृष्टि से सहायक क्रिया-रूपसिद्धि में पुरुष विभक्ति की दृष्टि से यह अन्य क्षेत्रों की उपबोली से भेदक है। (वर्तमान सम्भावनार्थक में प्रयुक्त) मध्यम पुरुष एकवचन आदरार्थी विभक्ति [—न्—] (मानचित्रानुक्रम 109) व (भविष्य संदेहार्थ) अन्य पुरुष एकवचन की विभक्ति [—ऐ—] सर्वथा भेदक हैं। इसी प्रकार समूचे बघेलखंड में केवल यही एक ऐसा क्षेत्र है, जहाँ प्रथम प्रेरणार्थक व द्वितीय प्रेरणार्थक दोनों ही रूप [—बाउ—] एक समान हैं (मानचित्रानुक्रम 117, 118)। वर्तमान कालिक कृदंतीय रूपों में यहाँ [—उच्—] (मानचित्रानुक्रम 129) प्राप्त होता है।

'राक्छ्स्' का मूलरूपसाधक भाषिकातर का यहाँ रासुछ्स् (मानचित्रानुक्रम 138) हो जाता है। अन्य पुरुष निश्चयवाचक निकटस्थ (सर्वनाम) एक वचन की प्रकृति 'इय्' है तथा (उत्तम पुरुष के) अधिकारी संख्या के लिए [—ओ—] विद्यमान है (मानचित्रानुक्रम 149 व 155, क्रमशः)। निकटस्थ संकेतवाची सार्वनामिक क्रिया विशेषण का समय सूचक संख्या [—ग्—] यहाँ की उपबोली में थोड़ी की आवश्यकता का वाचक है (मानचित्रानुक्रम 193)।

'कुवेंहड़ा' के लिए 'लकुटन् + टप्पो' मानचित्रानुक्रम 269), 'घोपा' के लिए 'खेंधरा' व 'खूबेंधरा' (कोटर) (मानचित्रानुक्रम 272), 'वटिहा' के लिए 'डेरस्', 'ढेडस्', 'डेडस्', बरेठा', व 'रेठा', आदि शब्दों (मानचित्रानुक्रम 280) का अपना स्वतन्त्र इतिहास है।

यहाँ पर 'गूदी' शब्द मस्तक का वाचक है, जब कि घरौंदा व नागाद क्षेत्र में यह 'भामि का व्यंजक है (मानचित्रानुक्रम 328)।

14. सोहागपुर-क्षेत्र

इस क्षेत्र की उच्चारणगत विशिष्टताएँ अधस्तन सारणी में निबद्ध हैं।

संकेत शब्द	बहुप्रचलित उच्चारण	स्थानीय उच्चारण	मानचित्रानुक्रम
चाह्	[—ø—]	[—इ—]	18
य	[—य्—]	[—इय्—]	37
सँउँहे	[—अँउँ—]	[—अमु—]	44
त्रेता	[—त्र—]	[—तिर्—]	47
बुद्ध्	[—द्ध्—]	[—द्—]	48
माप्टर्	[—प्ट्—]	[—ट्—]	51

रूपप्रक्रिया की दृष्टि से विभक्ति-रूपों में निम्नलिखित विशेषताएँ मिलती है।

क्रिया-रूपसिद्धि

(क) दर्शनार्थक धातु की 'दिस्' धातु (मानचित्रानुक्रम 66)।
(ख) (भूत निश्चयार्थ) उत्तम पुरुष की विभक्ति [—ऑ...] (मानचित्रानुक्रम 76)।
(ग) (भूतनिश्चयार्थ) अन्यपुरुष बहुवचन की विभक्ति [—न्—] (मानचित्रानुक्रम) 84)।
(घ) सहायक क्रिया की भूत निश्चयार्थ धातु 'रह्+हूं' (मानचित्रानुक्रम 89)।
(ङ) उत्तम पुरुष (एकवचन तथा बहुवचन की) विभक्ति [—ऍव्—] (मानचित्रानुक्रम 107)।
(च) वर्तमानकालिक कृदंती रूप [—वथ्—] (मानचित्रानुक्रम 129)।

सर्वनाम-रूपसिद्धि

(क) अन्य पुरुष अनिश्चयवाचक प्रश्नसूचक अधिकारी एकवचन का रूप [—ओन्—] (मानचित्रानुक्रम 162)।
(ख) उत्तम पुरुष (कर्मकारकीय) का विकारी सख्या [—ओ—] (मानचित्रानुक्रम 165)।

शब्दरूपो की क्षेत्रीय विशिष्टता समुच्चयबोधक अव्यय 'मून्' (अगर) (मानचित्रानुक्रम 307) के प्रयोग, 'मूलर्' के लिए 'मेंघ्का' तथा 'मेंभ्कूर्' के व्यवहार (मानचित्रानुक्रम 252), कर्वंहडा' के स्थान पर 'नेवा' शब्द पर अधिक रुचि (मानचित्रानुक्रम 269), 'डौरी' के लिए 'गारा (ध्यातव्य है कि गोंडी में गारा' अंडे का वाचक है और यह आर्य शब्द नही है) शब्द का प्रयोग (मानचित्रानुक्रम 270), 'घोपा' के बदले 'महुया', 'डाभा', आदि शब्दो (मानचित्रानुक्रम 272), 'वटिहो' के लिए 'कूड़ा' (सस्कृत कूट) व 'गोबरउरा' बोलने की प्रवृत्ति (मानचित्रानुक्रम 280), व 'वान्' की अपेक्षा 'धनूही' सब्द मानचित्रानुक्रम 281) के अधिक पालन मे है।

15.मेकल-क्षेत्र

मेकल क्षेत्र की उपबोली सिंगरौली-क्षेत्र की उपबोली अधिक से भी अधिक भेदक है; क्षेत्र को घेरने वाली समभाषाश-रेखाओ के सघातो का जमाव जितना अधिक यहाँ मिलता है, उतना बघेलखड के किसी अन्य क्षेत्र में नही मिलता।

(च) (वर्तमान सभावनार्थ) अन्यपुरुप एकवचन की विभक्ति [—स्—] (मानचित्रानुक्रम 85) यही विभक्ति मध्यम पुरुष एकवचन आदरार्थी (वर्तमान संभावनार्थ में प्रयुक्त) विभक्ति भी है (मानचित्रानुक्रम 109), तथा इसी का व्यवहार अन्य पुरुष एकवचन (भूतसंकेतार्थ) में भी होता है (मानचित्रानुक्रम 115) कृदंतीय रूपों में यह मध्यम पुरुष एकवचन की वाचक है (मानचित्रानुक्रम 124)

सर्वनाम-रूपसिद्धि

(क) सर्वनाम अन्य पुरुष सकेतवाची दूरस्थ एकवचन की प्रकृति 'हृ' तथा 'ओ' (मानचित्रानुक्रम 151)
(ख) (मध्यम पुरुष एकवचन) का अधिकारी सरूप [—अँ) (मानचित्रानुक्रम 156)

संज्ञा-रूपसिद्धि

(क) 'घोड़' के लिए विविध प्रकृतियाँ—गोंइड्, गोंद्द्, गोंद्घ्, गद्घ्, गध्, खध् (मानचित्रानुक्रम 135)
(ख) 'देउत्' की मूलप्रकृति 'देउ' (मानचित्रानुक्रम 137)
(ग) 'राकूछस्' की मूलप्रकृति 'रातचर् (मानचित्रानुक्रम 138)

प्रत्यय व परसर्ग

[क] कर्तृकारकी परसर्ग 'ने' (मानचित्रानुक्रम 197)
[ख] कर्मकारकीय प्रत्यय [—हृ—] (मानचित्रानुक्रम 203) य (मानचित्रानुक्रम 204), 'ल' (मानचित्रानुक्रम 214), 'ला' (मानचित्रानुकम 215), ख + ल (मानचित्रानुक्रम 217)
(ग) करण कारकीय परसर्ग 'ल' (मानचित्रानुक्रम 218)
(घ) सबधकारकीय (उत्तम पुरुष तथा मध्यम पुरुष) प्रत्यय [—इ] के के स्थान पर [—अ] (मानचित्रानुक्रम 219)
(ङ) प्रतिबंधक बलवाची प्रत्ययों के स्थान पर 'गाँछ्' शब्द का व्यवहार (मानचित्रानुक्रम 232)

मैकल-क्षेत्र में जहाँ सर्वथा भेदक रूपों को समीकृत कर लिया है, वहाँ शब्दावली में भी सर्वथा स्थानीय शब्द छाये हुए हैं। इनमें से कुछ अधोलिखित हैं।

चित्रकूट से चलकर अमरकंटक तक पहुँचते-पहुँचते शब्द अपनी आकृति में विस्मय-जनक परिवर्तन कर लेते है। चित्रकूट का 'घोड़ा' या 'घोडी' यहाँ आकर क्रमश. 'गधा' व 'गधी' बन गये है (मानचित्रानुक्रम 143, 144, 145)। किसी को विश्वास न होगा कि यह कायाकल्प वस्तु में नही, शब्द में ही है। इस प्रकार के परिवर्तन को गोडी की उधस्तलता से ही सुस्पष्ट किया जा सकता है। प्रस्तुत प्रबंध का यह लक्ष्य नही है।

ध्वनिप्रक्रियामूलक विशिष्टताओ को यहाँ प्रस्तुत किया गया है।

संकेत-शब्द	बहुप्रचलित उच्चारण	स्थानीय उच्चारण	मानचित्रानुक्रम
एक्	[ए—]	[य—]	4
सात् (गोडी थारु)	[—त्]	[—र्]	22
माघ्	[—घ्]	[—ग्], [—ह्]	27
कुँआर्	[—उँआ—]	[—वाँ—	46
त्रेता	[त्र्—]	[—र्—]	47
बुद्ध	[—द्ध्]	[—द्]	48

रूपप्रक्रियात्मक दृष्टि से इस क्षेत्र की उपबोली ने सर्वथा भेदक प्रवृत्तियो को अर्जित कर लिया है। इनमें बहुवचन के रूपो का सर्वथा अभाव व सर्वथा भेदक परसर्गों का प्रयोग उल्लेखनीय है। यहाँ रूपसिद्धि के क्रम से विशिष्टताओ का संकेत है।

क्रिया-रूपसिद्धि

(क) भविष्य संभावनार्थ (मध्यम पुरुष एकवचन) विभक्ति [—इव्—] (मानचित्रानुक्रम 67)

(ख) भविष्य विनयार्थ (मध्यम पुरुष एकवचन) विभक्ति [—इह्—] (मानचित्रानुक्रम 69)

(ग) भूतनिश्चयार्थ विभक्ति [—इ—] (मानचित्रानुक्रम 71)

(घ) (वर्तमान संभावनार्थ) पुल्लिंग विभक्ति [—इ—] (मानचित्रानुक्रम 75), इतर क्षेत्रो मे यह स्त्रीलिंग विभक्ति है।

(ङ) (भूतनिश्चयार्थ) उत्तम पुरुष की विभक्ति (—व्—) (मानचित्रा-नुक्रम 76)

(च) (वर्तमान संभावनार्थ) अन्यपुरुप एकवचन की विभक्ति [—स्—] (मानचित्रानुक्रम 85) यही विभक्ति मध्यम पुरुप एकवचन आदरार्थी (वर्तमान संभावनार्थ में प्रयुक्त) विभक्ति भी है (मानचित्रानुक्रम 109), तया इसी का व्यवहार अन्य पुरुप एकवचन (भूतसंकेतार्थ) मे भी होता है (मानचित्रानुक्रम 115) कृदंतीय रूपो में यह मध्यम पुरुप एकवचन की वाचक है (मानचित्रानुक्रम 124)

सर्वनाम-रूपसिद्धि

(क) सर्वनाम अन्य पुरुप सकेतवाची दूरस्थ एकवचन की प्रकृति 'हू' तया 'ओ' (मानचित्रानुक्रम 151)
(ख) (मध्यम पुरुप एकवचन) का अधिकारी सरूप [—अँ) (मानचित्रानुक्रम 156)

संज्ञा-रूपसिद्धि

(क) 'घोड़' के लिए विविध प्रकृतियाँ—गोंइड़, गोंइ्ड़, गोंड्घ्, गद्घ्, गध्, खध् (मानचित्रानुक्रम 135)
(ख) 'देउत्' की मूलप्रकृति 'देउ' (मानचित्रानुक्रम 137)
(ग) 'राकूछस्' की मूलपद्गति 'रातचर् (मानचित्रानुक्रम 138)

प्रत्यय व परसर्ग

[क] कर्तृकारकी परसर्ग 'ने' (मानचित्रानुक्रम 197)
[ख] कर्मकारकीय प्रत्यय [—ह्—] (मानचित्रानुक्रम 203) य (मानचित्रानुक्रम 204), 'ल' (मानचित्रानुक्रम 214), 'ला' (मानचित्रानुक्रम 215), ख + ल (मानचित्रानुक्रम 217)
(ग) करण कारकीय परसर्ग 'ल' (मानचित्रानुक्रम 218)
(घ) सवधकारकीय (उत्तम पुरुप तया मध्यम पुरुप) प्रत्यय [—इ] के के स्थान पर [—अ] (मानचित्रानुक्रम 219)
(ङ) प्रतिबंधक बलवाची प्रत्ययो के स्थान पर 'गांछ्' शब्द का व्यवहार (मानचित्रानुक्रम 232)

मैकल-क्षेत्र में जहाँ सर्वथा भेदक रूपो को समीकृत कर लिया है, वहाँ शब्दावली में भी सर्वथा स्थानीय शब्द छाये हुए हैं। इनमें से कुछ अधोलिखित है।

वहुप्रचलित शब्द	स्थानीय शब्द	मानचित्रानुक्रम
गूलर (मेंढक)	टें ट्का, टट्का	252
डोर (महुए का फल)	गुल्ली	270
वटिहा	छेर्नेह् रा	280
घोतिआ	ओं ढ़ना	248
सीगट् (शृगाल)	को लिहा	250
रुख् (इक्षु)	कों सिजार्, वराही	264
कुवेंह् ड़ा	गलीं च्, गलीज्	269
खरिहान्	कोठा, कुवठार्	273
नर्दा	उवका	378
वान्	काँडू	281
ओं टू	सीली, चों ज्, चों हू	शब्दानुक्रम 49
गोधूली	करछी + कॅमल्	शब्दानुक्रम 261
सायंकाल	माजी + वेरा	शब्दानुक्रम 261

'रुख् शब्द का अर्थ केवल मेकल-क्षेत्र मे 'वृक्ष' है, जव कि शेष वघेलखंड में यह 'इक्षु ' का वाचक है।

7.9. उपबोली-क्षेत्रों की विशिष्टता-बोधक प्रमुख समभाषांशों की तुलनात्मक सारणी

उपर्युक्त पृष्ठो में जिन उपबोली-क्षेत्रो की संक्षिप्त भाषिक रूपरेखा प्रस्तुत की गई है, *उनसे यदि बघेलखंड के पंद्रह उपबोली-क्षेत्रो को स्थानीय विशिष्टता का* बोध होता है, तो इसका यह भाव कदापि नही है कि ये उपबोली-क्षेत्र परस्पर दुखबोधकतामूलक हैं। द्वितीय खण्ड के पंचम अधिकरण में ऐसी 6 अभिव्यक्तियों की चर्चा की जा चुकी है, जो संपूर्ण बघेलखंड में समान रूप से मिलती है। इनके अतिरिक्त अनेक ऋणात्मक समभाषाश-रेखाओ के संघात (ऐसी समभाषाश-रेखा जिसमें समध्वनि, समरूप, समशब्द, या समार्थ-रेखाओ में से किसी एक या दो का अभाव है, उसे मैंने ऋणात्मक समभाषाश रेखा कहा है) स्थानीय क्षेत्र से वाहर विविध क्षेत्रों मे विकीर्ण है, जिनके आधार पर विविध क्षेत्रो की प्रजनन व्याख्या की जा सकती है। यहाँ ध्वनि, रूप, शब्द, व अर्थ के कुछ अभिलक्षणो को सारणी में प्रस्तुत किया गया है, जिससे एक ही दृष्टि में सभी क्षेत्रो की आपेक्षिक निकटता या दूरी का ज्ञान हो सके।

बहुप्रचलित शब्द	स्थानीय शब्द	मानचित्रानुक्रम
गूलर (मेंढक)	टेंट्वा, टट्त्रा	252
डोर (महुए का फल)	गुल्ली	270
बटिहा	ढेनेंह्रा	280
धोतिआ	ओंढ्ना	248
सीगट् (शृगाल)	कोंलिहा	250
रुख् (इक्षु)	कोंसिआर्, वराही	264
वृवेंह्ड़ा	गलोंच्, गलीज्	269
खरिहान्	कोठा, वृवठार्	273
नर्दा	उवृवा	378
बान्	कांड्	281
ओंठ्	सीलो, चोंज्, चोंठ्	शब्दानुक्रम 49
गोधूली	कर्छी + कँभन्	शब्दानुक्रम 261
सायंकाल	माजी + बेरा	शब्दानुक्रम 261

'रुख् शब्द का अर्थ केवल मेकल-क्षेत्र में 'वृक्ष' है, जब कि शेष बघेलखंड में यह 'इक्षु' का वाचक है।

7.9. उपबोली-क्षेत्रों की विशिष्टता-बोधक प्रमुख समभाषांशों की तुलनात्मक सारणी

उपर्युक्त पृष्ठों में जिन उपबोली-क्षेत्रों की संक्षिप्त भाषिक रूपरेखा प्रस्तुत की गई है, उनमे यदि बघेलखंड के पद्रह उपबोली-क्षेत्रों को स्थानीय विशिष्टता का बोध होता है, तो इसका यह भाव कदापि नहीं है कि ये उपबोली-क्षेत्र परस्पर दुरवबोधकतामूलक हैं। द्वितीय खण्ड के पंचम अधिकरण में ऐसी 6 अभिव्यक्तियों की चर्चा की जा चुकी है, जो संपूर्ण बघेलखंड में समान रूप से मिलती है। इनके अतिरिक्त अनेक ऋणात्मक समभाषांश-रेखाओं के संघात (ऐसी समभाषांश-रेखा जिसमें समध्वनि, समरूप, समशब्द, या समार्थ-रेखाओं में से किसी एक या दो का अभाव है, उसे मैंने ऋणात्मक समभाषांश रेखा कहा है) स्थानीय क्षेत्र से बाहर विविध क्षेत्रों में विकीर्ण है, जिनके आधार पर विविध क्षेत्रों की प्रजनन व्याख्या की जा सकती है। यहाँ ध्वनि, रूप, शब्द, व अर्थ के कुछ अभिलक्षणों को सारणी में प्रस्तुत किया गया है, जिससे एक ही दृष्टि में सभी क्षेत्रों की आपेक्षिक निकटता या दूरी का ज्ञान हो सके।

परिशिष्ट 4

बघेलखण्ड का शब्द-भूगोल

प्रारंभिक सर्वेक्षण

क्षेत्र-कार्य पुस्तिका

सूचक-वृत्त

1. स्थान 2. जनसंख्या 3. नाम 4. लिंग 5. आयु 6. जाति 7. पेशा 8. शिक्षा 9. सामाजिक स्तर 10. संबंध 11. यात्राएँ 12. पूर्वजों का स्थान व उनकी भाषा 13. अन्य भाषाओं की जानकारी 14. रुचि

(क) सप्ताह के दिनो के नाम

(1) रविवार
(2) गुरुवार
(3) सोमवार
(4) शुक्रवार
(5) मगलवार
(6) शनिवार
(7) बुधवार

(ख) वर्ष के महीनो की सूची

(8) ज्येष्ठ
(9) अगहन
(10) आषाढ
(11) पौष
(12) श्रावण
(13) माघ
(41) भाद्र
(15) फाल्गुन
(16) क्वार
(17) चैत्र
(18) कार्तिक
(19) वैसाख

(ग) उत्सव व प्रकृति

(20) विवाह

(21) प्रात काल

(22) जन्मदिन (वरिस् गाँठ्, वस्क्द, जनमतिथि, छ्वाहर्, वस्गद, वरस्-गाँठ, जलम्दिन)

(23) पूर्णिमा (पुण्मासी, पुनूमासी, पुनिमासी, वुन्नमासी, पुन, पूनन, पूनव्)

(24) यज्ञोपवीत (जनव्, जनेऊ, जनेव्, वरुआ, व्रतवन्ध)

(25) चन्द्रमा (जान्हइआ, जवयइआ, जधइजा, जोधा)

(26) पहाड़ी (ड्वँगरी, डवगरिआ, भठिआ)

(27) बस्ती (बुस्ती, बस्ती)

(घ) रिश्ते-नाते व विकृतियाँ

(28) बिटिया

(29) लड़का

(30) दोस्त

(31) भानजा

(32) विधवा

(33) गूँगा

(34) चाचा (काका, कक्का, क्कू, काबू, ककइआ, दइया,बड़ा + दादा, बड़े + भइया)

(35) देवर (इयावर, देवर, लाला, दादू, बाबू, इल्के + भइआ)

(36) पिता (दादा, दद्दा, ककइआ, बाबू, बापू)

(37) पिता की माँ (दाई, आजी + दाई,बड़का + दाई, दाई)

(38) माँ (दीदी, बउ, महतारी, बूढ़, भउजी, दाई)

(39) सबधी (नात्, गउतरिहा, महिमान्)

(40) पत्नी (मेहेरिया, फलनिया)

(41) चाची (काकी, बडी + दीदी)

(42) पत्नी का मातृगृह (माइका, माइक्)

(43) विधुर (रेंड्स्, रडुआ)

(44) भगिनीपति (बहनोई)

(45) दामाद (पहुना)

(46) पिता के बहन के पति (फूफा)

(47)स्यालक (सार्)

(48) स्यालक-पत्नी (सर्हज्)

(49) ननद का पति (नन्दोई)
(50) रात्रि में न दिखने वाली बीमारी (रतंउंधी)
(51) एकाक्ष (कनुमा)

(ङ) पेशेवर जातियाँ व पेशा

(52) वेश्या
(53) नर्स
(54) भिखारी
(55) मास्टर
(56) एम० एल० ए०
(57) अहीर् (अहिरा, अहिर्वा, अहीर्, वेरड़ी, गड़सि, गड़रिआ, गुवाला)
(58) केवट (केउडा, कुभावट्, वेवट, मल्लाह, मलह्वा, मलाह)
(59) नौकरानी (कह्निजा, कहारिन्, कहारिन्, ढिमरिन, बरउनी, केउटिनिआ)
(60) पोस्टमैन (डाकिया, डाकर, ढकुहा, डाको, चिट्ठी + रसा, पोटर्, पोट्मन्)
(61) व्यापारी (मइपारी, बेउपारी, व्यय्पारी, बनिआ, दुकान्दार, रोज-गारी)
(62) मेहतर (मेह्टर्, मेहतर्, ड्वमार्, ड्वमरा, भड्गी)
(63) कुम्हार (कुम्हरा, कुम्हर्आ, कुम्हार)
(64) वकील (उकील, वकील, वकील)
(65) ब्राहमण (ब्राम्हन्, बराम्हन्, बम्हना)
(66) दर्जी (छीपी, छिपिआ)

(च) वस्त्र

(67) साया
(68) बनियान
(69) तहमद
(70) ब्लाउज
(71) फुलपैंट
(72) जेब
(73) पायजामा (पइजामा, पजामा, सुथ्त्ना, सुत्ना)
(74) चोली (चोलिया, चोली, चोलिहा, बाड़ी)

(21) प्रातःकाल

(22) जन्मदिन (वरिस् गाँठ्, बस्कद, जनम्तिथि, छ्वाहर्, बस्गद, वरस्-गाँठ, जलम्दिन)

(23) पूर्णिमा (पुण्मासी, पुन्नमासी, पुनिमासी, कुन्नमासी, पुन्, पूनन, पूनव्)

(24) यज्ञोपवीत (जनव्, जनेऊ, जनेव्, बरुआ, ब्रतबन्ध)

(25) चन्द्रमा (जान्हइआ, जवंघइआ, जंघइजा, जोंधा)

(26) पहाडी (ड्वंग्री, डवंगरिआ, भठिआ)

(27) बस्ती (ब्स्ती, बस्ती)

(घ) रिश्ते-नाते व विकृतियाँ

(28) बिटिया

(29) लड़का

(30) दोस्त

(31) भान्जा

(32) विधवा

(33) गूँगा

(34) चाचा (काका, कक्का, कक्कू, काकू, ककइआ, दद्या,बड़ा + दादा, बड़े + भइया)

(35) देवर (द्यावर, देवर, लाला, दादू, बाबू, इल्के + भइआ)

(36) पिता (दादा, दद्दा, ककइआ, बाबू, बापू)

(37) पिता की माँ (दाई, आजी + दाई,बड़का + दाई, दाई)

(38) माँ (दीदी, बउ, महतारी, बूदू, भउजी, दाई)

(39) संबंधी (नात्, गंउंतरिहा, महिमान्)

(40) पत्नी (मेहेरिया, फलनिया)

(41) चाची (काकी, बड़ी + दीदी)

(42) पत्नी का मातृगृह (माइका, माइक्)

(43) विधुर (रेड़ूस्, रंडुआ)

(44) भगिनीपति (बहनोई)

(45) दामाद (पहुना)

(46) पिता के बहन के पति (फूफा)

(47)स्यालक (सार्)

(48) स्यालक-पत्नी (सर्हज्)

(49) ननद का पति (ननदोई)
(50) रात्रि में न दिखने वाली बीमारी (रतौंधी)
(51) एकाक्ष (कन्मा)

(ङ) पेशेवर जातियाँ व पेशा

(52) वेश्या
(53) नर्स
(54) भिखारी
(55) मास्टर
(56) एम० एल० ए०
(57) अहीर (अहिरा, अहिरवा, अहीर, वेरडी, गडसि, गड़रिया, गुवाला)
(58) केवट (केंउडा, क्यावट, वेवट, मल्लाह, मलहवा, मलाह)
(59) नौकरानी (कहनिआ, कहारिन, कहारिन, ढिमरिन, वरउनी, केउटिनिआ)
(60) पोस्टमैन (डाकिया, डाकर, ढकहा, डाको, चिट्ठी + रसा, पोटर, पोट्मन)
(61) व्यापारी (यइपारी, बेउपारी, व्ययपारी, बनिआ, दुकानदार, रोजगारी)
(62) मेहतर (मेहटर, मेहतर, ड्वमार, ड्वमरा, भड्गी)
(63) कुम्हार (कुम्हरा, कुम्हरआ, कुम्हार)
(64) वकील (उकील, बकील, वकील)
(65) ब्राह्मण (ब्राम्हन, वराम्हन, बम्हना)
(66) दर्जी (छीपी, छिपिआ)

(च) वस्त्र

(67) साया
(68) बनियान
(69) तहमद
(70) ब्लाउज
(71) फुलपेंट
(72) जेब
(73) पायजामा (पइजामा, पजामा, सुथन्ना, सुतना)
(74) चोली (चोलिया, चोली, चोलिहा, बाड़ी)

(75) लिहाफ (रजइआ, रजाई)
(76) चद्दरा (पिछउरी वस्क्)
(77) झोला (भूवर्‌वा, भूवारा)
(78) रूमाल (उर्‌माल)
(79) चड्डी (जंघिया)
(80) थैली (थइली)
(81) तौलिया (अंगउछी)

छ) आभूषण

(82) कर्माभूषण (अय्‌रन्, अय्‌रग्, टप्‌प्, टपस्, ढार्, झुर्‌कुला, फुलिआ)
(83) हार (हार्, कट्‌वा, हेवाल्, हयवास्)
(84) पैर का आभूषण (छेलबूडी, छाप्, छड्‌गो)
(85) अँगूठी (मुदरी, छल्‌ला)
(86) पायल् (गह्‌री, पइजना)
(87) करधन (कर्‌धनिया, कर्‌धन्)
(88) बाजू का आभूषण (बाजूवन्द्, बजुल्‌ला)
(89) नाक का आभूषण (ब्‌यासर्, बेसर्)
(90) कान का बडा आभूषण (डारि, ढर्‌कुलिआ)
(81) आभूषण (गहना)

(ज) जीवजन्तु व पशु-पक्षी

(92) मवेशी
(93) विरइआ
(94) सिआर
(95) बकरी
(96) मेढक
(97) दीमक
(98) भालू
(99) सेही
(100) बछड़ा
(101) सर्वाधिक भयावह वन्य पशु (सेर, बवर् + सेर्, बाघ, गुलवाइ, बघ्‌वा, रीछ, सुवनहा, नाह्‌र, जनाउर)
(102) भेंड़ (गाडर् गड्‌रा, गाड़रि, भेंडी, भेंड)

(103) खटमल (खटकीर, खट्खिरवा, खटकीरा, चरगुवह् वा, ढेकना)
(134) भैस (भइंसी, भइसिआ, भइंस्, भए ंस्)
(105) गाय (गऊ, गइया, गउआ, विही)
(106) लोमड़ी (लूवख्री, लोख्री, लुख्री, लवखड़ी)
(107) कछुआ (केछुआ, केचुहा, कछुवा, किचुहा)
(108) हिरण (मिरगा, मिगा, हिर्ना, हिन्ना)
(109) छिपकली (घिरयोरी, गिर्दान्, बम्हनी, टेट्का)
(110) पक्षियों के पंख (परवूना, डरवूना डेना)
(111) बरैं (बर्रइला, दतिआ, दतइआ)
(112) कुत्ता (कुकुरा, कूकुर्, कुक्रा)
(113) चूहा (मुस्घा,मूस्)
(114) कबूतर (पर्यावा, पेरेवा)
(115)खरगोश (खर्हा)
(116) पशुशाला (सार्)

(झ) इतिराग

(117) कपार
(118) ओठ
(119) नाभी
(120) कुहनी (टिहुनी, टेहुनी, दुइनो, खोरिआ, घुट्ठुआ, गाठी)
(121) अँगुली (अँगुरी, उँगरी, उग्ली, अंगुठो)
(122) चमडी (चमड़ी, चमड़ा, चाम्, खल्री, खाल्)
(123) शिखा (चूंदी, चुंदई, चुटई, चुट्की)
(124) पैर (गवाड्, पा्, गोड्)
(125) कलाई (नारी, मोर्वा, मूवर्वा)
(326) दाँत (दांत,)
(127) दाढ़ (डाढ)

(ञ) निषिद्ध

(128) स्त्री-जननेंद्रिय (बुर्, निस्तार्)
(129) पुरुष-जननेन्द्रिय (माँड्, लाँड्)
(130) मरना (सरीर्, छूटव्, न रहव)
(131) मृतक शरीर (लहास्, लोथ)

(132) रक्त (रक्त्, लोहू)
(133) मृत्यु (फउद्, कजा)
(134) स्तर (आचर, छाती)

(ट) खाद्य पदार्थ एवं पेय

(135) शहद
(136) अचार
(137) शराब
(138) खीर
(139) गरी
(140) विष
(141) गुझिया
(142) पूड़ी (पूडी, सुवहारी, लोचई, गाटि, गाट् रोट्)
(143) नाश्ता (कलेवा, कल्यावा, नसृतर, नासृता, जान्ता)
(144) नमक (न्वान्, नून्, निमक् नोन्, लोन्)
(145) चवेना (बहुरी, चबइना, चब्याना, चबेना)
(146) अमावट (अमावट्, अमावट्, अमाउत्, अमामट्)
(147) औषधि (दवाई, दवा, दबा+दारू)
(148) रात्रि का भोजन (विआरी, ब्यारी, मझाई)
(149) लायँची, (गुजराती,'लईची)
(150) तरकारी (तरकारी, साग)
(151) मठा (माठा)
(152) मालपुआ (चल्ला)
(153) आटा (पिसान)
(154) भात (भात्)
(155) सुपाड़ी (सुपारी)
(156) अँदरसा (इँद्रसा)
(157) बड़ा (वरा)
(158) कौर (कउर्)
(159) अमृत (अमिरित्)

(ठ) पेड़-पौधे व फल-फूल

(160) रेरूआ

(161) गन्ना
(162) चना
(163) गेहूँ-चना
(164) डाल
(165) मदार
(166) सेहुँड़
(167) पलाश
(168) कुम्हड़ा
(169) अदरक
(170) महुए का फल
(171) अंकुर (ऊंकुर, अंकुरा, अकुड़ा, आकुर, सूजो, डउआ)
(172) घुँइँया (पोडी, रूइया, कादा, अरोई, घुँइया)
(173) वृक्ष की छाल (बोक्ला, बक्कला, छाली, छाल्)
(174) ज्वार (ज्वन्हरी, ज्वन्री, ज्वडरी, जुड़्री)
(175) अमरूद (बिही, बीही, चंबीड़ा)
(176) लाल मिर्च (मिरचा, मरिचा, मर्चा)
(177) पतीना (रेंडं-ककड़ी, रेर्क्करी, अपड़्क्करी)
(178) बरिहा कुम्हड़ा (बरिहा, बरिहा—कुम्हड़ा, बरिहा—कोंहड़ा)
(179) शकरकंद (सक्रक्न्द, सक्ला, छक्ला)
(180) अंडी (रेंड़ी, रयादा, प्रण्डी)
(181) गूलर (ऊमर, गून्र, हूमर्)
(182) सीताफल (सीताफ्न्, छीनाफ्न्)
(183) टमाटर (टमाटर्, बंउडिया—भाटा)
(184) सूरन (सुरन, अंगीठा)
(185) मटर (तेउरा, मट्रा)
(186) लौकी (लउआ, तुम्सी)
(187) अजमाइन (अजमाइन, जमाइन्)
(188) गेहूँ (गोहूँ)
(189) भाँटा (भाटा)
(190) इमली (अमुली)
(191) गमारफली (गुवार्, फुलयी, रमाच्)
(192) बरवटी (बरवटा)
(193) मोगरा (बुयाला)

(194) वटवृक्ष (वरा)

(ड) कृषि

(195) ओला
(196) ऊसर
(197) खेत का मंडप
(198) सुअर-गृह
(199) आला
(200) खलिहान
(201) धर की सीमा (सरहद्द, हाता, थारी, पगरा, कोलिआ, काँव्)
(202) बरसा (भोट् म्वाइ, पुर्वाई, सूं ड्)
(203) पेरा (पइरा, पेरा, पिअरा)
(204) थून्हो (थुनिहा, थाम्हा)
(205) हर (हर्)
(206) कुँआ (कुँइआ)
(207) बावली (उउली)
(208) कुदाली (कुदारी)
(209) सब्बल (सबसे)
(210) फावड़ा (फरुसहा)
(211) बँधना (बंध्ना, लइना)

(ढ) घरेलू उपयोग की वस्तुएँ

(212) फाउण्टेनपेन
(213) समाचारपत्र
(214) सीसा
(915) चश्मा
(216) लालटेन
(217) चाभी
(218) चहरी
(219) मुखारी
(220) कनस्टर
(221) नवात (मसिआनी, ब्बर् कर्आ बोर्का,बोरिको, बोड़ की, दवाइत्)
(222) अरगसनी (अर्गसनी, अर्गनी, अब्सइनी डारा)

(223) हाथ की चक्की (जेत्वा, ज्यत्वा, जत्आ)
(224) पंखा (बेन्आ, ब्यन्का, विज्ना)
(225) कंघी (कँकई, ककई)
(226) चूनादानी (चुन्हाई, चुन्हई)
(227) कैंची (कतन्नी)
(228) उस्तरा (छूरा)
(229) नहन्नी (नहन्नी)
(230) पुस्तक (पोथी)

(त) रसोई-घर

(231) डेगची
(232) लोटिआ
(233) टंकी
(234) ढक्कन (ढ्यपरी, मुद्ना, ढ्यक्ना, ढेक्ना, ढेक्कन, ढ्यक्ना)
(235) कटोरा (बेलिआ, खूवरवा, खोरबा)
(236) थाली (थरिआ, टठिआ, टाठी)
(237) बर्तन (भंड्वा, भंड्वा, लय्ना)
(238) माचिस (दिया + सलई, अंगार + पेटी
(239) सँड़सी (सन्सी)
(240) अँगोठी (गोरसी)
(241) सिल (लिउँटी)
(242) कड़ाही (कसंहआ)

(थ) मकान आदि

(243) नाली
(244) रस्सी
(245) बटिहा
(246) घर बनाने से निर्मित बड़ा गड्ढा (गड़्हन, गड़निआ, गड़्हिन खदनिआ, सन्ती)
(247) बरामदा (बसारी, परछी, ओरमानी)
(248) दीवाल (भीठी, भीत, भितिआ)
(249) दरवाजा (दुअरा, दुआर)
(250) सीढ़ी (सिढ़िआ, सिढ्ढी)

(251) पिछवाडा (पछीती, पछोउ)
(252) आला (अरवा)

(द) गृहस्थी से संबद्ध

(253) टोकरा
(254) बढनी
(255) कोला
(256) चिल्नर
(257) टार्च
(258) तिपाई
(259) बिस्तर
(260) तकिआ
(261) अन्नागार (बखारी, घेउला, कुजा, कुठली, मदुलिआ, डहरी, सटई)
(262) अरहर का झाड (बर्क्याटा, दरखेटा, खरहरा, अरहारा, खड़िया)
(263) सदूक (सन्दूक, पेटी, सन्दुखिआ)
(264) तिजोरो (तिजउरी, तिजोरी)
(265) टेबिल (टेबुल, म्याज)
(266) चार पाव की नाप (कुरई, चुट्ठरी, बयढइआ)
(267) खाट (खटिआ)
(268) जूता (पहनी, पन्ही)

(घ) अन्य

(269) मोटर
(270) धरोहर (अमानत्, थाती, धरवाहर्, जयजात्, धरहर्, बन्धेज्)
(271) उद्घोषणा (मुनादी, डिग्गी, डुग्गी, ढिग्री, नगारा, नगडिआ)
(272) रेलगाडी, (रेल गाडी, गाड़ी पसीजर, रेल्, पसीजर् गाडी)
(273) पौसरा (पउसरा, पउस पउसला, पोसला)
(274) कचहरी (कचेहरी, कचेरी, अदालत् अदातल्)
(275) अफ्सर (अपीसर्, आपीसर्, हाकिम्, अप्सर्)
(276) ग्लानि (दुख, गिललयान्, गिलान्, गटीक्)
(277) पारी (बसरी, खेप, वारी)
(278) जेल (जहन्, हवलाद, कइदी खाना)
(279) धूल (धूधुर्, धुस, कुप्रा)

(280) जाहिर (जाहिर्, सोर, उजागर)
(281) पहिआ (चका, पहिआ, चक्किआ)
(282) बेटी को उपहार (पठउनी, दइजा)
(283) बगीचा (बेगइचा, बगिआ)
(284) क्रोध (गुसा, रिस)
(285) गहरा (गहिर्, गहिल्)
(286) पालकी (हवाला, मेना)
(287) ट्रक (डाला, ठेला)
(288) कीचड़ (कादव्)
(289) सड़क (सड़क्)
(290) लगाम (करिआरी)

(न) उच्चात्मक शब्द

(291) बी० डी० ओ० (बोडिओ, बिडीओ, बोरिओ, बोडिआ, बीड्)
(292) कंपाउण्डर (कम्पोडर्, कप्पोठर, कम्पाउड्र, कन्टोपर्)
(293) फायदा (फाय्दा)
(294) फन (फन्)
(295) सफर (सफ्र)
(296) जुल्म (जुल्म, जुलुम)
(297) मज़ा (मजा)
(298) सज़ा (सजा)
(299) राज़ (राज)
(300) शान् (सान्)
(301) नशा (नसा)
(302) नाश (नास्)
(303) शर् (सर्)
(304) नखरा (नख्रा)
(305) दश (दस)
(306) बग़ैर (बिगर, बिगुन्)
(307) कॉग्रेस (कांग्रेस, कांग्रेस्)

(प) विशेषण

(308) सरकार
(309) सोरर

(310) गीला
(311) मुलायम
(312) गप्पी
(313) साफ
(314) तिक्त
(315) बिरत (विड़र्, बिड़र्, विरर्)
(316) सीधा (सीध, सुध्)
(317) ताजा (टाटक)
(318) उतावला (हरबरिहा)
(319) गदी (घिनही)
(320) ज्यादा (जादा)
(321) धनी (धनी)

(फ) क्रिया विशेषण

(322) समान
(323) कभी-कभी
(324) जल्दी
(325) सामने
(326) पीछे (पाछे, पाछू)

(व) अव्यय

(327) तक
(328) हाँ
(329) नही
(330) छिह्
(331) चाहे
(332) आश्चर्यसूचक (अरारय, अरू र, अरे मोर बपपा)
(333) हर्षसूचक (अहाहहा, हहा, ओहो हो हो, ओ-हो हो, ओह् हो)
(334) कष्टसूचक (हे, हाय, हय)
(335) विना (बिगर, बिन्, बिगुरु)
(336) लेकिन (पे पय्)
(337) तो भी (तऊ)
(338) कि (कि)

(339) संबोधन (ए-दादू, ए-भइलो)

(म) सार्वनामिक विशेषण

(340) अभी
(341) इतना
(342) उतना
(343) कितना
(344) जितना
(345) तितना
(346) यहाँ
(347) वहाँ
(348) कहाँ
(349) ऐसा
(350) ऐसे (अइसयँ)
(351) उस समय (ओवृती-बेर, बे-साइत्)
(352) उधर (वर्ई, वँह्—मद्दत्)
(353) वैसा (ओइसन्, वइसन्)
(254) वैसे (वइसय्, ओइसय्)
(355) कब (कवय कवे)
(356) किधर (कहँ+कइती, कउनी+कई, कउने+कइद्, कउन्+कइती)
(257) क्यों (काहे)
(558) कैस (कइसन)
(359) जब (जव्)
(360) जभी (जइहिन्, जवे)
(361) जहाँ (जहाँ)
(362) जैसा (जइसन्)
(363) तब (तबबय)
(364) तभी (तब्हिन्, तम्हे)
(365) तिधर (तउने कई, तेती)
(366) तैसा (तइसन, तउने मेर)
(367) तो (त)
(368) इधर (येंर्ई, इउय्)

(म) संख्यावाचक विशेषण

(369) एक
(370) दो
(371) तीन
(372) चार
(373) पाँच
(374) छह
(375) सात
(376) आठ
(377) नौ
(378) ग्यारह (ग्यारा, अगंयारा, गेरह)
(379) बारह (बारा, बारह)
(380) तेरह (तयारा, तेरा, तेरह)
(381) चौदह (चउदा, चउदह)
(382) पंद्रह (पनदरा. पन्द्रह)
(383) सोलह (सुवारा, सोरा)
(384) सत्रह (सत्तरा, सत्तरहे)
(385) उन्नीस (वनइस, उनइस)
(386) इक्कीस (यक्इस)
(387) चौबीस (चउबिस्)
(388) उनतालीस (वन्नालिस्, वन्चालिस् उनतालिस्, उन्चालिस्)
(389) ओनचास (वन्चास् उन्चास्, वनचालिस)
(390) इक्यावन (इक्यावन, इइक्यामन्, इहकामन्, इंक्याबन्, इहकायवन, एक्यामन्)
(391) तिरेपन (त्रिपन्)
(392) छाछठ (छाछठ् छाछठ्, छेंछठ्, छाठस्, छासठ्)
(393) ओनहत्तर (वन्हत्तर्, वन्हत्तर, उन्हत्तर् नवहत्तर)
(394) पचहत्तर (पछत्तर्, पच्—हत्तर्, पछौत्तर्)
(395) तेरासी (तिरासी, त्यरासी, त्रासी)
(396) नेवासी (नवासी, नमासी, नवासी)
(397) सड़सठ् (सड़सठ् सठ्सठ्)
(398) सौ (सउ, सव्)

(398) हजार (हजार)

(य) सर्वनाम-पद

(399) मै
(400) मैं ही
(401) हम
(402) हमी
(403) मुझ
(404) मुझी
(405) मेरा
(406) हमारा
(407) मुझे
(408) हमें
(409) तू
(410) तू ही
(411) तुम
(412) तुम्ही
(413) तुझ
(414) तुझी
(415) तेरा
(416) तुम्हारा
(417) तुझे
(418) तुम्हें
(419) आप
(420) वह
(421) वही
(422) वे
(423) वेही
(424) उस
(425) उसी
(426) उसे
(427) उन्हे
(428) उन्होने
(429) यह
(430) यही
(431) इस
(432) इसी
(433) इन
(434) इन्ही
(435) कौन
(436) क्या
(437) किस
(438) किसी
(439) किन
(440) किन्ही
(441) किसे
(442) किन्हे
(443) किन्होने

(र) लिंग-विचार

(444) सेठ का स्त्रीलिंग
(445) माली का स्त्रीलिंग
(446) मूस का स्त्रीलिंग (मुशुटिआ, मुसटी, मुसुटी)
(447) चमार का स्त्रीलिंग (चमारिन् चमनिआ)
(448) मोर का स्त्रीलिंग (मयरइली, मोरिन्, डाश)
(449) साधु का स्त्रीलिंग (सधुआइन, सधुअनिआ, सधुनि

(450) मुनि का स्त्रीलिंग (मुनिआ, मुनिआइन्)

(ल) क्रियाएँ

(451) कूतना (कूतइ, अन्दाजइ)
(452) मुरझाना (अहलाव्, कुम्हिलाइ)
(453) पेरना (ग्यारव् छाकइ)
(454) मुस्कराना (विहुराव, ठिठुलिआम्)
(455) मथना (भोवम्, भोउम, घेरइ)
(456) सहेजना (सेरई, सहेजइ)
(457) भूखों मरना (पेटागिन् मरइ भूखन भरव्)

(य) वाक्य खाना पूर्ति, एक को निकालकर

(458) इसी ने तुम्हारा पेड़ काटा है
(459) तू ही किसका काम करता है
(460) उसी ने किन्हें बताया
(461) तेरा वह कौन है
(462) इन्होंने किन्ही से कहा था
(463) तुझी को उनने कहा है
(464) ये भी जा रहे हैं, वे भी जा रहे है
(465) क्या कटता है
(466) तू ही मेरा पेड काटता है
(467) वही हमारा पेड़ कटवाता है
(468) यह भी तेरा पेड़ कटवाता है
(469) वह देखो
(470) यह देखो
(471) वे जिधर से आए थे, वहीं चले गए
(472) घोडा जा रहा है
(473) घोड़ी जा रही है
(474) घोड़ों को देखो
(475) घोडियों को देखो
(476) मैं आया
(477) हम आएँगे
(478) मैं ही आया हूँ

(479) हमी देंगे
(480) मुझे देता है
(481) हमें देता है
(482) मुझी को दिया है
(483) अगर तू आए
(484) तुम आना
(485) तू ही आता है
(486) तुम्ही आए होंगे
(497) तुझे देना होगा
(488) तुम्हें दिया है
(489) अगर यह आया होता
(490) अगर ये आते
(491) यही आता होगा
(492) वह आए
(493) अगर उसने दिया होता
(494) अगर वे ही आते
(495) अगर उन्हें देता हो
(496) अगर उसे देता होता
(497) उन्होंने दिया होगा
(498) कोई आता था
(499) अगर आप आते हों
(500) शायद सभी आते हों
(501) गुरु आया था
(502) अगर गुरु आए हों
(503) गुरु देना
(504) उसे दिया
(505) अगर कोई दे
(506) कौन दे
(507) अगर किसी ने दिया हो
(508) विष्णु ने राम के अवतार लिया और अयोध्या में जन्म कर देवताओं के लिए रावण को बाण से मारा फिर इन्होंने लंका के राक्षसों का संहार किया।

(509) आइए भाई साहब, बैठिए (आवा भइलो, बइठा, आवा हो, बइठा, आवा, बइठा भइलो, अई भाई, बइठी)

(510) रख दो (धर् दे। धर् दुयाअ, धय् दुया)

(511) उठा लो (उठाय् लुया उठा लुया)

(512) देरी करता है (देरिआवे, अइयार + करत् + है। ढेरिआत् + हा)

(513) (आपने) ठीक कहा, अच्छा वहया, निक्हा क्या, बहुन्नीक् बताने हा)

(514) घोड़े जा रहे हैं

(515) घोड़ियाँ जा रही है

(स) अर्थक्रम

(516) दिन को कितने भागो में बाँटते हैं

(517) धोती से क्या तात्पर्य है

(518) हाथ के अतर्गत कितना रोग मानते हैं

(519) मद पवन से लेकर धूल भरी आँधी तक-हवा के कितने प्रकार होते हैं

(520) पानी और जल में क्या अतर है

(521) गाड़ी को कितने अर्थों में प्रयुक्त करते हैं

(522) पौध से लेकर पूर्ण विकसित वृक्ष के विविध नाम गिनाइए

(523) लाल रग की वस्तुएँ कौन कौन है (पाच सेकड के अतर्गत)

(524) कौन-कौन वस्तुएँ सफेद होती है (पाँच सेकड के अन्तर्गत)

(525) आज से पहले और बाद के दिनों के लिए क्या शब्द है

परिशिष्ट 4 (घ)

व्यापक सर्वेक्षण की कार्यपुस्तिका

परिशिष्ट 4

बघेलखंड का शब्द-भूगोल

व्यापक सर्वेक्षण

क्षेत्र-कार्यपुस्तिका

सूचक वृत्त

(1) स्थान	(2) जनसंख्या
(3) नाम	(4) लिंग
(5) आयु	(6) जाति
(7) पेशा	(8) शिक्षा
(9) सामाजिक स्तर	(10) सम्बन्ध
(11) यात्राएँ	(12) पूर्वजों का स्थान, उनकी भाषा
(13) अन्य भाषाओं की जानकारी	(14) रुचि

शब्द क्रमांक (139)

(i) सप्ताह के दिनों के नाम (7, सप्ताह में दिनों के नाम गिनाइये।)

(1) रविवार	(2) सोमवार
(3) मंगलवार	(4) बुधवार
(5) गुरुवार	(6) शुक्रवार
(7) शनिवार	

(ii) वर्ष के महीनों की सूची (12, वर्ष में कुल कितने महीने होते हैं?)

(8) ज्येष्ठ	(9) आषाढ़
(10) श्रावन	(11) भाद्र
(12) क्वार	(13) कातिक

(14) अगहन (15) पौष
(16) माघ (17) फाल्गुन
(18) चैत्र (19) बैसाख

(iii) उत्सव व प्रकृति (2)

(20) शादी, काज, ब्याह, वियाह, बिआह (बारात किस लिये ले जाते है ?)

(1) ब्याहा, सकार, भिसार, सुबे, तड़का, बिहान (रात्रि के बीतने)

(iv) रिश्ते नाते व विकृतियां (6)

(22) बिटिया, टोसिया, लोनी, छोरी, बूटी (लड़कियो के लिये सबोधन)

(23) दादू, लड़का, दूधरवा, मुरहा, बेटा (लड़कों के लिये सबोधन)

(24) दोस्त, गोई, साथी, हितुआ (जो आपका सम्बन्धी नही है, किन्तु हितैषी है)

(25) भांजा, भांचा, भइने, भनेज (बहिन का लड़का)

(26) विधवा, रांड़, नसान, बेवा (जिस स्त्री का पति मर गया हो)

(27) गूंगा, बाउर, बउरा, ब्यांचर, मउन, गुप्प, गूंग, गुगुवा (जो बोल न पाता हो)

(v) पेशेवर जातियां (5)

(28) पतुरिया, छिनार, चालबाजिन, बहलाया, हरजाई, अबला (जिस स्त्री का चाल चलन अच्छा नही होता, उसे क्या कहते है ?)

(29) नर्स, बाई, सिट्टर (अस्पताल में सेवा करने वाली)

(30) भिखारी, भगइया, बाह्मण (भीख माँगने वाला)

(31) मास्टर, महट्टर (पाठशाला में बच्चो को पढाने वाला)

(32) एम०एल०ए०, यमले, अमले, एमेले, आमले, अमेले, इमिली (चुनाव में खड़ा होने वाला)

(vi) वस्त्र (6)

(33) साया, लहँगा, सायर, घँघरा, छाया (साड़ी के नीचे स्त्रियां जो पहनती है)

(34) डनियान बनिआरी, फनोही, बनिआई, बनिआयन, बनियानो, गजी, बडी (दिवाकर)

(35) तहमद, उपन्ना, पचा, करम्याटा, लुगी, गमछा, तहमत (छोटी धोती)

(36) बडी, बिलाउज, फुलवा, झूला, पोलका, ब्यलाउज, पुलिका, पोलका (स्त्रियाँ शरीर में क्या पहनती हैं ?)

(37) पतलून, पैंट, पेंट, फुलपेंट, पइजामा (दिखाकर—यह क्या है ?)

(38) खीसा, खलीसा, जेब, पाकिट (दिखाकर—यह क्या है ?)

(vii) जीव जन्तु पशुपक्षी (9)

(39) मवेशी, गोरुआ, गोरू, जानवर, ढोर, मवेसी, पसू (जो वनो मे चरने जाते है)

(40) चिरइआ, चिरई, चिरिया (संकेतात्मक)

(41) सियार, सीगट, सिगटा, लडइआ, ल्यडई, सिकटा (जिसके रास्ता लांघने से अशुभ होता है)

(42) बकरी, बोकरी, छेरी, छेरिया (ध्वनि का अनुभव)

(43) गुलरा, गूलर, मेघा, मेढका, मेफकर (ध्वनिमूलक)

(44) दियार, दिमार, दीस, डिमार, डियारी, दीमक, डिमारी, बमीठा, डोमी (वस्तु का चित्र)

(45) रीछ, रिछवा, भालू, भाल (पेड में जो उल्टा चढता है)

(46) स्याही, सेही, छेही, साही (जिस जानवर के शरीर में काँटू होते हैं)

(47) बछ, बछयाडा, रकडा, ल्यवइया (गाय का बच्चा)

(viii) शरीरांग (3)

(48) कपार, ख्वपडी, तरुआ, खपडी, मुडी, खोहडी, लिलार, ख्वतरी (दिखाकर)

(49) ओंठ, विवुर, ओठ, होठ (दिखाकर)

(50) गूदी, नाभी, ब्वड़री, बोलरी (दिखाकर)

(ix) निषिद्ध (5)

(51) भाड़ा, हगा, टट्टी, गू, मइला, गु, गुह, दिशा ।

(52) उलाट, उल्टी, वमन, बकाई, कै, छाट, वछरन, उवत, उवान्त (मुख से खाद्यान का बाहर आना)

(53) महीना' महवारी, गर्मी, मूडमीजब, नहान, छुनही, महिनवारी, कुतिही, फुटगर्दस (स्त्री के गर्भिणी होने का प्रथम लक्षण)

(54) सर्प, साँप, सरफ, करिया, सरप, कीड़ा, किरवा

(55) महरानी, मरानी, देवी, माता, माताराई, चेचक

(x) खाद्य पदार्थ एवं पेय (7)

(56) महिपर, मह्वान, महिपरि, मधु, मधुरस, शहद

(57) रक्का, अथान अरक्का, रयधान

(58) सराप, मद, दारू, दरिया

(59) खीर, जाउर, आउरि, चरमई, तसमई

(60) खुरहुर, खुरहुथ, गरी, खोपडा

(61) जहर, हरलार, बिप, बिक्ख, कोचिला, माहुर

(62) कुसुली-कुसुलू, पुभिआ, पेराकिआ

(xi) पेड़-पौधे फल-फूल (11)

(63) रेरुआ, नेनुआ, फतकुली

(64) रूख, ऊख, गन्ना, बराही (गुड किससे बनता है)

(65) चना, रहिला, लहिला (चने के बीज को दिखाकर)

(66) बेर्रा, वेर्रा, च्यर्रा (गेहूँ और जौ-या चना सम्मिलित उपज को क्या कहते हैं ?)

(67) डरइआ डगाल, डार, डगलिया, डयरइया (संकेत से)

(68) मदार, अकमन, (मदार के पत्ते को दिखाकर)

(69) थूहा, सेहुँडा, सेहुँड (थूहर के पत्ते को दिखाकर)

(70) कोहड़ा, कुम्हेंडा, क्वहडा, जनगाधी (कुम्हड़े का बीज दिखाकर)

(71) छुइला, छूला, पलाश (पलाश के पत्ते को दिखाकर)

(72) आदा, आद, अदरख आदि (अदरख के फल को दिखाकर)

(73) ग्वलइंदा, डोरी, गोही, कोवा (महुए के फल को दिखाकर)

(xii) कृषि-सम्बन्धी (7)

(74) वार, पथरा, ग्रोर, ओला, पायर

(75) परी, बगार, ऊसर, रोसिहन, पातर

(76) घुर्वांपा, मड़वा, मड़चा

(77) सुलेहंड़ा, गूँड़ा, ग्वाँड़ा, तुअरगृह

(78) झाला, ढाँका, लतामण्डप

(79) खरिहान, राहा, गल्ले, गल्लो

(xiii) घरेलू उपयोग की वस्तुएँ (9)

(80) फौन्टनपेन, होटन, पेन

(81) पेपर, गजट, अखबार

(82) सीसा-अइना, दर्पन
(83) चस्मा, त्यस्मा, चश्मा, चलिस्मा
(84) लालटेन, कंडिल
(86) चाभी, उघनी, कुंजी ताली
(86) चहरी, नाद, ड्रम, हुउज
(87) मुखारी,दातोन
(88) कनस्टर, पीपा कंकरा

(xiv) रसोई घर से सम्बद्ध (3)
(89) डेगची, गंज, गंजी, डब्बा
(90) लोटिया, गड़ई
(91) गंगाल, टंकी, दउरी

(xv) मकान आदि (3)
(92) आँगन की नाली, नर्दा
(93) लजुरी, ज्यमरी, रस्सी, डोरा
(94) बटिहा, उपरउरा, ठीहा, कूड़ा

(xvi) गृहस्थी से सम्बद्ध (8)
(95) टबपरा, छउवा, ढ्वकना, झलिजा, मउवा
(96) बढ़नी, बहरी, कूचा
(97) खिलिआ, बिरंची, खीला
(98) फुटकर, चिल्हर, भोंज, रेचकी, छुट्टा, खुरदा, मजा
(99) टार्च, लायट, चोरबत्ती
(100) बिरंच, अठइआ, तिपाई, बेंच
(101) दसखना, बिछउना, बिस्तरा

(xvii) अन्य (1)
(103) स्वाटर, लहरी, लोटर, सर्विस, भवारी, गाड़ी, सारी

XVII विशेषण (7)
(104) सखार-खारि-नोनखर-चटक नोनछर
(105) स्वाफड़-बदमाश-गुलाम-स्यहरा रसिआ-गुडल-स्त्रियों के फिराक में रहने सावा
(106) भीज-ओद-गील
(107) गुलगुल-क्वामर

(108) लबरा-फुण्डा-फुटठा-गप्पी
(109) साबुन लगाने पर कपड़ा कैसा हो जाता है-साफ-चरका-भक्क
(110) तीत चिरपर-चप्पर

XIX क्रियाविशेषण (4)

(111) समान बराबर-नाई-रकम-मेर-अइसे-रग-कस
(112) कमीर-कभू वभू-कबहूँ-कबहूँ कबहुन-कबहुन
(113) जल्दिन-झट्टिन-हरबिन
(114) सऊ-साम्हू-समुहे-सउँहे

XX अव्यय (5)

(115) (कब) तक-लग-भरम-ऐ-ऐ
(116) स्वीकृति-हाँ-हूँ-हओ
(117) निषेध आहाँ न-नहीं
(118) घृणा उह एह ही
(119) विकल्प-या चाहे-कि

XXI सार्वनामिक विशेषण

(120) अभी-अबहिन
(121) इतना-एत्ता यतना एतू, एतवा
(122) बतना-बतना-उतनिआ
(123) क्यतना केतू-क्यत्ता कितेक
(124) ज्यतना ज्यत्ता जेतू जितेक
(125) त्यतका त्यत्ता-तेतू-त्यतना
(126) यहाँ हेन-इतय-इहन-हिअन-इहा-हिंआ
(127) वहाँ-वहन होन उहन हुआ-वहकइत उहाँ
(128) कहाँ कधा-केकई-कउनेकइत

XXII सख्यावाचक विशेषण (9)

(129) एक
(130) दो
(131) तीन
(132) चार
(133) पाँच
(134) छह
(135) सात
(136 आठ
(137) नौ

XXIII व्याकरणिक क्रम लिंग (2)

(138) सेठ का स्त्रीलिंग-सेठाइन, सेठानी, स्यठनिआ, स्यठाइन
(139) माली का स्त्रीलिंग-मालिन, मलिनी मलिनिआ

XXIV सर्वनाम (9)

(140) इसी ने तुम्हारा पेड़ काटा है
(141) तूही किसका काम करता है
(142) उसीने किन्हे बताया
(143) तेरा वह कौन है
(144) इन्होंने किन्ही से कहा था
(145) तुझी को उनने कहा है
(146) ये भी जा रहे हैं; वे भी जा रहे हैं

XXV सर्वनाम एवं क्रिया (7)

(047) क्या कटता है ?
(148) तूही मेरा पेड़ काटता है
(149) वही हमारा पेड़ कटाता है
(150) वह भी तेरा पेड़ कटवाता है
(151) वह देखो (व-वहृदा)
(152) यह देखो (य-हृदा)
(153) वे जिधर से आए थे वहीं चले गए

XXVI वचन एवं लिंग (4)

(154) घोड़ा जा रहा है
(155) घोड़ी जा रही है
(156) घोड़ो को देखो
(157) घोड़ियों को देखो

XXVII सर्वनाम एव क्रिया-काल (32)

(158) मैं आया
(159) हम आएँगे
(160) मैं ही आया हू
(161) हमी देंगे
(162) मुझे देता है
(163) हमे देता है
(164) मुझी को दिया है
(165) अगर तू आए
(166) तुम आना
(167) तूही आता है
(168) तुम्ही आए होगे
(169) तुझे देता होगा
(170) तुम्हे दिया है
(171) अगर यह आया होता
(172) अगर ये आते
(173) यही आता होगा
(174) वह आए
(175) अगर उसने दिया होता
(176) अगर वे ही देते
(177) अगर उन्हें देता हो

(178) अगर उसे देता होता (179) इन्होंने दिया होगा
(180) जोई आता था (181) अगर आप आते हों
(182) शायद सभी आते हो (183) खुद आया था
(184) अगर कुछ आए हों (185) कुछ देना
(186) किसे दिया (187) अगर कोई दे
(188) ··· कौन दे (189) अगर किसी ने दिया हो

XXVIII परसर्ग (1)

(190) त्रेता में राम ने अवतार लिया और अयोध्या से चलकर देवताओं के लिए रावण को बाण से मारा फिर उन्होंने लका के राक्षसों का उद्धार किया

XXIX अर्थक्रम (10)

(191) दिन को कितने भागो में बाँटते हैं
(192) धोती से क्या तात्पर्य है
(193) 'हाथ के अतरगत कितना शरीरांग मानते हैं
(194) हवा-वायु-पवन-बयार-आँधी-तूफान-बवडर में क्या भेद करते हैं
(195) पानी के समानार्थक अन्य कितने शब्द जानते हैं। क्या उनमें भेद भी करते हैं
(196) 'गाड़ी' को कितने अर्थों में प्रयुक्त करते है
(197) पौद से लेकर पूर्ण विकसित वृक्ष तक के विविध नाम गिनाइए
(198) लाल से मिलते-जुलते रंग गिनाइए
(199) कौन-कौन चीजें सफेद होती हैं
सफेदी के कितने भाग करते हैं
(200) आज से पहिले और बाद के दिनो के लिए क्या शब्द है
(क) पिछले आज कल परसो नरसों
(ख) आगामी

परिशिष्ट—5

सर्वेक्षित स्थानों की सूची

सर्वेक्षित स्थानो की सूची

किसी भी मानचित्रावली की सामग्री की सुस्पष्ट व्याख्या के लिए सर्वेक्षित बोली समुदायो का इतिहास व उनकी परिस्थितियो का सामान्य ज्ञान आवश्यक होता है। 'बघेलखण्ड के शब्द मानचित्रावलीय सर्वेक्षण' में २०० स्थानो के इतिवृत्त को विस्तार से प्रस्तुत किया गया है। यहा केवल दो सौ नामो की सूची को जिलेक्रम से प्रस्तुत किया जा रहा है।

1.55 सतना जिला

1—21 रघुराजनगर तहसील

1 चित्रकूट	2 महतइन
3 बरौंधा	4 बेंडिहा
5 खोह	6 नकइला
7 इटमा	8 मझगवाँ
9 कोठी	10 जैतबारा
11 बरदाडीह	12 सतना
13 डेलउरा	14 हिनौती
15 करमऊ	16 छिबउरा
17 बकिया	18 सज्जनपुर
19 रामपुर	20 चक्यारा
21 लसरार	

2—34 नागौद तहसील

22 उँचेहरा	23 नागौद
24 बीहर	25 कोहारी
26 आमा	27 जसो
28 दुरेहा	29 अमकुई

30. इटमा
31. परसमनिया
32. पाल्हनपुर
33. आलमपुरा
34. शिवराजपुर

35—45 अमरपाटन तहसील

35. गड़उली
36. जरम्वहरा
37. अमरपाटन
38. बेला
39. ताला
40. पोंडीकला
41. बीरदत्त
42. रामनगर
43. देवराजनगर
44. देवरी खुर्द
45. गोरसरी छोट

46—55 मैहर तहसील

46. जमताल
47. नादन
48. जूड़ा
49. मगरउरा
50. धतूरा
51. मैहर
52. धनवाही
53. कुसेड़ी
54. अमदरा
55 कुकेही

56–100 रीवा जिला

56—68 त्योंथर तहसील

56. निगुरा
57. पनवार
58. टिकरी
59. चाक
60. देवरी
61 डभौरा
62. त्योंथर
63 विल्ला
64. जबा
65. देवखुर
66. सितलहा
67. पटेहर
68. गढ़ी

69—78 सिरमौर तहसील

69. लालगांव
70. गढ
71. माड़व
72. मनगवाँ
73. क्योंटी
74. चचाई

75. सिरमौर
76. बीड़ा
77. सेमरिया
78. ब्यलउँहा

79—88 मऊगंज तहसील

79. हनुमना
80. बरौंहा
81. नईगढ़ी
82. बेलौंही
83. खटखरी
84. बहेरा
85. देवतालाब
86. बरहटा
87. अरसनगमा
88. मऊगंज

89—100 हुजूर तहसील

89. रीवा
90. मनकहरी
91. सगरा
92. रायपुर
93. पुरास
94. महसाँव
95. गढ़वा
96. कोठी
97. गुढ़
98. गोविन्दगढ़
99. आमिन
100. बघवार

101—140 सीधी जिला

101—116 गोपदबनास तहसील

101. सीधी
102. पहाड़ी
103. कमर्जी
104. डढ़िया
105. पतेरी
106. बहरी
107. पनवारी
108. छुहिया
109. मझियार
110. चुड़गड़ी
111. रड्डुरिया
112. ताला
113. मभौली
114. भदौरा
115. कोदौर
116. देवमठ

117—130 देवसर तहसील

117. बहरी
118. फरवटिया
119. कँउटिली
120. खटाई
121. पिजरेह

123. दुअरा	124. चटनिहा
125. बरगवाँ	126. देवसर
127. रमपुरवा	123. कुचवाही
129. झारा	130. सरई

131—140 सिंगरौली तहसील

131. गर्डरिया	132. तिलगवाँ
133. सिंगरौली	134. देवरा
135. खुटार	136. शाहपुर
137. माड़ा	138. सिंगरावल
139. सखरँआ	140. चूडी

141—200 शहडोल जिला

141—153 ब्योहारी तहसील

141. बुड़वा	142. चचाई
143. सरसी	144. पथरेही
145. मऊ	146. पपौंध
147. ब्यौहारी	148. खरगड़ी
149. येगरहाटोला	150. बनमुकली
151. जयसिंहनगर	152. रिमार
153. सीधी	

154—65 बान्धोगढ़ तहसील

154. उमरिया	155. अमरपुर
156. कुदरी	157. पनपथा
158. मानपुर	159. ददरौड़ी
160. चँदिया	161. मेहमार
162. करकेली	163. अखडार
164. बिलासपुर	165. पटपरा

166—185 सोहागपुर तहसील

166. शहडोन	167. पालीबिरसिंघपुर
168. बुढ़ार	169. धनपुरी

170. खड़री
171. जैतपुर
172. मफोली
173. गोहवारू
174. पानगाँव
175. बिजुरी
176. बउरी डाँड
177. सोहागपुर
178. कोतमा
179. ऊरा
180. बिछिया
181. अमलाई
182. पिपरिया
183. अनूपपुर
184. खोड़री
185. व्यंकटनगर

186—200 पुष्पराजगढ़ तहसील

186. सरई
187. जरहा
188. दूधी
189. लोहारी
190. बेनीबारी
191. बम्हनी
192. गिरारी
193. लखौरा
194. बसनिहा
195. कर्करिया
196. भेजरी
197. हर्रई
198. मुण्डाकोनहा
199. अमुनादादर
200. अमरकंटक

परिशिष्ट 6

मानचित्रावलीय सामग्री

परिशिष्ट 6

मानचित्रावली सामग्री

'बघेलखड की शब्द मानचित्रावली' के निमित्त क्षेत्रकार्य-पुस्तिका में जिन दो सौ इकाइयों को स्थान दिया गया था, उनका सम्पादन 'बघेलखड के शब्द-मान चित्रावलीय सर्वेक्षण में शब्दस्तर पर किया गया था।

किसी शब्द से सम्बद्ध विविध परिवर्तों को समुदायो की सख्या के उत्तराधार क्रम से देने का प्रयास किया गया है। इसके साथ ही परिवर्तों के सम्मुख कोष्ठक में समुदाय-क्रमांक का निर्देश है, इसके आधार पर उन्ही समुदायो की सख्याओं को आधार मानचित्र में देख कर भाषिक लक्षणों को मानचित्रो में दर्शाया जा सकता है।

अग्रिम पृष्ठों में कतिपय शब्दो की मानचित्रीय सामग्री प्रस्तुत है। विशेष रूपो के विवरण को बघेलखड की शब्द मानचित्रावली से देखा जा सकता है। यहाँ विवेच्य सामग्री शब्दप्रक्रियात्मक है। ध्वनिप्रक्रियात्मक, रूपप्रक्रियात्मक, व अर्थप्रक्रियात्मक सामग्री के लिए बघेलखड का शब्द भूगोल (द्वितीय खड, पचम अधिकरण) द्रष्टव्य है।

शब्दप्रक्रियात्मक सामग्री के कतिपय उदाहरण

शब्दानुक्रम 20 (विवाह)

काज (1 5, 6, 7 23 26 35, 36, 38 46, 56, 57, 69 120, 122 131, 134, 141 165, 167 169, 171 173, 177, 180 83, 184

(बिआह्), 185 (बिआह्)

काज + दान् (47, 48)

कन्नया + दान् (49 55)

बिआह् (121, 131 33, 135 40, 166 (काज्) 170, 174,

175, 176, 178, 179, 186, 189, 191-94)

ब्याह् (27, 32, 33, 187, 188, 190, 200)

बिहाव् (59 विहा, 60, 63, 195 99)

बिबाह (58-काज्, 64 68)

ब्याव्ह् (25, 30, 31)

ब्याह् व् 24 29)

बिहाह् (61, 62)

मानचित्रानुक्रम 237

शब्दानुक्रम 23 'पुत्र'

दाद् (8 14, 16, 22, 35 46, 48, 49, 71 77, 81, 87, 89, 97-101, 103 105, 109 17, 119, 122, 124 30, 134, 142, 143, 145 47, 151, 154, 156, 157, 158, 160, 168, 169, 173, 180 83, 185)

दउआ (121, 132, 133, 135 141, 144, 148, 150, 152, 153, 175, 176)

दाऊ (174, 178, 184)

ददा (118, 123)

दादा (149, 155)

दें्द्द (170, 179)

द्वद्वा (18, 20, 21, 34, 47, 91-93, 159, 161-67, 171, 172, 177)

दूरा (126 199, 200)

दों्द्वा (19, 50, 51 53, 78, 94)

गदेला (56 68)

गदेल्—जसरा (उ० प्र०)

गद्याल्—मानिकपुर, कर्वी, राजापुर, मऊ, बबेरु, शकरगढ

बेटा (23, 26, 28 32)

ब्यटउना (1, 5, 84 86, 88, 108)

बउआ (24, 25)

ब्वट्वा (15)

बेंटाऊ (131)

बाबा (102, 106, 107)
बाबू (120)

लड़का (2-4, 6, 7, 27)
लड़िका (17, 95, 96)
नरिका (69, 70)
लें रिवा—लखनऊ, रायबरेली
लल्ला (79, 80, 82, 83)
लाला (90)

मुरहा (54,55)
मोड़ा—झाँसी, जसरा

मानचित्रानुक्रम 239, 333

शब्दानुक्रम 25 'भगिनीपुत्र'

भइने (2, 4, 7-23, 30, 35-53, 56, 57, 59 63, 66-78, 81, 84, 85-107, 110, 111, 114-17, 119, 121, 122, 127, 132, 133, 137, 139, 142, 143, 145 49, 151, 154, 156, 160-63, 167, 173, 176, 185)

भइने+लड़का (155, 157, 158)

भयने (1, 3, 5, 6, 24, 58, 64, 79, 80, 82, 83, 108, 112, 113, 118, 120, 123-26, 130, 134-36, 138, 140, 141, 144, 150, 152, 153, 159, 174, 178)

भनेंज (25 29, 31-34, 54, 55, 168, 182, 183, 187, 188, 190)

भाँचा (166, 169-72, 175, 177, 180, 181, 184, 186, 189, 191 200)

भाञ्चा (128, 129—भयने)

भँचा (131)

मानचित्रानुक्रम 240

शब्दानुक्रम 38 'पाकिट'

खीसा (3-10, 14, 16, 17, 19-22, 25, 32, 33, 35-44, 46 50, 54, 55, 81, 83-87, 90 98, 100, 101, 103, 108-16,

118, 120, 123, 141-153, 155, 157-59, 161, 166-69, 174-78, 180-85)

कीसा (26, 51, 52, 53)

कीसा (186-200)

खलीमा (1, 18, 81, 104, 105, 117, 128, 129, 131, 170, 171, 172, 179)

खलींगा (28, 69, 70-78)

खलइता 121, 132, 133, 135-40)

खलइप्पा 119, 122, 127)

खलइसा (124-26, 130, 134)

जेबा (34, 56-68, 79, 82, 88, 89, 102, 106, 107, 154, 156, 160, 162-65)

जेब् (2, 11 13, 15, 23, 29, 30, 31, 45)

ज्याब् (173)

जेप् (27)

गन्ला (72)

मानचित्रानुक्रम 246

शब्दानुक्रम—41. 'शृगाल'

सीगद् (10 13, 15, 18 21, 35, 36, 38 39, 43-46, 50-53, 56-88, 94, 97-103, 106-116, 119, 121; 122, 124 30, 134-36, 138-40, 142, 145, 147, 168, 173, 185, 199)

सीक्द् (143, 146. 149, 151, 154, 856, 159, 160-65, 169, 181)

सिगटा (8, 14, 16, 17, 22, 4', 47, 48, 49, 89, 95, 96, 132, 133. 137, 135, 157, 138, 167, 174, 178, 182, 183)

सिकटा (23, 90-93, 104, 105, 118, 120, 123, 141, 144, 148, 150, 152, 153, 166, 170-73, 177, 179, 180, 184, 186, 189, 191-94)

चीरवद् (3, 5, 6)

सियार् (1, 2, 4, 7, 9)

सिआर् (24)

सिआर् (37, 40, 41)
स्यार् (25)

लड़इआ (26, 54, 187, 188, 190)
लँडइआ (55)
ल्यड़इआ (27, 28, 30)
ल्यडई (29, 31, 32, 33)
लडई (34)

कोंलिहा (195-98, 200)

मानचित्रानुक्रम 250

शब्दानुक्रम—43 'मेंढक'

गूलर् (1-25, 27, 29 31, 34-36, 38, 39, 42, 44-53, 60, 63, 69, 70, 73-78, 90-97, 98—'गूलर्' छोटा 'मेंघा' बडा, 99-तदैव, 100, 142, 145, 147, 155, 157, 158, 167, 182)

गुन्रा (26, 28, 32, 33, 37, 0, 41, 43, 54, 55, 154, 156, 159, 160 65, 180)

मेघा (56, 57, 58—'मेघा' बड़ा 'गूलर्' छोटा, 61, 66 68, 79-84 85—'मेघा' बडा 'गूलर्' छोटा, 86, 87, 88, 89—मेघा' बडा 'गूलर' छोटा, 101—तदैव, 102—तदैव, 103—तदैव, 104—तदैव, 105—तदैव, 106—तदैव, 107—तदैव, 117, 118, 119, 120, 122, 123—'गूलर्' से अपरिचित, 124 27, 130, 134)

चेंघा (108 116)

बेंघा (136, 138, 140)

बेंगा (131-34, 137)

बेंग् 128, 129)

बेंगुचा (121, 139, 141, 141, 148, 150, 152 153)

मेंढ्का (166, 177)

मेंचका (173, 175 176

मेंभ्का (170, 174, 178, 179, 183—'गूलर्', 184, 185)

मेमक् (59, 62, 64, 65)

मेंभ्कर् (143, 146, 149, 151, 168—गूलर्, 169, 171, 172, 181)

टट्का (196-98, 200)
कट्रा (71—'कट्रा' बड़ा 'गूलर्' छोटा 72—नदेव)

मानचित्रानुक्रम 252

शब्दानुक्रम—45 'रीछ'

भालू (56, 57, 61, 66, 89, 90, 94—रीछ् 154-65, 167, 169, 178, 180 84, 186-200)

भालु (58, 62- 65, 67-70, 73-88, 95, 101-108, 117, 124-126, 130, 141, 144, 145, 148, 150, 152, 153, 166, 171, 172, 174, 177)

भाल् (59, 60, 71, 72, 91-93, 96—100, 109—116, 118 23, 127-29, 131-40, 142, 143, 146, 147, 149, 151, 168)

भलुआ (170, 173, 175, 176; 179, 185)

रिछ्वा (22, 23, 26, 51-54)
रीछ् (1-21, 24, 25, 27- 50, 55)

मानचित्रानुक्रम 254

शब्दानुक्रम—64 'इक्षु'

ऊख् (8,10, 11, 14-19, 21, 35-गन्ना, 36, 36-16 50-53, 58, 60, 63, 64,69- 81,82, 84-101,103, 105, 109-116, 154-58, 168, 180-83)

ऊँख् (37)

ऊक् (12,13)

ऊख (2-6, 20, 24, 56 57, 59, 61, 62, 65-68, 118, 120, 121, 123, 125, 126, 134-34 137, 141-53, 159-67, 170 72)

ऊँख् (173)

कुसिआर् 80, 83, 103, 104, 106-108, 117, 119, 122, 124, 127-29, 135, 136, 138, 139, 140, 175, 176, 184, 185)

पोंमिआर् (186, 189, 194- 91, 199)

कुसेर् (195—इक्)

प्वींडा (1-करव्, 7-ल्स्, 9-तदैव, 22-तदैव, 27-34)
क्वींडा (26)

वराही (23 प्वींड़ा, 55, 196-198, 200)

गन्ना (47-49, 54, 169 190)
गना (187 188)
मानचित्रानुक्रम 264, 319
शब्दानुक्रम 66 'गेहूँ और चने का मिश्रण'
बेंर् ा (121, 139) राजापुरमऊ, परसौड़ा (उ० प्र०)
बेंररी (8, 14 'बेर्रा' जौ तथा चना, 39, 56 117, 124 26, 128-34, 137, 154, 156 160, 162 65)
बुधर्रा (2 7, 9 13, 15, 18 37, 40 42, 44 55 135, 136, 138, 140-53, 155, 157-59, 161 166 165)
वर्रा (186, 189 200)
वर्री (16,17)
वुधर्री (43)
बिर् रा राठ

गोंहूँ + चनी—मानिकपुर, टिकरिया, कर्वी, कानजर, जगरा, शकरगढ़, प्रतापगढ़ (उ० प्र०)
गोंहुँ + चनी (1)

गोंह + गवजई (118, 120, 123)

गुवजई (127)

गुनचना (219, 122)

बेंभ्रूरा रायबरेली, राठ
मानचित्रानुक्रम 266
शब्दानुक्रम 70 'कूष्माण्डक'
गवेंहड़ा (6,11 15, 18 21, 35, 36, 38, 39, 42 49 51 53, 89, 96, 98, 9), 142, 145, 147, 15›, 157, 958, 160, 162, 168-70, 175, 176, 179, 181-183)
कोंहड़ा (37, 40, 41, 90 94, 97, 100, 109 11, 112-

जत्गाथी, 113-तदैव, 114-16, 141, 143, 146, 148-53, 171, 172, 180)

कुम्हड़ा (7, 9, 10 16, 17, 22-34, 54, 55, 95, 174, 178, 187, 188)

कुम्हड़ा (1-5, 50, 161, 166, 167, 177)

कुमड़ा (8)

कुमड़ा (184)

कुण्डा (125 गलीज्)

जत्गायो (56 59→कवेंहड़ा, 60-70, 71-कवेंहड़ा, 72-तदैव, 73-77, 79, 81, 82, 84 88, 101-107 117, 119-कवेंहड़ा, 122-तदैव)

जगननार्थी (124, 125, 130, 131, 134, 159)

जग्नाथी (80, 83, 127 कवेंहड़ा)

जग्नथिआ (78)

गलींज (186, 189 94, 195-कुम्हड़ा)

गलींच् (196-200)

बिलइती (121, 135, 136, 138, 139 भुअरा, 140)

बलइती (118 120, 123)

बर्नइंती (128 129)

बयलइँती (108 जत्गाथा)

वयलइती (126 जत्गाथी)

भुअरा (132, 133, 137)

लक्टन् + टप्पो (154-कुम्हड़ा, 156, 163-65)

नेवा (173)

मानचित्रानुक्रम 269

शब्दानुक्रम 73 'महुए के फल का बीज-कोशक'

कोरी (20, 47, 48, 79, 80 83, 87, 90-93, 95, 102,-105-106-कोया, 107 कोवा, 108-तदैव, 109 तदैव, 110 गुवलेंइंदा, 111-तदैव, 112-तदैव, 114-कोवा, 11A-कोवा, 115-कोवा, 117-24, 127-29, 131 33, 13540, 145 52, 153-गुवलेंइंदा, 169, 170-174, 180-गुवलेंइंदा, 181-तदैव, 184, 185-गुवलेंइंदा)

डारी (125, 126, 130, 134)

ग्वलेंइंदा (3-10, 12-211, 21, 22-25, 35-41, 42-गोही, 43-डोरी, 44, 45-गोही, 46, 50, 97, 100-डोरी 113, 141, 144, 162-6, गोही 167-गोही, 168-गोही, 177, 182, 183)

ग्वलेंयदा (26, 27-गाही, 28, 29)

गोंलइंदा—बांदा, परसोड़ा, राठ

कोंलइंदा—मानिकपुर, कर्वी, शकरगढ, जसरा, प्रतापगढ़, बबेरू (उ० प्र०)

कोबा (56, 57, 58-डोरी, 59 डोरी, 60-70, 71-डोरी, 72 डोरा, 73-77, 84,-86, 88, 89, 94-डोरी, 96, 98, 99, 10 -डोरी)

गोही (2, 11, 30-34, 51-55,154-160, 161-ग्वलेंइंदा)

गुल्ली (179 डोरी 186-200)

गारा (175, 176)

पोंकना (78-कोबा)

मानचित्रानुक्रम-270

शब्दानुक्रम-76 'खेतो में बनाया गया निवासयोग्य मण्डप'

घोंपा (56 68, 71 78,81, 84 89, 94, 96-99, 109, 168) जसरा में भी

घ्वांपा (12-22, 35-41, 42-मड़रा, 43-मयरा, 44-46, 49-53, 69, 70, 95, 142, 145, 147)

घोपा (143, 146, 149, 151, 153)

घ्वापा (24, 25, 54, 55)

घोंपा (100)

छाता (99, 80, 82, 83- मैड़ा 118-20, 122-24, 125 कुंदिरा, 126-कुंदिरा, 128-घोपा, 129-घोपा, 130-कुंदिरा,, 131-भदरी, 134-कुंदिरा, 198) छतुरा (1-7, 9, 10)

छत्ता (123-खोपा, 26-31, 34)

छेंतुरा (8)

मैड़ा (39, 33)

मेरा (121, 132, 133, 137, 139, 141, 1...

152 1 3, 169, 175-मड़इचा, 176, 180, 181)

मडइचा (11, 179-घोरा, 196, 197, 200 भाला)

मड़रा (47, 48, 155, 157, 158) बवेरु, अतर्रा, बाँदा, कमासिन, आदि म भी

मड़वा (24, 15, 54, 55)

मड़चा (171, 172)

माचा (195, 199-छाता)

भाला (127, 170, 174, 178, 186-194)

कुंदिरा (101-घोरा, 102-07, 108-घोंरा, 117)

रुंधिरा (185)

खुधिरा (184-मडइचा, भाला)

खवँधरा (159, 161, 182, 183)

खँधरा (154, 156, 160, 162-65)

मड़री (135, 136 छतुता, 138, 140)

ढाभा (166, 167, 177)

कुरिआ-प्रतापगढ

मानचित्रानुक्रम-272

शब्दानुक्रम-79 'खलिहान खलधान्य'

खरिहान् (1-6, 26, 56-70, 71-राहा, 72-राहा, 73-77, 79-88, 90-93, 101-102, 104, 106 108, 112, 113, 115, 117,-197 130-140, 182, 183)

खर्य् + हान् (.0)

खनिहान् (168, 187, 188, 199)

खनिहार् (128, 129, 141, 143, 144, 146, 148-53, 154-राहा, 155, 157-59, 16 -64, 169-76, 178 81, 185,191, 193, 194)

राहा (7 23, 27,35-42, 43-खरिहान्, 44-53, 78, 89, 94-100, 103, 105, 109 111, 114, 116' 142, 145- खरिहान्, 147-खरिहान्, 156, 160, 165)

गन्लो (28, 29, 31-34)

गल्ना (166, 167, 177)

गराहा (54, 55-गल्ले)

कोठा (195)

क्वठार् (184-खनिहार्, 186, 189, 192-खनिहार् 196 198, 199-खनिहार्, 200)

मण्डा (24)

खँड़डा (25)

मानचित्रानुक्रम-273

शब्दानुक्रम-92 'प्रनालिका'

नर्दा (1-117,119, 124-130, 134, 141-68, 170 74, 177, 178)

नाली (118, 120-23, 175 176, 179, 180, 182-85)

नानी (169, 181)

पन्रा (181, 132, 133, 137)

पनारा (135, 136, 138-40)

उब्रा (131 86-200)

मानचित्रानुक्रम-278

डारी (125, 126, 130, 134)

गुवलेंइंदा (3-10, 12-211, 21, 22-25, 35-41, 42-गोही, 43-डोरी, 44, 45-गोही, 46, 50, 97, 100 डोरी 113, 141, 144, 162-6, गोही 167-गोही, 168-गोही, 177, 182, 183)

गुवलेंएदा (26, 27-गाही, 28, 29)

गोलइंदा—बांदा, परसोड़ा, राठ

कोलइंदा—मानिकपुर, कर्वी, शकरगढ, जसरा, प्रतापगढ, बबेरू (उ० प्र०)

कोवा (56, 57, 58-डोरी, 59 डोरी, 60 70, 71-डोरी, 72 डारा, 73 77, 84,-86, 88, 89, 94-डोरी, 96, 98, 99, 10 -डोरी)

गोही (2, 11, 30-34, 51-55,154-160, 161-गुवलेंइंदा)

गुल्ली (179 डोरी 186-200)

गारा (175, 176)

पोंवना (78-कोवा)

मानचित्रानुक्रम-270

शब्दानुक्रम-76 'खेतो में बनाया गया निवासयोग्य मण्डप'

घोंघा (56 68, 71 78,81, 84 89, 94, 96-99, 109, 168) जसरा में भी

घुघाघा (12-22, 35-41, 42-मइरा, 43-मयुरा, 44-46, 49 53, 69, 70, 95, 142, 145, 147)

घोघा (143, 146, 149, 151, 153)

घुवाघा (24, 25, 54, 55)

घोंघा (100)

छाता (99, 80, 82, 83- मैड़ा 118-20, 122-24, 125 कुंदिरा, 126-कुंदिरा, 128-घोघा, 129-घोघा, 130-कुदिरा,, 131-मदरी, 134-कुंदिरा, 198) छतुरा (1-7, 9, 10)

छतूरा (123-खोपा, 26-31, 34)

घेंतुरा (8)

मैड़ा (39, 33)

मैरा (121, 132, 133, 137, 139, 141, 144, 148, 150,